दादा भगवान प्ररूपित

समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य

(पूर्वार्ध)

दादा भगवान प्ररूपित

समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य
(पूर्वार्ध)

मूल गुजराती संकलन : डॉ. नीरू बहन अमीन

हिन्दी अनुवाद : महात्मागण

प्रकाशक : अजीत सी. पटेल
दादा भगवान विज्ञान फाउन्डेशन
1, वरूण अपार्टमेन्ट, 37, श्रीमाली सोसायटी,
नवरंगपुरा पुलिस स्टेशन के सामने,
नवरंगपुरा, अहमदाबाद - 380009,
Gujarat, India.
फोन : +91 79 3500 2100

प्रथम संस्करण : 2000, प्रतियाँ, दिसम्बर, 2014
नई रीप्रिन्ट : जून, 2021

भाव मूल्य : 'परम विनय' और 'मैं कुछ भी जानता नहीं', यह भाव!

द्रव्य मूल्य : 150 रुपए

मुद्रक : अंबा मल्टीप्रिन्ट
B-99, इलेक्ट्रॉनिक्स GIDC,
क-6 रोड, सेक्टर-25,
गांधीनगर-382044.
Gujarat, India.
फोन : +91 79 3500 2142

ISBN/eISBN : 978-93-86289-45-2

Printed in India

त्रिमंत्र

नमो अरिहंताणं

नमो सिद्धाणं

नमो आयरियाणं

नमो ऊवज्झायाणं

नमो लोए सव्वसाहूणं

एसो पंच नमुक्कारो

सव्व पावप्पणासणो

मंगलाणं च सव्वेसिं

पढमं हवइ मंगलं ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥

ॐ नम: शिवाय ॥ ३ ॥

जय सच्चिदानंद

'दादा भगवान' कौन?

जून 1958 की एक संध्या का करीब छ: बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन, प्लेटफार्म नं. 3 की बेंच पर बैठे श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल रूपी देहमंदिर में कुदरती रूप से, अक्रम रूप में, कई जन्मों से व्यक्त होने के लिए आतुर 'दादा भगवान' पूर्ण रूप से प्रकट हुए और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्भुत आश्चर्य। एक घंटे में उन्हें विश्वदर्शन हुआ। 'मैं कौन? भगवान कौन? जगत् कौन चलाता है? कर्म क्या? मुक्ति क्या?' इत्यादि जगत् के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए। इस तरह कुदरत ने विश्व के सम्मुख एक अद्वितीय पूर्ण दर्शन प्रस्तुत किया और उसके माध्यम बने श्री अंबालाल मूलजी भाई पटेल, गुजरात के चरोतर क्षेत्र के भादरण गाँव के पाटीदार, कॉन्ट्रैक्ट का व्यवसाय करनेवाले, फिर भी पूर्णतया वीतराग पुरुष!

'व्यापार में धर्म होना चाहिए, धर्म में व्यापार नहीं', इस सिद्धांत से उन्होंने पूरा जीवन बिताया। जीवन में कभी भी उन्होंने किसीके पास से पैसा नहीं लिया बल्कि अपनी कमाई से भक्तों को यात्रा करवाते थे।

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य मुमुक्षुजनों को भी वे आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे अक्रम मार्ग कहा। अक्रम, अर्थात् बिना क्रम के, और क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना। अक्रम अर्थात् लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट।

वे स्वयं प्रत्येक को 'दादा भगवान कौन?' का रहस्य बताते हुए कहते थे कि ''यह जो आपको दिखते हैं वे दादा भगवान नहीं हैं, वे तो 'ए.एम.पटेल' हैं। हम ज्ञानीपुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे 'दादा भगवान' हैं। दादा भगवान तो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं, सभी में हैं। आपमें अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और 'यहाँ' हमारे भीतर संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।''

निवेदन

ज्ञानी पुरुष संपूज्य दादा भगवान के श्रीमुख से अध्यात्म तथा व्यवहारज्ञान से संबंधित जो वाणी निकली, उसको रिकॉर्ड करके, संकलन तथा संपादन करके पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया जाता है। विभिन्न विषयों पर निकली सरस्वती का अद्‌भुत संकलन इस पुस्तक में हुआ है, जो नए पाठकों के लिए वरदान रूप साबित होगा।

प्रस्तुत अनुवाद में यह विशेष ध्यान रखा गया है कि वाचक को दादाजी की ही वाणी सुनी जा रही है, ऐसा अनुभव हो, जिसके कारण शायद कुछ जगहों पर अनुवाद की वाक्य रचना हिन्दी व्याकरण के अनुसार त्रुटिपूर्ण लग सकती है, लेकिन यहाँ पर आशय को समझकर पढ़ा जाए तो अधिक लाभकारी होगा।

प्रस्तुत पुस्तक में कई जगहों पर कोष्ठक में दर्शाए गए शब्द या वाक्य परम पूज्य दादाश्री द्वारा बोले गए वाक्यों को अधिक स्पष्टतापूर्वक समझाने के लिए लिखे गए हैं। जबकि कुछ जगहों पर अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी अर्थ के रूप में रखे गए हैं। दादाश्री के श्रीमुख से निकले कुछ गुजराती शब्द ज्यों के त्यों *इटालिक्स* में रखे गए हैं, क्योंकि उन शब्दों के लिए हिन्दी में ऐसा कोई शब्द नहीं है, जो उसका पूर्ण अर्थ दे सके। हालांकि उन शब्दों के समानार्थी शब्द अर्थ के रूप में, कोष्ठक में और पुस्तक के अंत में भी दिए गए हैं।

ज्ञानी की वाणी को हिन्दी भाषा में यथार्थ रूप से अनुवादित करने का प्रयत्न किया गया है किन्तु दादाश्री के आत्मज्ञान का सही आशय, ज्यों का त्यों तो, आपको गुजराती भाषा में ही अवगत होगा। जिन्हें ज्ञान की गहराई में जाना हो, ज्ञान का सही मर्म समझना हो, वह इस हेतु गुजराती भाषा सीखें, ऐसा हमारा अनुरोध है।

अनुवाद से संबंधित कमियों के लिए आपसे क्षमाप्रार्थी हैं।

दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित हिन्दी पुस्तकें

1. आत्मसाक्षात्कार
2. ज्ञानी पुरुष की पहचान
3. सर्व दुःखों से मुक्ति
4. कर्म का सिद्धांत
5. आत्मबोध
6. मैं कौन हूँ ?
7. पाप-पुण्य
8. भुगते उसी की भूल
9. एडजस्ट एवरीव्हेयर
10. टकराव टालिए
11. हुआ सो न्याय
12. चिंता
13. क्रोध
14. प्रतिक्रमण (सं, ग्रं)
16. दादा भगवान कौन ?
17. पैसों का व्यवहार (सं, ग्रं)
19. अंतःकरण का स्वरूप
20. जगत कर्ता कौन ?
21. त्रिमंत्र
22. भावना से सुधरे जन्मोंजन्म
23. चमत्कार
24. प्रेम
25. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य (सं, पू, उ)
28. दान
29. मानव धर्म
30. सेवा-परोपकार
31. मृत्यु समय, पहले और पश्चात्
32. निजदोष दर्शन से... निर्दोष
33. पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार (सं)
34. क्लेश रहित जीवन
35. गुरु-शिष्य
36. अहिंसा
37. सत्य-असत्य के रहस्य
38. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
39. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार(सं)
40. वाणी, व्यवहार में... (सं)
41. कर्म का विज्ञान
42. सहजता
43. आप्तवाणी - 1
44. आप्तवाणी - 2
45. आप्तवाणी - 3
46. आप्तवाणी - 4
47. आप्तवाणी - 5
48. आप्तवाणी - 6
49. आप्तवाणी - 7
50. आप्तवाणी - 8
51. आप्तवाणी - 9
52. आप्तवाणी - 12 (पू)
53. आप्तवाणी - 13 (पू, उ)
55. आप्तवाणी - 14 (भाग-1, भाग-2)
57. ज्ञानी पुरुष (भाग-1)

(सं - संक्षिप्त, ग्रं - ग्रंथ, पू - पूर्वार्ध, उ - उत्तरार्ध)

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट www.dadabhagwan.org पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में ''दादावाणी'' मैगेज़ीन प्रकाशित होता है।

समर्पण

विकराल विषयाग्नि में दिन-रात जलते;
अरे रे! अवदशा फिर भी उसी में विचरते!

संसार के परिभ्रमण को सहर्ष स्वीकारते;
और परिणाम स्वरूप दुःख अनंत भुगतते!

दावा क़रारी, मिश्रचेतन-संग चुकाते;
अनंत आत्मसुख को विषय भोग से विमुखते!

विषय अज्ञान टले, ज्ञानी से 'ज्ञान' मिलते ही;
'दृष्टि' निर्मलता की कुंजियाँ मिलते ही!

'मोक्षगामी' के लिए - ब्रह्मचारी या विवाहित;
शील की समझ से मोक्ष पद करवाते प्राप्त!

अहो! निर्ग्रंथ ज्ञानी की वाणी की अद्‌भुतता;
अनुभवी वचन निर्ग्रंथ पद तक पहुँचाता!

मोक्ष पथ पर विचरते 'शील पद' की भावना करते;
वीतराग चारित्र के बीज-अंकुर विकसित करते!

अहो! ब्रह्मचर्य की साधना के लिए निकली;
आंतर बाह्य उलझनों के सत् हल बताती!

ज्ञान वाणी का यह संकलन, 'समझ ब्रह्मचर्य' की है देता;
आत्मकल्याणार्थे 'यह', महाग्रंथ जगचरण समर्पिता!

संपादकीय

जीवन के जोखिमों को तो जान लिया, लेकिन अनंत जन्मों के जोखिमों की जो जड़ है, उसे जिसने जाना है तभी वह उसमें से छुटकारा पा सकता है! और वह जड़ है विषय की!

इस विषय में तो कैसी भयंकर परवशता सर्जित होती है? पूरी ज़िंदगी इसमें किसी का गुलाम बनकर रहना पड़ता है! कैसे चलेगा? वाणी और वर्तन इतना ही नहीं, लेकिन उसके मन को भी दिन-रात संभालते रहना पड़ता है! इसके बावजूद हाथ में क्या आएगा?! संसार की निरी परवशता, परवशता और परवशता! खुद पूरे ब्रह्मांड का मालिक बनकर संपूर्ण स्वतंत्र पद में आ सके, ऐसी क्षमता रखने वाला विषय में डूबकर परवश बन जाता है। यह तो कैसी करुणाजनक स्थिति!

विषय की वजह से जलन का कारण विषय के प्रति घोर आसक्ति है और सर्व आसक्ति का आधार विषय के वास्तविक स्वरूप की 'अज्ञानता' है। 'ज्ञानी पुरुष' के बिना यह अज्ञानता कैसे दूर होगी?!

जब तक विषय की मूर्च्छा में बरतता है, तब तक जीव के अधोगमन या ऊर्ध्वगमन का थर्मामीटर यदि आंकना हो तो वह उसकी विषय के प्रति क्रमशः रुचि या फिर अरुचि है! लेकिन जिसे संसार के सभी बंधनों से मुक्त होना है, वह यदि सिर्फ विषय बंधन से मुक्त हो गया तो सर्व बंधन आसानी से छूट जाते हैं! संपूर्ण ब्रह्मचर्य पालन से ही विषयासक्ति की जड़ निर्मूल हो जाए, ऐसा है।

यथार्थ ब्रह्मचर्य पालन करने में, उसकी शुद्धता को संपूर्ण रूप से सार्थक करने के लिए 'ज्ञानी पुरुष' के आश्रय में रह कर एक जन्म बीत जाए तो वह अनंत जन्मों की भटकन का अंत ला दे, ऐसा है! इसमें यदि कोई अनिवार्य कारण है तो वह है खुद का ब्रह्मचर्य पालन करने का दृढ़ निश्चय। उसके लिए ब्रह्मचर्य के निश्चय को तोड़ने वाले हर एक विचार को पकड़कर उसे जड़ से उखाड़ते रहना है। निश्चय का छेदन करने वाले विचार, जैसे कि 'विषय के बिना रहा जा सकेगा या नहीं? मेरे सुख का क्या? पत्नी के बिना रहा जा सकेगा या नहीं? मुझे किसका सहारा? पत्नी के बिना

अकेले कैसे निभा पाऊँगा ? जीवन में किसकी हूंफ (अवलंबन, सलामती) मिलेगी ? घर वाले नहीं मानेंगे तो ?!' वगैरह वगैरह निश्चय का छेदन करने वाले अनेकों विचार स्वभाविक रूप से आएँगे ही। तब उन्हें तुरंत उखाड़कर निश्चय को वापस और अधिक से अधिक मज़बूत कर लेना है। विचारों को खत्म करने वाला यथार्थ 'दर्शन' भीतर खुद अपने आप को दिखाना पड़ेगा, कि 'विषय के बिना कितने ही जी चुके हैं। इतना ही नहीं लेकिन सिद्ध भी बने हैं। खुद आत्मा के रूप में अनंत सुख का धाम है। विषय की उसे खुद को ज़रूरत ही नहीं है। जिनकी पत्नी का देहांत हो जाए, क्या वे अकेले नहीं जीते ? हूँफ किसकी खोजनी है ? खुद का निरालंब स्वरूप प्राप्त करना है और दूसरी ओर हूँफ खोजनी है ? ये दोनों एक साथ कैसे हो सकते हैं ?' और जहाँ खुद का निश्चय मेरु पर्वत की तरह अडिग रहता है, वहाँ कुदरत भी उसका साथ देती है और विषय में फिसलने वाले संयोग ही मिलने नहीं देती। अर्थात् खुद के निश्चय पर ही पूरा आधार है।

ब्रह्मचर्य पालन करना है, ऐसा अभिप्राय दृढ़ होने से ही कहीं पूरा नहीं हो जाता। ब्रह्मचर्य की जागृति उत्पन्न होना अति-अति महत्वपूर्ण चीज़ है। प्रतिक्षण ब्रह्मचर्य की जागृति रहे, तब ब्रह्मचर्य वर्तन में रह सकता है। मतलब जब दिन-रात ब्रह्मचर्य से संबंधित विचारणा ही चलती रहे, निश्चय दृढ़ होता रहे, संसार का वैराग्य लाने वाला स्वरूप दिन-रात दिखता रहे, ब्रह्मचर्य के परिणाम सतत दिखते रहें, किसी भी संयोग में ब्रह्मचर्य नहीं भूले, जब ऐसी उत्कृष्ट दशा में आ जाए, तब अब्रह्मचर्य की ग्रंथियाँ टूटने लगती हैं। ब्रह्मचर्य की जागृति इतनी अधिक बर्ते कि विषय का एक भी विचार, एक क्षण के लिए भी विषय की तरफ चित्त का आकर्षण, उसकी जागृति के बाहर नहीं जाए और वैसा होने पर तत्क्षण प्रतिक्रमण हो जाए और उसका कोई भी स्पंदन नहीं रहे, इतना ही नहीं लेकिन सामायिक में उस दोष का गहराई से विश्लेषण करके जड़मूल से उखाड़ने की प्रक्रिया चलती रहे, तब जाकर विषयबीज निर्मूलन के यथार्थ मार्ग पर प्रयाण होगा।

ब्रह्मचर्य का निश्चय दृढ़ हो जाए और ध्येय ही बन जाए, फिर उस ध्येय के प्रति निरंतर 'सिन्सियर' रहने से, ध्येय तक पहुँचाने वाले संयोग आसानी से सामने आते जाते हैं। ध्येय निश्चित होने के बाद 'ज्ञानी पुरुष' के

वचन उसे आगे ले जाते हैं, या फिर फिसलने वाली परिस्थिति में वह वचन ध्येय को पकड़े रखने में सहायक बन जाते हैं। ऐसे करते-करते अंत में खुद ही ध्येय स्वरूप बन जाता है। उसके बाद फिर भले ही किसी भी तरह के डिगाने वाले, अंदर के या बाहर के ज़बरदस्त विचित्र संयोग आ जाएँ, फिर भी जिसका निश्चय नहीं डिगता, जो निश्चय के प्रति ही 'सिन्सियर' रहता है, उसे दिक्कत नहीं आती।

शुद्ध ब्रह्मचर्य पालन करने के लिए 'ज्ञानी पुरुष' का सानिध्य एवं ब्रह्मचारियों का संग अति-अति आवश्यक है। उसके बगैर भले ही कितनी भी स्ट्रोंग भावना होगी, फिर भी सिद्धि तक पहुँचने में अनेकानेक अंतराय आ सकते हैं! 'ज्ञानी पुरुष' के सतत् मार्गदर्शन तले साधक मार्ग पर आने वाली हर एक मुश्किल को पार कर सकता है! और गृहस्थियों के संग के असर से दूर रहकर, ब्रह्मचारियों के ही वातावरण में ठेठ तक खुद के ध्येय को पकड़े रखकर ध्येय को प्राप्त कर लेता है। 'ज्ञानी पुरुष' के उपदेश को ग्रहण करके ब्रह्मचर्य के दृढ़ निश्चय वाला साधक, ब्रह्मचारियों के संग के बल से भी पार उतर सकता है, ऐसा है!

ब्रह्मचर्य की भावना जागृत होने और उसके प्रति दृढ़ निश्चय हो जाए, उसके लिए सतत् मार्गदर्शन मिलता रहे, वह तो अत्यंत आवश्यक है, लेकिन हर तरह से ब्रह्मचर्य की 'सेफ साइड' रखने के लिए खुद की आंतरिक जागृति भी उतनी ही ज़रूरी है। 'अनसेफ' जगह से 'सेफली' निकल जाने की जागृति और 'प्रेक्टिकल' में उसकी समय सूचकता की बाड़ साधक के पास होना ज़रूरी है। वर्ना जो दुर्लभ है, ब्रह्मचर्य के ऐसे उगे हुए पौधे को बकरें चबा डालेंगे! एक तरफ मौत को स्वीकार करना पड़े तो उसे सहर्ष स्वीकार कर ले, लेकिन खुद की ब्रह्मचर्य की 'सेफ साइड' न चूके, स्थूल संयोगों के क्रिटिकल दबाव के बीच भी, वह विषय के गड्ढे में गिरे ही नहीं, ब्रह्मचर्य भंग होने ही न दे, इस हद तक की 'स्ट्रोंगनेस' ज़रूरी है। लेकिन उसके लिए जागृति कैसे लाई जाए? वह तो ब्रह्मचर्य पालन करने की खुद की साफ नीयत, उसकी संपूर्ण 'सिन्सियरिटि' से ही आ सकती है!

ब्रह्मचर्य की 'सेफ साइड' के लिए आंतरिक और बाह्य 'एविडेन्स' को सिफ़त से खत्म करने की क्षमता प्रकट होनी ज़रूरी है। आंतरिक विकारी

भावों को समझपूर्वक, ज्ञान के पुरुषार्थ से विलय करे, जिनमें से विषय जो है वह संसार की जड़ है, प्रत्यक्ष नर्क समान है, फिसलाने वाली चीज़ है, जगत् कल्याण के ध्येय में अंतराय लाने वाली चीज़ है और 'श्री विज़न' की जागृति और अंत में 'विज्ञान जागृति' द्वारा आंतरिक विषय को खत्म करें। 'विज्ञान जागृति' में खुद कौन है, खुद का स्वरूप कैसा है, विषय का स्वरूप क्या है, वे किसके परिणाम है, आदि पृथक्करण के परिणाम स्वरूप आंतरिक सूक्ष्म विकारी भाव भी क्षय होते हैं। हालांकि बाह्य संयोगों में दृष्टिदोष, स्पर्शदोष और संगदोष से विमुख रहने की व्यवहार जागृति का उत्पन्न होना भी ज़रूरी है। वर्ना थोड़ी सी भी अजागृति विषय के कौन से और कितने गहरे गड्ढे में गिरा दे, वह कोई नहीं बता सकता!

विषय का रक्षण, विषय के बीज को बार-बार सजीव कर देता है। 'विषय में क्या बुराई है,' कहा कि विषय का हुआ रक्षण! 'विषय तो स्थूल है, आत्मा सूक्ष्म है, मोक्ष प्राप्ति के मार्ग में विषय बाधक नहीं है। भगवान महावीर ने भी शादी की थी, फिर हमें क्या दिक्कत है?' बुद्धि ऐसी वकालत करके विषय का ज़बरदस्त 'प्रोटेक्शन' करवाती है। एक बार विषय का 'प्रोटेक्शन' हुआ कि उसे जीवनदान मिल गया! फिर उसमें से वापस जब जागृति के शिखर तक पहुँचे, तब जाकर विषय में से छूटने के पुरुषार्थ में आ सकता है! वर्ना वह विषयरूपी अंधकार में मटियामेट हो जाएगा, यह इतना भयंकर है!

विषयी सुखों की मूर्च्छा ऐसी है कि कभी भी मोक्ष में नहीं जाने दे। लेकिन विषयी सुख परिणाम स्वरूप दु:ख देने वाले ही सिद्ध होते हैं। प्रकट 'ज्ञानी पुरुष' द्वारा विषयी सुखों की(!) यथार्थता का पता चलता है। उस समय जागृति में आकर उसे सच्चे सुख की समझ उत्पन्न होती है तथा विषयी सुख में असुख की पहचान होती है। लेकिन फिर ठेठ तक 'ज्ञानी पुरुष' की दृष्टि से चलकर विषय बीज निर्मूल करना है। उस पथ पर हर प्रकार से 'सेफ साइड' का ध्यान रखकर पार उतर चुके 'ज्ञानी पुरुष' द्वारा बताए गए रास्ते पर चलकर ही साधक को, वह साध्य सिद्ध करना होता है।

जिसे इसी देह में आत्मा का स्पष्टवेदन अनुभव करना हो, उसे विशुद्ध ब्रह्मचर्य के बिना इसकी प्राप्ति संभव ही नहीं है। जब तक ऐसी सूक्ष्मातिसूक्ष्म

'रोंग बिलीफ' है कि विषय में सुख है, तब तक विषय के परमाणु संपूर्ण रूप से निर्जरित नहीं होंगे। जब तक वह 'रोंग बिलीफ' संपूर्ण सर्वांग रूप से खत्म न हो जाए तब तक अति-अति सूक्ष्म जागृति रखनी चाहिए। ज़रा सा भी झोंका आ जाए तो वह संपूर्ण निर्जरा (आत्म प्रदेश में से कर्मों का अलग होना) होने में अंतराय डालती है।

विषय होना ही नहीं चाहिए। हम में विषय क्यों रहे? या फिर ज़हर पीकर मर जाऊँगा लेकिन विषय के गड्ढे में गिरूँगा ही नहीं, ऐसा अहंकार करके भी विषय से दूर रहने जैसा है। यानी किसी भी रास्ते से अंत में अहंकार करके भी इस विषय से मुक्त होने जैसा है। अहंकार से ब्रह्मचर्य पकड़ में आता है, जिसके आधार पर काफी कुछ स्थूल विषय जीता जा सकता है और फिर सूक्ष्मता से 'समझ' को समझकर और आत्मज्ञान के सहारे संपूर्ण रूप से, सर्वांग रूप से विषय से मुक्ति पा लेनी है।

जब तक निर्विकारी दृष्टि अनुभव में नहीं आयी, तब तक कहीं भी नज़रे मिलाना, वह भयंकर जोखिम है। उसके बावजूद जहाँ-जहाँ दृष्टि बिगड़े, मन बिगड़े, वहाँ-वहाँ उस व्यक्ति के शुद्धात्मा का दर्शन करके, प्रकट 'ज्ञानी पुरुष' को साक्षी रखकर मन से, वाणी से या वर्तन से हुए विषय से संबंधित दोषों का बहुत-बहुत पछतावा करना चाहिए, क्षमा प्रार्थना करना और फिर से कभी भी ऐसा दोष नहीं हो, ऐसा दृढ़ निश्चय करना चाहिए। यों यथार्थ रूप से आलोचना, प्रतिक्रमण और प्रत्याख्यान होगा, तब विषय दोष से मुक्ति होगी।

जहाँ ज़्यादा बिगड़ रहा हो, वहाँ उसी व्यक्ति के शुद्धात्मा से मन ही मन ब्रह्मचर्य की शक्तियाँ माँगते रहनी पड़ेंगी और जहाँ बहुत ही गाढ़ हो, वहाँ घंटों प्रतिक्रमण करके धोना पड़ेगा, तब जाकर ऐसे विषय दोष से छूटा जा सकेगा।

सामायिक में आज तक पहले जहाँ-जहाँ, जब-जब विषय से संबंधित दोष हुए हैं, उन सभी दोषों को आत्मभाव में रहकर, जागृतिपूर्वक देखकर उसका यथार्थ प्रतिक्रमण करना होता है, तब जाकर उन दोषों से मुक्ति मिलती है। पूरे दिन में हुए थोड़े से भी विचार दोष या दृष्टि दोष का प्रतिक्रमण

करके तथा उन दोषों का, विषय के स्वरूप का, उसके परिणामों का, उसके प्रति जागृति का, उपायों का पृथक्करण सामायिक में होता है। वास्तव में तो विषय दोषों का प्रतिक्रमण 'शूट ऑन साईट' करना ही चाहिए। फिर भी अगर अजागृति से छूट गया हो या फिर जल्दी में अधूरा हुआ हो, तो फिर जब सामायिक में स्थिरतापूर्वक संपूर्णतः गहराई से 'एनैलिसिस' होता है, तब जाकर वे दोष धुलते हैं।

जब विषय की गाँठें फूटती रहती हो, चित्त विषय में ही खोया रहता हो, बाह्य संयोग भी विकार को उत्तेजित करने वाले मिलें, ऐसे समय में कई बार श्रुतज्ञान भी काम में नहीं आता, वहाँ पर तो तब 'ज्ञानी पुरुष' के पास प्रत्यक्ष में ही उलझनों की आलोचना करें, प्रतिक्रमण करें, प्रत्याख्यान करें तभी हल आता है!

विषय रोग पूरी तरह से कपट के आधार पर ही टिका हुआ है और कपट को किसी के पास खुला कर दिया जाए तो विषय निराधार बन जाता है! निराधार विषय फिर कितना खींच सकेगा? विषय को निर्मूल करने के लिए 'यह' सब से बड़ी, मूल और अति महत्वपूर्ण बात है। विषय से संबंधित भले ही कितना भी भयंकर दोष हो गया हो, लेकिन अगर उसकी 'ज्ञानी पुरुष' के पास आलोचना की जाए तो दोष से छूटा जा सकता है! क्योंकि इसमें पिछले गुनाह नहीं देखे जाते, उसका निश्चय देखा जाता है! विषय में से छूटने की जो तमन्ना जागृत होती है, वह अगर ठेठ तक टिके तो वह तमन्ना ही विषय से मुक्त करवाती है।

अखंड ब्रह्मचर्य पालन करने का ध्येय, उसमें ब्रह्मचर्य की आवश्यकता, ब्रह्मचर्य की सिद्धि के परिणाम स्वरूप प्राप्त होने वाली आत्मसिद्धि की पराकाष्ठा, आत्मा का स्पष्ट अनुभव, आत्म सुख का स्पष्ट वेदन इत्यादि की निरंतर चिंतवना विषय की भ्रांत मान्यताओं से मुक्त करवाकर सही दर्शन फिट करवाती है। ऐसी चिंतवन वाली सामायिक बार-बार करनी चाहिए। उससे हर बार नया-नया दर्शन होता रहेगा और परिणामतः ध्येय स्वरूप हुआ जा सकेगा।

खुद का स्वरूप शुद्धात्मा है कि जो सूक्ष्मतम है और विषय मात्र स्थूल

है। स्थूल को सूक्ष्म कैसे भोग सकेगा? यह तो अहंकार से विषय भोगता है और आरोपण आत्मा पर जाता है! कैसी भ्रांति! 'आत्मा सूक्ष्मतम है और विषय स्थूल हैं। सूक्ष्मतम आत्मा स्थूल को कैसे भोग सकता है?' 'ज्ञानी पुरुष' के इस वैज्ञानिक वाक्य को, खुद के सूक्ष्मतम स्वरूप में ही निरंतर अनुभवपूर्वक रहने वाली दशा में पहुँचे बिना उपयोग करने लगे तो सोने की कटार पेट में भोंकने जैसी दशा होगी! इस वाक्य का उपयोग उन्हीं के लिए है जो जागृति की परम सीमा तक पहुँच चुके हों। और ऐसी जागृति तक पहुँचे हुए को स्थूल और सूक्ष्म विषय तो खत्म ही हो चुके होते हैं! विषयों से बाहर निकले बिना यदि इस वाक्य को खुद 'एडजस्ट' कर ले, उसका जोखिम तो 'खुद विषय से जकड़ा हुआ है और उससे छूटना चाहता है' ऐसा स्वीकार करने वालों से भी बहुत ही ज़्यादा है।

'अक्रम विज्ञान' से जो जागृति उत्पन्न होती है, उसकी सहायता से विषय संपूर्ण रूप से जीता जा सकता है। इस विज्ञान से, विषय का विचार तक नहीं आए, विषय में लेशमात्र भी चित्त न जाए, उस हद तक की शुद्धि हो सकती है। उसमें 'ज्ञानी पुरुष' की कृपा तो है ही और उसमें भी विशेष-विशेष कृपा ही बहुत-बहुत बड़ी भूमिका निभाती है। साधक का तो इसमें ऐसा ही दृढ़ निश्चय चाहिए कि विषय से छूटना ही है। बाकी तो 'ज्ञानी पुरुष' के वचनबल तथा 'ज्ञानी पुरुष' की विशेष कृपा से इस काल में भी अखंड शुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन किया जा सकता है!

अब अंत में, 'ज्ञानी पुरुष' की यह शील संबंधित वाणी अलग-अलग निमित्ताधीन, अलग-अलग क्षेत्रों में, संयोगाधीन निकली है। उस सारी वाणी को एक साथ संकलित करके यह 'समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य' ग्रंथ बना है। इस दुषमकाल के विकराल महा-महा मोहनीय वातावरण में 'ब्रह्मचर्य' से संबंधित अद्भुत विज्ञान जगत् को देना, वह सोने की कटार जैसा साधन है और उसका सदुपयोग अंत में आत्म कल्याणकारी बन सकता है, ऐसा है। पाठक को तो विनम्र निवेदन इतना ही करना है कि संकलन में किसी भी प्रकार की भास्यमान क्षतियों के लिए क्षमा करके इस अद्भुत ग्रंथ का सम्यक आराधन करें!

- डॉ नीरू बहन अमीन के जय सच्चिदानंद

उपोद्घात

खंड - 1

विषय का स्वरूप, ज्ञानी की दृष्टि से

1. विश्लेषण, विषय के स्वरूप का

विषय किसे कहते हैं ? जिस चीज़ में लुब्ध हो जाएँ, उसी को विषय कहते हैं। अन्य सबकुछ ज़रूरतें कहलाती है। खाना-पीना, वह विषय नहीं है।

विषय के कीचड़ में क्यों पड़ता है, वही समझ में नहीं आता। पाँच इन्द्रियों के कीचड़ में मनुष्य जो कि ऐश्वर्य प्राप्ति वाला ईश्वर कहलाता है, वह क्यों पड़ा हुआ है ?! जानवर भी इसे पसंद नहीं करते।

भगवान महावीर ने इस काल के मनुष्यों को ब्रह्मचर्य नामक यह पाँचवा महाव्रत क्यों दिया ? क्योंकि इस काल के लोग विषय का इतना भारी आवरण लेकर आए हैं कि उन्हें इसकी मूर्च्छा में से बाहर निकालकर मोक्ष में ले जाने के लिए, यह पाँचवा महाव्रत दिया !

विषय, वह विकृति है ! मन को बहलाने का साधन बनाया है ! पूरे दिन धूप से तप्त भैंसें गंदे कीचड़ में क्यों पड़ी रहती हैं ? ठंडक की लालच में दुर्गंध को भूल जाती हैं ! उसी तरह आज के मनुष्य दिन भर की भागदौड़ की थकान से तंग आकर, नौकरी-व्यापार या घर के टेन्शन में, अत्यंत मानसिक तनाव भुगतते हुए, अंतरदाह में से डाइवर्ट होने के लिए विषय के कीचड़ में कूद जाते हैं और उसके परिणाम भूल जाते हैं ! विषय भोगने के बाद अच्छे से अच्छा शूरवीर मुर्दे जैसा हो जाता है। क्या पाया उसमें से ?

विषय ज़हर है, ऐसा जानने के बाद फिर क्या कोई उसे छूएगा ? जगत् में भय रखने जैसा यदि कुछ हो तो वह, यह विषय ही है ! इन साँप, बिच्छू, बाघ और शेर से कैसे घबराते हैं ? विषय तो उनसे भी अधिक विषमय है। जिसका भय रखना है उसी को लोग परम सुख मानकर भोगते हैं ! विपरीत मति की परिसीमा कहाँ ?

अनंत जन्मों की कमाई का उच्च उपादान लेकर आता है, मोक्ष के लिए, और विषय के पीछे उसे पल भर में ही खो देता है! अरेरे! हे मानव! तेरी समझ कैसे आवृत हो गई?!

मनुष्य निरालंब नहीं रह सकता। निरालंब तो सिर्फ ज्ञानी पुरुष ही रह सकते हैं! उनके अलावा बाकी लोग बुद्धि के आशय में स्त्री, पुत्रादि के टेन्डर भरकर ही लाते हैं, जिससे उनके बिना उन्हें नहीं चलता। माँगी थी सिर्फ स्त्री, लेकिन साथ-साथ आ गए सास, ससुर, साला, साली, ममेरे ससुर, चचेरे ससुर। बड़ा लंगर लग गया! 'अरे, मैंने तो एक स्त्री ही माँगी थी और यह लश्कर कहाँ से आ गया?!' 'अरे, स्त्री कहीं ऊपर से टपककर आती है। वह आएगी तो साथ-साथ यह लश्कर आएगा ही न! तुझे क्या पता नहीं था?' इसी को कहते हैं अभानता! परिणाम का विचार ही नहीं आता कि एक विषय के पीछे कितने लंबे लश्कर की लाइन लग जाती है! अरे, घानी के बैल की तरह पूरी ज़िंदगी बीत जाती है उसके पीछे!

किसी ने सही बात सिखाई ही नहीं। बचपन से ही माँ-बाप या बुज़ुर्ग दिमाग़ में डालते रहते हैं कि बहू तो ऐसी लाएँगे और शादी किए बिना तो चलेगा ही नहीं और वंश तो चलता ही रहना चाहिए।

आत्मसुख चखने के बाद विषयसुख फीके लगते हैं, जलेबी खाने के बाद चाय कैसी लगती है? जीभ का विषय 'ओ के' कर सकते हैं, लेकिन बाकी सब में तो कुछ बरकत है ही नहीं। मात्र कल्पनाएँ ही हैं सारी! घृणा उपजाए, ऐसी चीज़ है विषय!

पाँचों इन्द्रिय में से किसी को भी विषय भोगना अच्छा नहीं लगता। आँखों को देखना अच्छा नहीं लगता, इसलिए अंधेरा कर देते हैं। नाक को भी बिल्कुल अच्छा नहीं लगता। जीभ की तो बात ही क्या करनी? बल्कि उल्टी हो जाए, ऐसा होता है। स्पर्श करना भी अच्छा नहीं लगता, फिर भी स्पर्श सुख मानते हैं! किसी को भी अच्छा नहीं लगता फिर भी किस आधार पर विषय भोगते हैं, वही आश्चर्य है न?! लोकसंज्ञा से ही इसमें पड़े हैं!

विषय, वह तो संडास है, *गलन* (डिस्चार्ज होना, खाली होना) है! इसमें भी तन्मयाकार हो जाता है इसलिए उसमें से नए कॉज़ेज़ पड़ते हैं! यदि विषय का पृथक्करण करे तो वह दाद को खुजलाने जैसा है!

अरे रे! अनंत जन्मों से यही किया?! इस गटर को कैसे खोला जा सकता है? निरी दुर्गंध, दुर्गंध और दुर्गंध! श्रीमद् राजचंद्र ने विषय को, 'वमन करने योग्य जगह भी नहीं है,' ऐसा कहा है! 'थूकने जैसा भी नहीं है वहाँ!'

विषय बुद्धि की वजह से नहीं है, मन की ऐंठन की वजह से है, इसलिए बुद्धि से उसे दूर किया जा सकता है।

प्याज की गंध किसे आती है? जो नहीं खाता हो, उसे! जिस तरह आहारी आहार करता है, उसी तरह विषयी विषय करता है! लेकिन वह लक्ष्य में रहना चाहिए न? लेकिन अज्ञानता के आवरण की वजह से लक्ष्य में नहीं रह पाता। चार दिन का भूखा बासी गंदी रोटी भी खा जाता है! आजकल के लोग तो इतने बदबूदार होते हैं कि यदि ज़रा भी नज़दीक आ जाएँ तो अपना सिर फट जाए। तभी तो ये सब परफ्यूम्स छिड़कते रहते हैं, चौबीसों घंटे!

विषय में सुख होता तो चक्रवर्ती राजा इतनी सारी रानियाँ होने के बावजूद सबकुछ छोड़कर सच्चे सुख की तलाश में निकल नहीं पड़ते!

जीवन किसलिए है? संसार बसाकर मरने के लिए?! सुख के लिए या ज़िम्मेदारियाँ खड़ी करके बीमारियों को न्यौता देने के लिए? इतने पढ़े-लिखे लेकिन पढ़ाई का उपयोग क्या है? मेन्टेनन्स के लिए ही न? इस इन्जन से कौन सा काम करवा लेना है? कुछ हेतु तो होना चाहिए न? इस मनुष्य जन्म का हेतु क्या है? मोक्ष! लेकिन अपनी दिशा कौन सी और चल रहे है कहाँ?!

चोट लगी हो और खून बह रहा हो तो हम उसे बंद क्यों करते हैं? बंद नहीं करेंगे तो? तब तो वीकनेस आ जाएगी! उसी तरह यह विषय बंद नहीं होने से शरीर में बहुत वीकनेस आ जाती है! ब्रह्मचर्य को *पुद्गलसार* कहा गया है! इसलिए उसे संभालो! इसलिए बचत करो, वीर्य और लक्ष्मी

की! भोजन खाकर उसका अर्क बनकर उससे वीर्य बनता है, जो अब्रह्मचर्य से खत्म हो जाता है। इसलिए ब्रह्मचर्य का सेवन करो!

जिस ब्रह्मचर्य से मोक्ष हो, वह काम का।

यह अक्रम विज्ञान विवाहित लोगों को भी मोक्ष में ले जा सकता है, ऐसा है!

जिसे पहले से ही ब्रह्मचर्य पालन करने की भावना हो, उसे दादा से शक्ति माँगनी चाहिए, 'हे दादा भगवान, मुझे ब्रह्मचर्य पालन करने की शक्ति दीजिए।' विषय का विचार आते ही, तत्क्षण ही उसे उखाड़कर फेंक देना चाहिए। किसी भी स्त्री के प्रति दृष्टि नहीं गड़ाना। दृष्टि आकृष्ट हो जाए तो तुरंत ही हटा लेनी चाहिए और शूट ऑन साइट प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए। विषय चाहिए ही नहीं, निरंतर ऐसा निश्चय रहना चाहिए और प्रखर आत्मस्थ ज्ञानी पुरुष की निश्रा में रहकर उसमें से छूटा जा सकता है!

हरहाए पशु की तरह जीने के बजाय तो एक कीले से बंधना अच्छा। जगह-जगह दृष्टि नहीं बिगड़नी चाहिए। स्त्री, वह पुरुष का संडास है और पुरुष, वह स्त्री का संडास है। संडास में क्या मोह रखना? ब्रह्मचर्य का निश्चय करते-करते अपने आपको खूब परखकर देखना पड़ता है। कसौटी पर रखना पड़ता है। यदि नहीं हो पाए, ऐसा हो तो शादी करना उत्तम है, लेकिन बाद में भी कंट्रोलपूर्वक होना चाहिए।

ब्रह्मचर्य आत्मसुख प्राप्ति में कैसे मदद करता है? बहुत मदद करता है। अब्रह्मचर्य से तो देहबल, मनोबल, बुद्धिबल, अहंकारबल सभी कुछ खत्म हो जाता है! जबकि ब्रह्मचर्य से पूरा अंत:करण सुदृढ़ हो जाता है!

ब्रह्मचर्य पालन हो सके तो उत्तम है और नहीं पालन हो सके तो सिर्फ इतना जान ले कि अब्रह्मचर्य गलत है, तो भी बहुत हो गया।

ब्रह्मचर्य महाव्रत बरता उसे कहते हैं कि जब विषय याद तक नहीं आए। ब्रह्मचर्य या अब्रह्मचर्य का जिसे अभिप्राय नहीं रहे, उसे वह व्रत बरता कहा जाता है।

बाकी, आत्मा तो सदा ब्रह्मचर्य वाला ही है। आत्मा ने विषय कभी भोगा ही नहीं। आत्मा सूक्ष्मतम है और विषय स्थूल है। इसलिए स्थूल को सूक्ष्म भोग ही नहीं सकता!

परम पूज्य दादाश्री कहते हैं कि, 'इस ज्ञान के बाद मुझे कभी विषय का विचार तक नहीं आया!' तभी तो ऐसी विषय रोग को उखाड़कर खत्म कर देने वाली वाणी निकली है!

2 . विकारों से विमुक्ति की राह

अक्रम मार्ग में विकारी पद है ही नहीं। जैसे पुलिस वाला पकड़कर करवाए, उस तरह का होता है। स्वतंत्र मर्ज़ी से नहीं होता। जहाँ विषय है, वहाँ पर धर्म नहीं है। निर्विकार रहे, वहीं पर धर्म है! किसी भी धर्म ने विकार को स्वीकार नहीं किया है। हाँ, कोई वाम मार्गी हो सकता है।

ब्रह्मचर्य, वह तो पिछले जन्म की भावना के परिणाम स्वरूप किसी महा-महा पुण्यशाली महात्मा को प्राप्त होता है। बाकी सामान्यत: तो जगह-जगह अब्रह्मचर्य ही देखने मिलता है! जिसे भौतिक सुखों की चाह है, उसे तो शादी कर ही लेनी चाहिए और जिसे भौतिक नहीं लेकिन सनातन सुख ही चाहिए, उसे शादी नहीं करनी चाहिए। उसे मन-वचन-काया से ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए।

भगवान को प्राप्त करने के लिए विकारमुक्त होना पड़ेगा और विकारमुक्त होने के लिए क्या संसारमुक्त होना पड़ेगा ? नहीं। मन तो, अगर जंगल में जाएँ तो भी साथ में ही जाएगा! क्या वह छोड़ने वाला है ? यदि ज्ञानी पुरुष मिल जाएँ तो आसानी से निर्विकार रहा जा सकता है।

तृष्णा, उसे कहते हैं कि जो भोगने से बढ़ती ही जाए और नहीं भोगने से मिट जाए! इसीलिए ब्रह्मचर्य की खोज हुई है न, विकारों से मुक्त होने के लिए!

विषयी कौन है ? इन्द्रियाँ या अंत:करण ? भैंस कौन और चरवाहा कौन ? सामान्यत: इन्द्रियों का दोष माना जाता है! नसबंदी करवाने से कहीं विषय छूटता है ? तेरी नीयत कैसी है विषय में ? चोर नीयत की वजह से

ही विषय टिका हुआ है। ज्ञान से सबकुछ चला जाएगा! विषय का विचार तक नहीं रहेगा!

मन का स्वभाव कैसा है? साल, दो साल किसी चीज़ से अलग रहे कि वह चीज़ विस्मृत हो जाती है, हमेशा के लिए!

वाम मार्गी क्या सिखाते हैं कि जिस चीज़ को एक बार जी भरकर भोग लेने पर ही उससे छूटा जा सकता है। विषय के बारे में तो बल्कि और ज़्यादा सुलगता जाता है। शराब से संतुष्ट होकर क्या उससे छूटा जा सकता है?

विषय के बारे में अगर कंट्रोल करने जाए तो वह और ज़्यादा उछलता है। मन को खुद कंट्रोल करने जाएगा तो नहीं हो सकता। कंट्रोलर ज्ञानी होने चाहिए। सचमुच तो मन को रोकना नहीं है। मन के कारणों को रोकना है। मन तो खुद ही एक परिणाम है। उसे बदला नहीं जा सकता। कारण बदले जा सकते हैं। कौन से कारण से मन विषय में चिपका है, उसे ढूँढकर उससे छूटा जा सकता है।

ज्ञानी चीज़ों को वासना नहीं कहते, रस(रुचि) को वासना कहते हैं। आत्मज्ञान के बाद वासनाएँ चली जाती हैं।

स्त्री से संबंधित वासनाएँ क्यों नहीं जातीं? जब तक 'मैं पुरुष हूँ' और 'वह स्त्री है', ऐसी मान्यता है, तब तक वासनाएँ हैं। वह मान्यता अगर निकल जाए तो वासना को जाना ही पड़ेगा! वह मान्यता जाएगी कैसे? जिसे वासनाएँ हैं, उससे आप खुद अलग ही हो, खुद कौन है, जब यह ज्ञान हो जाएगा, भान हो जाएगा, तभी वह छूट सकेगा। और ज्ञानी की कृपा से ज्ञान हो सकता है!

3. माहात्म्य ब्रह्मचर्य का

ब्रह्मचर्य पालन नहीं किया जा सके तो कोई बात नहीं, लेकिन उसके विरोधी तो बनना ही नहीं चाहिए। अध्यात्म मार्ग में ब्रह्मचर्य, वह सब से बड़ा एवं सब से पवित्र साधन है! नासमझी से अब्रह्मचर्य टिका हुआ है। ज्ञानी की समझ से समझ लेने पर वह रुक जाता है। व्यवहार में भी मन-वाणी और देह नॉर्मेलिटी में रहें, उसके लिए ब्रह्मचर्य को आवश्यक कहा गया

है। आयुर्वेद भी ऐसा ही सूचित करता है! छः महीने ही यदि मन-वचन और काया से ब्रह्मचर्य पालन करे तो मनोबल, वचनबल एवं देह में भी ज़बरदस्त बदलाव हो जाते हैं!

अब्रह्मचर्य से बहुत सारे रोग उत्पन्न होते हैं। उसमें तो मन और चित फ्रैक्चर हो जाते हैं!

कई मानसशास्त्री कहते हैं कि विषय बंद हो ही नहीं सकता, अंत तक! लेकिन दादाश्री क्या कहते हैं, कि विषय के अभिप्राय बदल जाएँ तो फिर विषय रहता ही नहीं। जब तक अभिप्राय नहीं बदल जाते, तब तक वीर्य का ऊर्ध्वगमन होता ही नहीं है। अक्रममार्ग में तो डायरेक्ट आत्मज्ञान प्राप्त होता है, वही ऊर्ध्वगमन है!

ज्ञानी पुरुष संपूर्ण निर्विषयी हो चुके होते हैं, इसलिए उनमें ज़बरदस्त वचनबल प्रकट हो चुका होता है, जो विषय का विरेचन करवा देता है। जो विषय का विरेचन नहीं करवाएँ, तो वह 'ज्ञानी पुरुष' है ही नहीं। सामने वाले की इच्छा होनी चाहिए।

खंड - 2

'शादी नहीं करने' के निश्चय वालों के लिए राह

1. किस समझ से विषय में से छूटा जा सकता है?

अक्रम विज्ञान थोड़े ही समय में ब्रह्मचर्य में सेफ साइड करवा देता है। कौन से जन्म में अब्रह्मचर्य का अनुभव नहीं किया है? कुत्ता, बिल्ली, पशु, पक्षी, मनुष्य, सभी ने कब नहीं किया? सिर्फ इस एक जन्म में ब्रह्मचर्य का अनुभव तो करके देखो! उसकी खुमारी, उसकी मुक्तता, निर्बोझता महसूस तो करके देखो!

ब्रह्मचर्य का निश्चय होना, वही बहुत बड़ी चीज़ है! ब्रह्मचर्य के दृढ़ निश्चयी का दुनिया में कोई नाम देने वाला नहीं है!

ब्रह्मचर्य का निश्चय देखा देखी, जोश में आकर या डर के मारे होगा तो उसमें दम नहीं होगा! वह कभी भी फिसलाकर गिरा सकता है। समझ से और मोक्ष के ध्येय के लिए करना है और उस निश्चय को बार-बार

मज़बूत करना है और ज्ञानी के पास जाकर निश्चय मज़बूत करवा लेना चाहिए और बार-बार बुलवाना, 'हे दादा भगवान, मैं ब्रह्मचर्य पालन करने का निश्चय मज़बूत करता हूँ। मुझे निश्चय मज़बूत करने की शक्ति दीजिए'। तो वह मिलेगी ही। जिसका निश्चय नहीं डिगता, उसका निश्चय सफल होता ही है और निश्चय डगमगाया कि सभी भूत घुस जाते हैं!

ब्रह्मचर्य का दृढ़ निश्चय धारण होने के बाद साधक को बार-बार एक प्रश्न सताता रहता है कि अंदर विषय के विचार तो आ रहे हैं। उसके लिए दादाश्री मार्ग बताते हैं कि विषय के विचार आएँ, उसमें हर्ज नहीं है लेकिन जो विचार आते हैं, उन्हें देखते रहो लेकिन 'तुम' उनके अमल में एकाकार मत हो जाना। वह कहे 'हस्ताक्षर करो!' तो भी तुम स्ट्रोंगली मना कर देना! और उसे देखते ही रहना। यह है मोक्ष का चौथा स्तंभ, तप और फिर उसके प्रतिक्रमण करवाना। मन-वचन-काया से जो जो विकारी दोषों, इच्छाएँ, चेष्टाएँ, वगैरह, उन सभी दोषों का प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। विषय के विचार से मुक्त हो जाए तो कैसा आनंद-आनंद हो जाता है। तो फिर यदि उससे हमेशा के लिए मुक्त हो जाएगा तो कितना आनंद रहेगा?

अब्रह्मचर्य के विचारों के सामने ज्ञानी से ब्रह्मचर्य की शक्तियाँ माँगते रहने से दो-पाँच साल में वैसे उदय आ जाएँगे। जिसने अब्रह्मचर्य जीत लिया उसने पूरी दुनिया जीत ली! उस पर सभी देवी-देवता बहुत खुश रहते हैं!

विषय के विचार आएँ तो, उन्हें दो पत्तियाँ निकलने से पहले ही उखाड़कर फेंक दो! फूटने के बाद विचार कोंपल से आगे, दो पत्तियों तक खिल नहीं जाने चाहिए। वहीं पर तुरंत ही उखाड़कर फेंक देने पड़ेंगे, तभी छूटा जा सकेगा! और यदि वह उग गया तो वह अपना असर दिखाए बगैर जाएगा ही नहीं!

विषय की दो स्टेज। एक चार्ज और दूसरा डिस्चार्ज। चार्ज बीज को धो देना है।

रास्ते पर निकले और 'सीन सीनरी' आए कि दृष्टि खींचे बिना नहीं रहती। वहाँ दृष्टि गड़ाएँगे तभी दृष्टि बिगड़ेगी न? इसलिए नीचा देखकर ही

चलना। इसके बावजूद यदि दृष्टि गड़ जाए तो तुरंत ही दृष्टि फेर लेनी चाहिए और तुरंत ही प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए, वह मत चूकना।

सभी स्त्रियाँ कहीं आकर्षित नहीं करतीं। जिसके साथ हिसाब बंधा हुआ हो, वही आकर्षित करती है। इसलिए उसे उखाड़कर फेंक दो। कुछ से तो, जब सौ-सौ बार प्रतिक्रमण किए जाएँ, तब छूट पाएँगे।

प्रतिक्रमण करने के बावजूद भी यदि दृष्टि ज़्यादा बिगड़े तो फिर उपवास या ऐसा कोई दंड लेना चाहिए। जिससे कि कर्म न बंधें। सामान्य भाव से ही देखना चाहिए। चेहरे को एकटक नहीं देखना चाहिए। तभी तो शास्त्रों में ब्रह्मचर्य पालन करने वाले को स्त्री की फोटो या मूर्ति तक भी देखने से मना किया गया है!

देहनिद्रा आ जाएगी तो चलेगा लेकिन भावनिद्रा नहीं आनी चाहिए। अगर ट्रेन सामने से आ रही हो तो वहाँ पर क्या कोई सोता रहेगा? ट्रेन तो मारेगी एक ही जन्म, लेकिन भावनिद्रा मार देगी अनंत जन्मों तक! जहाँ भावनिद्रा आएगी, वहाँ वह चिपकेगा। जहाँ भावनिद्रा आए, तब उसी व्यक्ति के शुद्धात्मा से ब्रह्मचर्य पालन करने की शक्ति माँगना कि, 'हे शुद्धात्मा भगवान, मुझे पूरे जगत् के प्रति ब्रह्मचर्य पालन करने की शक्ति दीजिए।' जहाँ मीठा लगता है, वहाँ भले ही कितनी भी जागृति रखने जाए, लेकिन जब कर्म का धक्का आता है, तो वहाँ सबकुछ भुला देता है! जहाँ *गलगलिया* (वृत्तियों को गुदगुदी होना, मन में मीठा लगना) हुआ कि तुरंत ही समझ जाना कि यहाँ फँसाव होगा।

जिसे सिर्फ आत्मा ही चाहिए, उसे फिर विषय कैसे हो सकता है?

अपनी माँ पर, बहन पर दृष्टि क्यों नहीं बिगड़ती? वह भी स्त्री ही है न? लेकिन वहाँ भाव नहीं किया है, इसलिए।

श्रीमद् राजचंद्र जी ने ब्रह्मचर्य के बारे में बहुत ही सुंदर खुलासा किया है, पद्य में। स्त्री को काष्ठ की पुतली मानो। विषय जीतने से पूरे जगत् का साम्राज्य जीता जा सकता है। ब्रह्मचर्य ही आत्मज्ञान के लिए पात्रता लाता है।

इस जन्म में अक्रमज्ञान द्वारा विषयबीज से बिल्कुल निर्ग्रंथ हुआ जा सकता है? दादाश्री कहते हैं कि 'हाँ, हो सकता है।' विषय का ज़रा सा भी ध्यान किया कि पूरा ज्ञान भ्रष्ट हो जाता है।

मन-वचन-काया से जो ब्रह्मचर्य पालन करता है, वह शीलवान कहलाता है। उसके कषाय भी बहुत ही क्षीण हो चुके होते हैं। हमें ब्रह्मचर्य का बल रखना है। विषय की गाँठ का छेदन अपने आप ही होता रहेगा।

2. दृष्टि उखड़े, 'थ्री विज़न' से

चटनी देखना अच्छा लगता है? खून, मांस देखना अच्छा लगता है? चटनी हरे खून की और मांस वगैरह लाल खून का! ढका हुआ मांस गलती से खा लें, ऐसा हो भी सकता है, लेकिन खुला हुआ?! उसी तरह यह देह जो है, वह रेशमी चादर से लपेटा हुआ हाड़-मांस ही है न? बुद्धि बाहर की सुंदरता ही दिखाती है जबकि ज्ञान आरपार, सीधा ही देखता है। इस आरपार दृष्टि को विकसित करने के लिए पूज्य दादाश्री ने थ्री विज़न का अद्‌भुत हथियार दिया है।

पहले विज़न में सुंदर स्त्री नेकेड दिखती है। दूसरे विज़न में स्त्री बगैर चमड़ी की दिखती है। तीसरे विज़न में पेट चीरा हुआ हो और उसमें आँतें, मल, मांस वगैरह सब दिखता है। सारी गंदगी दिखती है। फिर विषय उत्पन्न होगा ही नहीं न? अंत में आत्मा दिखता है। जिस रास्ते द्वारा दादाश्री पार निकल गए, विषय जीतने का वही रास्ता वे हमें दिखाते हैं!

कृपालुदेव ने कहा है कि, 'देखत भूली टले तो सभी दु:खों का क्षय होगा।'

सुंदर स्त्री को देखकर किसी पुरुष को खराब भाव हो जाएँ तो उसमें दोष किसका? क्या स्त्री का दोष कहलाएगा? नहीं, इसमें स्त्री का ज़रा सा भी दोष नहीं है। भगवान महावीर का लावण्य देखकर कई स्त्रियों को मोह उत्पन्न होता था। लेकिन भगवान को कुछ नहीं छूता था! स्त्रियों के उपयोग पर बहुत निर्भर करता है। स्त्रियों को ऐसे कपड़े, गहने या मेक-अप नहीं करने चाहिए कि जिसे देखने से पुरुषों को मोह उत्पन्न हो। अपना भाव

चोखा होना चाहिए तो कुछ बिगड़ सके, ऐसा नहीं है। भगवान को केश लुंचन क्यों करना पड़ा? इसी वजह से कि स्त्रियाँ उनके रूप को देखकर मोहित न हो जाएँ!

पहले के जमाने में मान में, कीर्ति में, पैसे में, सभी में मोह बिखरा हुआ था। अभी तो सारा मोह विषय में ही रहता है! फिर क्या कहा जा सकता है? एकावतारी बनना हो तो विषयमुक्त होना ही पड़ेगा। शूट ऑन साइट प्रतिक्रमण करके छूटा जा सकता है। अंदर रुचि का बीज पड़ा हुआ है, वह धीरे-धीरे पकड़ में आता है और उससे छूटा जा सकता है। रुचि की गाँठ अनंत जन्मों से अंदर पड़ी हुई है, जो कि कुसंग मिलते ही फूट निकलती है। इसलिए ब्रह्मचारियों का संग अति-अति आवश्यक है।

ब्रह्मचर्य के लिए संगबल की आवश्यकता है। कितना भी स्ट्रोंग निश्चय हो लेकिन कुसंग उसे तोड़ देता है! कुसंग या सत्संग मनुष्य में परिवर्तन ला सकता है!

3. दृढ़ निश्चय पहुँचाए पार

निश्चय किसे कहते हैं कि भले ही कैसा भी लश्कर आए फिर भी उस पर ध्यान न दें। निश्चय डगमगाए ही नहीं। भाव और निश्चय में फर्क है। भाव में से अभाव हो सकता है लेकिन निश्चय नहीं बदल सकता। अभी जो ब्रह्मचर्य का पालन हो रहा है, वह पूर्व जन्म में किए हुए निश्चय ओपन हो रहे हैं। जिस-जिस चीज़ का निश्चय किया है, वह प्राप्त होगा ही। निश्चय अगर ढीला हो तो टाइमिंग बदल जाता है।

निश्चय का स्क्रू दिन-रात टाइट करते ही रहना है। एक बार यदि निश्चय टूट गया तो फिर खत्म हो जाता है। अपने निश्चय को तोड़ता कौन है? अपना ही अहंकार। मूर्छित अहंकार। एक ही स्ट्रोंग अभिप्राय रहना चाहिए। उसमें छूट नहीं चलेगी।

निश्चय स्ट्रोंग रखने के लिए इतना सँभाल लो। एक तो किसी के सामने दृष्टि नहीं गड़ानी चाहिए, थ्री विज़न का तुरंत इस्तेमाल होना चाहिए और स्त्री का स्पर्श नहीं होना चाहिए। स्त्री स्पर्श ज़हरीला होता है। अगर

छू लिया हो तो वे परमाणु पूरी रात सोने नहीं देते। जब पुण्य ढलने लगें तो ब्रह्मचर्य को डिगा सकते हैं, वहाँ अगर निश्चय स्ट्रोंग रहेगा तो सिर्फ वही बचा सकेगा।

जिसे पूर्व में स्ट्रोंग भावना हुई हो उसका इस जन्म में स्ट्रोंग निश्चय रहता है और जो डगमगाए उसने, पूर्व में भावना की ही नहीं थी। यह तो देखा देखी से हुआ है। उसमें बहुत बरकत नहीं आती। उससे तो शादी कर लेना अच्छा। डगमग निश्चय वाले से ब्रह्मचर्य पालन नहीं हो सकता। व्रत भी नहीं लेना चाहिए। वह फिर टिकता नहीं है। ब्रह्मचर्य में अपवाद नहीं रखा जा सकता। स्टीमर में अपवाद के रूप में छेद रख सकते हैं? पोल मारने वाले (गड़बड़ करने वाले, इन्सिन्सियर) मन को कैसे रोका जा सकता है? निश्चय से। हर एक कार्य में निश्चय ही मुख्य है। आत्मा प्राप्त होने के बाद एकाकार होकर अहंकार से निश्चय नहीं करना है लेकिन अलग रहकर मिश्रचेतन से निश्चय करवाना है! कभी कभार ही स्लिप हो गए तो? एक ही बार नदी में डूब जाए तो?!

शास्त्रकारों ने एक बार के अब्रह्मचर्य को मरण कहा है। मरना बेहतर है लेकिन अब्रह्मचर्य मरण तुल्य माना जाता है।

जब कर्मों का फोर्स आए, तब आत्मा के गुणों के वाक्य ज़ोर से बोलकर जागृति में आ जाना, वह पराक्रम कहलाता है। स्ववीर्य को स्फुरायमान करना, उसे पराक्रम कहते हैं। पराक्रम से पहुँचने वाले को वापस मोड़ने की ताक़त किसी में नहीं है।

निश्चय के प्रति सिन्सियर रहे तो पार उतर सकते हैं। हर रोज़ सुबह में तय कर लेना कि 'इस जगत् की कोई भी विनाशी चीज़ मुझे नहीं चाहिए।' फिर उसके प्रति सिन्सियर रहना है। जितना सिन्सियर, उतनी ही जागृति! इसे सूत्र के रूप में पकड़ लेना। सिन्सियरिटी तो ठेठ मोक्ष ले जाती है। सिन्सियरिटी का फल मोरालिटी में आ जाता है। जो संपूर्ण रूप से मोरल हो गया, वह परमात्मा बनेगा।

'रिज पॉइन्ट' मतलब (झोंपड़ी के) छप्पर का सब से ऊँचा पॉइन्ट! जवानी का 'रिज पॉइन्ट' होता है, वह गुज़र गया तो जीत गया। उतना ही पॉइन्ट संभाल लेना चाहिए।

ब्रह्मचर्य के लिए आपकी दृढ़ प्रतिज्ञा होनी चाहिए। इतना ही नहीं लेकिन प्रतिज्ञा प्योर, बिना लालच की, बिना घड़भांज (बार-बार प्रतिज्ञा करना और तोड़ना,जोड़ना और तोड़ना) वाली होनी चाहिए। जिसकी नीयत चोर है, उसका निश्चय है ही नहीं। जहाँ क्षत्रियपना होता है, वहाँ नीयत चोर नहीं होती।

जैसे विष की परख नहीं करते हैं, वैसे ही विषय की भी परख नहीं करनी चाहिए। उसे तो उगते ही दबा देना चाहिए।

उदय किसे कहते हैं? संडास लगी हो तो कोई चारा है? वैसा ही उदय में होता है। स्ट्रोंग निश्चय हो कि मुझे विषय में फिसलना ही नहीं है, उसके बावजूद भी अगर फिसल जाए तो उसे उदय कहते हैं। सावधानीपूर्वक रहना है, फिर दिक्कत नहीं होगी। जो पानी में डूबने लगे, वह बचने के लिए क्या कुछ नहीं करेगा? वैसा ही ब्रह्मचर्य के लिए होना चाहिए। दृढ़ निश्चय के सामने सभी अंतराय झुक जाते हैं!

ब्रह्मचर्य पालन करने का निश्चय होने के बावजूद विषय के विचार परेशान करें तब साधक को क्या सावधानी रखनी चाहिए? एक तो इन विचारों को अलग रखना चाहिए और उसमें तन्मयाकार नहीं होना चाहिए, हस्ताक्षर नहीं करना चाहिए। यह पिछला भरा हुआ माल है, जो कि फूट रहा है, ऐसा समझकर परेशान मत होना। उसमें तन्मयाकार मत होना। बड़ा प्रतिक्रमण कर लेना। विचार घेर लें तो क्या दिक्कत है? जो होली में हाथ नहीं डालता वह क्या जलेगा? कितने भी मच्छर मंडराएँ, लेकिन उन्हें उड़ाने में देर कितनी? सिर्फ जागते रहना पड़ेगा! जितनी जुदापना की जागृति रहेगी, उतना ही विषय को जीता जा सकेगा!

ब्रह्मचर्य की पुस्तक बहुत ही हेल्पफुल रहेगी और उसे रोज़ पढ़ना।

4. विषय विचार परेशान करें तब...

मन तो पोल मारने में एक्सपर्ट। वहाँ बहुत जागृति रखकर जीत जाना है!

जब ब्रह्मचर्य की सुंदर परिणतियाँ रहने लगें, तब भीतर बुद्धि वकालत

किए बिना रहती ही नहीं कि विषय में क्या परेशानी है? उसे तो तुरंत उखाड़कर फेंक देना। नहीं तो वह पोल आराम से शादी करवा देगी!

मन जड़ है। उसके साथ कुशलता से काम *निकाल* (निपटारा) लेना चाहिए। जिस तरह छोटे बच्चे को लॉली पॉप देकर पटाकर मन चाहा करवा लेते हैं, उसी तरह मन को बार-बार समझा-पटाकर विषय में से ब्रह्मचर्य की ओर मोड़ लेना चाहिए।

5. नहीं चलना चाहिए, मन के कहे अनुसार

दो रोटी खाने का नियम रखा हो और फिर मन के कहे अनुसार चलें तो नियम टूट जाता है। मन तो बहुत कहेगा, 'खाओ, खाओ' लेकिन नहीं। अगर उसका मान लें तो फिर मन ढीला पड़ जाएगा। जो मन के कहे अनुसार चलता है, उसका ब्रह्मचर्य टिकता ही नहीं। तभी तो कबीर साहब ने कहा है, 'मन का चलता तन चले ताका सर्वस्व जाए।' मन के कहे अनुसार चलने वाले का भरोसा नहीं कर सकते। उसकी लॉ-बुक ही अलग होती है। स्वच्छंद होता है।

मन सामायिक और प्रतिक्रमण नहीं करने देता। पोल मारता है। ध्येय के अनुसार चलना है, मन के कहे अनुसार नहीं! मन का और ध्येय का क्या लेना-देना। स्ट्रोंग निश्चय वाला मन की नहीं सुनता।

ब्रह्मचर्य का निश्चय हो लेकिन शादी का कर्म पीछे पड़े तो? शादी ही करवा देगा न! वहाँ ज्ञान से ही समाधान होगा। ज्ञान तो अच्छे-अच्छे कर्मों को मिटा दे!

ब्रह्मचर्य पालन करने वाले का माइन्ड वेवरींग हो तो भी उसमें बरकत नहीं आएगी। मन का मानना ही नहीं चाहिए। अपने अभिप्राय के अनुसार चलना चाहिए। ब्रह्मचर्य में तो छोटे से छोटे अवरोधों में भी जागृति रखनी चाहिए। वहाँ स्ट्रोंग रहना चाहिए। वहाँ एक भी पोल नहीं चलेगी। वर्ना ध्येय को उड़ा देगी! मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार सभी ध्येय के विरोधी हो जाएँ, फिर भी अगर स्ट्रोंग रहे तो सभी को ठंडा होना पड़ेगा। लेकिन सिद्धांत को पकड़े रहने के लिए पहले से ही सजग रहना ज़रूरी है। हम चेतन हैं और मन जड़, तो मन का कभी सुनना चाहिए?

मन समाधान ढूँढता है, इसलिए समाधानी व्यवहार रखना। शादी करने में क्या नुकसान है, बार-बार वह बताना। मन का स्वभाव विरोधाभासी है। वह ब्रह्मचर्य के सुख भी एकस्ट्रीम बताता है और विषय का सुख भी एकस्ट्रीम बताता है। उसका कोई नियम नहीं है। वहाँ हमें अपने सिद्धांत के अनुसार मन को मोड़ना चाहिए। और फिर मन जिद्दी भी नहीं है। जैसे मोड़ोगे, वैसे मुड़ जाए, ऐसा है।

मन के आधार पर किया हुआ निश्चय और ज्ञान के आधार पर किए हुए निश्चय में क्या फ़र्क़ है? ज्ञान से किया हुया निश्चय बहुत सुंदर होता है, मन को जीतने की तमाम चाबियाँ होती हैं, नींव बहुत मज़बूत होती है। वहाँ पर मन का नहीं चलता।

ब्रह्मचारी आप्तपुत्र कैसे होने चाहिए? उपदेश दे सकें या न भी दे सकें, उसमें दिक्कत नहीं है। लेकिन सिद्धांत को पकड़े रखना पड़ेगा। दूसरा, आप्तपुत्रों द्वारा किसी के साथ कषाय नहीं होने चाहिए। सभी के साथ अभेदता रहनी चाहिए। सामने वाला भेद डालता रहे, तब भी वह अभेदता ही रखे।

6. 'खुद' खुद को डाँटना

'हम' अपने आपको हमेशा ही पुचकारते रहे हैं। बड़े से बड़ी गलतियाँ करें, तो भी ढकते रहते हैं उसे! फिर क्या दशा होगी?! कभी 'हमने' अपने आपको डाँटा है? प्रकृति की *अटकण* (जो बंधनरूप हो जाए, आगे नहीं बढ़ने दे)के रूप में हुए विषय दोषों को निकालना हो तो उसे कितना ही उलाहना देना पड़ता है! रुलाना पड़ता है। अलग रहकर खुद ही खुद को डाँटे तो उसका राह पर आ जाएगा न?! 'हम' अपने आप के साथ एक रहकर यानी एक होकर काम करेंगे तो हमें भी भुगतना पड़ेगा और अलग रहकर काम लेंगे तो भुगतना नहीं पड़ेगा।

परम पूज्य दादाश्री ने खुद से अलग रहने के लिए बहुत ही सुंदर अलग अलग प्रयोग बताए हैं। उसमें भी *अरीसा* (दर्पण) सामायिक यानी कि दर्पण में देखकर अपने आपसे बातचीत करने का प्रयोग, प्रकृति को डाँटना आदि।

7. पछतावे सहित प्रतिक्रमण

एक बार बीज पड़ जाए तो वह रूपक में आएगा ही। लेकिन उसके जाम होने से पहले, मरने से पहले कम ज़्यादा या साफ हो सकता है। इसलिए दादाश्री विषयदोष वाले को रविवार को उपवास करके, पूरे दिन प्रतिक्रमण करके दोष को धोते रहने की आज्ञा देते थे, ताकि कम हो जाए!

विषय विकार संबंधित दोषों के सामायिक, प्रतिक्रमण कैसे करने हैं? सामायिक में बैठकर, अभी तक जो जो दोष हुए हैं, उन्हें देखना है, उनका प्रतिक्रमण करना है और भविष्य में गलती नहीं हो ऐसा निश्चय करना है!

सामायिक में बार-बार वही के वही दोष दिखते रहें तो क्या करना चाहिए? जब तक दोष दिखते रहें, तब तक प्रतिक्रमण करते रहना है। उसके लिए क्षमा माँगना, उसके लिए पश्चाताप करना, बहुत बार ऐसा करते रहने से विषय की गाँठ विलीन होती जाएगी। जो जो गाँठें विलय करनी हों, वे इस तरह विलय हो सकती हैं! यहाँ पर जो सामायिक होती हैं, उसमें गाँठें विलय होती हैं।

विषय में सुख बुद्धि किसे महसूस होती है? अहंकार को। बार-बार वही की वही चीज़ दी जाए तो वापस उसी में से दुःख बुद्धि खड़ी होती है! इसलिए वह *पुद्गल* है, *पूरण* (चार्ज होना, भरना)-*गलन* है।

विषय का साइन्स क्या है? जिस तरह पिन लोहचुंबक की ओर आकर्षित होती है, उसी तरह भीतर विषय के परमाणुओं का आकर्षण सामने वाले व्यक्ति के विषय के परमाणुओं के प्रति होता है। यह सिर्फ परमाणुओं का ही आकर्षण है और खुद तो इससे अलग, शुद्धात्मा ही है, यदि ऐसा लक्ष्य में रहे तो कुछ भी नहीं छू सकता। लेकिन एक्ज़ेक्ट ऐसी जागृति किसे रह सकती है?

विषय की गाँठ फूटे और उसमें एकाग्रता हो जाए, तो उसी को विषय कहा गया है। यदि एकाग्रता नहीं हो तो उसे विषय नहीं कहते। जिसकी यह गाँठ विलय हो गई, उसे फिर पिन और लोहचुंबक का संबंध ही नहीं रहा।

विषय स्थूल स्वभावी है और आत्मा सूक्ष्म स्वभावी है, ऐसी जागृति रहती नहीं है न! उसमें तो ज्ञानी का ही काम है। ये गाँठें, ये तो आवरण हैं। जब तक ये गाँठें हैं, तब तक आत्मा का स्वाद चखने को नहीं मिलता। जिसके ज़्यादा विचार आएँ, जहाँ दृष्टि अधिक आकृष्ट हो जाए, वहाँ पर गाँठ बड़ी है। दादाश्री ने अक्रम मार्ग में सामायिक को बहुत महत्व दिया है। यहाँ पर तो आत्मस्वरूप होकर दोषों को देखते रहना है। उससे दोष विलय होते हैं, यह एक फायदा और दूसरा खुद ज्ञाता-दृष्टा पद में रहा, उतना आत्मा में रहने का फल भी मिलता है! आनंद-आनंद हो जाता है! सामायिक में तमाम प्रकार के दोषों को रखकर उनसे मुक्त हुआ जा सकता है। इसके बिना इतनी सारी गाँठें विलय हो सकें, ऐसा नहीं है। अक्रम की यह सामायिक आसान, सीधी और नकद फल देने वाली है! समूह में की हुई सामायिक बहुत ही प्रभावशाली होती है! पूज्य दादाश्री सामायिक करने पर बहुत ज़ोर देते थे।

अब विषय नहीं चाहिए, लेकिन क्या विषय आपको छोड़ देंगे? खड्डे में गिरना किसे पसंद है? फिर भी खड्डा सामने आ जाए तो क्या वह छोड़ देगा? खड्डे से बचने के लिए क्या करना चाहिए? हर रोज़ एक घंटा दादाश्री से माँगना कि, 'हे दादा, मुझे ब्रह्मचर्य की शक्ति दीजिए।' तो शक्ति मिल जाएगी और साथ ही साथ प्रतिक्रमण भी हो जाएगा। फिर उसकी चिंता या बोझ दिमाग़ पर नहीं रखना है। खड्डे में गिरा कि तुरंत सामायिक करके धो देना।

खड्डे में गिर जाए, उसमें ज्ञानी को कोई हर्ज नहीं है लेकिन तुम उसका उपाय करना। सामायिक! वही एकमात्र उपाय है!

8. स्पर्श सुख की भ्रामक मान्यता

स्त्री के अंगों को देखने में सुख है, यह मान्यता बिल्कुल गलत है। निरी गंदगी ही है। लेकिन यह तो जो रोंग बिलीफ वाला मन है, वह उस तरफ खींच ले जाता है। लेकिन आज का ज्ञान रोकता है, उसमें से। अगर सौ बार रोंग बिलीफ को सच माना तो सौ बार उसे तोड़ना पड़ेगा। स्त्री के स्पर्श के समय जागृति नहीं रहती और सुख भोग लेता है और स्त्री स्पर्श भी उतना ही पोइज़नस होता है। वह इतना अधिक पोइज़नस होता है कि

मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार, सभी पर आवरण आ जाता है। बेहोश कर देता है! मूर्छित! उस समय जानवर ही बना देता है! शराब पीने के बाद मूर्छित हो जाता है, वैसा। लेकिन शराब पीने के बाद बेहोश होते होते तो आधा घंटा या घंटा बीत जाता है और यह तो छूते ही इलेक्ट्रिसिटी की तरह असर डाल देता है और अंदर विषय चढ़ जाता है! देर ही नहीं लगती! दादाश्री निज अनुभव कहते हैं, ''कम उम्र में सिर्फ छूने से ही अंदर घबराहट हो गई थी कि अरेरे, यह क्या हो जाता है? यह तो इंसान में से हैवान बन जाते हैं! फिर इसकी 'नो लिमिट'। हम तो अनंत जन्म से ब्रह्मचर्य के रागी हैं इसलिए यह अच्छा नहीं लगता, लेकिन मजबूरन हुआ था। थोड़ा बहुत संसार भोगा लेकिन अरुचिपूर्वक, प्रारब्धवश, ऐसा तो क्या शोभा देता होगा?''

स्पर्श सुख के समय क्या करना चाहिए? 'यह रोंग बिलीफ है,' लगातार ऐसे टोकते रहना और स्पर्श ज़हर जैसा लगना चाहिए। लेकिन यह तो पूर्व जन्म की मान्यता है कि इसमें सुख है, उस आधार पर सुख लगता है। इसलिए अब उस मान्यता को हटा देना है। बाद में ज्ञान की पराकाष्ठा में स्पर्श सहज लगेगा।

स्त्री का दोष नहीं है, अपनी मान्यता का दोष है। विषय में सुख है, यह बिलीफ कैसे बैठ गई? लोकसंज्ञा से। लोगों के कहने से। यह मात्र साइकोलॉजिकल इफेक्ट है।

दृष्टि आकृष्ट होने का साइन्स क्या है? जहाँ पूर्व जन्म का कुछ हिसाब है, वहाँ दृष्टि आकृष्ट हो जाती है। दृष्टि आकृष्ट हुई और उसमें आकर्षण और विषय की रमणता हुई कि परमाणुओं का ज़बरदस्त असर होने लगता है। फिर खिंचाव और आकर्षण बढ़ता जाता है। उसका पीक (उच्चतम) पॉइन्ट आने के बाद कुदरती रूप से विकर्षण होने ही लगता है। आकर्षण शुरू हुआ तभी से विकर्षण के कारणों का सेवन शुरू हो गया, ऐसा माना जाता है। ऐसा है परमाणुओं का अट्रैक्शन (आकर्षण)! परमाणुओं का आकर्षण करता है यह सारा काम। आकर्षण के बाद खुद की सत्ता रहती ही नहीं। फिर विकर्षण होता ही है। चारा ही नहीं है। वे परमाणु ही खुद विकर्षण करवाकर अलग करवा देते हैं! उसके अमल का फल देकर!

मन और चित्त विषय में बहुत बड़ी भूमिका निभाते हैं। चित्त बार-बार वहीं पर रमणता करता है। फिर उसका *गलन* हुए बिना रहता ही नहीं। एक बार विषय को छूआ तो फिर दिन-रात उसी के सपने आते रहते हैं। इतनी अधिक पकड़ आ जाती है, चित्त पर विषय की!

विषय के जो विचार आते हैं, वे मन की ग्रंथि में से। उसका और चित्त का कोई लेना देना नहीं है। चित्त ने यदि विषय को स्पर्श कर लिया तो कितने ही समय तक ध्यान में स्थिरता नहीं रह पाती। दादाश्री कहते हैं कि हमारा चित्त कैसा है कि कभी भी अपने स्थान पर से खिसका ही नहीं। तभी तो दादा की आँखों में सदा वीतरागमय प्रेम और करुणा ही दिखती है!

चित्तवृत्तियाँ जहाँ-जहाँ भटकती हैं, वहाँ आत्मा को भटकना पड़ता है! चित्तवृत्तियाँ अगले जन्म के लिए जाने-आने का नक्शा बनाती है। चित्त, वह मिश्रचेतन है इसलिए भटकाने वाला है। जहाँ-जहाँ चिपके, वहाँ-वहाँ! अब जहाँ जाए वहाँ तुरंत ही प्रतिक्रमण से धो दे तो वह विषय दोष नहीं माना जाएगा।

जो चित्त को डिगाएँ, वे सभी विषय हैं। चित्त को आत्मा से बाहर जकड़कर रखें, वे सभी विषय। विचारों की नहीं लेकिन चित्त की झंझट बड़ी है! मन में भले ही विषय के कितने भी विचार आएँ, उन्हें हटाते रहो। उनसे बातचीत करो तो परेशानी नहीं होगी। लेकिन चित्त तो बाहर जाना ही नहीं चाहिए। पहले जिन पर्यायों का खूब वेदन किया होगा, चित्त अभी वहाँ पर ज़्यादा जाता है। वहीं चिपका रहता है। उसे *अटकण* कहा गया है। उसे अलग रखकर कहना, 'तू ज्ञेय और मैं ज्ञाता।' उससे फिर तुरंत मुक्त हो जाएगा। यह चित्त फ्रैक्चर होने से विषय में फँस गया है, जिसका फल है जानवर गति!

9. 'फाइलों' के सामने सख़्ती

स्त्री यदि मोह का जाल डाले तो उससे कैसे बचें? जहाँ फँसाव हो तो वहाँ हमें दृष्टि ही नहीं डालनी चाहिए और उसकी आँखों से आँखे भी नहीं मिलानी चाहिए। उसे मिलना ही मत। कई बार ऐसे संयोगों में आ

जाते हैं कि हमारे जान-पहचान वाले या सगे संबंधियों की ही दृष्टि खराब होती है, तो वहाँ पर क्या करना चाहिए? जैसे हमें उसके इरादों का कुछ पता ही नहीं है, 'नो रिस्पॉन्स', ऐसे रखना और नीचे देखकर, जितना हो सके उतना उसे टालना। आकर्षण में बह मत जाना। जहाँ पर आँखें आकृष्ट हों, वहाँ से दूर रहना। निकाचित विकारी माल वाला, सत्संग में भी फिसल जाता है, वह तो भारी नुकसान उठाता है। उसे ज्ञानी से पूछकर साफ कर लेना चाहिए।

'फाइल' खुली कब कहलाएगा कि थोड़ी ही देर में आकृष्ट हो जाए। भूत की तरह लिपट जाए। 'फाइल' सामने आए तो अंदर उथल-पाथल मचा देती है। ऊपर जाता है, नीचे जाता है... भीतर चंचलता खड़ी हो जाती है। अकारण मुख पर लाली आ जाती है, खुश-खुश हो जाता है और 'उसकी दृष्टि कहाँ घूम रही है' यह ढूँढने में ही खुद की दृष्टि खो जाती है। और 'फाइल' मौजूद नहीं हो फिर भी याद आए, वह तो बहुत भारी जोखिम है, मौजूदगी में असर डाले उससे भी ज़्यादा। तब तो अपनी लगाम ही नहीं रहती। मन चंचल हो जाता है और दुःख होता है।

कृपालुदेव ने 'काष्ठ की पुतली है, ऐसा मानना' कहा है। संडास करती हुई स्त्री को देखे तो क्या चित्त वहाँ पर फिर से जाएगा? ऐसा सेट कर देना। या फिर 'नहीं है मेरा, नहीं है मेरा' करेगा तो भी चला जाएगा।

अग्नि और 'फाइल' दोनों एक समान। जलाकर मार डालते हैं। छूते ही जला देते हैं। 'फाइल' के साथ हमें सख्त नज़र से ही रहना है। उसे खराब लगे, अपमान हो, उस तरह से व्यवहार करना। वहाँ बहुत भारी जोखिम है।

फाइल पर तिरस्कार आए, फिर भी हर्ज नहीं। उसका उपाय है। लेकिन तिरस्कार नहीं आए तो समझ जाना कि अभी भी अंदर पोल(गड़बड़) है, चोर नीयत है। जिस 'फाइल' के साथ बहुत गाढ़ हिसाब हो गया हो तो वहाँ 'नहीं है मेरी, नहीं है मेरी' करके कई-कई प्रतिक्रमण कर लेना। रूबरु मिले तो अपमान कर देना, तो वह वापस फटकेगी ही नहीं।

और यदि तुम किसी के लिए 'फाइल' बन गए हो, तब तो बहुत आसान है वहाँ से छूटना। थोड़ा अपमान करो या उल्टा बोल दो तो वह छोड़ देगी तुम्हें। वहाँ पर अगर 'हमें समभाव से *निकाल* करना है', कहकर उसे दुःख न हो ऐसा व्यवहार करने जाओगे तो दोनों का ही विषय में ज़्यादा बिगड़ेगा। वहाँ समभाव से *निकाल* यानी उसका अपमान करके तोड़ देना, वह! जब तक तुम्हारी तरफ से ढीला रहेगा, तब तक वह कल्पनाएँ करती रहेगी। इसलिए सामने वाले की कल्पनाएँ करना जड़ से ही बंद हो जाए, उसके लिए तुम्ही को सख्ती रखकर, तुम्हारे प्रति उसे अभाव आ जाए, ऐसा वर्तन और वाणी सेट कर देने चाहिए या फिर दोस्तों से कहलवा देना कि तेरे जैसी दूसरी दो-तीन को प्रोमिस दिया हुआ है। तुम्हें किसी के प्रति बार-बार विषय के विचार आते रहें, तो फिर सामने वाले पर भी उसका असर होता है और उसे भी विचार शुरू हो ही जाते हैं।

10. विषयी वर्तन? तो डिसमिस

सत्संग में कहीं पर भी दृष्टि बिगड़नी नहीं चाहिए। दृष्टि बिगड़ जाए तो प्रतिक्रमण करके उड़ा देना, तो भी चलेगा। लेकिन यहाँ पर वर्तन में तो आना ही नहीं चाहिए। यदि ऐसा किसी को हो रहा हो तो वह चलाया ही नहीं जा सकता। उसे फिर डिसमिस करना पड़ेगा। फिर कभी भी सत्संग में आने को नहीं मिलेगा। 'धर्म क्षेत्रे कृतम् पापम्,व्रजलेपम् भविष्यति' धर्मक्षेत्र में किया हुआ पाप व्रजलेप जैसा होता है, जो नर्क में ही ले जाता है। यहाँ रहकर पाशवता करने से तो शादी कर लेना अच्छा। हक़ का तो कहलाएगा। ब्रह्मचर्य वाला एक ही बार फिसला कि खत्म हो गया। यदि संयोग संबंध हो जाए तो वह आत्महत्या के बराबर है। उसका बहुत जोखिम है। वह चलेगा ही नहीं। बाकी सभी गलतियाँ चलाई जा सकती हैं लेकिन यह नहीं चलाई जाएगी। वहाँ दादा की नज़र बहुत सख्त हो जाती है। नज़रें लाल ही रहती हैं, उस पर। इसलिए ब्रह्मचारियों से दो नियम लिखवाए थे। एक तो, विषय संयोग हो जाए तो खुद ही यह सत्संग छोड़कर हमेशा के लिए दूर चले जाना होगा और दूसरा पूज्य दादाश्री की मौजूदगी में कोई झोंका नहीं खा सकता। यदि झोंका खा ले तो उसे खुद ही रूम छोड़कर चले जाना होगा।

11. सेफ साइड तक की बाड़

ब्रह्मचर्य पालन करने के लिए इतने कारण तो होने ही चाहिए। एक तो अपना यह ज्ञान होना चाहिए। दूसरा ब्रह्मचारियों का संगबल चाहिए। शहर से दूर आवास होना चाहिए। बाहर का कुसंग नहीं छूना चाहिए। जिसे निरंतर दादा का निदिध्यासन रहे, उसे कुसंग छू ही नहीं सकता।

परम पूज्य दादाश्री खुद के सिद्धांत के लिए क्या कहते हैं, 'हम कोई वंश बढ़ाने थोड़े ही आए है ? क्या किसी गद्दी की स्थापना करने आए है ? हम तो *निकाल* करने के लिए आए है।'

12. तितिक्षा के तप से गढ़ो, मन और देह

तितिक्षा यानी क्या ? जब घास या चारे में सोना पड़े, कंकड़ चुभ रहे हों, उस समय अगर घर याद आए तो वह तितिक्षा नहीं कहलाती। कंकड़ चुभें, तो वह भी अच्छा लगना चाहिए।

रात को दो बजे स्मशान में छोड़ आएँ तो क्या होगा ? चिता देखकर ? डर बैठ जाएगा ? बुखार चढ़ जाएगा ?

मोक्षमार्ग में ज़बरदस्त मनोबल की ज़रूरत है। किसी भी प्रकार के विकट संयोगों में भी ऐसा कभी भी नहीं हो कि 'अब मेरा क्या होगा ?' स्थिरता से पार निकल जाए।

परम पूज्य दादाश्री कहते हैं कि मैंने अपनी ज़िंदगी में एक भी उपवास नहीं किया है। पित्त प्रकृति थी, इसलिए उनसे उपवास नहीं हो सकता था। चोविहार, कंदमूल त्याग, *उणोदरी* (भूख लगे तब उतना भोजन करे जिससे पेट में 2 भाग भोजन, 1 भाग पानी, 1 भाग हवा रहे) तप आदि किया था। उपवास से जागृति बढ़ती है, अंदर जो कचरा जमा हो, वह जल जाता है। वाणी भी कम हो जाती है। ब्रह्मचारियों को हफ्ते में एक दिन उपवास करना चाहिए।

ज्ञानी *उणोदरी* तप को अधिक महत्व देते हैं। दादाश्री ने हमेशा *उणोदरी* की थी। *उणोदरी* यानी पेट को आधा खाली रखना। उससे जागृति

बहुत बढ़ती है। बीच-बीच में खाते नहीं रहना चाहिए। आहार से अंदर नशा चढ़ता है, दारू बनती है। चरबी वाला, मिठाई, तला हुआ आहार नहीं लेना चाहिए। अपने रोटी-दाल-चावल-सब्जी, वह आदर्श आहार माना जाता है। नींद भी बहुत कम आती है। घी-तेल से मांस बढ़ता है और मांस बढ़ने से वीर्य बढ़ता है। छोटे बच्चों को मगस(गुजराती व्यंजन) या घी, मेवे के लड्डू नहीं खिलाने चाहिए। नहीं तो बाद में बड़े होकर बहुत ही विकारी बन जाएँगे। माँ-बाप ही बिगाड़ते हैं उन्हें। नहाने से भी विषय जागृत होता है। इसलिए स्पंज कर लेना चाहिए। बीमार इंसान को कभी विषय याद आता है? जो तीन दिन से भूखा हो, उसे विषय याद आता है? कंदमूल खाने से ब्रह्मचर्य नहीं टिकता। इसलिए वह नहीं खाना चाहिए।

13. न हो असार, पुद्गलसार

ब्रह्मचर्य, वह *पुद्गलसार* है। आहार का सार क्या? वीर्य। इसलिए ब्रह्मचर्य मोक्षमार्ग का आधार है। ज्ञान के साथ अगर ब्रह्मचर्य हो तो सुख की सीमा नहीं रहेगी। लोकसार, वह मोक्ष है और *पुद्गलसार*, वह वीर्य है। महंगे से महंगी चीज़ वीर्य है। उसे मुफ्त में कैसे व्यर्थ कर सकते हैं? वीर्य ऊर्ध्वगामी हो, ऐसे भाव रखने चाहिए। अक्रम ज्ञान वीर्य का ऊर्ध्वगमन करवाने वाला है। अज्ञान, वीर्य को अधोगामी करवाता है और ज्ञान ऊर्ध्वगामी करवाता है! हैं तो दोनों रिलेटिव। लेकिन वीर्य के परमाणु सूक्ष्मरूप से ओजस में परिणमित होते हैं, उसके बाद वह अधोगामी नहीं होता। वीर्य या तो संसार के रूप में परिणमित होता है या ऐश्वर्य के रूप में!

संसार-व्यवहार में साधक के रिवोल्यूशन घूमना रुक जाते हैं। उसका क्या कारण है? आत्मवीर्य प्रकट नहीं होता। इसलिए मन में संसार-व्यवहार सहन करने की शक्ति नहीं रहती। इसलिए भगौड़ा बन जाता है। उसके बजाय तो आत्मा में ही रहने जैसा है। आत्मवीर्य का अभाव अर्थात् व्यवहार का सोल्यूशन नहीं ला सकते। आत्मवीर्य कब प्रकट होता है? आत्मा के अलावा अन्य कहीं पर भी रुचि न रहे। दुनिया की कोई चीज़ ललचा न सके तब।

वीर्य के ऊर्ध्वगमन होने के लक्षण क्या हैं ? चेहरे पर तेज आ जाता है। ब्रह्मचर्य का नूर झलकता है ! वाणी और वर्तन मीठे हो जाते हैं। मनोबल खूब बढ़ जाता है !

स्वप्नदोष का कारण क्या है ? जैसे टंकी छलककर उभर जाती है, वैसा। यदि आहार पर कंट्रोल रखा जाए तो स्वप्नदोष नहीं होंगे। उसमें भी रात को भोजन नहीं लेना चाहिए। *उणोदरी* करे और चाय-कॉफी नहीं लेने चाहिए आदि। फिर भी स्वप्न दोष को इतना बड़ा गुनाह नहीं माना गया है। लेकिन जान-बूझकर नहीं करना चाहिए। वह भयंकर गुनाह है। वह आत्महत्या कहलाता है। जान-बूझकर डिस्चार्ज की छूट नहीं होती। कोई क्या जान-बूझकर कुएँ में गिरता है ?

सामान्यत: लौकिक तौर पर ऐसा प्रचलित है कि वीर्य का *गलन,* वह *पुद्‌गल* स्वभाव ही है। वह लीकेज नहीं है। ज्ञानियों की ज्ञानदृष्टि क्या कहती है कि जब दृष्टि बिगड़े या विचार बिगड़े तब वीर्य का कुछ हिस्सा 'एकज़ॉस्ट' हो जाता है। फिर वह डिस्चार्ज होता रहता है। स्वप्नदोष को गुनाह नहीं माना है। लेकिन फिर भी सुबह उसका प्रतिक्रमण करना पड़ता है। पछतावा करना चाहिए। दादा की पाँच आज्ञा का पालन करे, उसे विषय-विकार हो सकें, ऐसा नहीं है। बाह्य उपायों में उपवास, आयंबिल (जैनों में किया जाने वाला व्रत, जब भोजन में एक ही प्रकार का धान खाया जाता है)। शरीर को हृष्ट पुष्ट नहीं होने देना चाहिए। सर्दी-गर्मी को सहन कर सके और सादा सात्विक आहार ले। जिसका वीर्य ऊर्ध्वगामी होने लगे, वह ज्ञान धारण कर सकता है। जैन शास्त्र में नौ बाड़ के नियम दिए गए हैं, ब्रह्मचारियों के लिए। निरोगी कभी भी विषयी नहीं होता। संपूर्ण निरोगी तो तीर्थंकर ही होते हैं !

आत्मज्ञान की दृष्टि से विचार अच्छे या बुरे नहीं होते। दोनों ही ज्ञेय हैं। उसे ज्ञाता रहकर देखते रहें, तो वे खत्म हो जाते हैं। लेकिन यदि उनमें तन्मयाकार हो जाए तो कर्म बंधन होने लगता हैं। लेकिन अगर तुरंत ही प्रतिक्रमण कर लें तो वह धुल जाएगा। यदि उसका काल पक जाए और अवधि पूरी हो जाए तो कर्म बंधन होता है, लेकिन अगर उससे पहले ही प्रतिक्रमण से धो दिया जाए तो कर्म बंधन नहीं होगा।

जहाँ तक विषय का स वाल है, इन्द्रियों पर इफेक्ट और मन दोनों अलग भी रह सकते हैं। स्थूल विषय भोगने से पहले, मन विषय भोगे या नहीं भी भोगे। चित्त से भोगना मतलब *तरंगों* (शेखचिल्ली जैसी कल्पनाएँ) से, फिल्म से भोगना। जब चित्त से या मन से भोगे, उसी को भोगना कहते हैं। अगर मन से मंथन में चला जाए तो पूरा सार मर जाता है। वह मरा हुआ पड़ा रहेगा और फिर वह डिस्चार्ज होगा ही। विषय के विचार में तन्मयाकार हो जाना, वही मंथन है। तन्मयाकार नहीं हुआ तो पार उतर जाएगा, ब्रह्मचर्य के साइन्स में! मंथन होने लगे कि तुरंत ही प्रतिक्रमण कर लेना। प्रतिक्रमण का टाइमिंग संभालना आवश्यक है। यदि कुछ ज़्यादा टाइम बीत जाए तो फिर मंथन हो ही जाता है। इसलिए विचार आते ही, ऑन द मोमन्ट प्रतिक्रमण हो जाना चाहिए। आगे-आगे विचार और पीछे-पीछे प्रतिक्रमण हो ही जाना चाहिए। ज़हर पीया लेकिन गले से नीचे उतरने से पहले ही यदि उल्टी कर दे तभी बच पाएगा! उसी प्रकार यह प्रतिक्रमण भी तुरंत ही हो जाना चाहिए। ज़रा सा भी विचारों में फँसा तो फिर मंथन शुरू हो जाता है। फिर स्खलन हुए बिना नहीं रहेगा। आधे घंटे तक उल्टा चला हो लेकिन अगर जागृत हो जाए तो प्रतिक्रमण से सब धोया जा सकता है! ऐसा ग़ज़ब का है यह अक्रम विज्ञान!

14. ब्रह्मचर्य प्राप्त करवाए ब्रह्मांड का आनंद

ब्रह्मचर्य से अपार आनंद मिलता है। अन्य किसी चीज़ में कभी भी न चखा हो, ऐसा आनंद उत्पन्न हो जाता है! महा-महा पुण्यात्मा को प्राप्त होता है ब्रह्मचर्य। खरा ब्रह्मचर्य ज्ञानी की आज्ञानुसार होना चाहिए। और गलती हो जाए तो उनसे माफी माँग लेना। जो संपूर्ण ब्रह्मचर्य में आ जाए, उसका अनंत जन्मों का सभी नुकसान पूरा हो गया माना जाएगा। निर्भय हो जाता है और ब्रह्मचर्य का तेज तो सामने वाली दीवार पर भी पड़ता है! जिसे शुद्धात्मा का वैभव चाहिए, उसके लिए ब्रह्मचर्य पालन आवश्यक है। ज्ञान में बहुत मदद करता है वह! ब्रह्मचर्य, वह महाव्रत है। उससे आत्मा का स्पेशल अनुभव होता है!

ब्रह्मचर्य व्रत लेने के बाद उसे तोड़ने से भयंकर दोष लगता है। मारा ही जाता है, वह। व्रत देने वाले निमित्त को भी दोष लगता है। इसलिए

उसके लिए बहुत जल्दबाज़ी करने की ज़रूरत नहीं है। ब्रह्मचर्य का अंतिम फल है, सर्वसंग परित्याग!

एक ही सच्चा व्यक्ति हो तो भी जगत् कल्याण कर सकेगा। अधिक से अधिक जगत् कल्याण कब हो सकता है? त्याग मुद्रा होने पर अधिक हो सकता है। गृहस्थ मुद्रा में जगत् का कल्याण अधिक नहीं हो सकता। कुछ कुछ लोगों को प्राप्ति होती है, लेकिन (बड़े पैमाने पर) पब्लिक को प्राप्ति नहीं हो सकती। ऊपरी तौर पर पूरे बड़े-बड़े वर्ग को प्राप्ति हो जाएगी, लेकिन पब्लिक को प्राप्ति नहीं हो पाएगी। और फिर अपना त्याग अहंकार रहित होना चाहिए! अक्रम का चारित्र तो बहुत उच्च कहलाता है! ग़ज़ब का सुख बर्तता है।

'मैं शुद्धात्मा हूँ', यह निरंतर लक्ष्य में रहे तो वह सब से महान ब्रह्मचर्य है। ब्रह्म में चर्या, वही है रियल ब्रह्मचर्य।

विषय से छूट गया, ऐसा कब कहा जाएगा? जब विषय से संबंधित कोई भी विचार नहीं आए, दृष्टि आकृष्ट नहीं हो तब।

15. 'विषय' के सामने विज्ञान की जागृति

आकर्षण हो जाए, तो उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन उसे पकड़ लिया, तन्मयाकार हो गया तो वह आपत्ति जनक है। आकर्षण के सामने अपना विरोध, वही है तन्मयाकार नहीं होने की वृत्ति। तन्मयाकार हुआ यानी गोता खा गया समझना। कोई जान-बूझकर फिसलता है? चिकनी मिट्टी पर से होकर उतरते समय पैरो की उँगलियों को कैसे दबाकर चलते हैं? हम गिरने के विरोध में कितना रहते हैं?

कोई दादाश्री से पूछे कि दृष्टि पड़ते ही यदि अंदर चंचल परिणाम खड़े हो जाते हैं, तो वहाँ क्या करना चाहिए? उसे दादाश्री विज्ञान बताते हैं, कि दृष्टि 'हम' से अलग चीज़ है। तो फिर अगर दृष्टि पड़े तो उससे हमें क्या हो सकता है? हम नहीं चिपकेंगे तो दृष्टि क्या कर सकती है? होली को देखने से आँखें जल जाती हैं क्या? 'खुद के' भीतर की गलती से आकर्षण होता है।

एट ए टाइम दोनों दृष्टियाँ रखनी हैं। रियल में शुद्धात्मा देखना है और रिलेटिव में श्री विज़न देखना है।

दृष्टि मलिन हुई कि तुरंत ही दादा के दिए हुए ज्ञान का उपाय करके तुरंत निर्मल कर देना। अंदर फोर्सफुली पाँच-दस बार बोल देना चाहिए कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ ...' तब भी वापस ठिकाने पर आ जाएगा। अथवा 'मैं दादा भगवान जैसा निर्विकारी हूँ, निर्विकारी हूँ' बोलना। इसका उपयोग करना, यह तो विज्ञान है। तुरंत फलदायी है। वर्ना गाफिल रहे तो उड़ाकर रख देगा सबकुछ!

यदि एक घंटे तक किसी भी स्त्री संबंधित विषयी ध्यान रहे तो अगले जन्म में वह अपनी माँ या वाइफ बनेगी। इसलिए सावधान हो जाओ। इसलिए विषय का विचार ध्यान रूप नहीं हो जाना चाहिए। उन्हीं विचारों में रमणता करते रहने को कहते हैं, ध्यान रूप। उसे उखाड़कर फेंक देना चाहिए। विचारों को देखने से ही गाँठें विलय हो जाती है, *पुद्गल* शुद्ध हो जाता है। स्त्री को देखते ही अंदर स्पंदन हों तो उसका तुरंत प्रतिक्रमण करना।

जागृति ज़रा सी भी मंद हुई कि विषय घुस ही जाता है। उसका आवरण आ ही जाता है!

एक बार स्लिप हुए तो स्लिप नहीं होने की शक्ति कम हो जाती है। वह वापस स्लिप करवा देती है, मतलब वह ढीली पड़ जाती है। असंयम हुआ कि ढीला पड़ जाता है। संयम कम-ज़्यादा हो तो हर्ज नहीं लेकिन संयम टूट जाए तो फिर हो चुका!

ब्रह्मचर्य के आग्रही होने की छूट है, लेकिन ब्रह्मचर्य के दुराग्रही नहीं बनना चाहिए। अंत में तो आत्मरूप बनना है। ब्रह्मचर्य के निमित्त से यदि कषाय हो जाएँ तो वह नहीं चलेगा। आत्मा में रहना है या ब्रह्मचर्य में?

ब्रह्मचर्य व्यवहार के अधीन है। निश्चय तो ब्रह्मचारी ही है न? आत्मा तो सदा ब्रह्मचारी ही है न!

16. फिसलने वालों को, उठाकर दौड़ाते हैं

विषय के गुनाह का फल क्या है, पहले वह समझ लेना चाहिए। वह

समझ में आए, तभी वह गुनाह करने से रुकेंगे। ज्ञानी को जो पकड़े रखेगा, वह छूट जाएगा एक दिन।

जिसे दादा का निदिध्यासन रहता है, उसके सारे ताले खुल जाते हैं। दादा के निदिध्यासन का साक्षात् फल मिलता है।

जगत् कल्याण का निमित्त बनने का जिसने बीड़ा उठाया है, उसे दुनिया में कौन रोक सकता है? देवी-देवता भी पुष्पवृष्टि करते हैं।

जब से इस मार्ग में आगे बढ़े हैं, तभी से पूर्णाहुति हो सकती है। अगर आप चोखे हो तो आपका नाम देने वाला कोई नहीं है।

17. अंतिम जन्म में भी ब्रह्मचर्य तो आवश्यक

मोक्ष और ब्रह्मचर्य का क्या लेना-देना? काफी कुछ लेना-देना है। ब्रह्मचर्य के बिना आत्मा के अनुभव का पता ही नहीं चलता। यह जो सुख महसूस हो रहा है, वह आत्मा का है या *पुद्गल* का है, वह पता ही नहीं चलता न। अब, कितने ही अब्रह्मचारी मोक्ष में गए है। वहाँ क्या होता है कि ब्रह्मचर्य के लिए पॉज़िटिव होना चाहिए। नेगेटिव वाले को कभी भी आत्मा प्राप्त नहीं होगा। शादी करके ब्रह्मचर्य पालन करे, वह उच्च है या शादी नहीं करके? ज्ञानियों ने शादी करके ब्रह्मचर्य पालन करने को उच्च कहा है। फिर भी मोक्ष में जाने वालों को आखिरी दस-पंद्रह साल तो सर्वसंग परित्याग बरतना ही चाहिए। ब्रह्मचर्य के बिना तो मोक्ष में जाया ही नहीं जा सकता।

ब्रह्मचर्य के लिए किसी पर दबाव नहीं डालना चाहिए। ब्रह्मचर्य व्रत एकदम से किसी को नहीं दे सकते। एकाध साल के लिए देकर धीरे-धीरे आगे बढ़ सकते हैं। आपका निश्चय और हमारा वचनबल विषय को खत्म कर देगा। अंतराय तोड़ देगा।

अक्रम मार्ग में आश्रम जैसा नहीं होता। लेकिन जो ब्रह्मचारी बने हैं, उनके लिए होना चाहिए। ब्रह्मचारियों के संग में रहना पड़ेगा।

दादाश्री खुद के बारे में बताते हैं कि हमें ब्रह्मचर्य पालन नहीं करना होता, हमें तो वह बर्तता है। विषय जैसी कोई चीज़ है भी, ऐसा याद तक नहीं आता। शरीर में वे परमाणु ही नहीं हैं न! और खुद भी पूर्वजन्मों से यह माल खाली करते हुए आए हैं। इसलिए बचपन से ही विषय में रुचि नहीं थी।

पहले के ज़माने में बाल-विवाह होते थे। इसलिए अन्य कहीं दृष्टि बिगड़ने का सवाल ही नहीं रहता था न। जीवन कितना सुंदर और पवित्र बीतता था। उसका असर बच्चों पर कितना सुंदर पड़ता था। बच्चे भी संस्कारी और एक जैसे होते थे।

शादी करने में इतने सारे जोखिम हैं, फिर भी शौक से घोड़े पर चढ़कर शादी करते हैं, क्या यही आश्चर्य नहीं है? इसका कारण यही है कि वह इसके परिणामों को जानता ही नहीं है। थोड़ा सा दु:ख लेकिन अंततः तो सुख ही है, ऐसी मान्यता के आधार पर ही सभी शादी करते हैं।

जिसे *पुद्गलसार* (ब्रह्मचर्य) और अध्यात्मसार (शुद्धात्मा) दोनों प्राप्त हो गए, उसका तो कल्याण ही हो गया न!

ब्रह्मचर्य आत्मा के स्वाभाविक गुणों को प्रकट होने देता है, आत्मानुभव होने देता है, आत्मा के गुणों का अनुभव होने देता है।

ब्रह्मचर्य और परफेक्ट व्यवहार दोनों साथ में होंगे तो ब्रह्मचारी जगत् का कल्याण करने में बहुत ही हितकारी हो सकेंगे।

खुद का व्यवहार कैसा है यह बताते हुए दादाश्री ने कहा है, 'हमारी एक दहाड़ से तुरंत ही महात्माओं के रोग निकल जाते हैं। इनका हाथ छू जाए तो भी सामने वाले का काम बन जाता है। ऐसी सारी सिद्धियाँ प्रकट हो जाती है।'

परम पूज्य दादाश्री कहते हैं कि आपका निश्चय और हमारा वचनबल, अगर एक साथ ये दोनों होंगे तो पूरा 'व्यवस्थित' बदल सकता है। यहीं पर एक अपवाद सर्जित होता है।

ब्रह्मचारियों को पैंतीस साल तक विषय के सामने निरंतर सजग रहना पड़ता है। वर्ना मोह का वातावरण 'रिज पॉइन्ट' पर आ जाए तो उसे उड़ा देता है! तब ज्ञान बीज को भी उड़ा देता है। लेकिन अगले जन्म में यह ज्ञान सहायक होगा।

शादी करने के लिए मना करने से क्या अंतराय कर्म बंधते हैं? मुंबई जाते हैं, उससे क्या बाकी शहरों से अंतराय डाला, ऐसा कहा जाएगा?

ब्रह्मचर्य पालन करने से कर्म बंधते हैं ?

अज्ञानदशा में ब्रह्मचर्य पालन करने से पुण्य बंधता है और अब्रह्मचर्य से पाप बंधता है। लेकिन अक्रम ज्ञान से तो कर्म ही नहीं बंधता। दोनों डिस्चार्ज ही माना जाता है। इसमें कर्ता बनकर ज्ञानी की आज्ञा सहित पालन करते हैं, उतना ही चार्ज है। ब्रह्मचर्य इटसेल्फ डिस्चार्ज है, लेकिन उसके पीछे जो भाव है, वह 'चार्ज' माना जाता है। आज्ञा पालन करने जितना चार्ज माना जाता है। इसका फल सम्यक पुण्य मिलता है। जिससे सीमंधर स्वामी के नज़दीक रहने की सहूलियतें आसानी से मिल जाएँगी। यह सब वैज्ञानिक खोज है दादा की!

संपूज्य दादाश्री ब्रह्मचर्य की मज़बूती के लिए हर रविवार को पूरी तरह से उपवास करने का नियम देते थे, जिससे विषय का विरोधी बने और ब्रह्मचर्य में बहुत पुष्टि मिले।

जिसे लक्ष्मी या विषय से संबंधित विचार ही नहीं आते, देह से अलग रहता है, उसे जगत् भगवान कहे बगैर नहीं रहेगा!

18. दादा देते पुष्टि, आप्तपुत्रियों को

परम पूज्य दादाश्री ने बहनों को पुष्टि देकर ब्रह्मचर्य के मार्ग पर मोड़ा है। उनके हाथों आप्तपुत्रियाँ तैयार हुई हैं।

अच्छे कपड़े पहने हुए, अप टू डेट युवक को देखकर लड़कियाँ मूर्छित हो जाती हैं, लेकिन अंदर माल कितना कचरे वाला होगा, वह नहीं देख सकती! सुंदरता देखकर ही मूर्छित हो जाती हैं। वहाँ पर फँसना नहीं, वर्ना वह जन्म बिगाड़ देगा। अगले जन्म की गाँठ पड़ जाएगी। दादाश्री ने ऐसा बताया है कि लड़कियों के लिए ब्रह्मचर्य पालन करने में ज़्यादा मुश्किलें हैं। अगर निश्चय नहीं डगमगाए तो गारन्टी से ब्रह्मचर्य पालन कर पाएँगी। थ्री विज़न की जागृति रहेगी तो वह मोह को निकाल पाएँगी।

युवाओं को शादी करने के लिए कहें तो वे मना करते हैं। घर पर माँ-बाप का सुख (!) देखकर उन्हें ज़बरदस्त वैराग्य आ जाता है।

भले ही कितना भी आकर्षण हो, लेकिन खूब प्रतिक्रमण करते रहने पर उसमें से छूट सकते हैं।

आजकल पति कैसे होते हैं? पति तो उसे कहते हैं कि एक क्षण भी पत्नी को न भूले! यह तो सारा कचरा! बाहर कितनी ही स्त्रियों के साथ सौदे करते फिरते हैं। इस काल में प्रेम नहीं लेकिन आसक्ति ही देखने को मिलती है। प्रेम भूखे नहीं लेकिन विषय भूखे होते हैं। यह एक तरह की संडास ही कहलाती है, विषय यानी शादी की इसलिए घर का संडास आ गया, वर्ना बाहर जहाँ-तहाँ जाते फिरेंगे! उसके बिना चारा ही नहीं है न, इसलिए!

जिसे एकावतारी पद प्राप्त करके मोक्ष में ही जाना है, उसे सब से पहले ज्ञानी से आत्मज्ञान प्राप्त करना पड़ेगा। फिर आज्ञा में आकर ब्रह्मचर्य पालन करेंगे तभी हो पाएगा। स्त्रियों को इसके अलावा मोह और कपट से पूर्णतः मुक्त होना पड़ेगा। परपुरुष के लिए विचार तक नहीं आना चाहिए। और यदि आ जाए तो तुरंत ही प्रतिक्रमण करके धो देना पड़ेगा। जो मिश्र-चेतन से सावधान रहा, उसका कल्याण हो गया! मिश्रचेतन के साथ यदि विकारी संबंधों की लपेट में आ गए तो जानवर गति में खींच ले जाएगा!

ज्ञानी पुरुष के पास खुद का कल्याण कर लेना है। खुद कल्याण स्वरूप हो जाए तो उससे बिना कुछ बोले दूसरों का कल्याण हो जाएगा। बोलते रहने से या भाषण देने से कुछ नहीं होता। चारित्र की मूर्ति देखते ही सभी भावों का शमन हो जाता है! इसलिए प्योर बनना है, शीलवान बनना है!

- डॉ. नीरू बहन अमीन

जय सच्चिदानंद

चेत रे ब्रह्मचारी...

चेतन कर ले विचार,
दगा जैसा है संसार,
मोक्ष के लिए हो जा तैयार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
चटनी के लिए खोया थाल
विषय में तृप्ति नहीं ज़रा भी,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
गाफिल होना नहीं ज़रा भी,
दृष्टि दोष से कायम संसार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
शादी की फाइल है तैयार,
कसौटी का यह तेरा काल,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
विषय कीचड़ में डूबनेवाले,
विश्व में नहीं मिलते हाथ पकड़ने वाले,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
निश्चय क्यों डिगाना,
आंधी तो आए बार-बार।
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
हँसकर बात मत लगा,
नज़र से नज़र मत मिला,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
नखराली नज़रे हो तुच्छकार,
कड़ी नज़र में है उपकार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
स्त्री सदा दावा करनार,
नौ गज़ से कर रे नमस्कार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
नैनों के लागे गोलीबार,
हथियार कुंद होते हार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
कड़ी नज़र के रख हथियार,
टूटते पहले बाँध ले बाड़,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
चेतना स्त्री के तिरस्कार से,
छिपा उसमें विषय का रणकार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
विषय अंत में धिक्कार,
अणहक्क बाँधे नर्कागार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
अग्नि और पेट्रोल मिलनसार,
मिलते विषयी भीषण झाल,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
विषय है जलानेवाला,
निर्विषयी दादा जैसा बननेवाला,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
शील का ग्रही ले अलंकार,
कल्याणी हेतु आकर्षनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
श्री विज्ञन से विषय जीतनार,
दादापुत्र बन तू होनहार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
स्पर्श दोष ज़हरीला अपार,
चेत नहीं तो तू फिसलनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
विषय से बंधे नर्कागार,
आलोचना एक ही उबारनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
भयंकर विषय दोष का बोझ,
आलोचना करके उतार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
दृष्टि आकर्षित हो जहाँ पलभर,
बीज पड़े होते ही तन्मयाकार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
बीज दो पत्तियों से फूटनार,
उखेड़ तत्क्षण दूर फेंकनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
दो पत्तियाँ फिर तेरी हार,
सूक्ष्म में वीर्य स्खलन थनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
दृष्टि से सूक्ष्म गलन थनार,
स्थूल में फिर न कोई रोकनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
उखाड़ कोंपल तत्वार,
अटके स्खलन था होशियार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
विषयों चित्त उपचार,
निदिध्यासन एक ही सार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
विषय विचारे तन्मयाकार,
मंथन से वीर्य स्खलनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
बुद्धि से माना सुखसार,
विषय में कहाँ सुख तलभार?
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
मन कमज़ोर पड़े फिर भी मत हार,
दादाई कृपा अपरंपार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
ब्रह्मचर्य का क्या आधार?
समझ से या अहंकार?
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
चित्त से खींचे फोटो बार-बार,
प्रतिक्रमण करके धोना कोटि बार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
वीर्य है पुद्‌गलसार,
वह जीतने से प्राप्त समयसार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
चित्त को बिखरने मत देना,
आत्म ऐश्वर्य लूटनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
खुद जैसा जग करनार,
कैसे चले ध्येय तोड़नार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
चित्त का ऐसा है धिरधार,
एक बार टिके, वहीं जनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
अखंड ब्रह्मचर्य की धार,
मर जाना, लेकिन न चुकनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
स्थूल दोष चले नहीं एक भी बार,
एक बार डूबा तो क्या विचार?
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
ध्येय का महान है चितार,
कदम छोटे और प्रमाद अपार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
विषय तो भोगे अनंतबार,
ज्ञानी नहीं आए दोबारा हाथ,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
विश्व में विषय अंधकार,
दीप बनकर तू जग तार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
कब निकलोगे विषय पार,
तभी झगमगाएगा ज्ञान अपार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
ब्रह्मचर्य ही सर्वाधार,
भगवंत पद पर पहुँचानेवाला,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
स्पष्ट वेदन किसे मिलेगा,
ब्रह्मचर्य धारण करनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
विषयों की अब क्या मदार,
दादा कृपा अपरंपार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
ब्रह्मचर्य बिना नहीं है उद्धार,
मोक्ष गए सर्वसंग त्यागनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
ब्रह्मचारी विश्वे अचरजकार,
क्रम-अक्रम को तू जोड़नार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
जग कल्याणी ध्येय सवार,
शील से कष्ट कंपावनार,
इसलिए चेतकर चल।

चेतन कर ले विचार,
आपोपु गए पूर्ण थनार,
निरालंब स्व में बर्तनार,
इसलिए चेतकर चल।

(साधक को 'चेतन' की जगह पर खुद का नाम लेना है)

अनुक्रमणिका

[खंड : 1] विषय का स्वरूप, ज्ञानी की दृष्टि से

[1.1] विश्लेषण, विषय के स्वरूप का

[1.2] विकारों से विमुक्ति की राह

[1.3] माहात्म्य ब्रह्मचर्य का

[खंड : 2] 'शादी नहीं करने' के निश्चय वालों के लिए राह

[2.1] किस समझ से विषय में से छूटा जा सकता है?

[2.2] दृष्टि उखड़े, 'थ्री विज़न' से

[2.3] दृढ़ निश्चय पहुँचाए पार

[2.4] विषय विचार परेशान करें तब...

[2.5] नहीं चलना चाहिए, मन के कहे अनुसार

[2.6] 'खुद' अपने आपको को डाँटना

[2.7] पछतावे सहित प्रतिक्रमण

[2.8] स्पर्श सुख की भ्रामक मान्यता

[2.9] 'फाइल' के सामने सख़्ती

[2.10] विषयी आचरण? तो डिसमिस

[2.11] सेफ साइड तक की बाड़

[2.12] तितिक्षा के तप से गढ़ो मन-देह

[2.18] दादा देते पुष्टि, आप्तपुत्रियों को

समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य (पूर्वार्ध)

[खंड : 1]
विषय का स्वरूप, ज्ञानी की दृष्टि से

[1.1]
विश्लेषण, विषय के स्वरूप का

कीचड़ में ठंडक का मज़ा

मनुष्य होकर भी इस पाँच इन्द्रियों के कीचड़ में क्यों पड़ा है, वही आश्चर्य है! भयंकर कीचड़ है यह तो! लेकिन इतना नहीं समझने से, जगत् मूर्च्छा में चल रहा है। यदि थोड़ा सा सोचे तब भी, ऐसा समझ में आ सकता है कि कीचड़ है लेकिन लोग सोचते ही नहीं है न?! निरा कीचड़ है। तो मनुष्य क्यों ऐसे कीचड़ में पड़े हुए हैं? तो इसलिए कि 'और किसी जगह पर साफ-सुथरा नहीं मिलता। इसलिए ऐसे कीचड़ में सो गया है।'

प्रश्नकर्ता : यानी कीचड़ के प्रति अज्ञानता ही है न?

दादाश्री : हाँ, उसके प्रति अज्ञानता है। इसीलिए कीचड़ में पड़ा है। फिर यदि इसे समझने का प्रयत्न करे तो समझ में आए ऐसा है, लेकिन खुद समझने का प्रयत्न ही नहीं करता न!

कोई पूछे कि क्या जानवरों को ये विषय प्रिय हैं? तो मैं

कहूँगा कि नहीं, जानवरों को ये विषय बिल्कुल पसंद नहीं हैं लेकिन फिर भी उन्हें 'नैचुरल' उत्तेजना होती है। बाकी, इस विषय को तो कोई पसंद ही नहीं करे। सच्चा पुरुष हो तो पसंद ही न करे। तो ये मनुष्य क्यों इस विषय में पड़ते हैं? क्योंकि पूरे दिन भागदौड़, भागदौड़ करता है। थका हुआ होता है इसलिए उसे भान नहीं रहता कि यह कीचड़ है, इसलिए फिर पड़ जाता है उसमें। बाकी, जब बिल्कुल ही 'सेन्स' खत्म हो जाए तब यह कीचड़ याद आता है। वर्ना 'सेन्सिबल' इंसान को तो यह कीचड़ अच्छा ही नहीं लगेगा न! यह तो भागदौड़ की मेहनत और उसकी जलन है, उसका शमन करने के लिए इस कीचड़ में गिरता है। गड्ढे में गिरने से यह जलन कहीं शांत नहीं हो जाती। थोड़ा-बहुत संतोष महसूस होता है, बस उतना ही और नींद आ जाती है। बाकी, उसके बाद तो मरने जैसा लगता है। इस विषय के कीचड़ से ज़्यादा तो बांद्रा की खाड़ी का कीचड़ तो बहुत अच्छा है। सिर्फ दुर्गंध आती है, उतना ही है। बाकी कुछ नहीं। जबकि यह तो बेहद दुर्गंध है और निरे कितने ही जीव मर जाते हैं, लेकिन भान नहीं है और ऊपर से कहता है कि, 'मैं जैन हूँ।' अरे, जैन तो ऐसा नहीं होता। इसमें तो करोड़ों जीव खत्म हो जाते हैं!

ऐसा है, निर्विषय विषय किसे कहा गया है? इस जगत् में निर्विषयी विषय हैं। इस शरीर की ज़रूरत के लिए जो कुछ दाल-चावल-सब्ज़ी-रोटी, जो कुछ मिले वह खाओ। वह विषय नहीं है। विषय कब कहा जाता है? कि जब तुम लुब्धमान हो जाओ तब विषय कहलाता है, वर्ना वह विषय नहीं है, वह निर्विषयी विषय है। अत: जो कुछ इस जगत् में आँखों से दिखाई देता है, वह सारा विषय नहीं है। लुब्धमान हो जाए, तभी विषय है। हमें कोई विषय छूता ही नहीं। विषय की ज़रूरत क्या है, यही मैं नहीं समझ पाता। ये जानवर भी जिससे तंग आ चुके हैं, उसी विषय में इन मनुष्यों को मज़ा आता है, यह कैसा आश्चर्य है?! क्यों इस कीचड़ में फँसता है, इसका विचार ही नहीं आता, ऐसे 'ब्लंट' हो गए है!

इसलिए भगवान महावीर ने पाँचवाँ महाव्रत, ब्रह्मचर्य का दिया कि आज के मनुष्यों को विषय के कीचड़ का भान ही नहीं रहेगा, इसलिए जो चार महाव्रत थे, उसके पाँच कर दिए। उनके मन में यह था कि लोग थोड़ा-बहुत सोचेंगे और इसकी जोखिमदारी समझेंगे। यह तो भयंकर विकृति है। इसके बजाय तो नर्क का दु:ख अच्छा, नर्क की वेदना अच्छी, लेकिन यह वेदना तो बहुत भयंकर है!

मुझसे कुछ लोग कहते हैं कि, 'इस विषय में ऐसा क्या रखा है कि विषयसुख चखने के बाद मैं मरणतुल्य हो जाता हूँ, मेरा मन मर जाता है, वाणी मर जाती है?' मैंने कहा कि, ये सब मरे हुए ही हैं, लेकिन आपको भान नहीं आता और वापस वही की वही दशा उत्पन्न हो जाती है। वर्ना ब्रह्मचर्य यदि संभल जाए तो एक-एक मनुष्य में तो कितनी शक्ति है! आत्मा के ज्ञान में रहना, उसे समयसार कहते हैं। आत्माज्ञान प्राप्त करे और जागृति रहे तो समय का सार उत्पन्न होता है और ब्रह्मचर्य, वह *पुद्गलसार* है। अत: इस विषय में तो एक दिन भी नहीं बिगाड़ना चाहिए। वह तो जंगली अवस्था कहलाती है।

मन, वचन, काया से ब्रह्मचर्य पालन करे तो कितना अच्छा मनोबल रहेगा, कितना अच्छा वचनबल रहेगा और कितना अच्छा देहबल रहेगा! अपने यहाँ भगवान महावीर के समय तक कैसा व्यवहार था? एक-दो बच्चों तक 'व्यवहार' रखते थे लेकिन इस काल में वह व्यवहार बिगड़ जाएगा, ऐसा भगवान जानते थे, इसलिए उन्हें पाँचवाँ महाव्रत देना पड़ा।

इस ज़हर को ज़हर जाना?

विषय को ज़हर समझा ही नहीं। ज़हर समझे तो उसे छूएगा ही नहीं न! इसलिए भगवान ने कहा है कि ज्ञान का फल है विरति! समझने का फल क्या? कि रुक जाए। विषयों के जोखिम को समझा ही नहीं, इसलिए वैसा करने से रुका नहीं।

यदि कोई भय रखने जैसा हो तो वह इस विषय का भय रखने जैसा है। इस जगत् में अन्य कोई भय रखने जैसी जगह है ही नहीं। इसलिए विषय से सावधान हो जाओ। इन साँप, बिच्छू और बाघ से सावधान नहीं रहते? सावधान रहते हैं न? जब बाघ की बात आए, तब हमें उससे भय नहीं रखना हो, फिर भी उससे भय लगता है न? उसी तरह जब विषय की बात आए तो भय लगना चाहिए। जहाँ पर भय लगे, वहाँ पर क्या मज़े से खाना खाते हैं? नहीं। अतः जहाँ पर भय हो, वहाँ मज़ा नहीं होता। जगत् के लोग इस विषय को भयसहित भोगते होंगे? नहीं। लोग तो यह मज़े से भोगते हैं। जहाँ भय हो, वहाँ भोग ही नहीं सकते।

कोई पूछे कि जलेबी खाऊँ? तो मैं कहूँगा कि वह अच्छी है, खाना आराम से। दहीबड़े खाना, सब खाना। इन सभी में स्वाद आता है। ज्ञानी को स्वाद समझ में आता है, लेकिन उन्हें इस स्वाद में, अच्छा या बुरा है, ऐसा नहीं होता कि यह होगा तभी मुझे चलेगा। विषय का तो ज्ञानी पुरुष को सपने में भी विचार नहीं आता। वह तो पाशवी विद्या है। मनुष्य में खुली पाशवता कहनी हो तो वह इतनी ही है। मनुष्यपन तो मोक्ष के लिए ही होना चाहिए।

अनंत जन्मों तक कमाई करे, तब जाकर उच्च गोत्र, उच्च कुल में जन्म होता है लेकिन फिर लक्ष्मी और विषय के पीछे अनंत जन्मों की कमाई खो देता है!

परवशताएँ कैसे पुसाए?

मोक्ष की इच्छा तो बहुत है, लेकिन मोक्ष का रास्ता नहीं मिल पाता। इसीलिए अनंत जन्मों से भटकते ही रहे हैं और बिना अवलंबन के जी नहीं पाते। इसीलिए उसे स्त्री वगैरह, सभी कुछ चाहिए। शादी करता है, वह भी इसलिए कि आधार ढूँढता है।

इसीलिए शादी करता है न। इंसान निराधार रह ही नहीं सकता न! निरालंब नहीं रह सकता न! ज्ञानी पुरुष के अलावा अन्य कोई निरालंब रह ही नहीं सकता, कुछ न कुछ अवलंबन ढूँढता ही है!

यह मकड़ी जाला बुनती है, फिर खुद ही उसमें फँस जाती है। उसी तरह यह संसार का जाल भी खुद ने ही खड़ा किया है। पिछले जन्म में खुद ने माँग की थी। बुद्धि के आशय में हमने टेंडर भरा था कि एक स्त्री तो चाहिए ही। दो-तीन कमरे होंगे, एकाध बेटा और एकाध बेटी और नौकरी, इतना ही चाहिए। उसके बदले में वाइफ तो दी सो दी, लेकिन सास-ससुर, साला-साली, मौसेरी सास, चचेरी सास, फूफी सास, ममेरी सास... अरे फँसाव, फँसाव! इतना सारा फँसाव साथ में आएगा, यदि ऐसा पता होता तो ऐसी माँग ही नहीं करते! टेंडर तो भरा था सिर्फ वाइफ का, तो फिर यह सब क्यों दिया? तब कुदरत कहती है, 'भाई, वह अकेला तो नहीं दे सकते, ममेरी सास, फूफी सास वह सब देना पड़ता है। आपको उसके बिना अच्छा नहीं लगेगा। यह तो जब पूरा लंगर होगा, तभी असली मज़ा आएगा!' एक इतना सा लेने जाएँ, उसके साथ तो कितने बंधन, कितनी सारी परवशताएँ। वह परवशता फिर सहन नहीं होती।

प्रश्नकर्ता : ये मन, वचन, काया के लफड़े ही अच्छे नहीं लगते न अब तो!

दादाश्री : इसमें तो छः भागीदार है। शादी की तो उसमें और छः की भागीदारी, मतलब बारह भागीदारों का कोर्पोरेशन खड़ा हो गया ऊपर से। छः के बीच तो कितने लड़ाई-झगड़े चल ही रहे थे, वहाँ फिर बारह की लड़ाई खड़ी हो जाती है। फिर हर एक संतान के साथ छः नये भागीदार जुड़ते जाते हैं। यानी कितना फँसाव खड़ा हो जाता है!

शादी करने के परिणाम तो देखो

अब, तुझे संसार में क्या-क्या चाहिए? वह बता न।

प्रश्नकर्ता : मुझे तो ये शादी ही नहीं करनी है।

दादाश्री : यह देह ही निरी *उपाधि* (बाहर से आने वाला दु:ख) है न! जब पेट में दर्द होता है, तब इस देह पर कैसा होता है? तो दूसरे की दुकान तक व्यापार बढ़ाएँगे, तो क्या होगा? कितने दु:ख देती है? और फिर दो-चार बच्चे हों तो। सिर्फ बीवी हो तो ठीक है, वह सीधी रहेगी लेकिन ये तो चार बच्चे! तो क्या होगा? बेहद परेशानी! निरी 'फाइलें' ही बढ़ जाती हैं। इसलिए भगवान ने ऐसा कहा है कि औपचारिक मत करना। अनुपचार मतलब आपने जिसका उपचार तक नहीं किया, वैसी है यह देह। इसका तो कोई चारा ही नहीं है लेकिन वह तो उपचार करता है। शादी करता है, व्यापार करता है, वह मत करना, जबकि इसे अब उपचार करने की इच्छा नहीं है, इसलिए कह रहा है कि शादी ही नहीं करनी है।

योनी में से जन्म लेता है। योनी में तो इतने भयंकर दु:खों में रहना पड़ता है और बड़ी उम्र के होने पर वापस योनी पर ही जाता है। इस जगत् का व्यवहार ही ऐसा है। किसी ने सही बात सिखाई ही नहीं है न! माँ-बाप भी कहते हैं कि शादी कर लो अब, और माँ-बाप का फ़र्ज़ भी तो है न? लेकिन कोई सही सलाह नहीं देता कि इसमें ऐसा दु:ख है। वे तो कहेंगे, 'शादी करवा दो अब। ताकि उसके वहाँ बच्चा हो तो मैं दादा बन जाऊँ।' बस, उन्हें इतनी ही उत्कंठा होती है। 'अरे, लेकिन दादा बनने के लिए मुझे क्यों इस कुएँ में धकेल रहे हो?' पिता जी को दादा बनना होता है, इसलिए हमें कुएँ में धकेल देते हैं। शादी में तो कितने ही ऐक्सिडेन्ट होते हैं, फिर भी कितनी ही शादियाँ होती हैं न? यह तो, शादी के कुएँ में गिरना पड़ता है। कुछ न

हो तो अंत में माँ-बाप भी उठाकर उस कुएँ में डाल देते हैं। वे लोग नहीं डालेंगे तो मामा उठाकर डाल देगा। ऐसा है यह फँसाव वाला जगत्!

शादी तो सचमुच में बंधन है। भैंस को डिब्बे में भरने जैसी दशा हो जाती है। उस फँसाव में नहीं फँसें, वही उत्तम है, फँस गए हों तो फिर निकल जाएँ तो और भी उत्तम और न हो तो अंत में फल चखने के बाद निकल जाना चाहिए! शादी से पहले, दस दिन पहले लड़की अगर गाड़ी में मिल जाए तो वह धक्का मारता है। उसी को फिर खुद ने पसंद किया। लो, वह वाइफ बन गई! किसकी बेटी, किसका बेटा, कुछ लेना-देना नहीं है! वाइफ मर जाए तो फिर रोता है। क्यों रोता है? वह कहाँ अपनी रिश्तेदार थी? माँ का रिश्ता सचमुच में रिश्ता कहलाता है, भाई का रिश्ता, रिश्ता कहलाता है, पिता जी का रिश्ता, रिश्ता कहलाता है, लेकिन वाइफ का कौन सा रिश्ता है? पराए घर की बेटी, उसे देखने गया था तब तो यों घूमो, यों घूमो कर रहा था, मर्ज़ी में आए तो सैंक्शन करता है। घर पर लाता है। उसके बाद यदि मेल न खाए तो फिर कहेगा कि 'डाइवोर्स लो।'

एक भाई ने मुझसे कहा कि 'मेरी वाइफ के बिना मुझे ऑफिस में अच्छा नहीं लगता।' अरे, एक बार हाथ में पीप हो जाए तो तू चाटेगा? नहीं तो क्या देखकर स्त्री पर मोह कर रहा है? पूरा शरीर पीप से ही भरा है। यह पोटली किसकी है, इसका विचार नहीं आता? भले आचार नहीं छूटे लेकिन क्या ऐसा विचार नहीं आना चाहिए? जितना प्रेम मनुष्य को अपनी स्त्री पर होता है, उससे अधिक प्रेम तो सूअर को सूअरनी पर है। यह क्या कोई प्रेम कहलाता होगा? यह तो पाशवता है निरी! प्रेम तो किसे कहते हैं, कि जो बढ़े नहीं, घटे नहीं, उसे प्रेम कहते हैं। यह सब तो आसक्ति है। बढ़ गई तो आसक्ति और कम हो गई, वह विकर्षण शक्ति। यदि अच्छे इयरिंग लाकर दिए, हीरे के टोप्स

लाकर दे दिए तो बीवी आसक्ति में ही खुश और यदि नहीं लाकर दिए तो, 'आप ऐसे हो, आप वैसे हो', फिर झगड़े नहीं होते? मतभेद नहीं होते? इसमें कौन सा सुख है जो पड़े हुए हो? क्या माना है तुमने? अनंत जन्मों से भटक रहे हो, तो अभी भी भटकने का क्या शौक पड़ा है तुम्हें? क्या हुआ है तुम्हें?

वीतराग भगवान के भक्तों को भी चिंता? जब शास्त्र पढ़ता है, उतने समय तक थोड़ी अंदर ठंडक रहती है। उसमें भी फिर पढ़ते-पढ़ते याद तो आ ही जाता है कि आज कारखाने में तो बारह सौ का नुकसान हो गया है। वह फिर उसे चुभता (कचोटता) है! पूरे दिन चुभन, चुभन और चुभन। भीतर यह कचोटता है और बाहर मकोड़े, मच्छर जो भी हों, वे काटते हैं। रसोई में बीवी काटती है। मैंने एक जने से पूछा, 'क्यों तंग आ गए हो?' तब उसने कहा कि 'यह पत्नी नागिन की तरह काटती है।' कुछ लोगों को ऐसी भी पत्नियाँ मिलती हैं न? पूरे दिन 'आप ऐसे और आप वैसे' करती रहती है, वह शांति से खाने भी नहीं देती बेचारे को! अब वह औरत कौन सा सुख दे देने वाली है? वह क्या 'परमानेन्ट' सुख देगी? तो क्यों खुद दबा हुआ बैठा रहता है? विषय-भूखा है इसलिए। वर्ना निर्विषयी को डराने वाला कौन? सिर्फ विषय के लिए पड़े रहना और खुद की स्वतंत्रता खो देनी? बीवी-बच्चों का जंजाल और वह अनंत जन्म बिगाड़ देता है। जो इसमें से कुदरती रूप से छूट गया, उसकी तो बात ही क्या करनी?

पूरी दुनिया की है वह जूठन

बाकी, विषय भोग तो निरी जूठन ही है। पूरी दुनिया की जूठन है। आत्मा का कहीं ऐसा आहार होता होगा? आत्मा को बाहर की किसी भी चीज़ की ज़रूरत नहीं है, निरालंब है। किसी भी अवलंबन की उसे ज़रूरत नहीं है। परमात्मा ही है खुद। निरालंब अनुभव में आ जाए तो परमात्मा ही हो गया! उसे कुछ

भी नहीं छू सकता। दीवारों के आरपार निकल जाए, अंदर ऐसा आत्मा है, अनंत सुख का धाम है!

इस पैकिंग का हमें क्या करना है? पैकिंग तो कल को सड़ जाएगा, गिर जाएगा, बिगड़ जाएगा, पैकिंग तो किस चीज़ से बना है? यह हम नहीं जानते? फिर भी लोग भूल जाते हैं न? भूल नहीं जाते लोग? लेकिन यह पैकिंग आपको भी भ्रम में डाल दे। हमें, ज्ञानी पुरुष को, यों आरपार दिखता है। कपड़े वगैरह हों फिर भी कपड़ों के अंदर, चमड़ी के अंदर जैसा है वैसा यथावत् दिखता है। फिर राग कैसे होगा? खुद सिर्फ आत्मा को ही देखते हैं और बाकी सब तो कचरा है, सड़ा हुआ माल है। उसमें देखने जैसा क्या है? वहीं पर राग होता है। वही आश्चर्य है न! खुद क्या यह नहीं जानता? जानता है सबकुछ, लेकिन उसे ऐसा समझाया नहीं गया है। ज्ञानियों ने पहले से ही माल देखा हुआ है। इसमें नया क्या है? और फिर बीवी के साथ सो जाता है। अरे, इस मांस को ही दबाकर सो जाता है? लेकिन भान नहीं है न। उसी का नाम मोह है न! हमें निरंतर जागृति रहती है, एवरी सेकन्ड जागृति रहती है, इसलिए हम जानते हैं कि निरा मांस ही है यह सब।

अब ऐसी बात कोई करता नहीं है न? क्योंकि लोगों को विषय पसंद है। इसलिए यह बात करता ही नहीं है न कोई। जो निर्विषयी है, वही यह बात कर सकते हैं, वर्ना ऐसा खुल्लम खुल्ला कौन कहेगा? अंत में तो यह सब छोड़े बिना चारा ही नहीं है। आप हम से कहो कि मुझे ब्रह्मचर्यव्रत लेना है। तो हम 'हाँ' कहते हैं। क्यों? कि भई बहुत अच्छा है, खरा सुखी होने का मार्ग यही है, यदि आपका उदय हो तो। वर्ना शादी कर लो। शादी करके अनुभव लो। एक बार अनुभव हो गया तो दूसरे जन्म में मुक्त हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : कोई-कोई मुक्त हो जाता है, नहीं तो छूटना मुश्किल है।

दादाश्री : उस अनुभव को याद रखे तो छूट सकता है। हम तो हर क्षण याद रखने वाले।

प्रश्नकर्ता : ऐसा तो शायद ही कोई याद रखने वाला होगा। नहीं तो कीचड़ में उतरता ही जाता है।

दादाश्री : हाँ, यह तो कीचड़ ही है। गहरा कीचड़ है। उसमें उतरता ही जाता है। रिसर्च तो, जो निर्विषयी हो, वही कर सकता है। विषयी इंसान रिसर्च कर ही नहीं सकता।

सुख के साधन या अशुचि का संग्रहस्थान?

जहाँ भ्रांतिरस में एक होकर जगत् डूबा हुआ है। भ्रांतिरस यानी वास्तव में रस नहीं है, फिर भी मान बैठा है! न जाने क्या मान बैठा है! इस सुख का विश्लेषण किया जाए तो निरी उल्टियाँ होंगी!

इस शरीर की राख बन जाती है और उस राख के परमाणुओं से वापस शरीर बनता है। अनंत जन्मों की राख के ये परिणाम हैं। निरी जूठन है! यह तो जूठन की भी जूठन और उसकी भी जूठन! वही की वही राख। वही के वही परमाणु सारे। उसी से फिर बनता रहता है! बर्तन को अगले दिन मांजने से वे साफ दिखते हैं, लेकिन मांजे बगैर अगर उसी में रोज़ खाते रहें तो क्या वह गंदगी नहीं है?

पुद्‌गल के जो गुण हैं न, जो स्थूल गुण हैं जो ऐसे हैं कि आँखों से दिखाई दें, कान से सुनाई दें, यों स्पर्श से अनुभव में आएँ, नाक को सुगंध दें, जीभ को स्वाद दें। *पुद्‌गल* के गुण और ये प्राकृतिक गुण दोनों एकत्रित हुए हैं। प्राकृतिक गुण मिश्र चेतन के हैं और *पुद्‌गल* के जो गुण हैं, उन सबके एक होने से यह खून-पीप और यह सब खड़ा हो गया और संसार खड़ा हो गया है। इसी से यह पूरा जगत् उलझन में हैं। खुद की अज्ञानता

की वजह से उसे इस सारी अशुचि का भान नहीं रहता और भान नहीं रहता इसलिए यह संसार खड़ा रहा है।

रात को जलेबी खाता है तो सुबह में जलेबी की क्या दशा होगी? ऐसा भान रहता है क्या लोगों को? क्यों भान नहीं रहता? क्योंकि *पुद्गल* के गुणों में ही अनुराग है उसे। यह तो *पुद्गल* है, यह *पूरण* (चार्ज होना, भरना) हुआ है और वह जो है, वह *गलन* (डिस्चार्ज होना, खाली होना) है ऐसा भान ही नहीं है न? जब *गलन* होता है सुबह-सुबह, तब घिन आती है? अरे, दोनों *पुद्गल* ही हैं। दोनों *पुद्गल* के ही गुण हैं, लेकिन उसे अशुचि का भान ही नहीं है, इसलिए जलेबी खाते समय टेस्ट से भोगता है न?!

प्रश्नकर्ता : जब आत्मा और *पुद्गल* का संयोग होता है तब हर किसी को ऐसा ही होता है न?

दादाश्री : नहीं, लेकिन जब तक उसे भ्रांति है, तभी तक। 'मैं कौन हूँ' उसका भान नहीं रहा इसलिए मूर्च्छा में ऐसा चलता रहता है। भान होने के बाद खुद अलग हो गया। बाद में उसे विषयसुख फीके लगते हैं। जलेबी खाने के बाद चाय पी है? तो फीकी लगती है न? फिर हम चाय में कितना भी टेस्ट करने जाएँ, लेकिन टेस्ट नहीं आता। उसी तरह यह जगत् भी असर वाला है!

अरे, यों अच्छी खीर खाई हो, उसकी भी उल्टी हो जाए तो कैसी दिखेगी? सुंदर, हाथ में पकड़ सकें, ऐसी दिखेगी? अभी जो अंदर डाला था, वही वापस निकला है, उसे हाथ में क्यों नहीं पकड़ सकते? यानी अंदर अशुचि का संग्रहस्थान है। अंदर डालते ही अशुचि हो जाती है। कटोरी साफ हो, खीर अच्छी हो, लेकिन अंदर डालते ही, वही की वही खीर फिर उल्टी करके दी जाए कि फिर से पी जाओ, तो नहीं पीएगा और कहेगा, 'जो होना हो, वह हो, लेकिन नहीं पीऊँगा।' यानी कि ऐसा सब भान रहता नहीं है न!

सच्चा आम का भोग, विषय की तुलना में

यह जलेबी नीचे धूल में गिर गई हो। फिर वह खाने के लिए दे तो खाओगे या नहीं? नहीं। क्यों? यों मुँह में तो मीठी लगती है, फिर भी? देखकर ही मना कर देगा न? यों अच्छा आम हो लेकिन खट्टा निकले तो? तब भी कहेगा 'नहीं। नहीं खाना।' मतलब ये लोग इतना सब देखकर खाते हैं। जीभ मना करे तो भी फेंक देता है, सिर्फ आँखें मना करें तो भी मना कर देता है, सिर्फ नाक मना करे तो भी छोड़ देता है। यानी कि इसमें जब पाँचों इन्द्रियाँ खुश हो जाएँ, तभी उस चीज़ को खाता है लेकिन सिर्फ विषय ही ऐसा है कि किसी भी इन्द्रिय को वह अच्छा ही नहीं लगता। फिर भी 'उसे' विषय में मज़ा आता है, वह भी आश्चर्य है न!

पाँच इन्द्रियों के विषय में सिर्फ जीभ का विषय ही सचमुच का विषय है। बाकी सब तो बनावट है। शुद्ध विषय हो तो सिर्फ यही एक है! फर्स्ट क्लास हाफूस के आम हों, तो कैसा स्वाद आता है? भ्रांति में यदि कोई शुद्ध विषय हो तो वह यही है। शुद्ध आहार मिलता हो और उसका स्वाद, बेस्वाद नहीं हुआ हो तो वह विषय स्वीकार करने योग्य है। है तो यह भी कल्पित ही, लेकिन सब से ऊँचा कल्पित है। इस के बारे में सोचने से घृणा नहीं होती और विषय में तो सोचते ही घृणा होती है।

विषयों में भोग है ही नहीं, लेकिन मानते हैं कि यह भोग है। भोग में तो पाँचों इन्द्रियाँ खुश रहती है। यह आम, वह भोग कहलाता है। उसकी सुगंध अच्छी होती है, स्पर्श भी अच्छा होता है, स्वाद भी आता है, आँखों को यों अच्छा लगता है। जबकि इस विषय में तो कुछ है ही नहीं। यह तो फूल्स पैरडाइस है। विषय में कोई इन्द्रिय खुश नहीं होती। आँखें भी अंधेरा ढूँढती हैं। आम देखने के लिए आखें अंधेरा ढूँढती हैं? नाक कहती है कि (नाक) बंद कर दो? लोग बदबू मारते होंगे क्या? दो दिन

नहीं नहाएँ तो क्या होता है? आम की तरह महकते हैं? यानी ये विषय तो नाक को ज़रा भी अच्छे नहीं लगते, आँखों को भी अच्छे नहीं लगते। जीभ की तो बात ही क्या करनी? उल्टी आने जैसा होता है। आम को सड़ जाने के बाद सूंघें तो अच्छा लगता है? सड़े हुए आम को छूना, स्पर्श करना अच्छा लगता है? तो फिर वहाँ भोगने का रहता ही कहाँ है? कोई इन्द्रिय एक्सेप्ट नहीं करती, फिर भी लोग विषय भोगते हैं, वह आश्चर्य है न? यह सब विचार करना। आपको साधु बनाने नहीं आया हूँ। ये कितनी सारी गलत मान्यताएँ घुस गई हैं, उन्हें निकालने की ज़रूरत है। विषय के बारे में विस्तार से समझ लिया जाए तो विषय रहेगा ही नहीं।

हमारे जैसा तो किसी को भी समझ में नहीं आता और अगर बताएँ भी तो दूसरे दिन भूल जाते हैं। वर्ना विषय, वह सोचे-समझे बगैर की बात है। ये लोग देखा देखी से उसमें पड़े हुए है। सिर्फ लोक संज्ञा है वह और ज्ञानी की संज्ञा, यदि कभी ज्ञानी से पूछा जाए तो इसमें कोई पड़ेगा ही नहीं। एक भी इन्द्रिय इसे 'पास' नहीं करती। इसलिए ज्ञानियों ने कहा है कि जहाँ सुख नहीं है, वहाँ कहाँ सुख मान बैठे हो? लेकिन इस विषय में उसे मूर्च्छा बहुत है। इसलिए मूर्च्छा को लेकर उसे भान नहीं रहता।

सभी इन्द्रियो ने निंदा की विषय की

विषय, वह संडास है। नाक-कान में से, मुँह में से, सब जगहों से जो-जो निकलता है, वह सब संडास ही है। डिस्चार्ज, वह भी संडास ही है। जो परिणामिक भाग है, वह संडास है लेकिन तन्मयाकार हुए बिना *गलन* नहीं हो सकता। संडास होता है वह भी, अंदर जो कॉज़ेज़ होते हैं, उनका परिणाम है। खीर-पूड़ी किसे अच्छी नहीं लगती? लेकिन भगवान कहते हैं कि कल सुबह वह संडास बन जाएगा। विषय को संडास क्यों कहा गया है? इसीलिए, क्योंकि वह *गलन* होता है।

विचारशील इंसान विषय में सुख कैसे मान बैठा है, उसी पर मुझे आश्चर्य होता है? विषय का पृथक्करण करे तो दाद को खुजलाने जैसा है। हमें तो बहुत विचार आते हैं और लगता है कि अरेरे! अनंत जन्मों से यही किया? जितना कुछ हमें पसंद नहीं है, वह सबकुछ विषय में है। निरी दुर्गंध है। आँखों को देखना अच्छा नहीं लगता। नाक को सूंघना अच्छा नहीं लगता। तूने सूंघकर देखा था? सूंघकर देखना था न? तो वैराग तो आ जाता। कान को नहीं रुचता। सिर्फ चमड़ी को रुचता है। लोग तो पैकिंग को देखते हैं, माल को नहीं देखते। जो चीज़ पसंद नहीं है, पैकिंग में तो वही चीज़ें भरी हुई है। निरी दुर्गंध का बोरा है! लेकिन मोह के कारण भान नहीं रहता और इसीलिए तो पूरा जगत् चकरा गया है।

यह बांद्रा स्टेशन की जो खाड़ी आती है, उसकी दुर्गंध पसंद है? उससे भी बुरी दुर्गंध इस पैकिंग में हैं। आँखों को पसंद नहीं आएँ, ऐसे चित्र-विचित्र पार्ट्स अंदर है। इस बोरे में तो बेहद विचित्र गंदगी है। यह अपने अंदर जो हृदय है, उसी लौंदे को निकालकर हाथ में दे दे तो? और कहे कि अपने साथ हाथ में रखकर सो जा, तो? नींद ही नहीं आएगी न? यह तो समुद्र के विचित्र जीव जैसा दिखता है। जो पसंद नहीं है, वह सभी कुछ इस देह में है। ये आखें यों बहुत सुंदर दिखती हों, लेकिन मोतियाबिंद हो जाए और उन सफेद आँखों को देखा हो तो? अच्छा नहीं लगेगा। ओहोहो सब से ज़्यादा दुःख इसी में हैं। यह शराब जो नशा चढ़ाती है, उस शराब की दुर्गंध इंसान को अच्छी नहीं लगती और यह विषय तो सर्व दुर्गंध का कारण है। सभी नापसंद चीज़ें वहाँ पर है। अब क्या होगा यह आश्चर्य? इसमें से छूट गए तो फिर राजा। जिसे भूख ही नहीं लगी हो उसे क्या? जो भूखा होगा वही होटल में जाएगा न? जहाँ-तहाँ झाँकता रहेगा, लेकिन जिसने खाना खाया है, खाकर आराम से टहल रहा है, रस-रोटी खाकर टहल रहा है, वह क्यों होटल में जाएगा? गंदगी

वाली होटलें! विषय के बारे में गहराई से सोचने पर यही लगता है कि यह गटर तो खोलने जैसा है ही नहीं। कितना सारा बंधन! यह जगत् इसीलिए खड़ा है न!

बुद्धि से सोचा है विषय के बारे में कभी?

विषय तो ऐसी चीज़ है जिसे मूर्ख भी न चाहे। बुद्धि का संपूर्ण प्रकाश हो चुका हो, बुद्धि का विकास हो चुका हो, वह भी विषय से डरता है बेचारा। क्योंकि विषय, वह तो बिल्कुल मूर्खतापूर्ण चीज़ है। इस काल में, यह तो जलन की वजह से विषय के कीचड़ में गिरता है। नहीं तो कोई कीचड़ में गिरेगा ही नहीं न! बहुत जलन होने लगे, तब इंसान क्या करे? इसलिए उल्टा उपाय करता है। विषय के बारे में यदि सोचा जाए तो विचारक इंसान को वह अच्छा ही नहीं लगेगा। यानी कि बुद्धि से भी विषय छूट सकता है। उसमें फिर ज्ञान का और इसका क्या लेना-देना? विषय के बारे में यदि सोचा होता न, तो उसे विषय बिल्कुल अच्छा ही नहीं लगता। निर्मल बुद्धि वाले को विषय का पृथ्थकरण करने को कहें तो, 'विषय थूकने जैसी चीज़ भी नहीं है।' ऐसे कहेगा। अतः जिसकी बुद्धि निर्मल हो, उसे तो विषय अच्छा ही नहीं लगेगा। वह छूएगा ही नहीं न! लेकिन जिसकी बुद्धि में मल जम गया हो, उसे तो सबकुछ उल्टा ही दिखेगा।

प्रश्नकर्ता : इस मनुष्य जाति में ब्रह्मचर्य रह ही नहीं सकता, इसका क्या कारण है? मोह है? राग है?

दादाश्री : बुद्धिपूर्वक का सुख नहीं है यह। बिना सोचे-समझे माना गया सुख है। लोगों ने जो माना, वही हमने मान लिया। वह सिर्फ मान्यता का ही सुख है और जलेबी सुखदायी है, वह बुद्धिपूर्वक का सुख है।

विषय का खेल तो बुद्धिपूर्वक नहीं है, यह तो सिर्फ मन की ऐंठन ही है। कोई भी बुद्धिमान इंसान यदि बुद्धि से विषय

के बारे में समझने जाए तो बुद्धि विषय को लेट गो नहीं करेगी। ये बुद्धिमान लोग लेट गो करते हैं, इसका क्या कारण है? लोकसंज्ञा के अनुसार चलते हैं, इसलिए उस तरफ का आवरण नहीं टूटा।

एक जन ने कहा कि बुद्धिपूर्वक में क्या हर्ज है? तब मैंने कहा, बुद्धिपूर्वक की चीज़ें उजाले में करनी होती है। सीक्रेसी (गुप्त) नहीं होती। हज़ार लोगों की मौजूदगी में बैठकर जलेबी खा सकते हैं? जलेबी में हर्ज नहीं है न? उसे शर्म नहीं आती?

प्रश्नकर्ता : नहीं। शर्म नहीं आती, रौब से खाई जा सकती है!

दादाश्री : यानी विषय के बारे में यदि कोई सोचे न, यदि विचार करना आए, तो वह विषय की ओर कभी जाएगा ही नहीं। लेकिन विचार करना भी नहीं आता न? विषय, वह अजागृति है। विषय पुसाए ही कैसे? जो चीज़ें सोचने पर अच्छी नहीं लगें, उसी चीज़ का संबंध कैसे पुसाए?

निरी गंदगी दिखे विषय में

अब कितने ही लोग चारित्र (दीक्षा) लेने लगे हैं। क्योंकि विषय में इतनी गंदगी है कि जिस पर अगर निबंध लिखना हो तो निबंध लिखने में भी घिन आ जाए। यह तो ठीक है, एक तरह की हैबिट हो गई है। मूलतः अज्ञानता और मूर्च्छा की वजह से गंदगी में हाथ डाला। अब भान में आने के बाद क्या घिन नहीं आएगी? इस बिल्कुल ही गंदगी वाले सुख को छोड़ना है। इसे तो गंदगी देखकर ही छोड़ देना है। यदि इस विषय का सुख छोड़ दे तो पूरी दुनिया का मालिक बन जाएगा। वास्तव में तो वह सुख है ही नहीं। इस जलेबी में सुख है, श्रीखंड में सुख है, ऐसा कह सकते हैं, उसके लिए मना नहीं कर सकते लेकिन इस विषय में तो सुख है ही नहीं।

मुझे तो इस विषय में इतनी गंदगी दिखती है कि मुझे यों

ही सहज ही उस ओर का विचार तक नहीं आता। मुझे विषय का कभी भी विचार ही नहीं आता। मैंने इतना कुछ देख लिया है, इतना कुछ देखा है कि मुझे इंसान आरपार दिखाई दे, ऐसा देखा है। विषय का यदि पृथ्थकरण किया जाए, ज्ञान से नहीं लेकिन बुद्धि से, तो भी इंसान पागल हो जाए।

यह सब तो नासमझी से खड़ा है। प्याज की गंध किसे आती है? जो प्याज खाता है, उसे गंध नहीं आती। जो प्याज नहीं खाता है, उसे तुरंत ही गंध आती है। विषयों में पड़ा है इसलिए विषयों में रही गंदगी को नहीं समझ पाता। इसलिए विषय नहीं छूट पाता और राग करता रहता है। वह भी मूर्च्छा का राग है। सिर्फ आत्मा ही मांसरूपी नहीं है। बाकी सब निरा मांस ही है न?!

जिस तरह आहारी आहार करता है, उसी तरह विषयी विषय करता है लेकिन बात समझ में आनी चाहिए न? और वह लक्ष्य में रहना चाहिए न? आहार तो हर रोज़ अच्छा खाता है, लेकिन चार दिन का भूखा हो तो बासी गंदी रोटी भी खा जाता है। यह आहार तो अच्छा होता है, लेकिन यह विषय तो उससे भी ज़्यादा गंदगी वाला है। भूख की जलन की वजह से गंदी रोटी खाता है। उसी तरह जलन की वजह से वह विषय भोगता है। लेकिन गंदी रोटी खाते समय कहता है, 'चलेगा'। लेकिन क्या फिर से वैसा खाने की इच्छा होती है? नहीं। दोबारा वैसा खाने की इच्छा तो किसी को भी नहीं होती लेकिन विषय में ऐसा नहीं रहता न? विषय में भी ऐसा ही रहना चाहिए।

कई लोग मांसाहार करते हैं, वे राज़ीखुशी से करते हैं न? और आपको मांसाहार करने को कहा हो तो? घिन आएगी न? इसका क्या कारण है? क्योंकि मांसाहार करने वाले का डेवेलपमेन्ट अलग है और आपका डेवेलपमेन्ट अलग है। जैसे-जैसे डेवेलपमेन्ट बढ़ता जाता है, वैसे वैसे संसार की चीज़ों पर घिन आती जाती

है। इस विषय पर घिन नहीं आती न? लेकिन वह तो अन्य सभी गंदी चीज़ों से भी ज़्यादा बुरा है। फिर भी लोगों को इसका पता नहीं चलता। डेवेलपमेन्ट की कितनी कमी है। पकौड़ों में पसीना गिर रहा है, ऐसा देखते हैं फिर भी खाते हैं, तो यह डेवेलपमेन्ट कितना कच्चा है? क्योंकि इस गंदगी को समझा ही नहीं। यह शरीर यों सुंदर दिखता है लेकिन यदि बनियान को निकालकर मुँह में डालो तब पता चलेगा कि वह कैसा है! वह कैसा लगता है? खारा लगता है न? बदबूदार! जिसके पास खड़े रहने पर भी बदबू आती है, वहाँ उसके प्रति विषय कैसे खड़ा होता है? यह कितनी बड़ी भ्रांति है!!

खरा सुख किस में?

इंसान को रोंग बिलीफ है कि विषय में सुख है। अब अगर विषय से भी ऊँचा सुख मिल जाए तो विषय में सुख नहीं लगेगा! विषय में सुख नहीं है लेकिन देहधारी को व्यवहार में चारा ही नहीं। बाकी जान-बूझकर गटर का ढक्कन कौन खोलेगा? विषय में सुख होता तो चक्रवर्ती इतनी सारी रानियाँ होने के बावजूद सुख की खोज में नहीं निकलते! इस ज्ञान से ऐसा ऊँचा सुख मिलता है। फिर भी इस ज्ञान के बाद तुरंत विषय चले नहीं जाते, लेकिन धीरे धीरे चले जाते हैं। फिर भी खुद को सोचना तो चाहिए कि यह विषय कितना गंदगी वाला है!

पुरुष को ऐसा दिखे कि स्त्री है, तो यदि पुरुष में रोग होगा तभी उसे ऐसा दिखेगा कि 'स्त्री है'। पुरुष में रोग नहीं होगा तो स्त्री नहीं दिखेगी।

ज्ञानियों की दृष्टि आरपार होती है। जैसा है वैसा दिखता है। वैसा दिखे तो फिर विषय रहेगा? उसे कहते हैं, ज्ञान। ज्ञान मतलब आरपार, जैसा है वैसा दिखना। यह हाफूस का आम हो तो उस विषय के लिए हम मना नहीं करते। उसे यदि काटे तो खून नहीं दिखेगा, तो उसे आराम से खा। इसे तो काटने से खून

निकलता है, लेकिन उसकी जागृति नहीं रहती न? इसलिए मार खाता है। इसलिए यह संसार खड़ा रहा है। इस ज्ञान से जागृति धीरे धीरे बढ़ती जाती है, विषय खत्म होता जाता है। मुझे बंद करने के लिए कहना नहीं पड़ता। अपने आप ही आपका बंद होता जाता है।

दूषमकाल में हमेशा इंसान का मन कैसा होता है कि, 'कल से शक्कर नहीं मिलेगी' ऐसा कहा कि सभी भाग-दौड़ करके शक्कर ले आएँगे। यानी मन ऐसे हैं कि टेढ़े चलें। इसीलिए हमने सभी तरह की छूट दी है। दूषमकाल में मन पर बंधन लगाएँ कि 'ऐसा करो' तो मन उल्टा चले बिना नहीं रहेगा। इस दूषमकाल का स्वभाव है कि यदि रोका जाए तो बल्कि पूरे जोश के साथ उसी में पड़ेगा। इसलिए इस काल में हमारे निमित्त से अक्रम प्रकट हुआ है, जहाँ किसी भी तरह की रोकटोक नहीं है। इसलिए फिर मन जवान होता ही नहीं, मन बूढ़ा हो जाता है।' बूढ़ा हुआ कि निर्बल हो जाता है, फिर खत्म हो जाता है। जवान तो कब होता है कि जब उसे रोकें, तब। तृप्त इंसान विषय की गंदगी में हाथ ही नहीं डालेगा। यह तो भीतर तृप्ति नहीं है, इसलिए इस गंदगी में फँस गए हैं। वीतरागों का विज्ञान, वही तृप्ति लाने वाला है।

कितने ही जन्मों का गिनें तो पुरुषों ने इतनी-इतनी स्त्रियों से शादी की और स्त्रियों ने पुरुषों से शादी की, फिर भी अभी तक उन्हें विषय का मोह नहीं टूटता। तब फिर इसका अंत कब आएगा? इससे अच्छा तो हो जाओ अकेले, ताकि झंझट ही खत्म हो जाए न?!

चल रहे है कहाँ? दिशा कौन सी?

यह इन्जिन होता है, तो कोई इंसान इन्जिन में तेल डालता रहे, उस इन्जिन को चलाता रहे, ऐसा एकाध साल तक करता रहे तो आसपास के लोग क्या कहेंगे उसे? 'अरे, इन्जिन को कोई पट्टा जोड़कर काम करवा ले न।' उसी तरह लोग जीवन जीने

के लिए अच्छा खाना खाते हैं, लेकिन फिर पट्टा ही नहीं जोड़ते! यानी कि इस मशीन से दूसरा काम करवा लेना चाहिए या नहीं करवाना चाहिए? आपने क्या करवाने का तय किया है? कुछ सद्गति हो, मोक्ष हो, उसके लिए पट्टा जोड़ना है, जीवन जीकर काम *निकाल* (निपटारा) लेना है।

हम अगर लोगों से पूछें कि आप क्यों खाते हो? तो कहेंगे कि जीवन जीने के लिए और पूछेंगे कि जीवन क्यों जी रहे हो? तो कहेंगे, मुझे पता नहीं! अरे, यह कैसा? जीवन किसलिए जीना है? वह भी पता नहीं और बच्चों के कारखाने निकाले हैं! यह जीवन क्या बच्चों के कारखाने के लिए होगा? बच्चों के कारखाने, वह तो स्वभाविक है, लेकिन इससे क्या फायदा हुआ? शादी हुई तो बच्चे तो होते ही रहेंगे न? कुत्तों को भी बच्चे होते रहते हैं। वह तो अनपढ़ है, फिर भी बच्चे होते हैं। ये कुत्ते क्या पढ़े लिखे हैं? तो क्या उन्हें बच्चे नहीं होते होंगे? उन्होंने भी शादी की होती है। उनकी भी वाइफ होती हैं न? अतः कुछ समझना तो पड़ेगा न? तूने इन्जिनियरिंग पास की है, इसलिए अब तेरे पास क्या हुआ? मेन्टेनन्स की तेरी व्यवस्था हो गई। अब तेरा इन्जिन चलता रहेगा। पेट्रोल और ऑइल के लिए सारी व्यवस्था हो गई। अब तुझे इस इन्जिन से क्या काम करवा लेना है? अपना कुछ हेतु तो होना चाहिए न? यह नौकरी-व्यापार करते हैं, पैसा कमाते हैं, फिर भी यह पैसा तो दिन-रात चिंता ही करवाता है और बुरे विचार ही आते रहते हैं। किसका भोग लूँ, किसका ले लूँ, सब *अणहक्क* (बिना हक़ का, अवैध) का भोगता रहता है और फिर नर्क में जाना पड़ता है। वहाँ भयंकर दुःख भुगतने पड़ते हैं। ये सुख तो उधार पर लिए हुए सुख कहलाते हैं और उधार के सुख लें, तो वे कितने दिन चलेंगे? नर्क गति में सूद के साथ लौटाने पड़ेंगे। उससे अच्छा उधार के सुख भी नहीं चाहिए और हमें वह दुःख भी नहीं चाहिए। बाकी तो सब खाओ आराम से। जलेबी खाओ, चाय पीओ!

समझो ब्रह्मचर्य की कमाई

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य से क्या फायदे होते हैं?

दादाश्री : इस अब्रह्मचर्य से क्या फायदा हुआ आपको, यह बताओ पहले। बेटा-बेटी हुए। वह क्या कोई कम फायदा है? निरा व्यापार ही है न, फायदा ही हुआ न! हिन्दुस्तान में कई लोग रोते हैं। 'क्यों, क्या हुआ भाई? आपको क्या तकलीफ आ गई?' मैं जैन बनिया, मेरी बेटी भागकर सुथार के यहाँ चली गई और उससे शादी कर ली। तो देखो, स्वाद आया न! कैसा मीठा स्वाद आया?। फिर घर में सभी के मन में ऐसा होता है कि इससे तो यह लड़की नहीं होती तो अच्छा था!

प्रश्नकर्ता : लेकिन किस फायदे के लिए ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए?

दादाश्री : यदि यहाँ पर हमें कुछ लगा हो और खून निकल रहा हो तो फिर बंद क्यों करते हैं? क्या फायदा?

प्रश्नकर्ता : ज़्यादा खून न बह जाए।

दादाश्री : खून बह जाए तो क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : शरीर में बहुत वीकनेस आ जाएगी।

दादाश्री : तो यह अधिक अब्रह्मचर्य से ही वीकनेस आ जाती है। ये सभी रोग अब्रह्मचर्य की वजह से ही है। क्योंकि जो कुछ खाना खाते हो, पीते हो, सांस लेते हो, इन सभी का परिणाम होते, होते, होते उसका... जिस तरह इस दूध से दही बनाते हैं तो दही, वह अंतिम परिणाम नहीं है। दही से फिर, वह होते होते फिर मक्खन बनता है, मक्खन से घी बनता है। घी वह अंतिम परिणाम है। उसी तरह इसमें ब्रह्मचर्य *पुद्‌गलसार* है पूरा!

यह खून बह जाए तो हर्ज नहीं, लेकिन *पुद्‌गलसार* निकल जाए तो मुश्किल है, बहुत हानिकारक। अभी तक *पूरण* किया,

उसका सार क्या है? तब कहते हैं, उसे नहीं संभालोगे तो मनुष्यपन चला जाएगा। सार का सार है वह। तत्व का तत्वार्क है, अर्क कम इस्तेमाल होगा तो अच्छा है या ज़्यादा इस्तेमाल होगा तो?

प्रश्नकर्ता : कम इस्तेमाल होगा तो अच्छा है।

किफायत करो वीर्य और लक्ष्मी की

दादाश्री : इसलिए इस जगत् में दो चीज़ों का अपव्यय नहीं करना चाहिए। एक तो लक्ष्मी और दूसरा वीर्य। जगत् की लक्ष्मी गटर में ही जा रही है। अत: लक्ष्मी खुद के लिए इस्तेमाल नहीं होनी चाहिए। बेकार में दुरुपयोग नहीं होना चाहिए और हो सके तब तक ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए। जो आहार खाते हैं, उसका अर्क बनकर अंत में वह अब्रह्मचर्य से खत्म हो जाता है। इस शरीर में कुछ नसें ऐसी होती है जो वीर्य संभालती हैं और वह वीर्य इस शरीर को संभालता है। इसलिए हो सके तब तक ब्रह्मचर्य संभालना चाहिए।

ब्रह्मचर्य का रिवाज तो सिर्फ मनुष्य जाति में ही हैं न! मजबूरन उपदेश देकर ब्रह्मचारी बनाते हैं। फिर भी वह फलदायी है, इसलिए इसे चलने दिया। वास्तव में तो ब्रह्मचर्य पालन समझकर करना चाहिए। ब्रह्मचर्य के फल स्वरूप यदि मोक्ष नहीं मिल रहा हो तो वह ब्रह्मचर्य नसबंदी के बराबर ही है। फिर भी उससे शरीर अच्छा रहता है, मज़बूत रहता है, रूपवान बनते हैं, ज़्यादा जीते हैं! बैल भी हृष्टपुष्ट रहता है न? बैल में भी ताकत बहुत रहती है, तभी तो वह खेत जोतने के काम आता है न? हम किसी की निंदा नहीं करते लेकिन बात का सार समझ लेना है! हज़ार का विदेशी नोट हो तो यहाँ इन्डिया में उसकी एक्सचेन्ज कीमत डेढ़ सौ रुपये ही होती है। इसलिए हज़ार के बदले हज़ार रुपया गिनकर नहीं दे सकते। अत: हमें ऐसी जाँच कर लेनी चाहिए कि इस चीज़ की एक्सचेन्ज कीमत क्या है? यह ब्रह्मचर्य कैसा है? और खरा ब्रह्मचर्य कैसा होता है?! जिस ब्रह्मचर्य से मोक्ष हो, वह ब्रह्मचर्य काम का!

अक्रम विज्ञान प्राप्ति करवाए मोक्ष की

फिर भी यह विज्ञान किसी को भी, विवाहितों को भी मोक्ष में ले जाएगा लेकिन ज्ञानी की आज्ञानुसार चलना चाहिए। अगर कोई तेज़ दिमाग़ वाला हो और वह कहे, 'साहब, मैं दूसरी शादी करना चाहता हूँ।' तेरा ज़ोर होना चाहिए। पहले क्या शादियाँ नहीं करते थे? भरत राजा की तेरह सौ रानियाँ थी, फिर भी मोक्ष में गए! यदि रानियाँ बाधक होतीं तो मोक्ष में जा सकते थे क्या? तो बाधक क्या है? अज्ञान बाधक है। इतने सारे लोग है, उन्हें कहा होता कि स्त्री को छोड़ दो, तो वे सब कब स्त्रियों को छोड़ते? और कब उनका हल आता? इसलिए कहा, स्त्रियाँ भले रही और दूसरी शादी करनी हो तो मुझसे पूछकर शादी करना, पूछे बगैर मत करना। देखो छूट दी है न सारी?

कर्म के अधीन स्त्री-पुरुष बने हैं। एक पेड़ पर क्या सभी पंछी तय करके बैठते हैं? नहीं! उसी तरह ये सभी एक परिवार में जन्म लेते हैं। किसी के तय किए बिना ही कर्म के उदयानुसार ही घर के लोग इकट्ठे होते हैं और फिर बिखर भी जाते हैं। उसमें लोगों ने एडजेस्टमेन्ट लेकर, उसे व्यवस्थित किया। यानी यह लड़का है तो उस पर पुत्रभाव रहता है। दूसरा, बहन के भाव रहते हैं, स्त्री के भाव रहते हैं। अभी लोगों में वे भाव विकृत हो गए हैं। बाकी, पहले किसी पर बहन का भाव आ जाए तो दूसरा भाव होता ही नहीं था। बहन कहा यानी सिर्फ बहन ही। माँ यानी माँ। दूसरा विचार ही नहीं आता था लेकिन अभी तो सभी जगह बिगड़ ही गया है।

इतना आवश्यक है, ब्रह्मचर्य के कैन्डिडेट के लिए

यह तो 'जैसा है वैसा' नहीं दिखने से मूर्च्छा रहती है। जब तक स्त्री को 'जैसा है वैसा' आरपार नहीं देख सके, तब तक विज़न नहीं खुलता। जब मन विषय में खुला होगा (जब विषय

का स्वरूप पूरी तरह से समझ में आ जाएगा) तब विज़न खुलेगा या फिर साल भर ब्रह्मचर्य पालन करे और विषय का विचार तक भी नहीं आए, तब विज़न खुलेगा। फर्स्ट विज़न में नेकेड दिखेगा, सेकन्ड विज़न में चमड़ी उतार दी हो ऐसा दिखेगा और अंत में आरपार दिखेगा तब जाकर विज़न खिलेगा।

अन्य कहीं दृष्टि बिगड़े, तब तो वह अधोगति की बहुत बड़ी निशानी कहलाती है। शादी हो गई है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : नहीं हुई।

दादाश्री : तो शादी कर लो न?

प्रश्नकर्ता : शादी करने की इच्छा ही नहीं होती मुझे।

दादाश्री : ऐसा? तो शादी किए बिना चलेगा?

प्रश्नकर्ता : हाँ, मेरी तो ब्रह्मचर्य की ही भावना है। उसके लिए कुछ शक्ति दीजिए, समझ दीजिए।

दादाश्री : उसके लिए भावना करनी पड़ेगी। तू रोज़ बोलना कि, 'हे दादा भगवान! मुझे ब्रह्मचर्य पालन करने की शक्ति दीजिए।' और विषय का विचार आते ही निकाल देना। नहीं तो उसका बीज डल जाएगा। वह बीज यदि दो दिन तक रहे, तब तो मार ही डालेगा। फिर से उगेगा। इसलिए विचार आते ही उखाड़कर फेंक देना और किसी भी स्त्री पर दृष्टि नहीं गड़ाना। दृष्टि आकृष्ट हो जाए तो हटा देना और दादा को याद करके माफी माँग लेना। यह विषय आराधन करने जैसा है ही नहीं, ऐसा भाव निरंतर रहे तो फिर खेत साफ हो जाएगा। और अभी भी हमारी निश्रा में रहे तो उसका सबकुछ पूरा हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : हाँ, ठीक है।

दादाश्री : उसके कितने ही जन्म कम हो जाएँगे, कितने ही जन्मों के खड़े किए गए लफड़े भी खत्म हो जाएँगे।

हरहाया विचार, वह तो पाशवता कहलाती है। जहाँ देखे वहाँ विचार आता है, वह हरहाया पशु जैसा कहलाता है। उससे तो एक कीले से बाँध देना अच्छा है। स्त्री, वह पुरुष का संडास है और पुरुष, वह स्त्री का संडास है। तो जब संडास जाते हो तब क्या शौचालय में बैठे रहने का मन होता है? उसी तरह यह भी संडास ही है। उसमें क्या मोह रखना?! विषय विषय को भोगता है, वह तो परमाणु का हिसाब है।

जिसे ब्रह्मचर्य पालन करना ही है, उसे तो संयम की खूब परीक्षा करके देख लेना चाहिए। कसौटी पर कस कर देख लेना चाहिए और यदि ऐसा लगे कि फिसल पड़ेगा तो शादी कर लेना अच्छा है। फिर भी वह कंट्रोलपूर्वक होना चाहिए। शादी करने वाली से कह देना पड़ेगा कि मेरा ऐसा कंट्रोलपूर्वक का है।

ज्ञान किसे अधिक रहता है, दोनों में से?

प्रश्नकर्ता : जो विवाहित हैं, उन्हें ज्ञान देरी से आता है न? और जो ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, उन लोगों को ज्ञान जल्दी आता है न?

दादाश्री : नहीं। ऐसा कुछ नहीं है। विवाहित हो और यदि ब्रह्मचर्यव्रत ले तो आत्मा का सुख कैसा है, वह उसे पूर्णत: समझ में आ जाता है। वर्ना तब तक, सुख विषय में से आ रहा है या आत्मा में से आ रहा है, वह समझ में नहीं आता और ब्रह्मचर्यव्रत हो तो, भीतर उसे आत्मा का अपार सुख बर्तता है, मन अच्छा रहता है, शरीर स्वस्थ रहता है!

प्रश्नकर्ता : और जिसने शादी किए बिना ही ब्रह्मचर्यव्रत लिया हो, उसे कैसा अनुभव होता है?

दादाश्री : इसे पूछकर देखो न! बहुत सुख बर्तता है और इसीलिए बहुत बदलाव आ गया है।

प्रश्नकर्ता : तो दोनों की ज्ञान की अवस्था एक समान होती है या उसमें अंतर होता है? शादी शुदा वाले की और ब्रह्मचर्य वाले की?

दादाश्री : ऐसा है न, ब्रह्मचर्यव्रत वाला कभी भी नहीं गिरता। उसे कैसी भी मुश्किलें आए फिर भी नहीं गिरता। फिर उसे सेफ साइड कहते हैं।

शरीर का राजा कौन?

ब्रह्मचर्य तो शरीर का राजा है। जो ब्रह्मचर्य में रहे, उसका दिमाग़ तो कैसा सुंदर होता है। ब्रह्मचर्य, वह तो पूरे *पुद्गल* का सार है।

प्रश्नकर्ता : यह सार असार नहीं हो जाता न?

दादाश्री : नहीं, लेकिन वह सार खत्म हो जाता है, 'यूज़लेस' हो जाता है न! जिसमें वह सार रहे, उसकी तो बात ही अलग है न? महावीर भगवान को बयालीस साल तक ब्रह्मचर्यसार था। हम जो आहार लेते हैं, उस सभी के सार का सार, वह वीर्य है, वह एक्स्ट्रैक्ट है। अब एक्स्ट्रैक्ट यदि ठीक से संभालकर रखे तो आत्मा जल्दी प्राप्त होता है, सांसारिक दु:ख नहीं आते, शारीरिक दु:ख नहीं आते, अन्य कोई दु:ख नहीं आते।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह शारीरिक है या उसका आत्मा के साथ भी संबंध है?

दादाश्री : नहीं, आत्मा के साथ कोई संबंध नहीं है, वह शारीरिक है लेकिन अगर यह शरीर स्वस्थ रहेगा तो आत्मा मुक्त हो सकेगा न जल्दी? यह शरीर कमज़ोर होगा, तो क्रोध-मान-माया-लोभ खड़े हो जाएँगे। उसमें से बंधन होगा।

प्रश्नकर्ता : यानी यदि शारीरिक संपत्ति अच्छी हो, तो क्रोध-मान-माया-लोभ ज़रा कम उत्पन्न होते हैं, ऐसा?

दादाश्री : हाँ, लेकिन शारीरिक संपत्ति दो प्रकार की। एक

तो पुण्य की वजह से शारीरिक संपत्ति होती है और दूसरी, उस एक्स्ट्रैक्ट की वजह से। और एक्स्ट्रैक्ट की वजह से यदि शारीरिक संपत्ति हो तो उसकी तो बात ही अलग है न?!

प्रश्नकर्ता : उस एक्स्ट्रैक्ट की वजह से शारीरिक संपत्ति अच्छी रहती है?

दादाश्री : हाँ, अच्छी रहती है। कोई अड़चन ही नहीं आती। किसी भी तरह का डिफेक्ट ही नहीं आता। क्रोध-मान-माया-लोभ भी उत्पन्न नहीं होते।

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य, वह आत्मसुख के लिए किस तरह हेल्प करता है?

दादाश्री : बहुत हेल्प करता है। ब्रह्मचर्य नहीं हो तो देहबल के कम होते ही सारा मनोबल खत्म हो जाता है, और बुद्धिबल भी खत्म हो जाता है, अहंकार भी ढीला पड़ जाता है। बड़ा डी.एस.पी. हो, लेकिन बूढ़ा हो जाए तो ढीला पड़ जाता है या नहीं? यानी वह उसका तेज कहलाता है, ब्रह्मचर्य!

प्रश्नकर्ता : मतलब ये मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार, ये सभी ब्रह्मचर्य से ज़्यादा सुदृढ़ बनते हैं?

दादाश्री : उसी में से खड़े हुए हैं। अब्रह्मचर्य से वे सभी मर जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य तो अनात्म भाग में आता है न?

दादाश्री : हाँ, लेकिन वह *पुद्गलसार* है!

प्रश्नकर्ता : तो *पुद्गलसार* है, वह समयसार को किस तरह से हेल्प करता है?

दादाश्री : *पुद्गलसार* (प्राप्त) हो जाता है तभी समयसार हो सकता है। मैंने यह ज्ञान दिया, और यह तो अक्रम है इसलिए

चल गया। दूसरी जगह पर तो नहीं चलेगा। उस क्रमिक में तो *पुद्गलसार* चाहिए ही, वर्ना याद भी नहीं रहेगा कुछ भी। वाणी बोलने के भी लाले पड़ें।

प्रश्नकर्ता : यानी इन दोनों में कुछ ऐसा निमित्त-नैमित्तिक संबंध है क्या?

दादाश्री : है न! क्यों नहीं? मुख्य चीज़ है वह तो! ब्रह्मचर्य हो तो फिर आप जो तय करो, वह काम हो सकेगा। सभी तय किए हुए व्रत-नियम सब पालन कर सकोगे। आगे बढ़ सकोगे और प्रगति होगी। *पुद्गलसार* तो बहुत बड़ी चीज़ है। एक तरफ *पुद्गलसार* हो, तभी समय का सार निकाल सकेगा!

किसी ने लोगों को ऐसी सही समझ दी ही नहीं है न! क्योंकि लोग खुद ही पोल (गोलमाल, गड़बड़, इन्सिन्सियर) स्वभाव के है। पहले के ऋषि-मुनि प्योर थे। इसलिए वे समझाते थे।

प्रश्नकर्ता : हम इस उम्र वाले विद्यार्थियों को सिखाते हैं। उम्र के हिसाब से जो कहना चाहिए उस तरह से, कि तू ऐसा करना ताकि वीर्यबल का जतन हो। तो निन्यानवे प्रतिशत लड़के नहीं मानते।

दादाश्री : और मैं इन लड़कों से कहता हूँ कि, 'अरे, तुम शादी कर लो' तब वे कहते हैं कि, 'नहीं। हमें ब्रह्मचर्य पालन करना है।' और आप कहते हो कि, 'ब्रह्मचर्य पालन करो' तब वे कहते हैं कि 'नहीं। हमें शादी करनी है।' यानी पहले उपदेश देने वाले को वीर्यबल का पालन करना चाहिए। बोलने वाला बलसहित होना चाहिए। आपके बोल की कीमत कब होगी? जब आप बलवान होंगे तभी सामने वाला एक्सेप्ट करेगा। वर्ना सामने वाला आगे चलेगा ही नहीं न! अभी इसके जैसे कई लड़के मेरे पास हैं। उन्हें हमेशा के लिए ब्रह्मचर्य पालन करना है, मन-वचन-काया से।

[1.2]
विकारों से विमुक्ति की राह

विकारों को हटाना है?

प्रश्नकर्ता : 'अक्रम मार्ग' में विकारों को हटाने का साधन कौन सा?

दादाश्री : यहाँ विकारों को हटाना नहीं है। यह मार्ग अलग है। कुछ लोग यहाँ मन-वचन-काया से ब्रह्मचर्य (व्रत) लेते हैं और कुछ पत्नी वाले होते हैं, उन्हें हमने जो रास्ता बताया होता हैं, उस तरह उसका हल लाते हैं। यानी 'यहाँ' विकारी पद है ही नहीं, पद ही 'यहाँ' निर्विकारी है न! विषय, वे विष हैं, वे संपूर्णतः विष नहीं है। विषय में निडरता, वह विष है। विषय तो मजबूरन, जैसे पुलिस वाला पकड़कर करवाए और करे, उस तरह का हो तो उसमें हर्ज नहीं। खुद की स्वतंत्र मर्ज़ी से नहीं होना चाहिए। पुलिस वाला पकड़कर जेल में बिठाए तो आपको बैठना ही पड़ेगा न? वहाँ कोई चारा है? यानी कर्म उसे पकड़ता है और कर्म ही उसे पटकता है, उसके लिए मना नहीं कर सकते न। बाकी, जहाँ विषय की बात भी हो, वहाँ पर धर्म नहीं है। धर्म निर्विकार में होता है। भले ही कितने ही कम अंश का धर्म हो, लेकिन धर्म निर्विकारी होना चाहिए।

विकार से ही संसार खड़ा हुआ है। यह पूरा संसार यानी विषयों का विकार, इन पाँच इन्द्रियों के विषयों के विकार हैं और मोक्ष यानी निर्विकार, आत्मा निर्विकार है। वहाँ राग भी नहीं है और द्वेष भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : बात सही है, लेकिन उस विकारी किनारे से निर्विकारी किनारे तक पहुँचने के लिए कोई तो नाव होनी चाहिए न?

दादाश्री : हाँ, उसके लिए ज्ञान है। उसके लिए वैसे गुरु मिलने चाहिए। गुरु विकारी नहीं होने चाहिए। गुरु विकारी होंगे तो पूरा समूह नर्क में जाएगा। फिर से मनुष्यगति भी नहीं देख पाएँगे। गुरु में विकार शोभा नहीं देता।

किसी भी धर्म ने विकार को स्वीकार नहीं किया है। जो विकार को स्वीकार करे, वह वाम मार्गी कहलाता है। पहले के ज़माने में वाम मार्गी थे, विकार में रहते हुए भी ब्रह्म ढूँढने निकले थे।

प्रश्नकर्ता : वह भी एक विकृत रूप ही हो गया, ऐसा कहा जाएगा न?

दादाश्री : हाँ, विकृत ही न! इसलिए वाम मार्गी कहा न! वाम मार्गी यानी मोक्ष में नहीं जाते और लोगों को भी मोक्ष में नहीं जाने देते। खुद अधोगति में जाते हैं और लोगों को भी अधोगति में ले जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : हर एक युग में ऐसे वाम मार्ग रहे होंगे न?

दादाश्री : हाँ, हर एक युग में वाम मार्ग तो होता ही है। कम या ज़्यादा, वाम मार्ग तो होता है। पहले बहुत कम प्रमाण में था। अभी कलियुग में बहुत ही ज़्यादा प्रमाण में है।

जब तक ज़रा सा भी विकारी संबंध वाला हो न, तब तक वह दुनिया में किसी को नहीं सुधार सकता। विकारी स्वभाव ही आत्मघाती स्वभाव है। अभी तक किसी ने सिखाया नहीं कुछ भी?

ब्रह्मचर्य, प्रोजेक्ट का परिणाम

प्रश्नकर्ता : कुदरत को यदि स्त्री-पुरुष की ज़रूरत नहीं होती, तो वह क्यों दिया?

दादाश्री : स्त्री-पुरुष वह कुदरती है और ब्रह्मचर्य का हिसाब वह भी कुदरती है। इंसान जिस तरह से जीना चाहे, वह खुद जैसी भावना करता है, उसी भावना के फल स्वरूप यह जगत् है। ब्रह्मचर्य की भावना पिछले जन्म में की होगी तो इस जन्म में ब्रह्मचर्य का उदय आएगा। यह जगत् प्रोजेक्ट है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन अभी भी मुझे यह बात समझ में नहीं आ रही है कि इंसान को ब्रह्मचर्य पालन क्यों करना चाहिए?

दादाश्री : उसे लेट गो करो आप। ब्रह्मचर्य पालन नहीं करना है। मैं कुछ ऐसे मत का नहीं हूँ। मैं तो लोगों से कहता हूँ कि शादी कर लो। कोई शादी करे तो उसमें मुझे हर्ज नहीं है।

ऐसा है, जिसे सांसारिक सुखों की ज़रूरत है, भौतिक सुखों की जिसे इच्छा है, उसे शादी करनी चाहिए। सबकुछ करना चाहिए और जिसे भौतिक सुख अच्छे ही नहीं लगते और सनातन सुख चाहिए, उसे नहीं।

प्रश्नकर्ता : 'ब्रह्मचर्य पालन करना ही नहीं है' ऐसा मेरा चैलेन्ज नहीं है, लेकिन उस बात की समझ नहीं है।

दादाश्री : ठीक है। बात सही है। आपका चैलेन्ज नहीं है, वह बात सच है, और चैलेन्ज दिया जा सके, ऐसा है भी नहीं। क्योंकि इस दुनिया में किसी ने किस तरह के भाव किए हैं, उसने क्या प्रोजेक्ट किया है, वह क्या हम बता सकते हैं?। किसी ने पूरी ज़िंदगी भक्ति का ही प्रोजेक्ट किया होगा तो पूरी ज़िंदगी भक्ति ही करता रहेगा। किसी ने दान देने का ही प्रोजेक्ट किया होगा तो दान देता रहेगा। किसी ने ऑब्लाइज़िंग नेचर का किया हो तो ऑब्लाइज़ करता रहेगा। कोई विकारी नेचर का हो, वह खुद की स्त्री का सुख भोगता है लेकिन अन्य कई लड़कियों का गलत फायदा उठाता है। वे सब भले ही कैसे भी लोग हों लेकिन

जैसा प्रोजेक्ट किया होगा, वैसा यह फल मिला है। उसके कड़वे फल मिलते हैं। उसे भुगतने नर्कगति में जाना पड़ता है।

उसके हेतु पर आधारित है

अगर विषय विकार होगा तो कितना भी योग हो पर वह फलदायी नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : विषय जो होता है, विकार अंदर भरा होता है, छोटे से बड़े जीव तक में, हर एक का विषय पुत्रदान के लिए ही होता है न?

दादाश्री : पुत्र या पुत्री कुछ भी हो, लेकिन वह संसार बढ़ाने के लिए ही है न! वंश बढ़ाने के लिए ही है न!

प्रश्नकर्ता : विषय करता है वह इच्छा से नहीं, सिर्फ संतान प्राप्ति के लिए ही विषय होना चाहिए, वह ठीक है?

दादाश्री : ऐसा है न, पुत्र के हेतु के लिए जो अब्रह्मचर्य करता है, उसका और ब्रह्मचर्य का कोई लेना-देना नहीं है। ब्रह्मचर्य तो बहुत ऊँची चीज़ है। प्रजा की उत्पत्ति के लिए अब्रह्मचर्य का इस्तेमाल करने की कोई ज़रूरत नहीं है। प्रजा की उत्पत्ति के लिए तो ये सभी जानवर भी करते ही रहते हैं न! उसमें नया क्या है? उससे तो मौज-मस्ती के लिए इस्तेमाल करे वह अच्छा। मौज-मस्ती के लिए हो रहा है और संतानोत्पत्ति के लिए करने से तो ऐसा लगता है कि मुझे यह फल मिला है। यह तो निम्नतम कक्षा की बात है। जैसा मेरी दृष्टि में हैं, वह आपको बता रहा हूँ। बाद में आपको जो ठीक लगे, वैसा समझना।

प्रश्नकर्ता : उसमें दोष है क्या?

दादाश्री : दोष तो है ही न! वह प्रजा उत्पत्ति के लिए नहीं होना चाहिए। उससे अच्छा तो आप अगर शौक के लिए कर रहे हो तो आखिर में उसका धक्का लगेगा, तब वापस पलटेगा

और इसमें तो प्रजा की उत्पत्ति में नौ बच्चे हो जाए फिर भी पलटेगा ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : आज के विकारमय वातावरण में, घर में रहकर भी आत्मा का, भगवान का अनुभव कैसे हो सकता है?

दादाश्री : घर में रहकर मतलब घर आपत्ति उठाता है?

प्रश्नकर्ता : वातावरण विकारी है।

दादाश्री : हाँ, लेकिन कौन सी जगह विकारी नहीं है? जहाँ मन है, उस जगह पर विकारी वातावरण होता ही है। आप जहाँ जाओ, वहाँ मन तो साथ में रहेगा ही न? गुफाओं में जाने से तो घर अच्छा है। वहाँ गुफाओं में नई तरह के विकार खड़े होंगे। उससे तो ये पुराने विकार अच्छे, पुराने तो बूढ़े हो चुके होते हैं। वे विकार मर जाएँगे कभी न कभी। जबकि ये नए विकार नहीं मरेंगे।

प्रश्नकर्ता : क्या घर में रहकर मन के विकार छूट सकते हैं?

दादाश्री : हाँ, सबकुछ छूट ही जाता है न! घर में रहकर तो क्या, कहीं भी रहकर छूट सकता है, यदि 'ज्ञानी पुरुष' मिल जाएँ तो। 'ज्ञानी पुरुष' के मिलने पर भी यदि विकार नहीं छूटें तो वे ज्ञानी हैं ही नहीं। आप ज्ञानी से कहना, कि 'आप कैसे मिले हमें कि हमें यह विकार उत्पन्न हुए?' लेकिन लोग विनयी हैं न, इसलिए ऐसा नहीं कहते बेचारे। अंदर-अंदर परेशान होते रहते हैं, फिर भी नहीं कहते।

नहीं समझा जगत् ने, स्वरूप वासना का

प्रश्नकर्ता : कामवासना का सुख क्षणिक है, ऐसा समझने के बावजूद भी कभी कभार उसकी प्रबल इच्छा होने का कारण क्या है? और उस पर कैसे अंकुश लगाया जा सकता है?

दादाश्री : कामवासना का स्वरूप जगत् ने जाना ही नहीं।

कामवासना उत्पन्न क्यों होती है, यदि यह जान ले तो उसे क़ाबू में लाया जा सकता है। लेकिन वस्तुस्थिति में वह कहाँ से उत्पन्न होती है, यह जानता ही नहीं। फिर क़ाबू में कैसे ले सकता है? कोई क़ाबू में नहीं ले सकता। जिसका ऐसा दिखता है, कि क़ाबू में कर लिया है, वह तो पूर्व की भावना का फल है, बाकी कामवासना का स्वरूप कहाँ से उत्पन्न हुआ, उस उत्पन्न दशा को समझ ले और वहीं पर ताला लगा दिया जाए तभी उसे क़ाबू में ले सकते हैं। इसके सिवा भले ही वह ताला लगाए या कुछ और करे फिर भी उसका कुछ चलेगा नहीं। काम-वासना नहीं करनी हो तो हम रास्ता दिखाएँगे।

अज्ञान की गलतियों की सज़ा इन्द्रियों को

प्रश्नकर्ता : ये जो इन्द्रियाँ हैं, वे भोगे बिना शांत नहीं होती। तो इसके अलावा और कोई उपाय है?

दादाश्री : ऐसा कुछ भी नहीं है। बेचारी इन्द्रियाँ तो ठेठ तक भोग भोगती ही रहती हैं। उनमें जब तक सत्व रहे, तब तक। जीभ में अगर बरकत हो न तब उस पर हम कोई भी चीज़ रखे कि तुरंत उसका स्वाद हमें बता देगी, और बड़ी उम्र हो जाए और जीभ में बरकत नहीं रहे तो नहीं बताती। आखों में बरकत हो तो सभी, कोई भी चीज़ हो उसे बता देती है। बूढ़ापे की वजह से अगर बरकत ज़रा कम हो गई हो, तो नहीं बता सकतीं। अतः उम्र होने पर बेचारी इन्द्रियाँ तो अपने आप ही फीकी पड़ जाती हैं लेकिन ये विषय फीके नहीं पड़ते। ये इन्द्रियाँ विषयी नहीं है।

विषय इन इन्द्रियों का दोष नहीं है। इन्द्रियों को बिना वजह सज़ा देते हैं लोग। इन्द्रियों को, शरीर को सज़ा देते हैं न, सभी? वे भैंस की भूल पर चरवाहे को मारते हैं। भूल भैंस की और मारते हैं चरवाहे को। भूखा मारते हैं, बिना वजह। उनका क्यों नाम देता है तू? सीधा रह न। तेरा टेढ़ा है अंदर, नीयत चोर है,

और उस पर भी ज्ञानी नहीं मिले हैं, ज्ञानी मिल जाएँ तो सीधे रास्ते पर ले जाएँगे, देर ही नहीं लगेगी।

प्रश्नकर्ता : विषयों में से निकलने के लिए ज्ञान महत्वपूर्ण चीज़ है।

दादाश्री : सभी विषयों से छूटने के लिए ज्ञान ही ज़रूरी है। अज्ञान से ही विषय चिपके हुए हैं। कितने ही ताले लगाएँ, फिर भी विषय बंध नहीं होते। इन्द्रियों को ताला लगाने वाले मैंने देखे हैं, लेकिन विषय कहीं ऐसे बंद नहीं होते।

ज्ञान से सब चला जाता है। अपने यहाँ इन सभी ब्रह्मचारियों को विचार तक नहीं आता, ज्ञान से।

विषय का शौक, बढ़ाए विषय

प्रश्नकर्ता : हमारे जो सभी शौक है, उन्हें पूरे करने से हमें टेम्परारी आनंद मिलता है?

दादाश्री : लेकिन अभी आइस्क्रीम हो तो अच्छा नहीं लगता पेट में? लेकिन बाद में क्या, खा लेने के बाद? फिर, लाओ ज़रा सुपारी! क्यों वापस? यह आइस्क्रीम है फिर भी सुपारी की ज़रूरत? तब कहता है, 'नहीं, वह तो मुँह साफ करना पड़ता है न!' और सुपारी खाने के बाद क्या? जैसा था वैसा ही!

प्रश्नकर्ता : साइकॉलॉजी ऐसा कहती है कि आप एक बार पेट भरकर आइस्क्रीम खा लो। फिर आपको खाने का मन ही नहीं करेगा।

दादाश्री : दुनिया में ऐसा हो ही नहीं सकता। नहीं, पेट भरकर खाने से तो खाने का मन होगा ही लेकिन जो आपको नहीं खाना हो वही खिलाते रहते हैं, डालते रहते हैं, उसके बाद जब उल्टियाँ होती हैं तब फिर बंद हो जाता है। पेट भरकर खाने से तो वापस भूख जागेगी वह तो। यह विषय तो, हमेशा ही

जैसे-जैसे विषय भोगता जाता है, वैसे-वैसे ज़्यादा सुलगता है। विषय तो ज़्यादा सुलगते जाते हैं।

जो भी सुख भोगते हैं, उसकी प्यास बढ़ती जाती है। भोगने से प्यास बढ़ती जाती है। नहीं भोगने से प्यास मिट जाती है। उसे कहते हैं तृष्णा। नहीं भोगने से थोड़े दिन परेशान रहेंगे, शायद महीने-दो महीने लेकिन अपरिचय से फिर बिल्कुल भूल ही जाएँगे। और इस बात में दम नहीं है कि भोगने वाला इंसान, वासना निकाल सकेगा। इसलिए लोगों की, शास्त्रों की खोज है कि यह ब्रह्मचर्य का रास्ता ही उत्तम है। अतः सब से बड़ा उपाय है अपरिचय! ताकि जब विचार आएँ, तो उन्हें तौल सके और उसके परिणामों का पता चले। परिचय से तो पता ही नहीं चलता कि क्या दोष है! और अपरिचय से विषय छूट जाता है। हिन्दुस्तान में लोग यही नहीं समझते कि ब्रह्मचर्य किसे कहते हैं। अपरिचय से विषय पूरा खत्म हो जाता है।

और एक बार उस चीज़ से दूर रहे न, बारह महीने या दो साल तक दूर रहे तो उस चीज़ को भूल ही जाता है फिर। मन का स्वभाव कैसा है? दूर रहा कि भूल जाता है। नज़दीक जाए तो फिर कोचता रहता है! मन का परिचय छूट गया। 'हम' अलग रहे, इसलिए मन भी उस चीज़ से दूर रहा, इसलिए फिर भूल जाता है, हमेशा के लिए। उसे याद तक नहीं आती। बाद में, कहने पर भी उस तरफ नहीं जाता। ऐसा तुझे समझ में आता है? तू तेरे दोस्त से दो साल दूर रहेगा तो फिर तेरा मन भूल जाएगा। महीने-दो महीने तक किच-किच करता रहेगा, ऐसा मन का स्वभाव है और अपना ज्ञान तो मन की सुनता ही नहीं है न?

नहीं रोकना चाहिए मन को

प्रश्नकर्ता : मन को जब विषय भोगने की छूट देते हैं, तब वह नीरस रहता है और जब हम उसे विषय भोगने में कंट्रोल

करते हैं, तब वह ज़्यादा उछलता है। आकर्षण रहता है, तो उसका क्या कारण है?

दादाश्री : ऐसा है न, इसे मन का कंट्रोल नहीं कहते। जो अपने कंट्रोल को नहीं स्वीकारे, वह कंट्रोल है ही नहीं। कंट्रोलर होना चाहिए न! खुद यदि कंट्रोलर होगा तो कंट्रोल को स्वीकार करेगा। खुद कंट्रोलर है ही नहीं, मन नहीं मानता, मन आपकी सुनता नहीं है न?

मन को रोकना नहीं है। मन के कॉज़ेज़ को रोकना है। मन तो खुद एक परिणाम है। वह परिणाम बताए बगैर नहीं रहेगा। वह परीक्षा का रिज़ल्ट है। परिणाम नहीं बदलता, परीक्षा बदलनी है। जिससे वह परिणाम उत्पन्न होता है, उन कारणों को बंद करना है। तो वह पकड़ में कैसे आएगा? किस वजह से उत्पन्न हुआ है मन? तब कहते हैं, विषय में चिपका हुआ है। 'कहाँ चिपका है' यह ढूँढ निकालना चाहिए और फिर वहाँ पर काटना है।

प्रश्नकर्ता : उन विषयों में जाने से मन को कैसे रोकें?

दादाश्री : विषयों में जाने से रोकना नहीं है। जिन विषयों को मन खड़ा करता है, वही मन फिर पकड़ पकड़ता है। उन विषयों को हमें जहाँ तहाँ धीरे धीरे कम करना चाहिए। यानी उसके कॉज़ेज़ बंद करने चाहिए।

हम पड़ोसी से कहें कि 'भाई, आप हमारे साथ झगड़ा मत करना। हमारे साथ तकरार मत करना।' फिर भी तकरार होती रहती हो तो हम नहीं समझ जाएँगे कि गलती कुछ और ही है। समझ जाएँगे या नहीं? तब पूछते हैं, 'कौन सी गलती?' तब कहता है, 'यह झगड़ा नहीं हो ऐसे कारण खड़े करो।' यानी वह झगड़ा तो होगा ही कुछ दिनों तक, लेकिन झगड़ा नहीं होने के कारणों का जब सेवन होगा, तब फिर वैसे परिणाम आएँगे। झगड़े के कारणों का सेवन करें और झगड़ा बंद कर सकें, क्या ऐसा हो सकता है?

प्रश्नकर्ता : नहीं हो सकता।

दादाश्री : अतः उसके कारण बंद करने पड़ेंगे। मैंने कहा है न, कि मन-वचन-काया इफेक्टिव चीज़ें है। उनके कॉज़ेज़ बंद करो!

प्रश्नकर्ता : कारण बंद करना यानी? ऐसा नहीं हो, ऐसे भाव करना, यही न?

दादाश्री : हमें कारण बंद करना है, यानी कल अगर पुलिस वाले ने अपना नाम लिख लिया हो, बगैर लाइट वाली साइकल पर जा रहे हों और नाम लिख ले तो दूसरे दिन हम कॉज़ेज़ बंद कर लेंगे या नहीं? कि भई आज तो लाइट डालो। तो क्या फिर वह नाम लिखेगा? वह कारण बंद हो गया न? उसी तरह ये कॉज़ेज़ बंद करने हैं। सबकुछ सीखा जा सकता है। सिर्फ 'चाय' की आदत पड़ गई है, झंझट इतनी ही है।

लाओ, ज़रा 'चाय' पी लेते हैं। अंदर अकुलाएगा, उस समय चाय पीने की ज़रूरत नहीं है। सोचने की ज़रूरत है। जबकि वहाँ पर चाय पी लेता है। जहाँ सोचने का स्कोप मिले दिमाग़ उलझ जाए तब कहेगा, 'चाय पीनी चाहिए'। अरे, अभी तो सोचने की ज़रूरत है। चाय अभी रहने दे, सुबह पीना। कॉज़ेज़ बंद करेंगे तो हो सकेगा या नहीं?

प्रश्नकर्ता : समझ में आया।

दादाश्री : एक बार किसी के साथ हमने अविनय किया हो, कि दूर हट यहाँ से, और वह गाली दे दे तो दूसरी बार हम ऐसा नहीं करेंगे न?

प्रश्नकर्ता : नहीं करेंगे।

दादाश्री : वह तो बंद नहीं होगा। आप यह रास्ता बदल लो। वह कहलाता है ज्ञान। उसे बंद करने का प्रयत्न करना, वही

भ्रांति कहलाती है। भ्रांति हमेशा इफेक्ट को ही तोड़ने जाती है, जबकि ज्ञान कॉज़ेज़ को बंद करने जाता है।

वासना, वस्तु नहीं, लेकिन रस

प्रश्नकर्ता : मनुष्य की वासनाओं का मोक्ष कब होगा?

दादाश्री : वासनाओं का तो हो ही जाएगा। वासनाएँ तो आपने खड़ी की हैं, आप ही उसके जन्मदाता हो और विलय करने वाले भी आप ही हो।

आपकी वासना अलग और इस भाई की वासना अलग। हर एक की अलग-अलग वासनाएँ हैं न? और वासना तो साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स है। अभी अगर कोई मांसाहारी व्यक्ति मित्र बन जाए न, तो फिर मांस खाना भी सीख जाएगा। अब यह वासना कहाँ से लाए थे? तब कहते हैं, साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स इकट्ठा होते हैं और वह नया नहीं है, यह गप्प नहीं है, और फिर पहले के कॉज़ेज़ के हिसाब से हैं, यह सब। इसलिए खाना सीख जाता है। दूसरा, संजोगों की वजह से वासनाएँ खड़ी होती है। बाकी एक लड़का है कि जो ऐसी जगह पर बड़ा होता है कि जहाँ कोई भी इंसान दिखे तक नहीं तो फिर वह विषय को नहीं समझ सकेगा। खाना-पीना समझ सकेगा। लेकिन वहाँ पर कोई जानवर भी नहीं होना चाहिए। उसे नज़र नहीं आना चाहिए। तो उसे कोई वासना नहीं होगी। यह तो सब वासनाओं का संग्रहस्थान है और वहीं पर जन्म होता है तो फिर क्या होगा उस संग्रहस्थान में से! वह नज़र आया कि तभी से वासना खड़ी हो जाती है, और यह भी आश्चर्य है कि जब ज्ञान प्राप्त होता है, तब वासनाएँ कहाँ से कहाँ गायब हो जाती है, वही समझ में नहीं आता।

प्रश्नकर्ता : अंदर का रस (रुचि) सूख जाता है।

दादाश्री : हाँ। वस्तु को वासना नहीं कहते, रस को वासना

कहते हैं। यदि रस नहीं होगा तो वह वासना मानी ही नहीं जाएगी। यानि कि वासना कहाँ से कहाँ गायब हो जाती है। अब वह भी एक ही घंटे के प्रयोग से, ज़्यादा प्रयोग नहीं, इस ज्ञान के बाद वासना चली जाती है न! रस चला जाता है न? बाकी सब स्थूल है।

ज्ञानी ही छुड़वाते हैं, वासना आसानी से

प्रश्नकर्ता : वासना छोड़ने का सब से आसान रास्ता कौन सा?

दादाश्री : मेरे पास आना, वही उपाय है। और कौन सा उपाय? आप खुद वासना छोड़ने जाओगे तो दूसरी घुस जाएगी। क्योंकि खाली अवकाश रहता ही नहीं। आप वासना छोड़ते हो तो वहाँ अवकाश हो जाता है और वहाँ फिर दूसरी वासना घुस जाएगी।

प्रश्नकर्ता : इस वासना के बदले और कोई अच्छी वासना आ जाए तो क्या वह अच्छी चीज़ नहीं कहलाएगी?

दादाश्री : वासना चेन्ज हो सकती है। खराब वासना के बदले अच्छी वासना भीतर घुस सकती है, लेकिन अच्छी वासना भीतर घुस जाए तो वापस खराब तैयार कर रही होती है। यदि हमेशा के लिए अच्छी वासना रह सके, ऐसा हो तो यह जगत् बहुत अच्छा है लेकिन वैसा रह नहीं सकता। इसलिए इससे छुटकारा पाना अच्छा है। वासना को कन्वर्ट करें, और अच्छी वासना इकट्ठी करें, ऐसा हो ही नहीं सकता। यह पॉसिबल है ही नहीं। बिल्कुल शुभ वासना वाला इंसान मिलना ही मुश्किल है!

प्रश्नकर्ता : यानी सामान्य रूप से पुरुष को स्त्री के प्रति जो झुकाव रहता है, उससे कैसे मुक्ति पा सकते हैं?

दादाश्री : ऐसा है न, जब तक खुद पुरुष है, तब तक

स्त्री के प्रति झुकाव रहेगा ही, जब तक जवानी है, तब तक। अब अस्सी साल के बूढ़े को नहीं होगा! दुकान का दिवाला निकल जाने के बाद क्या होगा? दिवालिया दुकान में कुछ माल होगा क्या? बच्चों को नौ साल तक नहीं होता। यह बीच वाली दुकान ज़रा ज़बरदस्त चलती है, ज़ोरदार। तभी यह सब होता है। जब तक पुरुष हैं, तब तक यह वासना रहेगी और स्त्री हैं, तब तक वासना रहेगी लेकिन अगर पुरुष ही खत्म हो जाएँ तो?

प्रश्नकर्ता : उसे कैसे मिटा सकते हैं?

दादाश्री : जो वासना वाला है, वह चंद्रेश है और आप तो 'माइ नेम इज़ चंद्रेश' कहते हो। इसलिए आप अलग हो इससे। इस बात पर विश्वास आता है? तो वह आप कौन हो? इतना ही आपको मैं रियलाइज़ करवा देता हूँ तो आपकी वासना छूट जाएगी।

अब ये वासनाएँ क्या हैं? 'मैं चंद्रेश हूँ' यह मिटेगा, तभी वासनाएँ जाएँगी, वर्ना वासनाएँ नहीं जाएँगी। मैं तो क्या कहता हूँ कि 'आत्मा क्या है' वह जानो, 'अनात्मा क्या है' वह जानो। इतना जानते ही वासनाएँ गायब हो जाएँगी।

जितना डेवेलपमेन्ट ऊँचा, उतनी मूर्च्छा कम। इसमें क्या भोगना है? सबकुछ भोगकर ही आए हैं। जिसने कम भोगा है, उसे मूर्च्छा ज़्यादा है।

विषय और कषाय की भेदरेखा

प्रश्नकर्ता : आपने ये क्रोध-मान-माया-लोभ बताए हैं न, तो यह विषय किस में आता है? 'काम' किस में आता है?

दादाश्री : विषय अलग है और ये कषाय अलग हैं। विषयों की यदि हम हद पार करें, हद से ज़्यादा माँगे तो वह लोभ है।

प्रश्नकर्ता : स्त्री-पुरुष के विषय के बारे में प्रश्न है।

दादाश्री : हाँ, वही न! विषय के अतिरेक को लोभ कहा है।

प्रश्नकर्ता : कोई इंसान विषय भूखा होता है, वह क्या 'व्यवस्थित' के हिसाब से होता है?

दादाश्री : नहीं। ऐसा है न, कि यह बड़ी कड़ाही हो, और उसमें कढ़ी बनाई हो, उसमें हींग का बघार लगाया। अब छः महीने बाद उस कड़ाही को फिर से मांजकर उसमें खीर बनाओ, फिर भी अंदर हींग की गंध आएगी। क्यों? क्योंकि हींग का स्पर्श हो गया है। उसी तरह की ये विषय की गंध अंदर पड़ी हुई है।

[1.3]
माहात्म्य ब्रह्मचर्य का

विषय की कीमत कितनी?

प्रश्नकर्ता : अगर विषय में से विरक्त होने की तीव्र भावना हो, तो फिर क्या उसमें से धीरे-धीरे निकला जा सकता है?

दादाश्री : हाँ। वह जो तमन्ना है, वही इसमें से छुड़वाती है। लेकिन विषय की कीमत समझ लेनी चाहिए कि इसकी कीमत कितनी है? बिगड़ी हुई दाल की कीमत है, बिगड़ी हुई कढ़ी की कीमत है, लेकिन विषय की कीमत नहीं है लेकिन यह बात पूरे जगत् को समझ में नहीं आती न!

प्रश्नकर्ता : यानी वह तो शून्य हुआ न?

दादाश्री : शून्य तो अच्छा है, लेकिन यह तो निरा माइनस ही है।

इंसान को बैक (पीछे का) देखने की शक्ति ही नहीं है न! इसलिए विषय चलता रहा है। देखो न, ऊपर से रौब से चलते ही हैं न? इसलिए अगर ज्ञानी पुरुष से बात को समझ ले तो विषय जाएगा और मुक्ति होगी। विषय की वजह से ही तो यह सब (मोक्ष) रुका हुआ है।

विषय से लथपथ हुए जीवन

प्रश्नकर्ता : जो बालब्रह्मचारी होते हैं, वह अधिक उत्तम

कहलाता है या शादी के बाद ब्रह्मचर्य पालन करना, वह उत्तम कहलाएगा?

दादाश्री : बालब्रह्मचारी की बात ही अलग है न! लेकिन आजकल के बालब्रह्मचारी कैसे हैं? यह ज़माना खराब है। अभी तक का जो हुआ है, अगर उनका वह जीवन आप पढ़ो तो पढ़ते ही आपका सिर चकरा जाएगा।

प्रश्नकर्ता : हम खुद का ही जीवन देखें तो सिर चकरा जाए, तो भला उनके जीवन की क्या बात करें?

दादाश्री : फिर भी अगर अभी भी वे पालन करेंगे, अगर अभी भी बाड़ बाँधेंगे तो इसका कुछ इलाज हो सकेगा। ज्ञानी पुरुष की छत्रछाया तो कभी होती ही नहीं, और दिन बदलते नहीं। ज्ञानी पुरुष हों, तब इसका पालन हो सकता है, वर्ना कैसे पालन कर सकेंगे? ज्ञानी पुरुष की कृपा चाहिए। चारों ओर से जब उलझ जाए, तब मार्गदर्शन बताने वाला चाहिए। इसमें से किस तरह छूटा जाए? इसकी सभी चाबियाँ ज्ञानी पुरुष को पता होती हैं।

ब्रह्मचर्य पालन करने की सीढ़ियाँ

प्रश्नकर्ता : स्वभाव की वजह से, प्राकृतिक गुणधर्म की वजह से अन्य कहीं दृष्टि बिगड़ जाए उस चीज़ को कैसे खत्म कर सकते हैं?

दादाश्री : हमारे पास उसे मिटाने की सभी दवाईयाँ हैं। इस वर्ल्ड में ऐसी कोई दवाई नहीं है कि जो हमारे पास नहीं हो। इन लड़कों को हमने ब्रह्मचर्यव्रत दिया है। अब ब्रह्मचर्यव्रत लेने के बावजूद भी यदि कोई स्त्री उसके सामने आ जाए और उसकी दृष्टि आकृष्ट हो जाए, और उसका मन भी बिगड़ जाए, तो इसे मैं दोष नहीं कहता लेकिन अगर ऐसा हो जाए तो उसे ये फिर तुरंत मिटा देना है। क्योंकि हमने साबुन दिया है। मैं रास्ते पर से गुज़र रहा होऊँ और मेरे कपड़े पर दाग़ लग जाए अगर

मुझे उसे तुरंत धोना आता हो, तो फिर मैं आपके यहाँ साफ-सुथरा होकर आऊँगा या नहीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, आ सकते हैं।

दादाश्री : उसी तरह इन्हें सभी साधन दिए हुए हैं। वर्ना मन-वचन-काया से ब्रह्मचर्यव्रत का पालन कैसे किया जा सकेगा? और वह भी ऐसे अंतरदाह वाले काल में!

यदि आपको ब्रह्मचर्य पालन करना हो तो आपको उपाय बताता हूँ। वह उपाय आपको करना पड़ेगा, नहीं तो फिर आपको ब्रह्मचर्य पालन करना ही चाहिए, यह ऐसी कोई अनिवार्य चीज़ नहीं है। वह तो जिसे अंदर कर्म का उदय होता है, तभी हो सकता है। शादी करने में कोई हर्ज नहीं है लेकिन इन लोगों को शादी में सुख दिखता ही नहीं है। उन्हें पुसाता ही नहीं है। जब वे मना करते हैं, तब हम ब्रह्मचर्यव्रत देते हैं, वर्ना मैं किसी को ऐसा ब्रह्मचर्यव्रत लेने के लिए नहीं कहता। क्योंकि व्रत लेना, व्रत का पालन करना, वह कोई ऐसी वैसी बात नहीं है। ब्रह्मचर्यव्रत लेना, वह तो अगर उसका पूर्वकर्म का उदय होगा तो संभाल सकता है। पूर्व में भावना की होगी तो संभाल सकता है, या फिर अगर आप संभालने का निश्चय करोगे तो संभाल सकोगे। हम क्या कहते हैं कि आपका निश्चय होना चाहिए और हमारा वचनबल साथ में हैं, तो यह संभाला जा सके, ऐसा है।

व्रत के परिणाम

प्रश्नकर्ता : वह तो उसकी भूमिका के अनुसार होगा न? सभी चीज़ें मनोबल पर आधारित नहीं हो सकतीं। उसकी आध्यात्मिक स्टेज की भूमिका होनी चाहिए, तभी यह चीज़ संभव है न?

दादाश्री : वह संभव हो या न हो, लेकिन अभी संभव हो गया है। कितने ही स्त्री-पुरुष हमारे पास हमेशा के लिए

ब्रह्मचर्यव्रत लेते हैं। इन भाई ने और इनकी वाइफ ने छोटी उम्र से ब्रह्मचर्य व्रत लिया है। मुंबई में ऐसा कई लोगों ने लिया है। क्योंकि अंदर ग़ज़ब का सुख बर्तता है। इतना सुख बर्तता है कि विषय उन्हें याद ही नहीं आता।

प्रश्नकर्ता : देह के साथ जो कर्म चार्ज होकर आए हुए हैं, वे बदल तो नहीं सकते न?

दादाश्री : नहीं, कुछ भी नहीं बदल सकता। फिर भी विषय ऐसी चीज़ है न, कि ज्ञानी पुरुष की आज्ञा से सिर्फ इतना ही बदल सकता है। फिर भी यह व्रत सभी को नहीं दे सकते। हमने कुछ ही लोगों को यह दिया है। ज्ञानी की आज्ञा से सबकुछ बदल सकता है। सामने वाले को सिर्फ निश्चय ही करना है कि कुछ भी हो जाए, लेकिन मुझे यह चाहिए ही नहीं। तो फिर हम उसे आज्ञा दे देते हैं और हमारा वचनबल काम करता है। इसलिए फिर उसका चित्त और कहीं नहीं जाता।

ब्रह्मचर्य का यदि कोई पालन करे न, यदि ठेठ तक पार निकल गया न, तो ब्रह्मचर्य तो बहुत बड़ी चीज़ है। यह 'दादाई ज्ञान', 'अक्रम विज्ञान' और साथ-साथ ब्रह्मचर्य वगैरह हो तो फिर उन्हें क्या चाहिए? एक तो यह 'अक्रम विज्ञान' ही ऐसा है कि यदि वह अनुभव कभी विशेष परिणाम पा गया तो वह राजाओं का राजा है। पूरी दुनिया के राजाओं को भी वहाँ नमस्कार करना पड़ेगा!

प्रश्नकर्ता: अभी तो पड़ोसी भी नमस्कार नहीं करता!

दादाश्री : पड़ोसी कैसे करेगा? जब तक अभी भी पराए खेत में घुस जाता है, तब तक ऐसा कैसे हो पाएगा?

आज्ञासहित व्रत ही सही

प्रश्नकर्ता : कोई विधवा हो, या विधुर हो, वे ब्रह्मचर्यव्रत

पालन करते हैं, इसके बजाय आपका दिया हुआ ब्रह्मचर्यव्रत पालन करे तो बहुत फर्क पड़ेगा न?

दादाश्री : वह ब्रह्मचर्यव्रत कहलाता ही नहीं है न! जहाँ मन से ब्रह्मचर्य नहीं है, वह ब्रह्मचर्य नहीं कहलाता और बिना ज्ञान के किस ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे? खुद को ज्ञान नहीं है। यह तो 'मैं कौन हूँ' इसी का ठिकाना नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : मेडिटेशन वाले में ऐसा कहते हैं कि आप ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करो।

दादाश्री : हाँ, लेकिन इतना कुछ आसान नहीं है। उसे कहना, 'तू ही पालन कर न, मुझे क्यों कह रहा है?' यों तो सभी से कहेंगे लेकिन खुद तो पोल मारते हैं। ब्रह्मचर्य पालन तो कौन कर सकता है? जो ज्ञानी पुरुष की छत्रछाया में हों, वे सभी ब्रह्मचर्य का पालन कर सकते हैं। अतः यदि ब्रह्मचर्य का यों ही पालन करने गया और यदि सँभालना नहीं आया तो इंसान मैड हो जाएगा। हमारी यह खोज बहुत सुंदर है, पूरा विज्ञान बहुत सुंदर है और पूरा वर्ल्ड एक्सेप्ट करे, ऐसा है। इन साइन्टिस्ट वगैरह को भी यह एक्सेप्ट करना पड़ेगा।

ब्रह्मचर्य तो कैसा होना चाहिए?

यह 'अक्रम विज्ञान' है। यह तो बहुत ग़ज़ब का विज्ञान है। जगत् जब इसे समझेगा तब नाच उठेगा।

आपको स्त्री पर वैराग आ गया या नहीं? कितनी देर में? अभी पंद्रह मिनिट में ही? तो फिर ज्ञानियों की चाबियों से कैसा वैराग आ जाता है! और यों पहरा लगाएँ तो कब अंत आएगा? यहाँ से पहरा लगाएँ तो उस ओर से घुस जाएगा। हम किसी पर भी पहरा लगाते ही नहीं न! हम कहाँ पहरा लगाएँ? जिसे इस गंदगी में डूबना ही है, उसे फिर हम छोड़ देते हैं!

यहाँ पर ये लड़के जो ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, वह तो सहज स्वभाव से रहता है, एक क्षण भी चूके बिना, निरंतर रहता है।

सातवीं नर्क का तो सिर्फ वर्णन तक किया जाए तो इंसान सुनते ही मर जाए। तो बोलो, वहाँ कितना *भोगवटा* (सुख या दु:ख का असर) रहता होगा? कि फिर से संसार भोगने से तो बिल्कुल इन्कार! सिर्फ विषय की वजह से यह संसार खड़ा रहा है। अगर यह स्त्री विषय नहीं होता न, तो बाकी सभी विषय तो कभी भी बाधा नहीं डालते। सिर्फ इस विषय का अभाव रहे तो भी देवगति मिल जाए। इस विषय का अभाव हुआ कि बाकी सभी विषय क़ाबू में आ जाते हैं और इस विषय में पड़ा कि विषय से पहले जानवर गति में जाता है और यदि उससे अधिक विषयी हो तो नर्कगति में जाता है। विषय से बस अधोगति ही है। क्योंकि एक बार के विषय में तो कई करोड़ जीव मर जाते हैं! समझ नहीं है फिर भी जोखिमदारी मोल लेते हैं न! अत: जहाँ हिंसा है, वहाँ धर्म जैसा कुछ है ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : समझते हैं फिर भी जगत् के विषयों में मन आकर्षित रहता है, समझते हैं कि सही-गलत क्या है, फिर भी विषयों से मुक्त नहीं हो पाते। तो इसका क्या उपाय?

दादाश्री : जो समझ क्रियाकारी हो वही सही समझ कहलाती है। बाकी सब बंजर समझ कहलाती है। अगर दो शीशियाँ हों और एक शीशी में विटामिन का पाउडर हो व दूसरी शीशी में पोइज़न हो, दोनों में सफेद पाउडर हो और हम बच्चे को समझाएँ कि यह विटामिन है, यह लेना और इस दूसरी शीशी में से मत लेना। दूसरी शीशी में से लेगा तो मर जाएगा। उस बच्चे ने 'मर जाएगा' शब्द सुना इसका मतलब यह नहीं कि वह समझ गया। कहेगा ज़रूर कि यह दवाई लेने से मर जाते हैं, लेकिन मर जाना यानी क्या, उस बात को नहीं समझता। हमें उसे बताना पड़ता है, कि फलाने चाचा उस दिन मर गए थे न? फिर सभी ने उन्हें

वहाँ जला दिया था, इस दवाई से वैसा ही हो जाता है। जब एक्ज़ेक्टली ऐसा समझ में आ जाता है तब वह समझ ही क्रियाकारी हो जाती है। फिर वह पोइज़न को छूएगा ही नहीं। अभी उसे इस समझ की एक्ज़ेक्टनेस नहीं आई है। लोगों द्वारा सिखाई गई यह समझ तो लोन की तरह ली हुई है।

प्रश्नकर्ता : वह समझ क्रियाकारी हो, उसके लिए क्या प्रयत्न करने चाहिए?

दादाश्री : मैं आपको विस्तार से समझाता हूँ। फिर वह समझ ही क्रियाकारी हो जाएगी। आपको कुछ भी नहीं करना है। बल्कि आप दखल करने जाओगे तो बिगड़ जाएगा। जो ज्ञान, जो समझ क्रियाकारी हो, वही सही समझ है और वही सही ज्ञान है।

मेरी बात आप पर थोपनी नहीं है। खुद आपको आपकी समझ में आना चाहिए। मेरी समझ मेरे पास और वह समझ आप पर थोप नहीं सकते और थोपने से तो कुछ काम होगा ही नहीं। आपमें वह समझ फिट हो जाए और आप अपनी समझ से चलो।

इस दुनिया में अगर किसी चीज़ की निंदा करने जैसी हो तो वह है अब्रह्मचर्य। अन्य सभी चीज़ें इतनी निंदा करने जैसी नहीं हैं।

ब्रह्मचर्य का पालन नहीं हो सके तो, वह अलग बात है, लेकिन ब्रह्मचर्य के विरोधी तो होना ही नहीं चाहिए। ब्रह्मचर्य तो सब से बड़ा साधन है। अपना ब्रह्मचर्य, वह पवित्र चीज़ होनी चाहिए। ब्रह्मचर्य, वह मानसिक चीज़ नहीं है, इस अब्रह्मचर्य का बीड़ी के व्यसन जैसा नहीं है। विषय से संबंधित नासमझी की वजह से ब्रह्मचर्य नहीं टिक पाता। ब्रह्मचर्य के बारे में ज्ञानी पुरुष से यदि समझ ले तो ब्रह्मचर्य बहुत अच्छी तरह टिक सकेगा। समझने की ही ज़रूरत है इसमें। यह व्यसन अलग चीज़ है और अब्रह्मचर्य वह अलग चीज़ है। यह तो अनादि से लोक प्रवाह ऐसा ही चलता आ रहा है और उससे लौकिक ज्ञान खड़ा हो

गया है और ऊपर से उसकी उल्टी समझ बैठ गई। अब जैसी समझ बैठ गई, फिर वैसा ही वर्तन में आए बिना रहेगा नहीं।

व्यवहार में भी ब्रह्मचर्य का पालन करने को क्यों कहते हैं कि नॉर्मेलिटी में रहे। उससे देह, मन वगैरह स्वस्थ रहते हैं। जगत् के लोग तो मन-वचन-काया से ब्रह्मचर्य पालन कर ही नहीं सकते न? यह तो सिर्फ अपने यहीं पर पालन किया जा सकता है। ये लोग व्रत लेते हैं। व्रत लेने से क्या होता है कि उसके बाद मन ठिकाने रहता है। मन बाउन्ड्री में रहता है और जो व्रत नहीं लेते तो उनका चित्त सारा भटकता ही रहता है! फिर भी, संसार में भी यदि कभी दृष्टि का ध्यान रखे तो वह आगे ही आगे बढ़ता जाएगा और उसे भी मोक्ष का रास्ता मिल जाएगा। यह तो बाहर के उन लोगों के लिए कह रहा हूँ जो मुझसे नहीं मिले हैं!

ब्रह्मचर्य का यदि कभी सिर्फ छः महीने सच्चे दिल से पालन किया हो, मन-वचन-काया से, तो वे गुलाब इतने-इतने बड़े हो जाते हैं। ब्रह्मचर्य तो सब से बड़ी खाद है। जिस तरह गुलाब में खाद डालने से जो इतने छोटे होते हैं, वे फिर इतने बड़े हो जाते हैं। अतः सिर्फ छः महीनों के लिए ही जिसे पालन करना हो वह करे! छः महीने के ब्रह्मचर्य से तो शरीर में कितना बदलाव आ जाता है। फिर वाणी बोले तो जैसे बम गिर रहा हो, ऐसी निकलती है! जब तक संसार के किसी भी विषय में मन घुसा हुआ रहेगा, तब तक सभी डिपार्टमेन्ट पर फुल शक्ति नहीं चलेगी! किसी भी दिशा में प्रवहन् करना, वह मन का स्वभाव है! इसी वजह से मन को जैसा चाहें वैसे मोड़ा जा सकता है। उसे डाइवर्ट किया जा सकता है। दो-पाँच साल तक ही यदि मन को ब्रह्मचर्य की ओर मोड़े, इस एक ही दिशा में वहन करे तो उसके सामने कोई आँख भी नहीं गड़ा सकेगा!

अब्रह्मचर्य से ही सभी रोग खड़े होते हैं। इसलिए यह सिद्धांत रखना चाहिए कि ब्रह्मचर्य पालन करना है, और उसे पहले से ही समझ लेना अच्छा। अस्सी साल की उम्र में इस सिद्धांत को समझें तो वह

किस काम का? अपना अस्तित्व (अस्तित्वपना) एक ही जगह पर रहना चाहिए, दो जगह पर नहीं रहना चाहिए। अत: जब तक हो सके तब तक सिद्धांत का पालन करना। आजकल चारित्र की कीमत ही खत्म हो गई है। ब्रह्मचर्य की तो कीमत ही खत्म हो गई है न? स्वच्छ जीवन जीने की कीमत ही खत्म हो गई है! पवित्र जीवन ही जीना है।

अभिप्राय बदलते ही निकलना शुरू

प्रश्नकर्ता : लेकिन मानसशास्त्री कहते हैं कि विषय बंद हो ही नहीं सकता, अंत तक रहता है। तो फिर वीर्य का ऊर्ध्वगमन होगा ही नहीं न?

दादाश्री : मैं क्या कहता हूँ कि विषय के प्रति अभिप्राय बदल जाए तो फिर विषय रहेगा ही नहीं! जब तक अभिप्राय नहीं बदलेगा, तब तक वीर्य का ऊर्ध्वगमन होगा ही नहीं। अपने यहाँ तो सीधा आत्मा में ही डाल देना है, वही ऊर्ध्वगमन है! विषय बंद करने से उसे आत्मा का सुख बर्तता है और विषय बंद हो जाए तो वीर्य का ऊर्ध्वगमन होता ही है। हमारी आज्ञा ही ऐसी है कि विषय बंद हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : आज्ञा में क्या होता है? स्थूल बंद करना?

दादाश्री : स्थूल के लिए हम कुछ कहते ही नहीं। मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार ब्रह्मचर्य में रहें, ऐसा होना चाहिए और यदि मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार ब्रह्मचर्य के पक्ष में आ गए तो स्थूल (ब्रह्मचर्य) तो अपने आप आ ही जाएगा। तेरे मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार को पलट। हमारी आज्ञा ऐसी है कि ये चारों पलट ही जाते हैं।

ग़ज़ब के वे ब्रह्मचारी

'यह' 'पब्लिक ट्रस्ट' ऐसा है कि संपूर्ण रूप से निरोगी है। वर्ल्ड का टॉपमोस्ट है यह! आपको जो भी रोग निकालने हों, वे

निकाले जा सकते हैं! जो सुंदर ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, उनके अधीन रहकर ब्रह्मचर्य पालन किया जा सकता है। वर्ना जो खुद पालन नहीं करते हों, खुद के अंदर गुप्त 'डिफेक्ट' हो तो खुद को ही पालन करना मुश्किल हो जाता है। इसलिए पूरे हिन्दुस्तान में कहीं भी ब्रह्मचर्य से संबंधित बातें कोई करता ही नहीं है न? मैं जिसमें 'हन्ड्रेड परसेन्ट' करेक्ट होऊँगा, उसी का आपको उपदेश दे सकता हूँ, तभी मेरा वचनबल फलदायी होगा। खुद में ज़रा सा भी 'डिफेक्ट' हो तो औरों को कैसे उपदेश दिया जा सकता है?

विषय की जोखिमदारी बहुत बड़ी है। सब से बड़ी जोखिमदारी हो तो वह विषय की है। उससे पाँचों महाव्रत और अणुव्रत टूट जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी पुरुष के वाक्य किस प्रकार से विषय का विरेचन करवाते हैं?

दादाश्री : हर दिन विषय बंद होता जाता है। वर्ना लाख जन्मों तक किताबें पढ़े, फिर भी कुछ नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : उनका वाक्य इतना असरकारक क्यों होता है?

दादाश्री : उनका वाक्य बहुत ज़बरदस्त होता है, ज़ोरदार होता है! 'जुलाब करवा दें ऐसे शब्द' कहा गया है। तभी से नहीं समझ जाना चाहिए कि उनके शब्दों में कितना बल है!

प्रश्नकर्ता : वह वचनबल ज्ञानी को किस तरह प्राप्त हुआ होता है?

दादाश्री : खुद निर्विषयी हो, तभी वचनबल प्राप्त होता है। वर्ना जो विषय का विरेचन करवा दे, ऐसा वचनबल कहीं होता ही नहीं न! जब मन-वचन-काया से संपूर्ण रूप से निर्विषयी हो, तब उनके शब्दों से विषय का विरेचन होता है।

'ज्ञानी पुरुष' के वाक्य विषय का विरेचन करवाने वाले होते हैं। जो विषय का विरेचन नहीं करवाए, वह 'ज्ञानी पुरुष' है ही नहीं।

❖❖❖❖❖

[खंड : 2]
'शादी नहीं करने' के निश्चय वालों के लिए राह

[2.1]
किस समझ से विषय में से छूटा जा सकता है?

शादी नहीं करने के निश्चय वाले को

प्रश्नकर्ता : मुझे शादी करने की इच्छा नहीं है, लेकिन माँ-बाप और अन्य रिश्तेदार शादी के लिए दबाव डाल रहे हैं। तो मुझे शादी करनी चाहिए या नहीं?

दादाश्री : यदि शादी करने की इच्छा ही नहीं हो तो, क्योंकि आपने अपना यह 'ज्ञान' लिया है इसलिए आप पार उतर सकोगे। इस ज्ञान के प्रताप से सबकुछ हो सकता है। मैं आपको यह समझाऊँगा कि किस तरह रहना है, और यदि पार उतर गए तब तो अति उत्तम है। आपका कल्याण हो जाएगा!

प्रश्नकर्ता : शादी करवाने के लिए सभी लोग बहुत फोर्स कर रहे हैं।

दादाश्री : आपको 'व्यवस्थित' समझ में आ गया है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : व्यवस्थित तो समझ में आ गया है।

दादाश्री : तो 'व्यवस्थित' के बाहर किसी का भी चलने वाला नहीं है। इसलिए 'व्यवस्थित' पर छोड़कर तय रखो, दृढ़ निश्चय करो कि मुझे शादी करनी ही नहीं है।

लेकिन शादी किए बिना तुझे कैसे चलेगा?

प्रश्नकर्ता : कौन से जन्म में अनुभव नहीं किया है?

दादाश्री : सच कह रहा है कि किस जन्म में अनुभव नहीं किया! बकरी में, कुत्ते में, गधे में, बाघ में, जहाँ गए वहाँ यही अनुभव किए हैं न?! लेकिन शादी करना यदि ध्येयपूर्वक छूटे तो अच्छा। 'लोगों को जो अनुभव हुए हैं, वे मुझे ही हुए हैं', अब ऐसा तुझे सेट कर लेना पड़ेगा न? वर्ना जगत् के लोग तुझे अनुभवहीन कहेंगे। शादी होगी या नहीं, वह 'व्यवस्थित' के अधीन हैं, लेकिन अभी यदि पाँच साल इस ज्ञान के आधार पर ब्रह्मचर्य पालन करे तो कितनी शक्तियाँ प्रकट हो जाएँगी और इस देह की रचना भी कितनी अच्छी हो जाएगी! पूरी ज़िंदगी बुखार आदि आएगा ही नहीं न!

अपना यह विज्ञान ऐसा है कि थोड़े समय में सेफ साइड करवा दे। जिसे भगवान भी नहीं पूछ सकें, ऐसी सेफ साइड कर दे, ऐसा यह विज्ञान है। खाने-पीने की सभी छूट दी है न? मैंने यदि खाने-पीने में एतराज उठाया होता तो काफी कुछ लोग यहाँ पर आए ही नहीं होते। इसलिए हमने छूट दी है।

इस संसारचक्र का आधार विषय पर है। हैं तो पाँच ही विषय, लेकिन स्त्री से संबंधित विषय तो बहुत ही भारी है। उसके तो बाद में भारी स्पंदन उड़ते हैं। अपना ज्ञान इतना अच्छा है कि उसमें रहे तो उसे कुछ भी स्पर्श नहीं करेगा और पिछला सब धुल जाएगा लेकिन विषय के बारे में जागृत रहना पड़ेगा। वहाँ तो 'इसमें सुख है ही नहीं और यह फँसाव ही है' ऐसा अभिप्राय रहना चाहिए। यह बगीचा नहीं है। यह फँसाव ही है। ऐसा भान

रहेगा तो छूटा जा सकेगा। लेकिन यहाँ ऐसा भान नहीं रहता है न? फँसाव हो तो वहाँ कैसा रहता है? और बगीचे में घूम रहे हों, तब कैसा रहता है? बगीचे में तो यों उल्लास रहता है, जबकि फँसाव में तो कब इसमें से छूट जाऊँ, ऐसा रहता है न? इसलिए 'हमें' 'चंद्रेश' से कहना है कि 'चंद्रेश इसमें से कब छूटोगे! यह तो फँसाव है। इसमें पड़ने जैसा नहीं है।' लेकिन इसमें फँसाव जैसा नहीं लगता और वहीं मुक्त भाव हो जाता है न? अब यदि पूरी समझ बदल दें, तो हल आएगा।

समझकर दाखिल होना इसमें...

प्रश्नकर्ता : यह जो डिसीज़न ले लिया है, लेकिन पिछला माल बहुत है। तो डिसीज़न के आधार पर मैं इसमें से निकल पाऊँगा?

दादाश्री : डिसीज़न सही होगा तो ज़रूर निकल पाओगे, निश्चय मुख्य चीज़ है। जिसने निश्चय को पकड़ा है, दुनिया में कोई उसका कुछ नाम नहीं देगा। तुझे क्यों शंका हो रही है? शंका हो रही है, वही अनिश्चय कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : आपसे पूछकर पक्का कर रहा हूँ।

दादाश्री : नहीं, लेकिन शंका हो रही है, वही अनिश्चय है। कुछ भी नहीं होगा। दादा की छत्रछाया है, फिर क्या होने वाला है? इसलिए शंका रखने जैसा नहीं है। यह ज्ञान है इसलिए ब्रह्मचर्य में रहा जा सकेगा, वर्ना मैं ही तुम्हें मना कर दूँ। मैं तो आज्ञा दे दूँ कि तुम्हें शादी करनी पड़ेगी। वह तो 'यह' ज्ञान है इसलिए तुम्हें अनुमति देता हूँ। क्योंकि इंसान को सुख का साधन चाहिए न? मरता हुआ इंसान किस सुख के सहारे जीएगा? यह ज्ञान ऐसा है कि आप इस ज्ञान से आत्मा के ध्यान में रहोगे तो तुरंत आनंद में आ जाओगे। या फिर अगर घंटे भर सभी के शुद्धात्मा देखो, रियल और रिलेटिव देखो तो सबकुछ रेग्युलर।

ब्रह्मचर्य का पालन आधी ज़िंदगी तक करोगे या फिर शादी कर लोगे?! बाद में तो शादी कर ही नहीं सकते। और बाद में तो शादी का विचार तक नहीं आना चाहिए। वह विचार भी गुनाह है। मैं कहता हूँ कि कोई किसी की नकल मत करना। अरे, ज़रा सोचो तो सही। यह कोई नकल करने जैसी चीज़ नहीं है। इससे अच्छा शादी कर ले न! शादी करने से कहीं मोक्ष खो नहीं जाएगा। दूसरे धर्मों में तो शादी करने से मोक्ष खो देता है। शादी नहीं करने से भी कहीं मोक्ष नहीं मिल जाता और शादी करने से भी मोक्ष नहीं मिलता। अनंत जन्मों से ये साधु बने हैं, फिर भी मोक्ष नहीं हुआ। वह ब्रह्मचर्य का पालन कर रहा है, इसलिए मुझे भी वैसा ही करना चाहिए। ऐसा सब मत करना। इसमें ऐसा नहीं चलेगा। खुद को बहुत अच्छी तरह परख लेना चाहिए। हमने कुछ लड़कों को परखकर देखा है, उन्हें तो स्त्री की बात कहते ही वे घबरा जाते हैं। शादी करवाने की बात करने से पहले ही उन्हें घबराहट हो जाती है। इसलिए फिर हम समझ गए कि इनके उदय में स्त्री है ही नहीं।

यह ब्रह्मचर्य का जो पकड़ा है, वह बहुत अच्छा किया है लेकिन जोश में आकर पकड़ो, वैसा मत पकड़ना। पकड़ो तो समझकर पकड़ना। अब यदि कुसंग में गया तो अंदर तुरंत दही बन जाएगा। जिस दूध से चाय बनानी है, वह दूध फट जाएगा। अंदर दही डाले बिना पूरी रात पिंजरे में दूध और दही साथ-साथ रखा हो तो सुबह दूध फट जाएगा या नहीं? ऐसा होता है या नहीं? इसलिए इतनी अधिक असर वाला यह जगत् है। दही डाले बिना फट जाता है। इसलिए बहुत स्ट्रोंग रहना। इस ब्रह्मचर्य की लाइन में सुख भी बेहद है। बेहद सुख आपको मिलता रहेगा लेकिन यदि उसमें ज़रा भी उलझ गए और फिसल गए तो मार भी उतनी ही पड़ेगी। इसलिए हम आपको सावधान कर रहे हैं। विषय तो ऐसी चीज़ है न कि वह इंसान को फिसला देता है।

अगर फिसल जाओ तो उसका खेद मत करना। लेकिन इस जगह पर फिसल सकते हैं, इसलिए वहाँ पर जागृत रहना।

बार-बार करना निश्चय दृढ़

ब्रह्मचर्यव्रत लेने के विचार आएँ और यदि उसका निश्चय हो जाए तो उस जैसी बड़ी चीज़ और कौन सी कहलाएगी? वह सभी शास्त्र समझ गया! जिसे निश्चय हो गया कि मुझे अब छूटना ही है, वह सभी शास्त्र समझ गया। विषय का मोह ऐसा है कि किसी निर्मोही को भी मोही बना दे। अरे, साधु-आचार्यों को भी विचलित कर दे!

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य का जो निश्चय किया है, उसे ज़्यादा मज़बूत करने के लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : हमें 'निश्चय मज़बूत करना है' ऐसा तय करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : एक बार इतना बोलने के बाद हमें हैन्डल तो बार-बार मारना पड़ेगा न?

दादाश्री : हाँ, बार-बार वही निश्चय करना है और 'हे दादा भगवान! मैं निश्चय मज़बूत कर रहा हूँ, मुझे निश्चय मज़बूत करने की शक्ति दीजिए।' ऐसा बोलने से शक्ति बढ़ेगी।

प्रश्नकर्ता : इस जन्म में तो ब्रह्मचर्य उदय में आया है। फिर अगले जन्म में वह कैसा होगा?

दादाश्री : अगले जन्म में भी ऐसा ही आएगा। अभी वह ऐसा ही कहता है कि यह ब्रह्मचर्य तो बहुत अच्छा है, ऐसा ही चाहिए। तो अगले जन्म में भी वह होगा।

प्रश्नकर्ता : हमें विचारों पर से पता तो चल जाता है न, कि उदय में कैसा आ रहा है?

दादाश्री : जिसका निश्चय होता है, उसे कुछ भी नहीं छूता। वह कुछ भी करे या उसे कैसे भी विचार आएँ, फिर भी उसे स्पर्श नहीं करता। वर्ना कम विषय वाले को भी 'विषय' उदय में आ जाता है। इसलिए निश्चय होना चाहिए! जिसका निश्चय नहीं डगमगाता, उसे कुछ नहीं होता, जिसका निश्चय डगमगा जाए उसमें सभी भूत घुस जाते हैं, सभी रोग घुस जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : यदि निश्चय मज़बूत हो और तब विचार आएँ तो उसमें हर्ज नहीं है?

दादाश्री : नहीं, वह विचार आ नहीं पाएगा, उसे। क्योंकि आत्मज्ञान प्राप्त हुआ है इसलिए उस से निश्चय हो सकता है, वर्ना निश्चय हो ही नहीं सकता।

हे विषय! अब तेरे पक्ष में नहीं

प्रश्नकर्ता : इन विचारों को दबा दूँ, ऐसा करता हूँ फिर भी विचार आते हैं।

दादाश्री : मेरा कहना है कि विचार आते हैं, उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन जो विचार आते हैं, उन्हें देखते रहो लेकिन तुम उनके अमल में एकाकार मत होना। जो विचार आते हैं, उनके अमल में आप हस्ताक्षर मत कर देना। वे कहेंगे 'हस्ताक्षर करो' तो आप कहना, 'नहीं, अब हस्ताक्षर नहीं होंगे। बहुत दिनों तक हमने हस्ताक्षर किए, अब नहीं करेंगे।' हम ऐसा कहते हैं कि तू ऐसा तय कर कि इसमें तन्मयाकार होना ही नहीं है। जुदा रहकर देखता रह, तो एक दिन तू छूट जाएगा।

प्रश्नकर्ता : विषय के विचार आएँ तो भी देखते रहना है?

दादाश्री : देखते ही रहना है। तब क्या उन्हें संभालकर रखना है?

प्रश्नकर्ता : हटा नहीं देना है?

दादाश्री : देखते ही रहना है, देखने के बाद हमें चंद्रेश

से कहना है कि इनके प्रतिक्रमण करो। मन-वचन-काया से विकारी दोष, इच्छाएँ, चेष्टाएँ, वे सभी दोष जो हुए हैं, उनका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। विषय के विचार आएँ लेकिन फिर भी खुद उनसे मुक्त रहे तो कितना आनंद होता है? तो अगर विषय से हमेशा के लिए छूट जाएगा तो कितना आनंद होगा?

मोक्ष जाने के चार स्तंभ है। ज्ञान-दर्शन-चारित्र और तप। अब तप कब करना होता है? मन में विषय के विचार आ रहे हों और खुद का स्ट्रोंग निश्चय हो कि मुझे विषय भोगना ही नहीं है, तो इसे भगवान ने तप कहा है। खुद की किंचित्मात्र भी इच्छा नहीं हो, फिर भी विचार आते रहें तो वहाँ तप करना है।

अब्रह्मचर्य के विचार आएँ लेकिन ब्रह्मचर्य की शक्तियाँ माँगता रहे तो वह बहुत बड़ी बात है। ब्रह्मचर्य की शक्तियाँ माँगते रहने से किसी को दो साल में, किसी को पाँच साल में, भी वैसा उदय आ जाता है। जिसने अब्रह्मचर्य जीत लिया, उसने पूरा जगत् जीत लिया। ब्रह्मचर्य वाले पर तो शासन देवी-देवता बहुत खुश रहते हैं।

लोकदृष्टि से उल्टा ही चलता रहता है न? लेकिन जब ज्ञानी पुरुष की मौजूदगी होती हैं, तब ब्रह्मचर्य पालन किया जा सकता है, वर्ना नहीं कर सकते। एक भी विचार बिगड़ना नहीं चाहिए। विचार बदला कि सबकुछ बिगड़ा। किसी भी तरह एक भी विचार नहीं बदलना चाहिए। यह ज्ञान है इसलिए जागृति तो है ही हमें! जागृति है इसलिए अपना विचार नहीं बदलेगा तो कुछ भी नहीं होगा। फिर भी विचार बदल जाए तो प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। क्योंकि वह पिछला हिसाब है। वह एक जन्म में जो बिगड़ गया है, उसे चुका दो।

यदि सावधान रहने जैसा हो तो वह सिर्फ विषय से। सिर्फ विषय को जीत ले तो बहुत हो गया। उसका विचार आने से पहले ही उखाड़ देना पड़ेगा। अंदर विचार उगा कि तुरंत ही उखाड़

देना पड़ेगा। दूसरा, यों अगर नज़र मिल गई किसी से तो तुरंत हटा देनी पड़ेगी। वर्ना वह पौधा ज़रा भी बड़ा हुआ कि तुरंत उसमें से वापस बीज़ डलेंगे। इसलिए उस पौधे को तो उगते ही निकाल देना पड़ेगा। तुम्हें पता चले कि यह गुलाब का पौधा नहीं है, यह कुछ और है, तो तुरंत उखाड़कर फेंक देना।

जिस संग में ऐसा लगे कि हम फँस जाएँगे तो उस संग से बहुत ही दूर रहना, वर्ना एक बार फँस गए तो बार-बार फँसते ही जाओगे, इसलिए वहाँ से भाग जाना। फिसलन वाली जगह हो और वहाँ से भाग जाओगे तो फिसलोगे नहीं। सत्संग में तो दूसरी 'फाइलें' नहीं मिलेंगी न? सभी एक जैसे विचार वाले मिलते हैं न?

अंकुर फूटते ही उसे उखाड़ देना

मन में विषय का विचार आया कि तुरंत उसे उखाड़ देना चाहिए और कहीं आकर्षण हुआ कि उसका तुरंत ही प्रतिक्रमण करना चाहिए। जो इन दो शब्दों को पकड़ ले, उसका ब्रह्मचर्य हमेशा रहेगा। हमें ऐसा लगता है कि यह विषय-विकार का आकर्षण हुआ कि तुरंत प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए और कोई विषय-विकार का विचार अंदर से उगा तो वह पौधा तुरंत ही उखाड़कर बाहर फेंक देना। बस, जो ये दो चीज़ें करे, उसे फिर दिक्कत नहीं होगी।

प्रश्नकर्ता : लेकिन जागृति और यह, दोनों एक साथ रह सकते हैं?

दादाश्री : नहीं, जागृति होगी तभी यह हो पाएगा, वर्ना नहीं हो पाएगा न!

यह पौधा उगने लगे तभी से समझ जाना कि यह पौधा काँटेदार है। इसलिए उसे उगते ही उखाड़कर फेंक देना। वर्ना अगर चिपक जाएगा तो उसके काँटों से पूरे शरीर पर जलन होगी। इसलिए फिर से नहीं उगे उस तरह से फेंक देना। उसी तरह जब

इस मिश्रचेतन के विचार आएँ तो उगने ही मत देना। उन्हें तो उखाड़ ही देना, तो एक दिन इससे हल आएगा। वर्ना यदि एक भी उगा तो कितने ही जन्म बिगाड़ देगा। भगवान ने विषय के पौधे को ही उखाड़ देने को कहा है। अन्य पौधे तो भले ही उगें, वे जोखिम वाले नहीं हैं लेकिन मिश्रचेतन जोखिम वाला है। अनादिकाल का अभ्यास है, इसलिए मन वापस यही चिंतवन करता रहता है। उससे वापस विषय का पौधा उगता है। मूंग में पानी डालें तो उग जाता है, वह नीचे जड़ डालेगा। तभी से हम समझ जाते हैं कि यह तो पौधा बनेगा। उसी तरह इसमें विचार आते ही उसे उखाड़कर फेंक देना। सिर्फ यह विषय ही ऐसा है कि छोटा सा पौधा बनने के बाद फिर वह जाता नहीं है। इसीलिए उसे जड़ से ही उखाड़कर खींच निकालना चाहिए।

अब यदि ऐसी जागृति रहे तो इंसान आरपार जा सकेगा, वर्ना यह तो मूर्च्छा है। यह तो चादर में लिपटा हुआ मांस है। पूरी दुनिया का सारा कचरा इस शरीर में हैं, फिर भी इस चादर की वजह से कितना मोह होता है! वह मोह किस से उत्पन्न होता है? अजागृति से! फिर बाद में पछताना भी पड़ता है न? पछताना यानी क्या? पश्चाताप। पश्चाताप यानी अंदर चुभता रहे। उसके बजाय तो जागृति रहे तो कितना अच्छा! जागृति यदि नहीं रहती हो तो फिर शादी कर। हमें उसमें हर्ज नहीं है। शादी यानी *निकाली* चीज़। नहीं तो फिर जागृति रखनी पड़ेगी। अभी तक निरी अजागृति ही थी। यह तो उसमें से यह जागृति रखना बाकी रहा। एक सौ आठ दीये हों, उनमें से बारह दीये तो जलाए। बाद में तेरहवाँ, चौदहवाँ ऐसे जलाते जाना।

प्रश्नकर्ता : जागृतिपूर्वक भान में होने के बावजूद आकृष्ट हो गए, और अपना वहाँ कुछ चला नहीं, तो क्या करना चाहिए? उसका कितना दोष लगता है?

दादाश्री : दोष तो है ही न! वैद्य ने कहा हो कि मिर्च

मत खाना और हम मिर्च खा लें, तो क्या होगा? लेकिन ऐसे फूलिश तो बहुत नहीं होते, कुछ ही होते हैं और यदि उसने मिर्च खाई तो फिर उसका रोग बढ़ेगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन अब उसे क्या करना चाहिए? उपाय तो होना चाहिए न?

दादाश्री : प्रतिक्रमण करना है। और क्या?

प्रश्नकर्ता : लेकिन क्या ज्ञानी को नहीं बताना चाहिए? जिन्होंने आज्ञा दी हो, उन्हें बताना तो पड़ेगा न?

दादाश्री : हाँ, बता दिया, फिर भी प्रतिक्रमण करने हैं। बाकी, अगर वह मिर्च खा ले तो, उसमें ज्ञानी थोड़े ही ज़हर खा लेंगे?

कभी अंदर खराब विचार उगे और उसे निकाल देने में देर हो जाए तो ज़रा बड़ा प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। वर्ना विचार उगते ही तुरंत निकाल देना चाहिए। उखाड़कर तुरंत फेंक देना चाहिए। बाकी, यह विषय-विकार ऐसा है कि जिसे एक सेकन्ड के लिए भी, ज़रा सा भी नहीं रहने देना चाहिए। वर्ना पेड़ बनते देर नहीं लगेगी। इसलिए उगते ही तुरंत उखाड़कर फेंक देना। जैसे कि अगर हमें गेहूँ बोने हों और तंबाकू का पौधा उग जाए तो उसे तुरंत निकाल देते हैं, उसी तरह इसमें भी विषय को उखाड़ देना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : विषय का अज्ञान, वह क्या है?

दादाश्री : बगीचे में क्या बोया है, वह जब उगे तब पता चलता है कि यह तो धनिया उगा है, यह तो मेथी उगी है, उसके पत्तों से पता चलता है न? वैसा ही विषय के बीज का है, उगते ही उसे वहाँ से खींच लेना चाहिए।

जो पड़े हुए बीज उखाड़ देता है, उन्हें उखाड़ देने के बाद जो विषय रहे, वह विषय है ही नहीं। पेड़ है तो भले ही रहा, बारिश हो तो भले ही हो। ऐसा मान लो कि अगर यहाँ पर बेरी

का पेड़ हो तो उसका बीज तो एक फर्लांग की दूरी पर जाकर भी उग सकता है। उस बीज को हवा कहीं पर भी खींचकर ले जा सकती है, इसलिए हमें बेरी के नीचे ही नहीं, लेकिन आसपास की सभी जगह पर उगे हुए बीजों को उखाड़ देना चाहिए। बीज किसे कहते हैं? जब अन्य संयोग मिल जाएँ, तब पड़ा हुआ बीज उग निकलता है, उगते ही उसे उखाड़ देना चाहिए।

दो प्रकार के विषय हैं, एक चार्ज और दूसरा डिस्चार्ज। चार्ज बीज को धो देना चाहिए। वास्तव में तो विचार आना ही नहीं चाहिए। ज्ञानी पुरुष को लक्ष्मी के और विषय के विचार ही नहीं आते, तो फिर बीज गिरने की और उगने की बात ही कहाँ रही? यदि आपको विचार आएँ तो आप उन्हें उखाड़ देना, तो फिर विचार नहीं उगेंगे। एक-एक को ऐसे उखाड़ देना। यह तो अक्रम ज्ञान है, उससे अज्ञान चला गया, लेकिन पिछला माल है, इसलिए चेतावनी देनी पड़ती है। इन बीजों का स्वभाव कैसा है कि गिरते ही रहते हैं। आखें तो तरह तरह का देखती हैं, उससे अंदर बीज गिरते हैं तो फिर उन्हें उखाड़ देना चाहिए। होटल को देखने से खाने की इच्छा होती है न? उसके जैसा है। हमें तो मोक्ष में जाना है इसलिए सावधान रहना है। आखों से देखने पर अगर ज़रा सा भी आकर्षण होता है तो वह भयंकर रोग है, ऐसा समझना। जब तक बीज के रूप में है, तब तक उपाय है, बाद में कुछ नहीं हो सकता।

चित्त आकर्षित होता है, रास्ते चलते...

प्रश्नकर्ता : यहाँ घर में बैठे हुए हों तो चित्त इधर-उधर नहीं होता, लेकिन बाहर रास्ते पर ज़रा निकलें तो रास्ते तो स्त्री रहित होते नहीं और इस तरफ विषय की गाँठ फूटे बिना रहतीं नहीं।

दादाश्री : और आपको बाहर निकले बिना चलेगा नहीं! बाहर कुछ लेने जाना पड़ता है, नौकरी-व्यापार के लिए जाना

पड़ता है और विषय खड़े हुए बिना रहता नहीं और इसीलिए उसका प्रतिक्रमण किए बिना चलेगा नहीं। प्रतिक्रमण करेंगे तो हल आएगा, वर्ना जो आकर्षण हुआ था वह तो फिर चिपक ही जाएगा। बाहर आना-जाना पड़ता है, उसके बिना चलेगा नहीं, घर बैठे रहे तो दुनिया में चलेगा नहीं। 'व्यवस्थित' के हिसाब से जाना पड़ता है और वह चिपके बिना नहीं रहता। जागृति तो होती है, फिर भी पिछले जन्म के सारे मेल है न, इसलिए आकर्षण होता है और वापस से झंझट हुए बिना नहीं रहता। अतः अगर घर आकर प्रतिक्रमण करें तो वह उखड़ जाएगा।

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण ठीक से नहीं हो पाते।

दादाश्री : प्रतिक्रमण करने का निश्चय करोगे तो होगा। प्रतिक्रमण तो अवश्य करने ही चाहिए। प्रतिक्रमण करने के बाद मन साफ हो जाता है।

यह फिसलन वाला काल कहलाता है। सत्युग में से द्वापर, त्रेता ऐसे फिसलते फिसलते यह आखिरी काल आ रहा है। इसमें ब्रह्मचर्य का महत्व कम हो गया है, इसीलिए यह दशा हो गई है। ब्रह्मचर्य का यदि महत्व रहा होता तो यह दशा ही नहीं होती! संसारी स्थान में हर्ज नहीं, लेकिन लोगों ने ब्रह्मचर्य का महत्व ही उड़ा दिया। इससे फिर खुद की सारी जागृति मंद हो जाती है। हमने यह ज्ञान दिया है, फिर भी कितनों को जैसी होनी चाहिए वैसी जागृति रह नहीं पाती। वर्ना हमारा ज्ञान मिलने के बाद तो कैसी जागृति रहती है? भगवान जैसी जागृति रहती है। तुझे बहुत जागृति रहती है या मंद हो जाती है?

प्रश्नकर्ता : लिमिट का कुछ पता नहीं चलता।

दादाश्री : जागृति ज़्यादा हो तो हमें ठोकर नहीं लगेगी न? गलती होती है तुझसे? गलती हो जाने के बाद पता चलता है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, बाद में पता चलता है।

दादाश्री : यदि जागृति ज़्यादा हो तो, गलती हो जाने के बाद पता चले, ऐसा नहीं होता बल्कि गलती होने से पहले ही पता चल जाता है और वह चीज़ वापस हो भी सकती है, लेकिन खुद को पहले ही पता चल जाता है और उसके बाद गलती होती है। मतलब कि चीज़ें नहीं रुकतीं लेकिन जागृति ज़्यादा हो तो पहले से पता चल जाता है।

प्रश्नकर्ता : यदि हमें निरंतर ब्रह्मचर्य में रहना हो तो जागृति बहुत ज़्यादा होनी चाहिए न?

दादाश्री : जागृति, वही आत्मा है और खुद यदि सो जाए तो दूसरे काम हो जाते हैं। अतः जागृति में कोई भी गलत काम नहीं होता और दूसरी गड़बड़ नहीं है न ज़्यादा, लेकिन गड़बड़ नासमझी से खड़ी हो गई हैं तो मार खानी पड़ती है न?

प्रश्नकर्ता : यदि खुद विषय में सहमत नहीं होगा तो बचा जा सकता है, उस दिन ऐसी बात हुई थी। तो उसमें खुद की स्थिरता कैसे आ सकती है?

दादाश्री : हाँ लेकिन सहमत यानी कि निश्चय में से कभी भी सहमति न छूटे। ऐसी सहमति हो तो फिर कुछ नहीं होगा, लेकिन वह छूटे बिना रहता नहीं है न! क्योंकि कर्म के उदय से जब ऐसा होना होता है, तब निश्चय छूट जाता है और ऐसा हो जाता है। इसलिए तुझे क्या करना है? कि तुझे तो सिर्फ जागृति ही रखनी है कि 'इसमें कभी भी नहीं!' सहमति नहीं छूटे, उसके लिए 'केयरफुल' रहना पड़ेगा, फिर भी अगर उसके बाद गिर गए तो उसमें हर्ज नहीं है। हमें गाड़ी में से नहीं गिरना है, फिर भी गिर गए तो उसे हम 'व्यवस्थित' कहते हैं न? लेकिन क्या जान-बूझकर कोई गिरता है?

आँखें गड़ाएँगे तो दृष्टि बिगड़ेगी न

किसी भी एक तरफ हृदय तो लगा ही रहता है, या तो

इस तरफ लगा रहता है या उस तरफ रहता है। यहाँ से छूट जाए तो वहाँ लग जाता है, उसके लिए हमें बैठे नहीं रहना पड़ता है। इसलिए बहुत सावधान रहने जैसा है। हम यहाँ से छोड़ेंगे, तभी वहाँ लगेगा न? और वहाँ चिपकने लगे उससे पहले ही सावधान हो जाना। आँखें तो गड़ानी ही नहीं चाहिए, नीचे देखकर ही चलना। तू किसी के सामने आँखें नहीं गड़ाता न?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : तब तो बहुत समझदार है, तू जीत गया। आँखें तो कभी भी मत गड़ाना, बहुत शोर मचाए फिर भी। वर्ना यहाँ इस सत्संग में जितना दिल लगा हुआ होगा तो वह भी हट जाएगा।

दूषमकाल में नज़र को संभालना। यह दूषमकाल है, इसलिए सावधान रहो, अभी भी सावधान हो जाओ। दृष्टि तो बिल्कुल शुद्ध रहनी चाहिए। पहले के जमाने के सख्त लोग तो आँखें फोड़ देते थे। हमें आखें नहीं फोड़ देनी है, वह तो मूर्खता है। हमें आँखें फेर लेनी है, उसके बावजूद भी अगर देख लिया तो प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए। यह प्रतिक्रमण तो एक मिनिट के लिए भी मत चूकना। खाने-पीने में गलती हो जाए तो चलेगा, लेकिन आँखें गड़ाकर देख ही कैसे सकते हैं? संसार में सब से बड़ा रोग यही है, इसी की वजह से संसार खड़ा रहा है। विषय की नींव पर संसार खड़ा रहा है, मूल में विषय ही है।

विषय तो किसी को भी अच्छा नहीं लगता, लेकिन ये पहले के हिसाब हो चुके हैं, और आँखें गड़ाई तभी से हिसाब शुरू हो गया। वह फिर छोड़ता नहीं है। ये सभी स्त्रियाँ कहीं हमें आकर्षित नहीं करती। जो आकर्षित करती हैं, वह अपना पिछला हिसाब है। इसलिए वहाँ से उखाड़कर फेंक दो, साफ कर दो। अपने ज्ञान के बाद कोई परेशानी नहीं आती, मात्र एक विषय के लिए ही हम सावधान करते हैं। आँखें गड़ाना ही गुनाह है और

यह समझने के बाद जोखिमदारी बहुत बढ़ जाती है, इसलिए किसी के सामने आँखें मत गड़ाना। आँखें गड़ाने से ही सबकुछ बिगड़ता है। दृष्टि बिगड़ती है, वह भी एकदम से नहीं बिगड़ती। पहले का हिसाब हो तभी आकर्षण होता है। मूल दृष्टि नहीं बिगड़ती, बिगड़ी हुई दृष्टि ही बिगड़ती है।

प्रतिक्रमण के बाद, दंड का उपाय

पिछले जन्म में जो गलती हुई थी, उसी वजह से इस जन्म में नज़र पड़ जाती है। हमें नज़र नहीं डालनी हो फिर भी नज़र पड़ जाती है। नज़र पड़ने के बाद हमें आकर्षित नहीं होना हो, फिर भी वापस मन आकर्षित हो जाता है। यानी कि पिछला हिसाब है, इसलिए ऐसा सब हो रहा है। वहाँ पर हमें प्रतिक्रमण करके छूट जाना चाहिए, इसके बावजूद भी अगर वापस नज़र पड़ जाए तो फिर से प्रतिक्रमण करना चाहिए, इस तरह सौ-सौ बार प्रतिक्रमण करेंगे तब छूटा जा सकेगा। कुछ पाँच प्रतिक्रमण से छूट जाती हैं। कुछ एक प्रतिक्रमण से छूट जाती हैं।

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण करने के बावजूद वहाँ चला जाए, तो वह कमज़ोरी ही है न? या फिर नीयत चोर हो जाती है? या फिर अंदर, मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार खुद को ठगने लगते हैं ?

दादाश्री : प्रतिक्रमण करने के बावजूद भी कार्य हो जाए, तब तो फिर वह 'व्यवस्थित' है। वह 'व्यवस्थित' के हाथ में आ गया ऐसा कहा जाएगा, वह व्यवस्थित की गलती है। फिर भी यदि ऐसा बहुत ज़्यादा हो रहा हो, तब उसके लिए खास उपवास वगैरह दंड लेना चाहिए, इसे बींधना कहते हैं। जिस तरह गोली चलाएँ और एक्ज़ेक्ट जगह पर लगे, उसी तरह इसे भी बींधना कहा जाता है। इससे कर्म नहीं बंधते। अत: वापस से यह गलती हो जाए तो वहाँ हमें प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए, साथ-साथ दूसरा

कोई दंड लेना चाहिए। मन को जो भाता हो, उस दिन वह चीज़ कम खाना। ऐसा कोई दंड देना चाहिए।

देखना, सामान्य भाव से

स्त्री की तरफ तो सब से पहले दृष्टि बिगड़ती है। दृष्टि बिगड़ने के बाद आगे बढ़ता है। जिसकी दृष्टि नहीं बिगड़ती उसे कुछ भी नहीं होता। अब अगर तुझे सेफ साइड करनी हो तो दृष्टि मत बिगड़ने देना और दृष्टि बिगड़ जाए तो प्रतिक्रमण करना।

प्रश्नकर्ता : इस विषय-विकारी दृष्टि के परिणाम क्या हैं?

दादाश्री : अधोगति। यह तो पूरे दिन 'चाय' याद आती है। 'चाय' देखते ही दृष्टि बिगड़े तो फिर वह चाय पीए बिना रहेगा क्या? दृष्टि का नहीं बिगड़ना, वह सबसे बड़ा गुण कहलाता है।

भगवान ने कहा है कि दुनिया में सभी चीज़ें खाना, लेकिन मनुष्य जाति की आँखों में मत देखना और उसके चेहरे को एकटक मत देखना। अगर देखो तो सामान्य भाव से देखना, विषय भाव से मत देखना। इन आमों को देखकर बाजू में रख दोगे तो पड़े रहेंगे। वह एक तरफा है, लेकिन यह जीता-जागता जीव तो चिपक जाएगा, उसके बाद एक तरफ रख दोगे तो दावा करेगी। शादी के समारोह में जब स्वागत द्वार पर खड़े रहते हो तो क्या हर एक आने वाले को एकटक देखते हो? नहीं। वहाँ तो एक आता है और एक जाता है, यों सामान्य भाव से देखते हो। उसी तरह से देखना है। मैंने ज्ञान होने से पहले ही तय किया हुआ था कि सामान्य भाव से देखना है।

ये सभी लोग नहीं होते तो अच्छा होता न? अपने भाव ही नहीं बिगड़ते न?

प्रश्नकर्ता : नहीं, वह तो अपने अंदर ही ऐसे भाव हैं,

इसीलिए सामने ऐसे निमित्त मिले हैं न? अत: हमें अपने भाव ही तोड़ देने चाहिए, तो फिर निमित्त गले नहीं पड़ेगा न!

दादाश्री : सच कहा है। इसीलिए हम कहते हैं कि भावनिद्रा टालो। ये ऐसे लोग हैं कि सभी तरह के भाव आएँ। उसमें भावनिद्रा नहीं आनी चाहिए, देहनिद्रा आएगी तो चलेगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन भावनिद्रा ही आती है न?

दादाश्री : ऐसा कैसे चलेगा? यदि ट्रेन सामने से आ रही हो तो भावनिद्रा नहीं रखते। ट्रेन से तो एक ही जन्म की मृत्यु है, लेकिन यह तो अनंत जन्मों का जोखिम है। जहाँ चित्र-विचित्र भाव उत्पन्न हों, ऐसा यह जगत् है। उसमें तुझे खुद ही समझ लेना है। भावनिद्रा आती है या नहीं? भावनिद्रा आएगी तो संसार तुझे बाँध लेगा। अब अगर भावनिद्रा आ जाए तो वहीं, उसी दुकान के शुद्धात्मा से ब्रह्मचर्य के लिए शक्तियाँ माँगना कि, 'हे शुद्धात्मा भगवान, मुझे पूरी दुनिया के साथ ब्रह्मचर्य पालन करने की शक्तियाँ दीजिए।' यदि हम से शक्तियाँ माँगोगे तो उत्तम ही है, लेकिन वह तो डायरेक्ट, जिस दुकान से व्यवहार हुआ है, वहीं माँग लेना सब से अच्छा।

सुंदर फूल हों तो वहाँ देखने का मन होता है न? वैसे ही इन सुंदर लोगों को देखने का मन हो जाता है और वहीं पर थप्पड़ पड़ जाती है। इन फूलों को सूंघना, खाना-पीना, लेकिन 'इस' एक ही जगह पर देखने की ज़रूरत नहीं है, कहीं भी नज़र मत मिलाना।

प्रश्नकर्ता : नहीं देखना हो फिर भी यदि सुंदर स्त्री दिख जाए, तब वहाँ क्या करना चाहिए?

दादाश्री : उस समय नज़रें मत मिलाना।

प्रश्नकर्ता : नज़रें मिल जाएँ तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : अपने पास प्रतिक्रमण का साधन है, उससे धो देना। नज़रें मिल जाएँ, तब तो तुरंत ही प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए। इसीलिए तो कहा है न कि मनोहर स्त्री के फोटो या मूर्ति मत रखना।

उस मिठास का पृथक्करण करके तो देखो

अब कहीं भी मीठा लगता है क्या?

प्रश्नकर्ता : मीठा तो लग जाता है, लेकिन वह जोखिमदारी है, ऐसा समझ में आता है।

दादाश्री : जहाँ तक मीठा लग रहा है न, जोखिमदारी भले ही लग रही हो, लेकिन जब मीठा लगने लगे वहाँ पर वह कभी न कभी जोखिमदारी भुला देगा। कर्म के उदय ऐसे-ऐसे आते हैं कि जोखिमदारी भुला देता है। और यह मीठा किस हिसाब से लगता है, वही मुझे समझ में नहीं आता। इसमें कौन सा भाग मीठा है?!

प्रश्नकर्ता : वह क्या भ्रांति से मीठा लगता है?

दादाश्री : भ्रांति से मीठा लग रहा हो, तो भी अच्छा। यह तो भ्रांति भी नहीं है। इसे कौन मीठा कहेगा?

यहाँ मुंबई में अगर पानी इतना कम हो जाए कि नहाने का भी ठिकाना नहीं पड़े तो इन लोगों की क्या दशा होगी? घर में सभी से एक रूम में बैठा भी नहीं जा सकेगा, इतने बदबूदार हो जाएँगे! यह तो, हररोज़ नहाते हैं फिर भी बदबू आती है न? और यदि नहीं नहाएँगे तब तो सिर फट जाए इतनी बदबू आएगी। ये नहाते हैं फिर भी दोपहर दो बजे कपड़ा घिसकर यदि पानी में निचोड़ें तो पानी खारा हो जाएगा। फिर भी इस देह को कीमती क्यों माना है? क्योंकि अंदर भगवान प्रकट हुए हैं, व्यक्त हुए हैं। इसलिए अन्य सभी प्रकार की देह की अपेक्षा इसे कीमती माना

गया है, जबकि लोगों ने इसे किसी और ही तरह से कीमती माना है।

प्रश्नकर्ता : विषय में सब से ज़्यादा मिठास मानी है, तो किस आधार पर मानी है?

दादाश्री : वह मिठास जो उसे महसूस हुई और अन्य किसी जगह पर मिठास देखी नहीं है, इसलिए उसे विषय में बहुत मिठास लगती है। अगर देखने जाएँ तो सब से ज़्यादा गंदगी वहीं पर है, लेकिन मिठास की वजह से उसे मूर्च्छा आ जाती है। इसलिए उसे पता नहीं चलता। यदि इस विषय को गंदगी समझे तो उसकी सारी मिठास गायब हो जाएगी।

गलगलिया (वृत्तियों को गुदगुदी होना, मन में मीठा लगना) से ही जगत् फँसा हुआ है। *गलगलिया* होने लगे तो तुरंत ही ज्ञान हाज़िर कर देना, ताकि उससे सब अलग अलग दिखे और उससे छूटा जा सके।

फिर भी आकर्षण क्यों?

प्रश्नकर्ता : चित्त किसी एक ही जगह पर ज़्यादा आकर्षित होता है।

दादाश्री : उस जगह को खोद देना, खोदकर निकाल देना। वह जगह कहाँ है?

प्रश्नकर्ता : एक जगह यानी कुछ अवयवो की तरफ ही दृष्टि ज़्यादा जाती है।

दादाश्री : जिसे ऐसा ज़्यादा होता हो, उसे शादी कर लेनी चाहिए। सभी जगह दृष्टि बिगाड़ने के बजाय एक कुएँ में पड़ना अच्छा। बाद में, पचास की उम्र में कोई भी नहीं मिलेगी।

चोरी करना अच्छा लगता है? झूठ बोलना, मरना अच्छा

लगता है? तो फिर क्या परिग्रह अच्छा लगता है? तो फिर विषय में ही ऐसा क्या पड़ा हुआ है कि अच्छा लगता है?

प्रश्नकर्ता : बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता, फिर भी आकर्षण हो जाता है। उसका बहुत खेद रहता है।

दादाश्री : ऐसे खेद रहेगा, तो वह चला जाएगा। सिर्फ आत्मा ही चाहिए। तो फिर विषय (का भाव) कैसे हो सकता है? अन्य कुछ चाहिए, तभी विषय होगा न? तुझे विषय का पृथक्करण करना आता है?

प्रश्नकर्ता : आप बताइए।

दादाश्री : पृथक्करण यानी क्या कि विषय क्या ऐसे होते हैं कि इन आँखों को अच्छे लगें? कान सुनें तो अच्छा लगता है? और जीभ से चाटने पर मीठा लगता है? एक भी इन्द्रिय को अच्छा नहीं लगता। इस नाक को तो वास्तव में अच्छा लगता है न? अरे, बहुत खुशबू आती है न? इत्र लगाया हुआ होता है न? यदि इस तरह पृथक्करण करेंगे, तब पता चलेगा। पूरा नर्क ही वहाँ पर पड़ा हुआ है, लेकिन इस तरह पृथक्करण नहीं करने की वजह से लोग उलझ गए हैं। वहीं पर मोह होता है, वह भी आश्चर्य ही है न!

प्रश्नकर्ता : तो वह आकर्षण किसका रहता है?

दादाश्री : नासमझी का। जिस तरह नासमझी की वजह से तार जोइन्ट रह गया हो तो उसका आकर्षण होता रहता है लेकिन अब समझ में आ गया कि यह तो ऐसा है। पहले तो हम सही बात नहीं जानते थे और ऐसा पृथक्करण किया ही नहीं था न! लोगों ने जो माना, उसी को हमने सच माना कि यही सही रास्ता है, लेकिन अब जब से जाना तब से हम समझ गए कि इसमें तो पोल वाला खाता है। इसमें तो ओहोहोहो..... इतने सारे जोखिम हैं कि इसी वजह से तो पूरा संसार खड़ा है और पूरे दिन मार

भी इसी की वजह से पड़ती है। उसमें भी यदि इन्द्रियों को अच्छा लगे वैसा हो तो ठीक है, लेकिन यह तो एक भी इन्द्रिय को अच्छा नहीं लगता।

प्रश्नकर्ता : चित्त अभी भी खिंच जाता है, दृष्टि बिगड़ जाती है।

दादाश्री : अपनी बहन हो, वहाँ किस तरह देखते हो?

प्रश्नकर्ता : वहाँ तो कुछ नहीं होता।

दादाश्री : क्यों? वह भी स्त्री ही है न? वहाँ पर क्यों विकार नहीं होता? उसके प्रति विचार क्यों नहीं बिगड़ते होंगे? क्या बहन स्त्री नहीं है?

प्रश्नकर्ता : परमाणुओं का असर रहता होगा, इसलिए?

दादाश्री : यह तो जहाँ पर भाव किए हों, वहीं अपनी दृष्टि बिगड़ती है। बहन पर कभी भी भाव नहीं किया था, इसलिए दृष्टि भी नहीं बिगड़ती और कुछ लोगों ने बहन पर भी भाव किए हों तो वहाँ पर भी दृष्टि बिगड़ती है!

प्रश्नकर्ता : फिर भी, यों व्यवहार में जब स्त्री के संयोग मिलते हैं, तब यों नज़र पड़ ही जाती है।

दादाश्री : नज़र पड़ जाना तो स्वाभाविक है। उसमें पिछले जन्म का दोष है लेकिन अब हमें क्या करना चाहिए? नज़र पड़ जाए, उसमें तो किसी का कुछ नहीं चलता। तुम भले ही कितना भी पकड़कर रखो, फिर भी आँखों का स्वभाव है देखना, वह देखे बिना रहेगी ही नहीं। हिसाब है, इसलिए देखे बिना रहेगी नहीं।

प्रश्नकर्ता : ऐसा दिन में दो-चार बार हो जाता है। दो-चार बार तो ऐसा लगता है कि यह कुछ ठीक नहीं हो रहा है।

दादाश्री : वह और तुम दोनों अलग ही हो न? और वह तो बदलेगा नहीं। जो बदलने वाला नहीं है, अगर उसे हम बदलने जाएँ तो क्या होगा? लेकिन प्रतिक्रमण से दिन-प्रतिदिन बदलाव होता जा रहा है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ। उस ओर की स्थिरता यों बढ़ रही है।

राजा जीतने से, जीतेंगे पूरा राज

कृपालुदेव ने तो क्या कहा है कि,

''नीरखीने नवयौवना, लेश न विषय निदान,
गणे काष्ठनी पूतळी, ते भगवान समान''

- **श्रीमद् राजचंद्र**

अक्रम मार्ग में हमें स्त्री को काष्ठ की पुतली नहीं मानना है। हमें आत्मा देखना है। यह तो क्रमिकमार्ग वाले काष्ठ की पुतली कहते हैं, लेकिन ऐसा कब तक रह पाएगा? ज़रा फिर से विचार आ जाए तो उस समय वापस गायब हो जाएगा लेकिन अगर हम शुद्धात्मा देखें तो? यानी नवयौवना को देखकर भीतर चित्त आकर्षित हो गया हो तो वहाँ पर शुद्धात्मा को देखते रहने से सब चला जाएगा, चित्त फिर छूट जाएगा। विषय को जीतने के लिए यदि शुद्धात्मा को देखेंगे, तब निबेड़ा आएगा। वर्ना निबेड़ा नहीं आएगा।

''आ सघळा संसारनी, रमणी नायकरूप,
ए त्यागी त्याग्युं बधुं, केवल शोक स्वरूप''

- **श्रीमद् राजचंद्र**

सारा शोक उसी से खड़ा हुआ है। स्त्री का त्याग हुआ, उससे अलग हुए कि पूरा निबेड़ा आ जाएगा। जो निरंतर शोक का ही स्वरूप है। पूरे दिन शोक, शोक और शोक ही रहता है।

यदि शोक ही मिलता रहता है, फिर वह चला जाता है। वर्ना जो चिपक गया, तो फिर वह छूटेगा ही नहीं न?

"एक विषय ने जीतता, जीत्यो सहु संसार,
नृपति जीतता जीतिए, दल, पूर ने अधिकार "

– **श्रीमद् राजचंद्र**

एक सिर्फ राजा को जीत लिया तो दल, नगर और अधिकार सबकुछ हमें मिल जाता है। उसकी पूरी सेना वगैरह सबकुछ मिल जाता है। सेना जीतने जाओगे तो राजा को नहीं जीत पाओगे। उसी तरह इस राजा (विषयरूपी) को जीत लिया कि सबकुछ अपने अधिकार में आ जाएगा। तभी तो हम मुक्त रहते हैं न! सिर्फ यह विषय ही ऐसा है कि जिसे जीतने पर सारा राज्य हाथ में आ जाएगा। हमें विषय का विचार तक नहीं आता।

टले ज्ञान और ध्यान...

"विषयरूप अंकुरथी, टले ज्ञान अने ध्यान,
लेश मदिरापानथी, छाके ज्यम अज्ञान"

– **श्रीमद् राजचंद**

एक ही बार यदि विषय भोगा तो सबकुछ बिगड़ जाता है। फिर से अनंत जन्मों का नुकसान होता है और नर्कगति का अधिकारी बनता है। कौन सा ऐसा विषय है कि जो नर्कगति नहीं दिलवाता? जो लोकमान्य है। कोई शादीशुदा इंसान, उसकी स्त्री को लेकर जा रहा हो तो लोग आपत्ति उठाएँगे?

प्रश्नकर्ता : नहीं उठाएँगे।

दादाश्री : और शादीशुदा नहीं हो और जा रहा हो तो?

प्रश्नकर्ता : तो आपत्ति उठाएँगे।

दादाश्री : वह लोकमान्य नहीं कहलाएगा। वह नर्कगति का

अधिकारी बनेगा। दोनों को नर्क में जाना पड़ेगा, दोनों को नर्क में साथ में रहना पड़ेगा, वापस।

प्रश्नकर्ता : '*विषयरूप अंकुरथी....*' मतलब?

दादाश्री : अंकुर मतलब अंदर बीज हो और वह विचार आते ही उसमें तन्मयाकार हो जाए तो वह अंकुर कहलाता है। वह अंकुर फूटा कि गया... इसलिए हम तय करते हैं न कि विचार आने से पहले खींचकर बाहर फेंक देना। वह अंकुर फूटा कि फिर ज्ञान और ध्यान सबकुछ टूट जाता है, खत्म हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : इस अक्रम विज्ञान में भी ऐसा ही होता है?

दादाश्री : ज्ञान और ध्यान मिट जाता है। विचार आए न तो सिर्फ ज्ञान और ध्यान ही नहीं, लेकिन आत्मा भी चला जाता है। क्रमिक में तो ज्ञान और ध्यान चला जाता है और अक्रम में तो, जो आत्मा दिया हुआ है, वह चला जाता है। अतः अंकुर तक नहीं ले जाना चाहिए।

लिंक जारी, उसका जोखिम

इसमें है कुछ भी नहीं। ज्ञान प्राप्त हो जाने पर समझ में आ जाता है कि विषय में है कुछ भी नहीं।

प्रश्नकर्ता : आप के ज्ञान के बाद हम इसी जन्म में विषय बीज से एकदम निर्ग्रंथ हो सकते हैं?

दादाश्री : सभी कुछ हो सकता है। अगले जन्म के लिए बीज नहीं डलेंगे। ये जो भी पुराने बीज हों, उन्हें आप धो देना, नए बीज नहीं डलेंगे।

प्रश्नकर्ता : यानी अगले जन्म में विषय का एक भी विचार नहीं आएगा?

दादाश्री : नहीं आएगा। थोड़ा बहुत कच्चा रह गया होगा

तो पहले के थोड़े बहुत विचार आएँगे लेकिन वे विचार बहुत स्पर्श नहीं करेंगे। जहाँ पर हिसाब नहीं है, उसका जोखिम नहीं है। वह तो अगर लिंक जारी रहे तो उसका जोखिम आता है। इंसान को तो कभी यों ही खुद की माँ के प्रति भी विषय का विचार आ जाता है लेकिन लिंक नहीं होती, इसलिए फिर गायब हो जाता है।

विषय का ज़रा सा भी ध्यान करे तो ज्ञान भ्रष्ट हो जाता है। '*हतो भ्रष्ट, ततो भ्रष्ट*' हो जाता है। जलेबी का ध्यान करने से वैसा नहीं होता। इस योनी के विषय का ध्यान करने से वैसा हो जाता है।

हार-जीत, विषय की या खुद की?

हमने तो कई जन्मों से भाव किए थे। इसलिए हमें तो विषय के प्रति बहुत ही चिढ़। ऐसा करते-करते वे छूट गए। विषय हमें मूलतः अच्छा ही नहीं लगता था लेकिन क्या करें? कैसे छूटें? लेकिन हमारी दृष्टि बहुत गहरी, बहुत विचारशील, यों कैसे भी कपड़े पहने हों, फिर भी सबकुछ आरपार दिखता था, दृष्टि की वजह से यों ही चारों ओर का बहुत कुछ दिखता था। इसलिए राग नहीं होता न? हमें और क्या हुआ कि आत्मसुख प्राप्त हुआ। जलेबी खाने के बाद चाय फीकी लगती है। उसी तरह जिसे आत्मा का सुख प्राप्त हो गया, उसे सभी विषयसुख फीके लगते हैं। तुझे फीका नहीं लगता? जैसा पहले लगता था, वैसा अब नहीं लगता न?

प्रश्नकर्ता : फीका तो लगता है, लेकिन वापस मोह उत्पन्न हो जाता है।

दादाश्री : मोह तो उत्पन्न हो सकता है। वह तो कर्म का उदय होता है। कर्म बंधे हुए हैं, वे मोह उत्पन्न करवाते हैं लेकिन आपको क्या ऐसा लगता है कि खरा सुख तो आत्मा में ही है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, ऐसा तो ठीक से लगता है। इस विषय में सुख नहीं है, यह तो पक्का समझ में आ गया है।

दादाश्री : अन्य किसी स्त्री को देखे तो तुझे विचार नहीं आता न?

प्रश्नकर्ता : आता है कभी-कभार।

दादाश्री : ऐसा होता है, इसका मतलब अभी भी कमी है।

प्रश्नकर्ता : सिर्फ यों साधारण मोह ही होता है, और कुछ नहीं।

दादाश्री : मोह तो फिर घसीट ही ले जाएगा न! इस विषय को जीतना तो बहुत कठिन चीज़ है। इसे हमारे ज्ञान से जीता जा सकता है। यह ज्ञान निरंतर सुखदायी है न, इसलिए जीत सकते हैं।

उसके सेवन से पात्रता

फिर कृपालुदेव तो क्या कहते हैं, कि

"पात्र विना वस्तु ना रहे, पात्रे आत्मिक ज्ञान,
पात्र थवा सेवो सदा, ब्रह्मचर्य मति मान"

- श्रीमद् राजचंद्र

ब्रह्मचर्य के सेवन से तो पात्र बनेगा, कृपालुदेव ऐसा कहते हैं। उन्होंने ऐसा नहीं कहा है कि आम मत खाना। जड़ को ही पकड़ा है पूरा। यदि सामने वाला निर्जीव होता और दावा नहीं करता तो हम ब्रह्मचर्य सेवन नहीं करते जबकि ये तो दावा करते हैं।

"जे नववाड विशुद्धथी, धरे शियळ सुखदाय"

-श्रीमद् राजचंद्र

प्रश्नकर्ता : '*नववाड विशुद्ध*' ब्रह्मचर्य की परिभाषा क्या है?

दादाश्री : '*नववाड*' यानी ऐसा है कि, मन-वचन-काया से ब्रह्मचर्य पालन करना। मन में जो सोचते हों, वैसा कुछ सोचना करना नहीं है। पहले के विषय याद आएँ तो उस घड़ी सबकुछ भुला देना है। वाणी से नहीं बोलना है, देह से बहुत दूर रहना है।

नौ बाड़ बताई हैं न, कि जहाँ स्त्री बैठी हो, वहाँ पर हमें नहीं बैठना है, उसे देखना नहीं है। कोई विषय भोग रहा हो तो छुपकर दरार में से नहीं देखना है। देखने से भी अपना मन बिगड़ जाता है। पहले संसार जो भोगा हो, उसे याद नहीं करना है। याद करने से वापस वे विचार आ जाएँगे, इस तरह ये सब नौ बाड़ है।

जहाँ पर स्त्री बैठी हो उस जगह पर मत बैठना, ऐसा कहते हैं। फिर उस जगह पर क्या होगा? राग होगा या द्वेष? द्वेष होता रहेगा। बल्कि, राग-द्वेष के कारखाने बढ़ेंगे। इसलिए नौ बाड़ का हमें क्या करना है? उसके बजाय एक बाड़ कर दे, तो भी बहुत हो गया। नौ बाड़ करने जाते हुए तो दूसरे राग-द्वेष खड़े हो जाएँगे। इसके बजाय स्थूल ब्रह्मचर्य का पालन करो न और मन में जो विचार आएँ तो उनके प्रतिक्रमण करके धो देना। नौ बाड़ का पालन तो अभी किसी से भी नहीं हो सकता, एक-दो बाड़ तो टूट चुकी होती हैं। तब आप नौ बाड़ कैसे पूरी कर सकोगे? आप तो हमने जो बताया है, उसमें रहो। इतना कोई करे तो उसमें सभी नौ बाड़ आ जाएँगी। नौ बाड़ करने में अहंकार की ज़रूरत पड़ेगी लेकिन अपने यहाँ तो करने का मार्ग ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर प्रतिक्रमण करते वक्त हम जो याद करते हैं, तो उससे नया बंध नहीं पड़ता?

दादाश्री : हाँ! याद आता है, लेकिन प्रतिक्रमण यानी हम

तो क्या करना चाहते हैं? विषय को उड़ा देना चाहते हैं और वे तो लालच के मारे याद करते हैं। दोनों के भावों में फर्क है। वह जो याद आता है, वह लालच से याद आता है और यह तो प्रतिक्रमण से याद आता है। प्रतिक्रमण करने के पीछे छोड़ने का भाव है, जबकि उसमें लालच का भाव है। दोनों के भाव में फर्क है।

''भव तेनो लव पछी रहे तत्व वचन ए भाई ''

\- **श्रीमद् राजचंद्र**

'*लव पछी*' यानी थोड़े ही जन्म बाकी रहते हैं फिर। जन्म कम हो जाते हैं। वह तत्व वचन है, तत्व का सार है।

''सुंदर शियळ सुरतरु, मन-वाणी ने देह,
जे नर-नारी सेवशे, अनुपम फल ले तेह ''

\- **श्रीमद् राजचंद्र**

'*शियळ*' मतलब शीलवान। जो मन-वचन-काया से शीलवान रहे हैं, वह अनुपम फल प्राप्त करते हैं।

प्रश्नकर्ता : शीलवान किसे कहते हैं?

दादाश्री : विषय का विचार तक नहीं आए। जिसे क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं हों, उसे शीलवान कहते हैं। सिर्फ यह स्त्री विषय ही नहीं, लेकिन जिसके क्रोध-मान-माया-लोभ भी खुद के वश हो चुके हों, तब वह शीलवान कहलाता है। जो क्रोध-मान-माया-लोभ खुद को दु:ख दें, दूसरों को दु:ख नहीं दें, वे 'कंट्रोलेबल' कहलाते हैं। वहीं से भगवान ने उसे 'शील' कहा है।

प्रश्नकर्ता : अत: मन-वचन-काया से किसी भी जीव मात्र को किचिंत्मात्र भी दु:ख नहीं देना, वह जो भाव है, वह शीलवान?

दादाश्री : वह भाव तो है ही। वह तो अहिंसक भाव कहलाता है। वह चीज़ अलग है और यह तो जिसने स्त्री से संबंधित विषय को जीता, उसने सबकुछ जीत लिया।

प्रश्नकर्ता : मैंने ब्रह्मचर्यव्रत लेने के बाद एक महीने तक कृपालुदेव का यह पद '*निरखीने नवयौवना*' गाया था।

दादाश्री : जो यह पद गाता है न, उनका साफ हो जाता है। यह पद तो आपको रोज़ गाना चाहिए, दो-दो बार गाना चाहिए। सिर्फ विषय को जीत लिया तो पूरा जगत् जीत लिया, बस! भले ही फिर कुछ भी खाओ या पीओ, उसमें से कुछ भी बाधक नहीं होगा लेकिन जिसने यह जीत लिया, उसने पूरा जगत् जीत लिया। सिर्फ यही, इंसान यहीं पर फँसता है। विषय को जीत लिया तो फिर दुनिया का राजा न! कर्म बंधन ही नहीं होगा न! उसमें से तो निरे कर्म, भयंकर कर्म बंधते हैं। एक ही बार का विषय कितने ही जीवों को खत्म कर देता है। उन सभी जीवों के साथ ऋणानुबंध बंध जाता है। अतः इतना, सिर्फ विषय को जीत लिया तो बहुत हो गया।

मजबूरी से पाशवता

प्रश्नकर्ता : आगे आपने कहा है कि शादी करने जैसा तो सत्‌युग में था। कलियुग में तो शादी करने जैसा है ही नहीं।

दादाश्री : बाकी, इसमें शादी करने जैसा है ही क्या? यह तो नासमझी की वजह से शादी करते हैं, वर्ना शादी करते ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : मैंने एक चीज़ देखी है कि लोगों को यह मार्ग चाहिए, ब्रह्मचर्य का, लेकिन मिलता नहीं है।

दादाश्री : हाँ, नहीं मिलता। *ऊपरी* (बॉस, वरिष्ठ मालिक) होना चाहिए न, वचनबल वाला चाहिए। खुद अकेले अपने आप

ही पालन नहीं किया जा सकता। वह तो मेरा यह वचनबल और मेरा यह मार्गदर्शन है, इस वजह से पालन कर सकते हैं और इसका पालन किया कि राजा! पूरी दुनिया का राजा!

प्रश्नकर्ता : क्योंकि लोग शादी करते वक्त बोलते हैं कि अब मैं गया लेकिन बेचारे के पास और कोई मार्ग नहीं है।

दादाश्री : पाशवता अच्छी नहीं लगती, लेकिन फिर क्या करे?

वहाँ मजबूरी से पाशवता वाला है यह सब। विषय तो खुली पाशवता है। चारा ही नहीं है न? इतना जीत गए तो बस हो गया। इसलिए रोज़ मन में ऐसा तय करना कि, एक ही बार इसे जीतना है, और कुछ नहीं। और जीत सके ऐसा है अभी। दादाजी की निश्रा में सभी लोगों द्वारा जीता जा सकता है। कभी कसौटी का मौका आए तो, उसके लिए उपवास कर लेना दो-तीन। जब कर्म बहुत ज़ोर मारें न, तब उपवास करने से बंद हो जाएगा। उस तरह के उपवास करवाने से तो वह लकड़ी जैसा हो जाएगा। उपवास से वह मर नहीं जाएगा।

प्रश्नकर्ता : यानी उपवास करने से वे सब फोर्स कम हो जाएँगे?

दादाश्री : सभी बंद हो जाएँगे। यह सारा आहार का ही फोर्स है। दूसरे गुनाह चलाए जा सकते हैं। ऐसा है कि सिर्फ यही एक गुनाह नहीं चलाया जा सकता। यह तो अनंत जन्मों का खत्म कर देता है। मिट्टी में मिला देता है। इतना जीत लिया तो बहुत हो गया।

ब्रह्मचर्य का बल हो तो फिर वह विषय की गाँठ बंद हो जाती है। अतः बल ऐसा रखना कि ये विचार आते ही धो देना, कुचल देना।

प्रश्नकर्ता : विचार तो मुझे ब्रह्मचर्य के ही आते हैं।

दादाश्री : नहीं। वही कह रहा हूँ मतलब ब्रह्मचर्य के ही आते हैं? नहीं!

प्रश्नकर्ता : हाँ, हाँ।

दादाश्री : अब्रह्मचर्य के विचार नहीं आते?

प्रश्नकर्ता : वह तो मुझे बहुत गंदा लगता है।

दादाश्री : बहुत अच्छा।

प्रश्नकर्ता : और मुझे इतना समझ में आ गया है कि यह जो जन्म हुआ है, वह इस विषय की गाँठ निकालने के लिए ही हुआ है। बाकी का सब तैयार ही है मेरा!

दादाश्री : तब तो बहुत अच्छा, तब तो समझदार है। मेरी पसंद की बात आई अब। बस, बस। मुझे पसंद आई यह बात। अब ऑलराइट। इससे बहुत संतोष हुआ मुझे।

[2.2]
दृष्टि उखड़े, 'थ्री विज़न' से

'रेशमी चादर' के पीछे

दादाश्री : खून में मांस के टुकड़े पड़े हों, तो आपको उन्हें देखना अच्छा लगेगा क्या?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : और इडली देखना अच्छा लगता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, अच्छा लगता है।

दादाश्री : धनिया और हरी मिर्च की चटनी बनाई जाए तो, वह देखना अच्छा लगता है या मांस देखना अच्छा लगता है?

प्रश्नकर्ता : चटनी अच्छी लगती है।

दादाश्री : चटनी हरे खून से बनी है और यह लाल खून से। यह तो सिर्फ राग-द्वेष करता रहता है। इस पर राग करता है और मांस पर द्वेष करता है! चटनी कौन से खून से बनी है? स्थावर एकेन्द्रिय का ग्रीन कलर का खून है और अपना खून लाल है। पाँच इन्द्रिय के सभी जीवों का खून लाल कलर का होता है। लाल खून में तरह तरह के घटक होते हैं। हड्डियों को तू कभी छूता नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : कभी कभार गलती से छू लेता हूँ।

दादाश्री : खाने के साथ मांस रखा हुआ हो तो तुझे खाना भाएगा या नहीं?

प्रश्नकर्ता : नहीं भाएगा।

दादाश्री : लेकिन अगर वह मांस ढका हुआ हो तो?

प्रश्नकर्ता : तो गलती से शायद खा भी जाऊँ।

दादाश्री : इस देह पर चादर ढकी हुई है और वह खुला मांस है।

प्रश्नकर्ता : वह खुला तो दिखता है, लेकिन यह ढका हुआ है तो नहीं दिखता।

दादाश्री : अभी चादर हटा दें तो?

प्रश्नकर्ता : मांस आदि सब देखकर घिन आएगी।

दादाश्री : और नहीं दिखे तो?

प्रश्नकर्ता : तो फिर पता नहीं चलेगा।

दादाश्री : ये आँखें कैसी है अपनी, कि हैं फिर भी नहीं दिखता? हम जानते हैं कि यह चादर से बंधा हुआ है फिर भी वह दिखता क्यों नहीं? यों बुद्धि तो कहती है कि है अंदर, फिर भी नहीं दिखता, तो वे कैसी आँखें? यह जो चादर है, इसकी वजह से यह सब सुंदर लगता है। चादर खिसक जाए तो कैसा लगेगा?

प्रश्नकर्ता : खून-मांस जैसा।

दादाश्री : तो वहाँ घिन नहीं आएगी?

प्रश्नकर्ता : आएगी।

दादाश्री : किसी को यहाँ पर जल गया हो और पीप निकल रहा हो, तो क्या वहाँ पर हाथ फेरना अच्छा लगेगा?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : यह विषय कैसे खड़ा है, वही समझ में नहीं आता। वह खुली आँखों से सो रहा है तो, उस सोने वाले का क्या करे? लोग तो यह नहीं जानते कि 'देह के अंदर क्या है।' तू रॉकेट(आतिशबाज़ी) लाए तो तुझे पता चलेगा न, कि इसमें बारूद भरा हुआ है?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : तो इसमें क्यों पता नहीं चलता? रॉकेट का तो ध्यान में रहता ही है कि यह बारूद से भरा हुआ है। यह फूटा नहीं है, अभी फूटना बाकी है और यह फूट चुका है। ऐसा पता चलता है न? और इस जीवित मनुष्य में कैसा बारूद भरा हुआ है, इसका क्यों पता नहीं चलता? इसमें कौन-कौन सा बारूद भरा है?

प्रश्नकर्ता : हड्डियाँ, खून, मांस।

दादाश्री : अंदर हड्डियाँ हैं क्या? तूने कैसे देख लीं?

प्रश्नकर्ता : देखा नहीं है लेकिन बुद्धि से पता चलता है न?

दादाश्री : बुद्धि तो परावलंबी है, स्वावलंबी नहीं है। कहीं ओर देखा होगा तो उस पर से पता चलता है कि इंसान में ऐसा-ऐसा होता है, तो वैसा ही मुझ में भी होना चाहिए। बुद्धि परावलंबी है और ज्ञान परावलंबी नहीं है। ज्ञान सीधा देखता है। जिससे गंदगी जैसा लगे, ऐसा और कुछ होता होगा शरीर में?

प्रश्नकर्ता : दुष्टता होती है।

दादाश्री : दुष्टता तो मान लो कि ठीक है, वह प्राकृत गुण कहलाती हैं, लेकिन इसमें माल क्या-क्या है?

प्रश्नकर्ता : और कुछ मालूम नहीं है।

दादाश्री : खाने में तू क्या-क्या खाता है?

प्रश्नकर्ता : दाल, चावल, रोटी, सब्जी।

दादाश्री : फिर जब वह *गलन* होता है, तब क्या होता है?

प्रश्नकर्ता : मल बन जाता है।

दादाश्री : ऐसा क्यों होता है? हम जो आहार खाते हैं न, उसमें से सभी सार खिंच जाता है और खून आदि सब बनता है और शरीर जीवित रहता है और जो असार बचता है, वह निकल जाता है। यह तो सारी मशीनरी है। खून चलता रहे, तो आखें चलती रहती है, अंदर सभी वायर कार्यरत ही हैं। आहार डालते हैं तो इलेक्ट्रिसिटी पैदा होती है। इलेक्ट्रिसिटी से श्वासोच्छ्वास चलते हैं।

अभी एक पोटली में रेशमी चादर से हड्डियाँ और मांस बाँध लिए, फिर उसे यहाँ पर लाकर रख दिया हो तो तुझे वह ध्यान तो रहेगा न, कि इसमें यह भरा हुआ है?

प्रश्नकर्ता : रह सकता है न!

दादाश्री : तो ठीक है। जिसे यह लक्ष्य में रहे, उसे बड़ा अधिपति कहा गया है, वह जागृत कहलाता है। जो जागृत हो, वह इस संसार में नहीं उतरता, और जागृत ही वीतराग बन सकते हैं।

अद्भुत प्रयोग, श्री विज्ञन का

मैंने जो प्रयोग किया था, उसी प्रयोग का उपयोग करना है। हमारे अंदर वह प्रयोग निरंतर सेट ही रहता है, इसलिए हमें ज्ञान होने से पहले भी जागृति रहती थी। यों सुंदर कपड़े पहने हों,

दो हज़ार की साड़ी पहनी हो फिर भी देखते ही तुरंत जागृति खड़ी हो जाती थी, वह नेकेड दिखती थी। फिर दूसरी जागृति उत्पन्न होती थी, तो बिना चमड़ी की दिखती और तीसरी जागृति में फिर पेट काट दिया हो तो अंदर आंते दिखती थी, आंतों में क्या-क्या परिवर्तन होता है, वह सबकुछ दिखता था। अंदर खून की नसें दिखतीं, संडास दिखती, इस तरह सारी गंदगी दिखती। फिर विषय खड़ा होता ही नहीं था न! इनमें से सिर्फ आत्मा ही शुद्ध वस्तु है, वहाँ जाकर हमारी दृष्टि रुकती है, फिर मोह कैसे होगा? लोगों को इस तरह आरपार दिखता नहीं है न? लोगों के पास ऐसी दृष्टि नहीं है न? ऐसी जागृति लाएँ भी कहाँ से? ऐसा दिखना, वह तो बहुत बड़ी जागृति कहलाती है। एट-ए-टाइम ये तीनों प्रकार की जागृति रहती हैं। मुझे जैसी जागृति थी, वह आपको बता रहा हूँ। जिस तरीके से मैं जीता हूँ, वह तरीका आप सभी को, यह जीतने का रास्ता बता दिया। रास्ता तो होना चाहिए न? और जागृति के बिना तो ऐसा कभी होगा ही नहीं न?

यह तो काल इतना विचित्र है, पहले तो लिपस्टिक और चेहरे पर पाउडर, यह सब कहाँ लगाते थे? जबकि अभी तो ऐसा सब खड़ा किया है कि बल्कि आकृष्ट करता है लोगों को। ऐसा सारा मोहबाज़ार हो गया है! पहले तो अगर शरीर अच्छा होता, खूबसूरत होता था तब भी ऐसे मोह के साधन नहीं थे। अभी तो निरा मोहबाज़ार ही है न? उससे बदसूरत लोग भी सुंदर दिखते हैं, लेकिन इसमें देखना क्या है? यह तो निरी गंदगी!

इसलिए मुझे तो बहुत जागृति रहती है, ज़बरदस्त जागृति रहती है! अपना ज्ञान जागृति वाला है, एट-ए-टाइम लाइट करनी हो तो हो सकती है! अब यदि उस समय ऐसी जागृति का उपयोग न करे तो इंसान मारा जाएगा। हम कितना भी शुद्धात्मा देखने जाएँ, फिर भी वह दृष्टि को स्थिर नहीं होने देता, अतः ऐसा उपयोग चाहिए। हमारा ज्ञान होने से पहले ऐसा उपयोग सेट था,

वर्ना यह मोहबाजार तो मार ही डाले इस काल में। यह तो स्त्रियों को देखने से ही रोग घुस जाता है न! क्या वह शादीशुदा नहीं है? शादीशुदा है फिर भी ऐसे! क्योंकि यह काल ही ऐसा है। यह थ्री विज़न याद रहेगा या भूल जाओगे?

प्रश्नकर्ता : दृढ़ निश्चय होने के बावजूद किसी स्त्री की ओर बार-बार दृष्टि आकृष्ट होती है और थ्री विजन जानने के बावजूद 'जैसा है वैसा' क्यों नहीं दिखता?

दादाश्री : वह थ्री विज़न जाना हुआ नहीं है, थ्री विज़न जान ले तो उसकी दृष्टि आकृष्ट ही नहीं होगी। थ्री विज़न दिखे तो उसमें पड़ेगा ही नहीं। जबकि यह तो दृष्टि पड़े तो वापस देख लेता है।

प्रश्नकर्ता : यह जो थ्री विज़न नहीं दिखता है, क्या वह मोह के कारण है?

दादाश्री : जानता ही नहीं है। थ्री विज़न क्या है, वही जानता नहीं है। मोह के कारण भान में ही नहीं आता और मोह यानी मूर्च्छा।

प्रश्नकर्ता : तो फिर अब थ्री विज़न दिखने का उपाय क्या है?

दादाश्री : वह कुछ दिखेगा ही नहीं। उसका उपाय ही क्या करना? वह जिसे दिखता है, वे इंसान अलग ही तरह के होते हैं। गज़ब के इंसान होते हैं।

इस काल में इंसान को इतना वैराग्य नहीं रह पाता! अतः यह थ्री विज़न बहुत ऊँची चीज़ है, उससे फिर वैराग्य रहता है। हमने छोटी उम्र से ही ऐसा प्रयोग किया था। खोज की कि सब से बड़ा रोग यही है। फिर इस जागृति से प्रयोग किया, बाद में तो हमें सहज हो गया। हमें यों ही सबकुछ आसानी से दिखता

है। दो-चार बार गटर का ढक्कन खोलना होता है, फिर पता नहीं चलेगा कि अंदर क्या है? बाद में वैसा गटर आए तो पता नहीं चलेगा? शायद दो-चार बार गलती हो जाए, लेकिन बाद में तो ध्यान रहेगा न?

प्रश्नकर्ता : तो यह प्रयोग कन्टिन्युअस रखना है? थ्री विज़न का?

दादाश्री : नहीं, यह ऐसा ही है! ये तो कपड़ों से ढककर घूमते हैं इसलिए सुंदर दिखते हैं, बाकी अंदर तो ऐसा ही है। यह तो, मांस को रेशमी चादर से बाँध लिया है, इसलिए मोह होता है। सिर्फ मांस होता तो भी हर्ज नहीं था, लेकिन अगर अंदर आंते वगैरह सब काटें तो क्या निकलता है अंदर से? इस पर सोचा ही नहीं है। यदि इस पर सोचा होता तब तो वहाँ पर फिर से दृष्टि जाती ही नहीं। यह तो भ्रांति से मूर्खता में इंसान ने सुख की कल्पना की है। सभी ने कल्पना की, इसलिए इसने भी कल्पना कर ली, ऐसे चला है! सत्तर-अस्सी साल की स्त्री के साथ तू शादी करेगा क्या? क्यों नहीं? लेकिन उसके अंग आदि अच्छे दिखते हैं या नहीं? वह सब देखने का मन ही नहीं करता न?

प्रश्नकर्ता : ऐसा कोई रास्ता नहीं है, शॉर्टकट नहीं है कि थ्री विजन से पहले ही आरपार साफ दिखे?

दादाश्री : यही शॉर्टकट है! सब से बड़ा शॉर्टकट ही यह है न! इस थ्री विज़न से अभ्यास करते-करते आगे बढ़ेगा तो 'जैसा है वैसा' उसे दिखेगा, फिर विषय छूट जाएगा। थ्री विज़न सिवाय का रास्ता, उल्टे रास्ते पर चलने का शॉर्ट रास्ता है। वर्ना अगर शादी करनी है तो किसने मना किया है? आराम से शादी करो न! किसने बाँधा है तुम्हें?

हमें सबकुछ आरपार दिखता है। यह ज्ञान ऐसा है कि कभी

न कभी आपकी ऐसी दृष्टि करवा देगा। क्योंकि ज्ञान देने वाले की दृष्टि ऐसी है, मेरी दृष्टि ऐसी है। यानी जैसी ज्ञान देने वाले की दृष्टि होगी वैसी ही दृष्टि हो जाएगी। जिसे आरपार दिखता है, उसे मोह कैसे होगा फिर?

खरा ब्रह्मचर्य, जागृतिपूर्वक का

प्रश्नकर्ता : स्त्री-पुरुष का भेद भूलना पड़ेगा न?

दादाश्री : भेद नहीं भूलना है। भेद तो हमें मूर्च्छा की वजह से लगता है और यों भूलने से वह भूला जा सके, ऐसा है नहीं। उसे जागना पड़ेगा, वैसी जागृति होनी चाहिए।

यह ज्ञान प्राप्त हुआ इसलिए 'आत्मदृष्टि' हुई, इसलिए अब जैसे-जैसे जागृति बढ़ेगी, वैसे-वैसे वह भी आरपार देखने लगेगा। आरपार देखने लगा कि अपने आप ही वैराग आएगा। देखा तो वैराग आएगा ही और तभी वीतराग हुआ जा सकेगा, वर्ना वीतराग हुआ जा सकता होगा क्या? और वास्तव में एक्ज़ेक्ट ऐसा ही है।

जब जागृति 'फुल' हो जाए, तब वह जागृति ही केवलज्ञान में परिणमित होती है।

प्रश्नकर्ता : 'ब्रह्मचर्य पालन करना है' जब ऐसा निश्चय होता है न, तभी से जागृति बढ़ जाती है।

दादाश्री : नहीं। जागृति वह तो, जब हम 'ज्ञान' देते हैं तब जागृति उत्पन्न होती है। इसके अलावा जागृति का और कोई उपाय है ही नहीं। ये बाहर के लोग ब्रह्मचर्य पालन करते ही है न? लेकिन उसमें जागृति नहीं होती।

ब्रह्मचर्य इस जागृति के आधार पर है न? जागृति 'डिम' होने से ही यह मोह उत्पन्न होता है न! वर्ना इसमें क्या हड्डी, पीप और मांस भरा हुआ नहीं है?

प्रश्नकर्ता : यानी इस विषय की तरफ कपड़ों की वजह

से मोह उत्पन्न होता है न? यों ऐसे दृष्टि पड़े, वह सब से पहले कपड़ों पर पड़ती है, इसलिए वहीं से मोह उत्पन्न होता है न?

दादाश्री : मूलतः तो खुद विषयी है, इसलिए कपड़े ज़्यादा मोहित करते हैं। खुद विषयी नहीं हो तो कपड़े जरा भी मोहित नहीं कर पाएँगे। यहाँ अच्छे-अच्छे कपड़े बिछा दें तो क्या मोह उत्पन्न होगा? यानी खुद को विषय का मज़ा और आनंद है, उसकी इच्छा है, इसलिए वैसा मोह उत्पन्न होता है। जो लोग विषय की इच्छा से रहित हों, उन्हें कैसे मोह उत्पन्न होगा? यह मोह कौन उत्पन्न करता है? पिछले परिणाम मोह उत्पन्न करते हैं। तो उन्हें आप धो देना। बाकी कपड़े बेचारे क्या करें? पहले का बीज डाला हुआ है, यह उसी का परिणाम आया है। लेकिन सभी पर वह मोह नहीं होता। जहाँ हिसाब हो वहीं मोह होता है। अन्यत्र मोह के नए बीज पड़ते ज़रूर है, लेकिन मोह नहीं होता। यह तो कपड़ों की वजह से मोह उत्पन्न होता है, नहीं तो अगर कपड़े निकाल दे तो काफी कुछ मोह कम हो जाएगा। सिर्फ अपनी ऊँची जाति में ही मोह कम हो जाएगा। यह तो बेचारे को कपड़ों की वजह से भ्रांति रहती है और कपड़ों के बिना देखेगा तो यों ही वैराग आ जाएगा। तभी तो दिगंबरियों की ऐसी खोज है न!

उपयोग जागृति से, टलता है मोह परिणाम

श्रीमद् राजचंद्र ने कहा है कि, '*देखत भूली टले तो सर्व दुःख नो क्षय थाय* ' शास्त्रों में पढ़ते हैं कि स्त्री पर राग नहीं करना चाहिए और वापस स्त्री को देखते ही भूल जाते हैं। उसे 'देखत भूली' कहते हैं। मैंने तो आपको ऐसा ज्ञान दिया है कि अब आपमें 'देखत भूली' भी नहीं रही। आपको शुद्धात्मा दिखेगा। बाहर का पैकिंग कैसा भी हो, फिर भी पैकिंग से हमें क्या लेना देना? पैकिंग तो सड़ जाएगी, जल जाएगी, पैकिंग से क्या पाओगे? इसलिए ज्ञान दिया है कि आप शुद्धात्मा देखो ताकि 'देखत भूली टले।' देखत भूली टले' यानी क्या कि यह मिथ्या दृष्टि है, वह दृष्टि बदल

जाए और दृष्टि सम्यक हो जाए तो सभी दुःखों का क्षय हो जाएगा! फिर वह गलती नहीं होने देगी, दृष्टि आकृष्ट नहीं होगी।

कृपालुदेव ने तो कितना कुछ कहा है, फिर भी कहते हैं कि 'देखत भूली' होती है, देखते हैं और गलती हो जाती है। देखत भूली टल जाए तो सभी दुःखों का क्षय हो जाएगा। तो 'देखत भूली' टालने का मैंने यह मार्ग बताया कि 'यह जो स्त्री जा रही है, उनमें तू शुद्धात्मा देखना।' तुझे शुद्धात्मा दिखेंगे तो फिर देखने को और कुछ नहीं रहेगा। बाकी तो ज़ंग लगा हुआ है। किसी को लाल ज़ंग लगा होता है, किसी को पीला ज़ंग लगा होता है, किसी को हरा ज़ंग लगा होता है, लेकिन हमें तो सिर्फ लोहा ही देखना है न?! और ज़ंग दिख जाए तो उसके सामने उपाय दे दिया है। संयोगवश फँस जाए तो उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन इच्छापूर्वक नहीं होना चाहिए। संयोगवश तो ज्ञानी भी फँस सकते हैं।

यह विषय तो अविचार की वजह से है। सोचने से हमें फायदा-नुकसान का पता चलता है या नहीं? और जिसे विचार नहीं आते तो उसे फायदा-नुकसान का पता नहीं चलता न? उसी तरह यदि कोई सोचने वाला होगा तो यह विषय तो खड़ा ही नहीं रहेगा, लेकिन यह कालचक्र ऐसा है कि जलन में उसे हिताहित का भान ही नहीं रहा कि खुद का हित किस में है और अहित किस में? दूसरा, इस विषय के स्वरूप को समझपूर्वक बहुत सोचा हो तब भी अभी जो विषय खड़ा होता है, वह पहले के अविचारों का कारण है। इसलिए 'देखत भूली' टलती नहीं है न! विषय का विचार नहीं आया हो, लेकिन कहीं पर ऐसा देखने में आ जाए, तो भी तुरंत ही भूल हो जाती है। देखे और भूल जाए, ऐसा होता है या नहीं?

'देखत भूली' का अर्थ क्या है? मिथ्यादर्शन! लेकिन बाकी सब 'देखत भूली' हो तो उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन इस विषय

से संबंधित, चारित्र से संबंधित 'देखत भूली' का उपाय क्या है? अगर ज्ञान मिला हो तो खुद को गलती का पता चलता है कि 'यहाँ पर यह गलती हुई, यहाँ मेरी दृष्टि बिगड़ गई थी।' वहाँ पर फिर खुद आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान करके भी धो देता है। लेकिन जिसे यह ज्ञान नहीं मिला है, वह क्या करेगा बेचारा? उसे तो भयंकर झूठी चीज़ को सच मानकर चलना पड़ता है। यह आश्चर्य है न! यह तो जिसे ज्ञान मिल गया है, उसे दिक्कत नहीं है, वह तो दृष्टि बिगड़ी कि तुरंत धो देता है।

यदि आपका शुद्ध उपयोग है, तो सामने वाले का कैसा भी भाव हो तब भी आपको छू नहीं पाएगा!

प्रश्नकर्ता : एक स्त्री को देखकर किसी पुरुष को खराब भाव हो जाए, तो इसमें स्त्री का दोष है क्या?

दादाश्री : नहीं, इसमें स्त्री का कोई दोष नहीं है! भगवान महावीर का लावण्य देखकर कई स्त्रियों को मोह उत्पन्न होता था, लेकिन उस की वजह से भगवान को कुछ भी नहीं स्पर्श करता था। यानी ज्ञान क्या कहता है कि आपकी क्रिया हेतु सहित होनी चाहिए। आपको ऐसे बाल नहीं बनाने चाहिए या ऐसे कपड़े भी नहीं पहनने चाहिए कि जिससे सामने वाले को मोह उत्पन्न हो। अपना भाव साफ होगा तो कुछ नहीं बिगड़ेगा। भगवान केश का लुंचन क्यों करते थे? कि इन बालों की वजह से अगर किसी स्त्री का मुझ पर भाव बिगड़े तो? इसलिए ये बाल ही निकाल दो ताकि भाव ही नहीं बिगड़ें। क्योंकि भगवान तो बहुत रूपवान होते हैं, महावीर भगवान का रूप, पूरे वर्ल्ड में सुंदर! देवता भी बहुत रूपवान होते हैं, लेकिन उस समय रूप से भी रूपवान तो भगवान महावीर थे! उन पर कोई स्त्री मोहित न हो जाए, इसलिए उन्हें जागृति रखनी पड़ती थी। फिर भी कोई मोहित हो जाए तो उसके लिए वे खुद ज़िम्मेदार नहीं थे, क्योंकि खुद की वैसी इच्छा नहीं थी न!

मोह राजा का अंतिम व्यूह

मोहबाज़ार चौदह साल की उम्र में शुरू होता है और चालीस साल के बाद खत्म होता है, तब वह पेड़ सूखता है! ये तो तरह-तरह के मोह हैं! वर्ना हिन्दुस्तान के एक-एक मनुष्य में तो ऐसी शक्तियाँ हैं कि काम *निकाल* दें!

प्रश्नकर्ता : सब से ज़्यादा शक्तियाँ कहाँ खर्च होती है? शक्तियाँ ज़्यादातर कहाँ व्यर्थ हो जाती हैं?

दादाश्री : इस मोह में ही, मोह और अजागृति में। बाकी जितना मोह कम उतनी ही शक्ति ज़्यादा।

मोहराजा ने अंतिम पांसा फेंका है। अभी सर्वत्र विषय का ही मोह व्याप्त हो गया है। पहले तो मान का मोह, कीर्ति का मोह, लक्ष्मी का मोह, मोह सर्वत्र बिखरा हुआ था। आज सभी मोह सिर्फ विषय में ही व्याप्त हो गया है और भयंकर जलन में ही जीवन जी रहे है। सिर्फ ये साधु-महाराज ही विषय से अलग हुए हैं, इसलिए उन्हें थोड़ी-बहुत शांति है।

जिसमें ज्ञानशक्ति ज़बरदस्त हो और विषय तो विचार में भी नहीं आता हो, तो वह भले ही शादी न करे। लेकिन जब तक रूप पर मोह है, तब तक शादी कर लेनी चाहिए। शादी करना आवश्यक है और शादी करना बहुत बड़ा जोखिम है और जोखिम उठाए बिना पार आए ऐसा भी नहीं है। जिसे मोह है, उसे शादी कर ही लेनी चाहिए। वर्ना हरहाया पशु बन जाएगा। किसी के खेत में घुसा कि मारा जाएगा और भयंकर अधोगति को न्यौता देगा। शादी यानी क्या कि हक़ का भोगना, और उसमें तो *अणहक्क* का विचार आए तो अधोगति में जाएगा! शरीर पर राग ही क्यों होना चाहिए? शरीर किसका बना हुआ है?

प्रश्नकर्ता : *पुद्गल* का।

दादाश्री : हाँ, *पुद्गल* तो है, लेकिन कैसा *पुद्गल*? यदि सिर्फ सोने से बना होता तो दुर्गंध नहीं आती, हाथ नहीं बिगड़ते, कुछ भी नहीं, लेकिन यह तो सुंदर चादर से पोटली बाँधी हुई है, इसलिए कितना फँसाव हो गया है। उसी का नाम मोह है न! जो है वह दिखता नहीं है और जो नहीं है, वह दिखता है! निर्मोही कौन? ज्ञानी पुरुष कि उन्हें जैसा है वही दिखता है! आरपार अंदर, हड्डियाँ-वड्डियाँ, आंतें-वांतें सबकुछ दिखता है, यों ही सहज स्वभाव से सबकुछ दिखता है।

प्रश्नकर्ता : उस तरह की दृष्टि होगी तो फिर आकर्षण रहेगा ही नहीं न?

दादाश्री : इस संडास को देखते हैं, तब वहाँ पर क्या कभी आकर्षण होता है? देखते ही मूर्छित हो जाए तो, वह इसलिए कि पिछले जन्म का मोह छप गया है। यह चमड़ी से ढका हुआ मांस ही है। लेकिन ऐसा रहता नहीं है न! जिन्हें मूर्च्छा नहीं होती, उन्हें वह जागृति रहती है। जैसा है वही दिखे, उसी को जागृति कहते हैं! केवल शुद्धात्मा के दर्शन करने जैसा है, बाकी का सब तो रेशमी चादर से लपेटा हुआ मांस ही है!

हमारी आज्ञा का पालन करोगे तो तुम्हारा मोह जाएगा। मोह को तुम खुद निकालने जाओगे तो वही तुम्हें निकाल दे, ऐसा है! इसलिए उसे निकालने की बजाय उससे कहना, 'बैठिए साहब, हम आपकी पूजा करेंगे!' फिर अलग होकर तुमने उस पर उपयोग रखा और दादा की आज्ञा में आ गए तो मोह को तुरंत अपने आप जाना ही पड़ेगा। फिर मोह खुद ही कहेगा कि, 'अपना तो इधर कुछ भी नहीं चलेगा, इधर दादा का साम्राज्य हो गया है, अब अपना कुछ नहीं चलेगा!' तो मोह सभी बोरिया-बिस्तर समेटकर चला जाएगा। बाकी और किसी भी तरीके से मोह को कोई निकाल नहीं सका है। वह तो मोहराजा कहलाता है!

विषय में 'छिपी हुई रुचि' तो नहीं है न?

विषय का विरेचन करने वाली दवाई, वर्ल्ड में कोई भी नहीं है। अपना ज्ञान ऐसा है कि विषय का विरेचन हो जाता है। अंदर विचार आया और वह अवस्था खड़ी हुई, कि तुरंत ही उसकी आहुति दे दी जाती है। सिर्फ यह विषय ही ऐसा है कि निरे कपट का ही संग्रहस्थान है न! जिसमें अनंत दोष लगते हैं और कितने ही जन्म बिगाड़ देता है! विषय हो तो वे एकदम से चले नहीं जाएँगे। लेकिन उससे तंग आ जाए और उसका प्रतिक्रमण करता रहे तो हल आ जाएगा। प्रतिक्रमण किसे कहते हैं कि दाग़ लगा कि तुरंत धो देना। उसे प्रतिक्रमण कहते हैं। इस दाग़ को क्यों धोते हो? क्योंकि वह क्रमण नहीं है, यह अतिक्रमण है। इसलिए उसका प्रतिक्रमण करो और वह 'शूट ऑन साइट' होना चाहिए। अक्रम विज्ञान का प्रतिक्रमण 'शूट ऑन साइट' है। वर्ना ये लफड़े छूटेंगे ही नहीं न?! एकावतारी होना है, लेकिन ये लफड़े कब छूटेंगे? 'शूट ऑन साइट' प्रतिक्रमण से छूटा जा सकता है।

विषय का प्रतिक्रमण रविवार को पूरा दिन करता रहे, तो बाद में छः दिन तक विषय की बात खड़ी हो, उससे पहले ही प्रतिक्रमण उसे घेर लेंगे। अंदर विषय तो खड़े होंगे, लेकिन प्रतिक्रमण का ऐसा ज़ोर रखना कि प्रतिक्रमण के सभी पुलिस उसे घेर लें।

प्रश्नकर्ता : जैसे-जैसे हम प्रतिक्रमण करेंगे, वैसे-वैसे विषय कम होगा न?

दादाश्री : हाँ, प्रतिक्रमण करने से कम होता जाएगा। प्रतिक्रमण करता तो है, लेकिन अंदर विषय की रुचि रहा करती है। उसका खुद को पता नहीं चलता। वह रुचि बिल्कुल भी नहीं रहनी चाहिए। अरुचि उत्पन्न होनी चाहिए। अरुचि मतलब तिरस्कार नहीं, लेकिन इसमें कुछ है ही नहीं ऐसा होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : अंदर जो रुचि पड़ी हुई है, उसका क्यों पता नहीं चलता?

दादाश्री : वह इतना ज़्यादा आवरण है कि उसका पता ही नहीं चल पाता।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यों तो ऐसा लगता है कि मुझे यह विषय तो भोगना ही नहीं है।

दादाश्री : वह तो ऐसा लगता है, लेकिन वह सब शाब्दिक है। अभी अंदर जो रुचि है, वह गई नहीं है। रुचि का बीज अंदर है, धीरे-धीरे वह तुझे समझ में आएगा। जो डेवेलप्ड इंसान है, उसे समझ में आ जाता है।

प्रश्नकर्ता : क्षत्रिय को विषय के सामने क्षत्रियपना नहीं आ जाता?

दादाश्री : आता है न! लेकिन विषय में क्षत्रियपना आ पाए, ऐसा नहीं है। क्षत्रियपना होता, तब तो उसे काट देने को कहते, लेकिन यह विषय वह समझने का विषय (सब्जेक्ट) है। इसलिए बहुत सोचने और समझने पर विषय जाता है। इसलिए विषय से छूटने के लिए मैंने ये तीन विज़न बताए हैं न? फिर उसे राग नहीं होता न! वर्ना यदि स्त्री ने यों अच्छे गहने और अच्छे कपड़े पहने हो तो सबकुछ भूल जाता है और मोह उत्पन्न हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : अभी तो अंदर से विषय में रुचि है, फिर भी पता नहीं चलता कि रुचि है या नहीं।

दादाश्री : इतना जान लिया, वह भी अच्छा है।

प्रश्नकर्ता : विषयों में जो इन्टरेस्ट उत्पन्न होता है, वह रुचि पड़ी है, उसके आधार पर उत्पन्न होता है?

दादाश्री : हाँ। रुचि नहीं हो तो कुछ नहीं होगा। अरुचि

वाली चीज़ पर विषय कैसे उत्पन्न हो सकता है? अरुचि पर विषय कैसे उत्पन्न होगा? किसी स्त्री का हाथ जल गया हो, रोज़ पूरे शरीर को पुरुष छूता हो, लेकिन हाथ जल जाए और फोड़े पड़ गए हों और फिर पीप निकल रहा हो, उस समय वह स्त्री कहे कि 'यहाँ ये ज़रा धो दीजिए न।' तो क्या कहेगा?

प्रश्नकर्ता : मना कर देगा।

दादाश्री : अब उसमें रुचि थी, तो वहाँ ऐसा देखकर अरुचि हो जाती है न! फिर वापस रुचि उत्पन्न नहीं होनी चाहिए। लेकिन स्टैबिलाइज़ रहना चाहिए। यह तो यों फिर से ठीक हो जाए तो, जैसे थे वैसे के वैसे ही हो जाते हैं, ऐसा नहीं। स्टैबिलाइज़ हो जाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : स्टैबिलाइज़ किस प्रकार से हो सकते हैं?

दादाश्री : वह तो यहाँ, इस रोड पर जाकर पूछ आना न! जैसा वे लोग करते हैं वैसे ही तू भी करना! कंकर-मेटल डालकर वहाँ पर रोलर घुमाते हैं और वह स्टैबिलाइज़ हो जाता है। वह देख लेना।

प्रश्नकर्ता : लेकिन कौन सा रोलर घुमाना चाहिए?

दादाश्री : वह तो उस रोलर से हमें पश्चाताप कर करके, दोष को निकालना है।

प्रश्नकर्ता : इस ज्ञान की प्राप्ति के बाद खुद का निश्चय है, ध्येय है, उसके बावजूद भी जो रुचि रही हुई है, उस रुचि को तोड़ने के लिए, उसका छेदन करने के लिए क्या होना चाहिए?

दादाश्री : एक्ज़ेक्ट प्रतिक्रमण करेगा तब हो पाएगा। अरुचि देखने के अन्य सभी साधन उसके अंदर हैं, अरुचि देखने के। वह सब हेल्प करता रहेगा।

प्रश्नकर्ता : स्त्री के प्रति मोह और राग जाएगा, क्या तब रुचि खत्म होने लगेगी?

दादाश्री : रुचि की गाँठ तो अनंत जन्मों से पड़ी हुई है। कब फूट निकले, वह कहा नहीं जा सकता। इसलिए इस संग में ही रहना। इस संग से बाहर गए कि फिर से उस रुचि के आधार पर सब फूट निकलेगा वापस। इसलिए इन ब्रह्मचारियों के संग में ही रहना पड़ेगा। अभी तक यह रुचि गई नहीं है, इसलिए दूसरे कुसंग में गए कि तुरंत ही वह शुरू हो जाता है। क्योंकि कुसंग का पूरा स्वभाव ही ऐसा है।

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण करें फिर भी?

दादाश्री : वहाँ तू लाख प्रतिक्रमण करेगा, फिर भी यदि कुसंग होगा तो सबकुछ उल्टा ही होगा!

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह कुसंग तो हमें चाहिए नहीं। उसकी तो हमें इच्छा ही नहीं है, फिर भी?

दादाश्री : कुसंग तो हमें नहीं चाहिए, लेकिन कभी कभार ऐसा संयोग आ जाता है न? सत्संग छूट गया और कुसंग में आ गया तो क्योंकि अंदर रुचि पड़ी है इसलिए कुसंग घेर लेगा। लेकिन जिसकी रुचि खत्म हो गई है उसे फिर कुसंग नहीं छूएगा। रुचि खत्म हो गई है यानी उसमें रुचि का बीज नहीं है, फिर संयोग मिलने पर भी बीज उगेगा ही नहीं न!

[2.3]
दृढ़ निश्चय पहुँचाए पार

जो कभी न डगमगाए, वही निश्चय

एक भाई मुझसे कह रहे थे कि 'इच्छा ही नहीं है फिर भी विषय के विचार आते हैं, तो मैं क्या करूँ?' इसके अलावा और कुछ किया ही नहीं न! अनंत जन्म इसी का सेवन किया, उसे इसी के प्रतिस्पंदन आते रहते हैं! ज्ञानी मिलें तो उसे छुड़वा देंगे, नहीं तो कोई नहीं छुड़वा सकता। कैसे छुड़वाएगा? कौन छुड़वाएगा? जो छूटा हुआ हो, वही छुड़वा सकता है और विषय से छूट गए तो समझना मुक्त हो गए! सिर्फ इस विषय से छूट गए कि काम हो गया। जिसे छूटने की इच्छा है, उसे कभी न कभी साधन मिल जाता है। स्ट्रोंग इच्छा वाले को जल्दी मिल जाता है और मंद इच्छा वाले को देरी से मिलता है, लेकिन इच्छा यदि सच्ची है तो मिल ही जाता है। शादी की इच्छा वाले की शादी हुए बिना रहती है? उसी तरह इसकी भी स्ट्रोंग इच्छा होनी चाहिए।

निश्चय किसे कहते हैं? कि कैसा भी लश्कर आ जाए फिर भी हम उसकी सुने नहीं! अंदर कितने भी समझाने वाले मिलें फिर भी हम उनकी सुनें नहीं! निश्चय करने के बाद, फिर वह बदले नहीं, तो उसी को निश्चय कहते हैं।

निश्चय ही करना है, और कुछ भी नहीं करना है। लोग भाव को तो समझते ही नहीं कि भाव किसे कहते हैं? भाव आने के बाद तो अभाव होता है, लेकिन यह तो निश्चय है कि हमें

ऐसा तो नहीं ही! निश्चय, वह पुरुषार्थ है! आपने जितने निश्चय किए थे न, यह रोज़ सत्संग में कैसे आ सकते हो? निश्चय किया है, 'जाना है', इसलिए जा पाते हो! उसके बगैर रूपक में आएगा नहीं न! ये तुम्हारे पहले के निश्चय ओपन हुए हैं। इस अनिश्चय की वजह से ही तो सभी दुःख हैं। ये भी चलेगा और वह भी चलेगा, तो उसे वैसा मिलेगा। यह तो हम बहुत सूक्ष्म बात कहना चाहते हैं।

जितने निश्चय किए हैं, उतने फल मिलेंगे। देखो न, नौकरी के निश्चय किए, व्यापार के निश्चय किए, ऐसे रहना है, वैसे निश्चय किए, घर में नहीं रहना है, उसके निश्चय किए। वापस घर में रहना है, ऐसे निश्चय किए और उसी अनुसार फल मिले। यही देखना है, कि यह फिल्म कैसे चल रही है! हमने ऐसा निश्चय किया था कि 'सत्संग करना है, जगत् कल्याण के लिए प्रयत्न करना है।' वह आज हमारा बाईस साल से चल रहा है और यह तो अभी और भी रहने वाला है! आज हमने जो तय किया, वही ठेठ तक रहे, उसे निश्चय कहते हैं! तो फिर उसकी लिंक आगे मिल जाती है वापस। यहाँ से अर्थी निकलने से पहले निश्चय बदल दे तो फिर आगे जाकर निश्चय कहाँ से मिलेगा? आगे जाकर उसे टाइम पर निश्चय मिलेगा ज़रूर, लेकिन वह सतत् नहीं, पीसेज़ वाला (टुकड़े-टुकड़े) मिलेगा।

किसी बड़े ज्योतिष ने कहा हो कि कढ़ी ढुलने वाली है, फिर भी हमें प्रयत्न करना चाहिए। क्योंकि अगर टाइमिंग बदल जाए तो उसका ज्योतिष झूठा पड़ जाएगा और दिन में टाइमिंग तो बदलते ही रहते हैं! ऐसे ऐसे संयोग खड़े होते हैं, उससे टाइमिंग बदल जाता है! अपनी भावना अत्यंत मज़बूत हो तो टाइमिंग भी बदल जाता है! आत्मा अनंत शक्ति वाला है!

प्रश्नकर्ता : क्या निश्चय के सामने टाइमिंग बदल जाता है?

दादाश्री : निश्चय के सामने सारे टाइमिंग बदल जाते हैं।

ये भाई कह रहे थे कि 'मैं पक्का वहाँ आ जाऊँगा लेकिन यदि नहीं आ पाऊँ तो निकल जाना।' तो हम समझ गए कि इन्होंने कच्चा निश्चय किया है, उसकी वजह से आगे जाकर एविडेन्स ऐसे मिलेंगे कि तय किए अनुसार नहीं हो पाएगा।

अत: हमें निश्चय करना है, ऐसा तय करना, लेकिन कभी कभार संयोग वापस भुला देते हैं। अब अगर वे भाई यदि निश्चय से कहते कि 'मैं आ ही रहा हूँ।' तो आगे जाकर निश्चय को टाइमिंग मिल जाता और यहाँ आ पाते। इसलिए जो निश्चय किया है, वह आगे एविडेन्स खड़े करता है। हमें निश्चय करना है, लेकिन यदि संयोग उसे भी भुला दें तो समझना कि व्यवस्थित! यह तो यदि खुद की सारी सत्ता यदि हाथ में आ जाए तब तो तू व्यवस्थित को भी नचाएगा! लेकिन ऐसी सत्ता है नहीं न!

पकड़े रखे निश्चय को ठेठ तक....

निश्चय शक्ति तो सब से बड़ी शक्ति है, नदी पार करनी है या नहीं? तो कहता है, करनी है! पार करनी है मतलब करनी है और नहीं तो नहीं! उन विषय के विचारों पर प्रतिक्रमण का ज़ोर रखना और अब संभाल लोगे तो अंदर जो फ्रैक्चर हो गया है, वह ठीक हो जाएगा।

तुझे 'उपादान' जागृत रखना है और हम तो 'निमित्त' हैं। हम आशीर्वाद देते हैं, वचनबल रखते हैं, लेकिन निश्चय संभालना वह तेरे हाथ में है। यह ज्ञान मिला है, अर्थात् ऐसा ऊँचा पद मिला है कि कोई भी तय किया हुआ काम हो सकता है। और किसी जगह पर जोखिम नहीं है। सिर्फ यही एक जोखिम है और 'इस' तरफ पैर रखा कि मुक्ति! यदि आपका निश्चय नहीं डिगे तो काम हो जाएगा, अत: दिन-रात यही एक स्क्रू टाइट करते रहना। चाय पी ली कि वापस टाइट करना। क्योंकि जगत् की विचित्रता का अंत नहीं है। कब फँसा दे, यह कह नहीं सकते।

ज़रा सा भी कच्चा पड़ जाए न, तो वहाँ पर ब्रह्मचर्य खत्म हो जाएगा। स्ट्रोंग निश्चय यदि कभी थोड़ा सा, ज़रा सा एक बार भी टूटा, निश्चय सेट नहीं किया और अगर टूट गया तो फिर इस ओर मुड़ जाएगा! फिर खत्म हो जाएगा।

मन इस तरफ स्टेडी (स्थिर) रहता है तो अच्छा है, वर्ना खराब विचार आए तो हमें बता देना। तो हम उपाय बताएँगे, कि इस रास्ते पर ऐसा है, वर्ना मारा जाएगा। उपाय हमेशा हाथ में होना चाहिए। दादा को बता देने से मन बंध जाता है। विचार ऐसी चीज़ है, गाँठ चार-छः महीने बंद रहती है और फिर फूटे तब विचार तो आएँगे लेकिन हमें प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए।

विषय तो प्रत्यक्ष महादुःख है, निरे अपयश के ही पोटले! अतः जागृति तो इतनी रहनी चाहिए कि यह कर्म करने से पहले क्या स्थिति, फिर क्या स्थिति, वह सबकुछ एकदम दिखे इतना निरावरण ज्ञान हो जाए, उसके बाद दिक्कत नहीं है।

समझो निश्चय के स्वरूप को...

प्रश्नकर्ता : अपने निश्चय को तुड़वाता कौन है?

दादाश्री : वही, अपना ही अहंकार। मोह वाला अहंकार है न! मूर्छित अहंकार! जैसे शराब पीया हुआ इंसान अंदर घूम रहा हो, वैसा ही है वह, वह तुड़वा देता है!

प्रश्नकर्ता : ऐसा हो तो हमें क्या करना चाहिए?

दादाश्री : करना तो कुछ है ही नहीं न! दादा की आज्ञा का पालन करे तो ऐसा सब रहेगा ही नहीं न! 'मैं शुद्धात्मा हूँ', उसके बाद अहंकार का सब देखते रहना है, आज्ञा का पालन करे तो कुछ है ही नहीं। लेकिन 'आज्ञा क्या है', वह समझे ही नहीं हैं न अभी तक? सिर्फ समभाव से *निकाल* करते हैं, वह भी थोड़ा-बहुत समझकर करते हैं अभी तक! वह शराब पीकर घूमता

है, इसलिए मोह करवाता ही रहता है न?! अंदर जो अहंकार है, वह पूरे दिन मोह की शराब पीकर घूमता ही रहता है और जहाँ मोह वाली चीज़ देखे कि वापस वहाँ खिंच जाता है।

प्रश्नकर्ता : वहाँ पर क्या निश्चय काम नहीं आता?

दादाश्री : निश्चय तो सारा काम आता है, लेकिन पहले से निश्चय हो और दादा की आज्ञा में रहे, तब काम आता है। दादा की आज्ञा से निश्चय मज़बूत होता है। वह निश्चय काम आता है, बाकी ऐसा गाँठ वाला निश्चय नहीं चलेगा। निश्चय कैसा होना चाहिए? कि जो डगमगाए नहीं, फिर से कहना भी नहीं पड़े कि 'मैंने निश्चय किया है।' यह तो गाँठ बाँधता है कि आज यह निश्चय किया है, 'अब यह नहीं खाना है' और कल वापस खाने बैठ जाता है!

अर्थात् दादा की आज्ञा में रहें, तो फिर निश्चय मज़बूत हो जाता है। उसके बाद वह निश्चय कभी बदलता ही नहीं। हमारी आज्ञा का पालन करते रहना। आज्ञा आसान और अच्छी है, रिलेटिव और रियल पूरे दिन में एक घंटा देखना ही पड़ेगा न! तब जाकर निश्चय मज़बूत होगा। निश्चय को मज़बूत करने वाली 'यह' आज्ञा है। हमारी बातों में से सार निकाल लेना कि इसका सार क्या है? उतना ही वाक्य आपको पकड़ लेना है। आपका आहार ऐसा है कि सभी वाक्य तो ध्यान में रहेंगे नहीं!

प्रश्नकर्ता : कैसा निश्चय करना चाहिए?

दादाश्री : हमने जो निश्चय किया हो, उसी तरफ जा सकते हैं। आत्मा अनंत शक्ति स्वरूप है, वह शक्ति प्रकट हो जाएगी। आत्मा निश्चय स्वरूप है, और आपके निश्चय करने की ज़रूरत है। डगमग डगमग नहीं चलेगा! एक ही स्ट्रोंग अभिप्राय ज़िंदगी भर त्याग करवाता है! अभिप्राय थोड़ा सा भी कच्चा रह जाए तो उससे क्या होगा? जब कर्म के उदय आएँगे तो फिर इंसान का कुछ भी नहीं चलेगा, फिर वह स्लिप हो जाएगा। अरे, शादी तक कर

लेगा! 'वे अभिप्राय पक्के नहीं हैं,' इसका क्या मतलब है कि उसमें ज़रा छूट रहने दी होती है।

निश्चय के परिपोषक

आपका संपूर्ण ब्रह्मचर्य पालन करने का निश्चय और हमारी आज्ञा, वह तो काम ही *निकाल* देगा, लेकिन यदि भीतर निश्चय ज़रा सा भी इधर-उधर नहीं हो तो! हमारी आज्ञा तो, वह जहाँ जाएगा वहाँ रास्ता दिखाएगी और हमें बिल्कुल भी प्रतिज्ञा नहीं छोड़नी चाहिए। विषय का विचार आ जाए तो आधे घंटे तक तो धोते रहना चाहिए कि क्यों अभी तक विचार आ रहे हैं! और आँखें गड़ाकर तो किसी के भी सामने देखना ही नहीं चाहिए। जिन्हें ब्रह्मचर्य पालन करना है, उन्हें आँखें गड़ाकर तो देखना ही नहीं चाहिए, बाकी सब तो देखेंगे। तू नीचे देखकर चलता है या ऊपर देखकर चलता है?

प्रश्नकर्ता : नीचे देखकर।

दादाश्री : कितने समय से?

प्रश्नकर्ता : जब से ज्ञान मिला है, तब से।

दादाश्री : उससे पहले ऊपर देखकर चलता था? उससे तो आँखें जल जाती हैं और सभी रोग उसी में हैं। देखते ही रोग घुस जाता है! उसमें क्या आँखों का दोष है? नहीं। अंदर की अज्ञानता का दोष है! अज्ञानता से उसे ऐसा ही लगता है कि 'यह स्त्री है', लेकिन ज्ञान क्या कहता है? कि 'यह शुद्धात्मा है'। मतलब जिसे ज्ञान है, उसकी तो बात ही अलग है न?!

हमारा वचनबल तो रहता है लेकिन इतनी चीज़ों का ध्यान रखना पड़ेगा। तब आपका निश्चय नहीं डिगेगा। एक तो किसी के सामने दृष्टि नहीं गड़ानी चाहिए, धर्म संबंधित हो तो हर्ज नहीं है, लेकिन वह सहज होना चाहिए। दूसरा, कपड़े पहना हुआ इंसान यों देखते ही अगर नंगा हो तो कैसा दिखेगा? फिर अगर चमड़ी

निकाल दें तो कैसा दिखेगा? फिर चमड़ी काटकर आंतें बाहर निकाल दी हों तो कैसा दिखेगा? इस तरह संपूर्ण दृष्टि आगे-आगे बढ़ती रहे, तो वे सभी पर्याय यों एक्ज़ेक्ट दिखेंगे। लेकिन ऐसा अभ्यास ही नहीं किया न? तो ऐसा कैसे दिखेगा? इसका तो पहले खूब-खूब सोचकर अभ्यास करना पड़ेगा। इस स्त्री जाति को सिर्फ यों हाथ छू गया हो तो भी निश्चय डिगा देता है। रात को सोने ही नहीं दे, ऐसे हैं वे परमाणु! इसलिए स्पर्श तो होना ही नहीं चाहिए और अगर दृष्टि संभाल ले तो फिर निश्चय नहीं डिगेगा!

ब्रह्मचर्य की भावना करना और बहुत स्ट्रोंग रहना! निश्चय में सावधान रहना, क्योंकि पुण्य अस्त होते देर नहीं लगती। खुद के निश्चय में बहुत ताकत हो तभी काम होता है। बार-बार मन बिगड़ जाता हो तो फिर निश्चय रहेगा ही नहीं न?! निश्चय ज़बरदस्त होना चाहिए, 'स्ट्रोंग' होना चाहिए। उसके बाद सभी सहारा देते हैं, सभी 'हेल्प' करते हैं। निश्चय के सामने किसी की नहीं चलती। निश्चय सब से बड़ी चीज़ है। खुद का निश्चय मज़बूत होना चाहिए। उस निश्चय को, जब अंदर ही अंदर बात निकले तो ठगता रहता है, और फिर अंदर से ही सलाह दे देकर निश्चय को तोड़ देता है। तो जब-जब ये सलाह दी जाए, तब हमें उसकी नहीं सुननी चाहिए। तेरे साथ ऐसा होता है कभी?

प्रश्नकर्ता : दो महीने पहले इन सब में से गुज़र चुका हूँ।

दादाश्री : अभी नहीं होता न अब?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : तब अच्छा है। अंदर तो बहुत भारी 'रेजिमेन्ट' पड़ी हुई हैं, बहुत बड़ी-बड़ी हैं।

इतना ही सँभाल लेना ज़रा

हमारे वचनबल से कई लोगों का रेग्युलर हो जाता है।

हमारा वचनबल और आपका अडिग नक्कीपन, इन दोनों का ही अगर गुणा(मल्टीप्लीकेशन) हो जाए तो बीच में किसी की ताकत नहीं है कि उसे बदल सके! ऐसा है हमारा यह वचनबल। हम आपसे क्या कहते हैं कि 'आप अडिग हो जाओ, आप ढीले मत पड़ना।' आपका दृढ़ निश्चय होना चाहिए कि दादा की आज्ञा ही धर्म है और आज्ञा ही मुख्य चीज़ है।

हम ब्रह्मचर्य व्रत हर किसी को नहीं देते हैं और अगर देते हैं तो भी हम कहते हैं कि 'हमारा वचनबल है, ज़बरदस्त वचनबल है। जो कर्म के उदय को बदल दे, ऐसा वचनबल है, लेकिन यदि तेरी स्थिरता नहीं टूटे तो।' तुझे बहुत मज़बूती पकड़कर रखनी चाहिए। ज्ञानी के वचनबल के अलावा अन्य कोई यह कार्य नहीं कर सकता, ज्ञानी का वचनबल इतना अधिक होता है! ज्ञानी का मनोबल अलग तरह का होता है क्योंकि ज्ञानी खुद वचन के मालिक नहीं हैं, मन के मालिक नहीं हैं। जो वचन के मालिक होते हैं, उनके वचन में बल ही नहीं होता। पूरा जगत् वचन का मालिक बनकर बैठा है, उनके वचन में बल नहीं होता। बल तो, अगर वाणी रिकॉर्ड की तरह निकले, तो वह वचनबल कहलाता है।

हमारे वचनबल का काम ऐसा है कि सबकुछ पालन करने दे, सभी कर्मों को तोड़ दे! वचनबल में तो ग़ज़ब की शक्ति है कि काम *निकाल* दे! खुद यदि ज़रा भी नहीं डिगे तो कर्म उसे नहीं डिगा सकेंगे! यदि कर्म डिगा दे तो उसे वचनबल ही नहीं कहेंगे न? वीतरागों ने वचनबल और मनोबल को तो टॉपमोस्ट कहा है, जबकि देहबल को पाशवी बल कहा है! देहबल से लेना-देना नहीं है, वचनबल से लेना-देना है!

प्रश्नकर्ता : मनोबल यानी क्या? ब्रह्मचर्य के लिए इस तरह पक्का हो जाए, डिगे नहीं, क्या उसे मनोबल कहते हैं?

दादाश्री : वह तो अगर एक बंदर कूदे तो फिर दूसरा भी

कूदता है। ऐसे एक बार देख ले तो फिर उसे कूदने की हिम्मत आती है। ऐसा करते-करते मनोबल बढ़ता जाता है, लेकिन जिसने देखा ही नहीं हो, वह कैसे कूदेगा?

प्रश्नकर्ता : तो अगर ये बातें सुनेगा तो कूदेगा?

दादाश्री : लेकिन वह तो साथ ही उसकी खुद की अंदर इच्छा हो, खुद की भावना ऐसी हो, तब ऐसी मज़बूती आ पाएगी।

प्रश्नकर्ता : भावना तो मेरी ऐसी ही है।

दादाश्री : वह अपने आप ही मज़बूत हो जाएगा। एक तरफ बाड़ बनाएँ और उस ओर की बाड़ में सियार छेद कर दें, और उन्हें अगर हम नहीं भरें तो क्या होगा? वह तो पीछे के सभी 'होल' भरते जाना चाहिए न? और नई बाड़ बनाते जाना पड़ेगा। भावना इतनी मज़बूत हो तो सबकुछ हो सकता है।

प्रश्नकर्ता : पिछले होल भरना अर्थात् प्रतिक्रमण करके ही न?

दादाश्री : प्रतिक्रमण तो करने ही हैं, लेकिन अभी तो कमज़ोरियाँ जानी चाहिए न? मन मज़बूत होना चाहिए न? उस तरफ दृष्टि भी नहीं जाए, ऐसा होना चाहिए। मन में तय किया हो कि उस ओर देखना ही नहीं है तो फिर देखेगा ही नहीं वह! फिर पीछे से भूतों की तरह कितना भी चिल्लाए, लेकिन फिर भी उस तरफ देखेगा ही नहीं, वह घबराएगा ही नहीं न! उस तरह का मनोबल दिन-प्रतिदिन विकसित होता जाए, तो ठीक है!

प्रश्नकर्ता : वैसी इच्छा तो अंदर से बिल्कुल भी नहीं होती।

दादाश्री : वह तो ऐसा लगता है। दो दिन के लिए ऐसा लगता है। लेकिन वह बात तो, जब एक साथ दस साल का हिसाब देखें, तब जाकर सही है!

प्रश्नकर्ता : यानी ऐसा दस साल तक रहना चाहिए?!

दादाश्री : दस साल नहीं, चौदह साल तक रहना चाहिए, राम वनवास गए थे उतने साल! चौदह साल बीत गए, तब जाकर राम मज़बूत हुए। इसलिए तो हम कहते हैं कि हमारी आज्ञा और साथ में इस ज्ञान को सिन्सियरली एक्ज़ेक्टनेस में रखे तो ग्यारह साल या चौदह साल में पूर्णाहुति हो जाएगी।

कहीं पोल को पोषण तो नहीं मिलता न?

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य 'स्वभाव में होना' मतलब क्या?

दादाश्री : ब्रह्मचर्य 'स्वभाव में रहना' यह शब्द कहाँ से ले आया तू? आत्मा स्वभाव से ही ब्रह्मचारी है, आत्मा को ब्रह्मचारी होने की ज़रूरत नहीं हैं।

प्रश्नकर्ता : आपने वह बात कही थी कि पिछले जन्म में जो भावना की हो, अभी वह उसके उदय में आ चुका हो तो वह ब्रह्मचर्य पालन करता है।

दादाश्री : वह तो जो भावना पहले आई हो, जो पहले 'प्रोजेक्ट' की हो, उसी अनुसार अभी उदय आता है। जैनों के बेटे-बेटियाँ जो दीक्षा लेते हैं, तूने वह देखा है क्या? बीस साल का लड़का होता है, पढ़ा-लिखा होता है, धनवान होता है, वह दीक्षा ले लेता है। उसका क्या कारण है? पिछले जन्मों में उन्होंने दूसरे साधु-साध्वियों के संग में रहने से ऐसी भावना की थी और जैनों में ऐसा रिवाज है कि उनके बेटे-बेटी ऐसी दीक्षा लें तो उन्हें बहुत आनंद होता है, 'ओहोहो! उसके आत्मा का कल्याण कर रहा है। हमें तो मोह है और उसका मोह चला गया है।' इसलिए वे लोग तो बेटे की हेल्प करते हैं! जबकि अपने लोग तो हेल्प नहीं करते। अपने यहाँ तो ऐसा कहते हैं कि बेटा यदि चला जाएगा तो मेरा नाम लुप्त हो जाएगा। लेकिन

अपने में भी पहले भावना की हो, तभी तो 'मुझे ब्रह्मचर्य पालन करना है' ऐसा स्ट्रोंग बोलेगा, वर्ना अंदर डगमगाता रहेगा। क्या होता है?

प्रश्नकर्ता : डगमगाता है।

दादाश्री : हाँ, डगमगाता है कि 'ऐसा करूँ या वैसा करूँ।' क्षणभर में विचार बदल जाता है और क्षणभर में विचार आता है। तेरा विचार बदल जाता है क्या कभी?

प्रश्नकर्ता : नहीं बदलता।

दादाश्री : कितने समय से नहीं बदला है?

प्रश्नकर्ता : चार महीनों से।

दादाश्री : चार महीने? मतलब अभी यह पौधा बड़ा नहीं कहलाएगा न? उसे तो इतना छोटा सा पौधा कहेंगे। वह तो अगर गाय के पैरों तले आ जाए तो भी दब जाएगा।

प्रश्नकर्ता : किसी का ब्रह्मचर्य का निश्चय डगमगाए तो क्या उसकी पहले की भावना ऐसी होगी, इसलिए?

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं। यह निश्चय ही नहीं है उसका। यह पहले का प्रोजेक्ट नहीं है और यह जो निश्चय किया है, वह लोगों का देखकर किया है। यह सिर्फ देखा-देखी है, इसलिए डगमगाता रहता है, इससे अच्छा तो शादी कर ले ना भाई। क्या नुकसान हो जाएगा? कोई लड़की ठिकाने लगेगी। और जो शादी करता है उसकी ज़िम्मेदारी है न? नहीं करे तो कुछ ज़िम्मेदारी है क्या उसकी? दूसरे ने शादी की हो तो तुझ पर ज़िम्मेदारी आएगी? जितना बोझ उठा सको उतना उठाओ। दो बीवियाँ लानी हों तो दो लाओ। बोझ उठना चाहिए न तुमसे? और बोझ नहीं उठा सको तो यों ही कुंवारे रहो, ब्रह्मचारी रहो, लेकिन ब्रह्मचर्य का पालन होना चाहिए न?

नहीं चल सकता अपवाद ब्रह्मचर्य में

ये भाई सच कह रहे हैं कि ऐसे अगर डगमगाए तो उसका क्या अर्थ है?! डगमगाने का इतना ही कारण है कि आज के इन सब के हिसाब से हम करने जाते हैं, दौड़ते हैं लेकिन दौड़ा तो जाता नहीं, फिर वापस थोड़ी देर बैठे रहना पड़ता है। क्या?

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य व्रत लेने के बाद किसी का डगमगा रहा हो तो?

दादाश्री : डगमगाने वाले को तो व्रत लेना ही नहीं चाहिए और व्रत लेगा तो उसमें बरकत आएगी भी नहीं। डगमगाए तो हम नहीं समझ जाएँगे कि 'कमिंग इवेन्ट्स कास्ट देर शैडोज़ बिफोर?!'

ब्रह्मचर्य में अपवाद रखा जाए, वह ऐसी चीज़ नहीं है क्योंकि इंसान का मन पोल (दूसरा उल्टा रास्ता) ढूँढता है, किसी जगह पर अगर इतना सा भी छेद हो तो मन उसे बड़ा कर देता है!

प्रश्नकर्ता : ऐसे पोल ढूँढ निकालता है, उसमें कौन सी वृत्ति काम करती है?

दादाश्री : मन ही वह काम करता है, वृत्ति नहीं। मन का स्वभाव ही है। इस तरह से पोल ढूँढने का।

प्रश्नकर्ता : मन पोल मार रहा हो तो उसे कैसे रोकें?

दादाश्री : निश्चय से। निश्चय होगा तो फिर वह पोल मारेगा ही कैसे? अपना निश्चय है तो कोई पोल मारेगा ही नहीं न? जिसे ऐसा निश्चय है कि 'मांसाहार नहीं करना है' तो वह खाता ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : तो क्या हर एक बात में निश्चय करके रखना है?

दादाश्री : निश्चय से ही सभी काम होते हैं।

प्रश्नकर्ता : आप यदि निश्चय पर इतना ज़ोर देते हैं, तो फिर वह क्रमिकमार्ग नहीं कहलाएगा?

दादाश्री : नहीं, क्रमिक से लेना-देना नहीं है न! आत्मा प्राप्त होने के बाद क्रमिक कहाँ से आया? क्रमिक तो, अगर आत्मा प्राप्त नहीं किया हो, वहाँ तक के हिस्से को ही क्रमिक कहते हैं। आत्मा प्राप्त करने के बाद क्रमिक रहता ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : आत्मा प्राप्त करने के बाद क्या निश्चयबल रखना पड़ता है?

दादाश्री : खुद को रखना ही नहीं है न?! आपको तो 'चंद्रेश' से कहना है कि 'आप ठीक से निश्चय रखो।'

इस बारे में प्रश्न पूछना हो तो वह पोल ढूँढता है। इसलिए ऐसे प्रश्न पूछना हो तब उसे 'चुप' कह देना, 'गेट आउट' कहना ताकि वह चुप हो जाए। 'गेट आउट' कहते ही सबकुछ भाग जाएगा।

पुरुषार्थ ही नहीं, लेकिन पराक्रम से पहुँचो

दादाश्री : तुझे क्या होता है?

प्रश्नकर्ता : दिन में ऐसा एविडेन्स मिले तो विषय की एकाध गाँठ फूट जाती है, लेकिन फिर तुरंत थ्री विज़न सेट कर देता हूँ।

दादाश्री : नदी में तो एक ही बार डूबे कि मर जाता है न? या रोज़ रोज़ डूबे तो मरेगा? नदी में अगर एक ही बार डूब मरे तो उसके बाद कोई हर्ज है? नदी को क्या कोई नुकसान होने वाला है?

प्रश्नकर्ता : नदी को क्या नुकसान होगा?

दादाश्री : तब किसे नुकसान होगा?

प्रश्नकर्ता : जो मरा, उसे होगा।

दादाश्री : ऐसा? तब तू कह रहा है न, कि 'अभी भी मुझे विषय की गाँठ फूटती है?'

प्रश्नकर्ता : इसका क्या कारण है?

दादाश्री : वह तो तुझे ढूँढ निकालना है। एक तो आज्ञा में नहीं रहते और वजह पूछते हो?!

शास्त्रकारों ने तो एक ही बार के अब्रह्मचर्य को मरण कहा है। ब्रह्मचारियों के लिए क्या कहा है, कि एक बार अब्रह्मचर्य होने से तो मरण अच्छा। मर जाना लेकिन अब्रह्मचर्य मत होने देना।

नर्क में जितनी गंदगी नहीं है, उतनी गंदगी विषय में है। लेकिन इस जीव को मूर्च्छा से समझ में नहीं आता। सिर्फ ज्ञानी पुरुष भान में होते हैं, इसलिए उन्हें यह गंदगी आरपार दिखती है। जिनकी दृष्टि इतनी विकसित हो, उन्हें राग कैसे उत्पन्न होगा?

कर्म का उदय आए और जागृति नहीं रहती हो, तब ज़ोर-ज़ोर से ज्ञान के वाक्य बोलकर जागृति लाए और कर्मों का विरोध करे तो वह सब पराक्रम कहलाता हैं। स्व-वीर्य को स्फुरायमान करना, वह पराक्रम है। पराक्रम के सामने किसी की ताकत नहीं है।

प्रश्नकर्ता : बहुत 'अटैक' आ जाए तो हिल जाता है।

दादाश्री : इसी को कहते हैं कि अपना निश्चय कच्चा है। निश्चय कच्चा नहीं पड़े, यही हमें देखना है। 'अटैक' तो, संयोग होता है इसलिए आता है। यदि गंध आए तो उसका असर हुए बिना रहता नहीं है न? इसलिए अपना निश्चय होना चाहिए कि मुझे उसे छूने नहीं देना है। निश्चय होगा तो कुछ नहीं होगा। जहाँ

निश्चय है, वहाँ सबकुछ है। यहाँ पुरुषार्थ का बल है। आत्मा होने के बाद पुरुषार्थ हुआ, उसका यह बल है। वह बहुत ग़ज़ब का बल है। फिर भी हम क्या कहते हैं कि अपने में जो कमज़ोरी है उसे जानो, लेकिन उसके सामने शूरवीरता रहनी चाहिए, तो कभी न कभी वह कमज़ोरी जाएगी। शूरवीरता होगी तो एक दिन जीत जाओगे, लेकिन खुद को निरंतर चुभना चाहिए कि यह गलत है।

अन्य धर्मों में भी ज्ञान के बगैर भी इतना ज़ोर तो लगाते हैं कि, 'अरे, यार जाने दे, हिम्मते मर्दां तो मददे खुदा' जबकि हमारे पास तो ज्ञान है, तो क्या फिर समझ में नहीं आना चाहिए? 'हिम्मते मर्दां तो मददे खुदा' अगर ऐसा बोले न, तो शूरवीरता आ जाती है उसमें तो। अपना तो यह विज्ञान है। विज्ञानी में हिम्मत नहीं हो, ऐसा हो ही कैसे सकता है? हमें तो इतना कहने वाला भी कोई नहीं मिला था। आप तो बड़े पुण्यशाली हो कि आपको तो ज्ञानी पुरुष मिले हैं, वर्ना तो गलत रास्ता दिखाने वाले लोग मिलते हैं।

निश्चय मांगे सिन्सियरिटी

अभी तो उम्र कम है न, इसलिए मोहनीय परिणाम अभी तक आए नहीं हैं। उन सभी कर्मों के उदय तो आए ही नहीं न? इसलिए अभी से ही अगर हमने यह सेट कर रखा हो तो कोई परेशानी नहीं आएगी। यह ज्ञान, यह निश्चय सबकुछ हम ऐसे सेट करके रखें ताकि इस मोहनीय परिणाम में भी हमें डगमगा नहीं दे। इस काल की बड़ी विचित्रता यह है कि इस काल के सभी लोग महा मोहनीय वाले हैं। इसलिए उन्हें 'कैसे हो?' पूछना। लेकिन उनसे नज़र नहीं मिलानी चाहिए, नज़र मिलाकर बातचीत भी नहीं करनी चाहिए। इस काल की विचित्रता है, इसलिए कह रहे हैं। क्योंकि सिर्फ यह विषयरस ही ऐसा है कि जो (हमारा) सर्वस्व गँवा दे। सिर्फ अब्रह्मचर्य ही महा-मुश्किल वाला है। नहीं

तो सुबह-सुबह तय कर लेना कि 'इस जगत् की कोई भी विनाशी चीज़ मुझे नहीं चाहिए', फिर उसके प्रति सिन्सियर रहना है। अंदर तो बहुत से लबाड़ हैं कि जो सिन्सियर नहीं रहने देते, लेकिन यदि निश्चय के प्रति सिन्सियर रहे तो फिर उसे कोई चीज़ बाधक नहीं रहेगी।

जितना तू सिन्सियर, उतनी ही तेरी जागृति। यह हम तुझे सूत्र के रूप में दे रहे हैं और छोटा बच्चा भी समझ जाए, इतने विवरण सहित दे रहे हैं। लेकिन जो जितना सिन्सियर, उतनी उसकी जागृति। यह तो साइन्स है। जितनी इसमें सिन्सियारिटी उतना ही खुद का (काम) होता है और यह सिन्सियरिटी तो ठेठ मोक्ष की ओर ले जाती है। सिन्सियरिटी का फल, मोरालिटी आ जाती है। जो थोड़ा-थोड़ा सिन्सियर हो और यदि वह सिन्सियरिटी के पथ पर चले, उस रोड पर चले, तो वह मोरल हो जाता है। संपूर्ण मोरल हो गया, मतलब परमात्मा प्राप्त होने की तैयारी हो गई, इसलिए पहले सिन्सियरिटी की ज़रूरत है। मोरालिटी तो बाद में आएगी।

एक बार तू सिन्सियर हो जा। जितनी चीज़ों के प्रति तू सिन्सियर है, उतना ही उन चीज़ों को जीत लिया और जितनी चीज़ों के प्रति अनसिन्सियर, उतनी नहीं जीत पाए। इसलिए सभी जगह सिन्सियर हो जाओगे तो तुम जीत जाओगे। इस जगत् को जीतना है। जगत् को जीत लोगे तो मोक्ष मिलेगा। जगत् को जीते बगैर कोई मोक्ष में नहीं जाने देगा।

'रिज पॉइन्ट' पर रहे जोखिम तो देखो

प्रश्नकर्ता : उस दिन आप कुछ कह रहे थे कि जवानी में भी 'रिज पॉइन्ट' होता है, तो वह 'रिज पॉइन्ट' क्या है?

दादाश्री : 'रिज पॉइन्ट' मतलब यह जो छप्पर होता है, तो उसमें 'रिज पॉइन्ट' कहाँ होता है? सब से ऊपर।

हर एक चीज़ का उदयास्त होता है, उदय और अस्त। कर्मों का भी और सभी का, उदय और अस्त होता है। सूर्यनारायण का भी उदय और अस्त होता है या नहीं होता? सूर्यनारायण जब सेन्टर में होते हैं, उस स्थिति की तुलना में उदय के समय वे नीचे होते हैं और जब अस्त होते हैं तब भी नीचे होते हैं और बीच में जब बहुत टॉप पर जाते हैं, तब वह 'रिज पॉइन्ट' कहलाता है। उसी तरह हर एक कर्म 'रिज पॉइन्ट' पर पहुँचने के बाद फिर उतर जाता है। वैसे ही जवानी का उदय और जवानी का अस्त होता है। जवानी जब 'रिज पॉइन्ट' पर पहुँचती है, उसी समय सबकुछ गिरा देती है। उसमें से अगर वह पास हो गया, गुज़र गया तो जीत गया। हम तो सबकुछ सँभाल लेते हैं, लेकिन यदि उसका खुद का मन बदल जाए तो फिर उपाय नहीं है। इसलिए हम उसे अभी, उदय होने से पहले सिखाते हैं कि भाई, नीचे देखकर चलना। स्त्री को मत देखना, बाकी सब, जलेबी-पकोड़े देखना। तुम्हारे लिए गारन्टी नहीं दे सकते। क्योंकि जवानी है। जवानी 'रिज पॉइन्ट' पर चढ़े, तब फिर क्या परिणाम आएँगे, वह कैसे कह सकते हैं? हालांकि हमारे प्रोटेक्शन में कुछ बिगड़ेगा नहीं, लेकिन सौ में से पाँच प्रतिशत बिगड़ भी सकता है। ऐसे निकलते हैं या नहीं?

प्रश्नकर्ता : यानी जब तक हम हमारा 'रिज पॉइन्ट' क्रोस न कर लें, तब तक एकदम जागृति रखनी है?

दादाश्री : 'रिज पॉइन्ट' आने में तो बहुत टाइम लगता है। 'रिज पॉइन्ट' आ जाए तब तो बहुत हो गया। फिर भी इसका डर तो अंत तक रखने जैसा है। बाद में हमें अपने आप पता चल जाएगा कि सेफ साइड हो गई है।

प्रश्नकर्ता : क्रोध-मान-माया-लोभ को तीन साल तक आहार नहीं मिले तो वे भूगर्भ में चले जाएँगे, ऐसा इन विषयों में भी है या नहीं?

दादाश्री : इसमें तो ऐसा होता ही नहीं। इसमें 'नो' अपवाद! बाकी सभी में अपवाद, लेकिन इसमें तो अपवाद है ही नहीं।

ब्रह्मचर्य के लिए हमारी तरफ से आपके लिए पूरा बल हैं, आपकी प्रतिज्ञा मज़बूत, सुंदर होनी चाहिए। आपकी प्रतिज्ञा, जोड़तोड़ रहित, लालच रहित और दुश्मनी रहित होनी चाहिए।

दृढ़ निश्चयी पहुँच सकते हैं

प्रश्नकर्ता : आप जब यह बताते हैं न, हमें खुद को नहीं दिख रहा हो तो हमें बल्कि कहना चाहिए कि, 'तुझमें ऐसा है, तभी दादा कह रहे हैं न!' तब फिर दिखने लगेगा।

दादाश्री : ऐसा जो कहते हो, तो वह बीज डाल रहे हो।

प्रश्नकर्ता : फिर भी जब से मैंने आलोचना दी है न, तब से निश्चय बहुत स्ट्रोंग हो गया है।

दादाश्री : वह निश्चय स्ट्रोंग नहीं कहलाता। निश्चय तो, जब मज़बूत हो जाए, तब मैं (उसे) निश्चय कहता हूँ। सिर्फ मन से किया हुआ निश्चय नहीं चलेगा, निश्चय... व्यवहार में भी निश्चय होना चाहिए।

ब्रह्मचर्य का कोर्स पूरा करेगा?

प्रश्नकर्ता : ज़रूर। विषय तो चाहिए ही नहीं अब। विषय का विचार तक अच्छा नहीं लगता, लेकिन जो अच्छा लगने वाली बिलीफ है न, वह अभी भी रहा करती है। उसके प्रति जो रुचि है, वह अभी भी रहा करता है अंदर।

दादाश्री : और अरुचि भी है न?

प्रश्नकर्ता : जितनी रुचि रहती है, उससे अधिक अरुचि रहा करती है।

दादाश्री : लेकिन तूने तय क्या किया है?

प्रश्नकर्ता : ऐसे तो ब्रह्मचर्य का निश्चय रहता है, लेकिन पुरुषार्थ में कमी रह जाती है, तो उसके लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : वह पुरुषार्थ में कमी नहीं है। निश्चय, वही पुरुषार्थ है।

प्रश्नकर्ता : निश्चय हो तो फिर वह चीज़ रहेगी ही।

दादाश्री : वह कमी डिस्चार्ज में है। जो कमी है, वह डिस्चार्ज में है, चार्ज में नहीं है और जो डिस्चार्ज में है, उसकी कीमत नहीं है।

प्रश्नकर्ता : विषय के बारे में तो पहले से ही स्ट्रोंग रखा हुआ है और अभी भी उस बारे में बहुत जागृति रखी हुई है ठेठ तक, लेकिन ये जो, संसार में दूसरी जो घटनाएँ होती है...

दादाश्री : उनका कुछ नहीं, उनकी कीमत ही नहीं है। कीमत इसी की है, ब्रह्मचर्य की। बाकी के सभी लोग मनुष्य देह में पशु हैं! पाशवता का दोष है। अन्य किसी चीज़ की कीमत है ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : बाकी, विषय में तो इतना तक नक्की है कि अब यदि ऐसा कुछ हो जाए तो चंद्रेश को खत्म कर दूँ, लेकिन अब तो यह चाहिए ही नहीं।

दादाश्री : तो ब्रह्मचर्य के बारे में अच्छा कहा जाएगा। ऐसी समझ की ज़रूरत है। बाकी जिसमें हैवानियत हो, वह तो रुकेगा ही नहीं न!

अधूरी समझ, वहाँ निश्चय कच्चा

प्रश्नकर्ता : आपने निश्चय पर अधिक ज़ोर दिया है। तो निश्चय के लिए क्या होना चाहिए, ब्रह्मचारियों में?

दादाश्री : निश्चय यानी क्या? कि सभी विचारों को बंद

करके सिर्फ एक ही विचार पर आ जाना, कि हमें यहाँ से स्टेशन जाना ही है। स्टेशन से गाड़ी में ही बैठना है। हमें बस में नहीं जाना है। तब फिर सभी संयोग वैसे ही मिलते हैं, अगर आपका निश्चय हो तो।

निश्चय कच्चा हो तो संयोग नहीं मिलते।

प्रश्नकर्ता : हाँ, वह निश्चय कच्चा पड़ जाता है तो फिर एक्चुअल निश्चय के लिए क्या होना चाहिए? क्योंकि यह काल ही ऐसा है कि निश्चय को बदल देता है।

दादाश्री : वह बदल जाए, तो उसे हमें वापस बदल देना है। वह बदल जाए तो हमें वापस बदल देना है। लेकिन काल वगैरह, वे हम से नहीं जीत सकते, क्योंकि हम पुरुष जाति है। बाकी सारी जातियाँ अलग हैं। अतः ये हम पुरुष जाति को नहीं जीत सकते।

प्रश्नकर्ता : लेकिन हम यों बदलते रहें, उससे अच्छा तो अगर एक्ज़ेक्ट समझ लें तो फिर बदलेगा ही नहीं न, निश्चय।

दादाश्री : नहीं। समझ लेने की तो बात ही अलग है। बिना समझे कुछ करना ही नहीं होता न? लेकिन इतनी सारी समझ आनी मुश्किल है, उससे बजाय तो निश्चय लेकर चलना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : आपने ऐसा कहा है कि यह अब्रह्मचर्य ऐसी चीज़ है कि सिर्फ समझ से ही खत्म हो सकता है। अन्य किसी चीज़ से खत्म नहीं हो सकता।

दादाश्री : अगर समझकर हो तो उसे सोचते ही घिन आए ऐसा है। लेकिन घिन नहीं आती और क्यों राग होता है, भाव होता है, उस तरफ का? क्योंकि अभी भी समझा नहीं है, ठीक से।

प्रश्नकर्ता : यानी वह समझ नहीं है, इसलिए उसका निश्चय भी उतना ठीक नहीं है।

दादाश्री : हाँ, लेकिन समझ में आने में ज़रा देर लगे, ऐसा है। समझने जाए, तो समझ में आए ऐसा है। समझ सकता है। समझ में आ जाए तब तो निश्चय-विश्चय कुछ भी करने को नहीं रहेगा।

क्यों गाड़ियों से नहीं टकराता?

विषय का स्वभाव क्या है? जितना स्ट्रोंग उतना विषय कम। इसमें जितना कमज़ोर, उतने ही विषय बढ़ेंगे। जो बिल्कुल कमज़ोर होता है, उसमें बहुत विषय होते हैं। इसलिए कमज़ोर को फिर इसमें से बाहर निकलने ही नहीं देते, इतने सारे विषय चिपके होते हैं जबकि मज़बूत को छू ही नहीं सकते।

प्रश्नकर्ता : वह कमज़ोरी किस आधार पर टिकी हुई है?

दादाश्री : खुद की उसमें प्रतिज्ञा नहीं होती, कभी भी खुद की स्थिरता नहीं होती इसलिए वह फिसलता जाता है। फिसलते, फिसलते खत्म हो जाता है। 'ब्रह्मचर्य टूटे तो ज़हर खाकर भी उसे संभालना, कहते हैं। 'लेकिन ब्रह्मचर्य मत तोड़ना', वह क्रमिक ज्ञान में आता है।

प्रश्नकर्ता : ध्येय तक पहुँचना हो तो अक्रम मार्ग में भी निश्चय तो ऐसा ही रखना पड़ेगा न?

दादाश्री : निश्चय मज़बूत रखना, निश्चय अत्यंत मज़बूत होना चाहिए।

तेरा कुछ राह पर आएगा, लिखकर देने वाला है? ऐसा। तो स्ट्रोंग रह। क्यों इतनी सारी गाड़ियों से नहीं टकराता? सामने वाला टकराने आए फिर भी नहीं टकराना है, ऐसा निश्चय किया है न, तो कैसे निकल जाता है। टकराता नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : नहीं...

दादाश्री : इतने से के लिए टकराता नहीं है न! चार अंगुल

की दूरी की वजह से टकराव होने से रह जाता है न? रास्ते पर गाड़ी-वाड़ियों वगैरह के साथ!

प्रश्नकर्ता : वह तो अगर ऐसे होने वाली हो, तो खुद जल्दी से खिसक जाता है। गाड़ी टकराने वाली हो, तो खुद जल्दी से खिसक जाता है।

दादाश्री : अत: यदि ऐसा सब, तुम्हारा निश्चय होगा न तो कुछ भी नहीं होगा।

जहाँ चोर नीयत, वहाँ नहीं है निश्चय...

प्रश्नकर्ता : चोर नीयत होना, वह निश्चय की कमी कहलाएगी?

दादाश्री : कमी नहीं कहते, इसमें तो निश्चय ही नहीं है। कमी तो निकल जाती है सारी, लेकिन उसमें तो निश्चय ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन नीयत यों थोड़ी-थोड़ी चोर होती है या पूरी चोर होती है, ऐसा फर्क होगा न उसमें?

दादाश्री : चोर हुई मतलब पूरी ही चोर। थोड़ी चोर किसलिए? हमें मकान बनाना हो तो पहले से नक्शे में दरवाज़े सुधार लेने चाहिए, दो खिड़कियाँ चाहिए हमें। बाद में चोरी करना, वह क्या अच्छा कहलाएगा? विचार तक भी क्यों आए ज़रा सा? अब्रह्मचर्य का विचार क्यों आना चाहिए? मैंने आपसे क्या कहा है? उगने से पहले उखाड़कर फेंक देना, वर्ना इसके जैसा जोखिम कोई नहीं है।

प्रश्नकर्ता : दादा ने एक-दो बार टोका, चोर नीयत के लिए, लेकिन अभी भी बात ठीक से पकड़ में नहीं आ रही है ऐसा है।

दादाश्री : पकड़कर क्या करना है? जैसे-जैसे लातें पड़ेंगी,

अंदर जलन पैदा होगी न, तो अपने आप पकड़ में आ जाएगी। अब तो अनुभव शुरू होगा न। पहले परीक्षा देते हैं और उसके बाद अनुभव शुरू होता है न!

प्रश्नकर्ता : चोर नीयत नहीं होगी, तो फिर विचार आना बिल्कुल बंद हो जाएगा?

दादाश्री : नहीं, भले ही विचार आए। विचार आए, तो उसमें हमें क्या हर्ज है? विचार बंद नहीं होंगे। चोर नीयत नहीं होनी चाहिए, अंदर भले ही कैसा भी लालच हो लेकिन उस पर ध्यान न दे, स्ट्रोंग! विचार आएँगे ही कैसे?

प्रश्नकर्ता : अभी भी नीयत थोड़ी चोर है।

दादाश्री : चोर नीयत हो, उसे भी खुद जाने।

प्रश्नकर्ता : फिर कभी कभार बहुत विचार फूटते हैं, वह क्या है?

दादाश्री : विचार भले ही लाखों फूटें, फिर भी...

प्रश्नकर्ता : फिर हमें जो अंदर सुख रहता है, वह कम हो जाता है।

दादाश्री : वह सुख कम होता है, तब वह तपता है, लाल-लाल हो जाता है। वह तो, उस घड़ी तप करना पड़ता है न? सुख कम हो जाए तो क्या दु:ख मोल लेना है?

प्रश्नकर्ता : इसलिए मैंने पूछा कि वह 'नीयत चोर' है इसलिए होता है।

दादाश्री : नीयत चोर नहीं है। इसमें तो क्षत्रियता चाहिए, क्षत्रियता! चितौड़ के राणा क्या कहते थे? नहीं झुकूँगा, झुकूँगा ही नहीं। उसने राजगद्दी छोड़ दी लेकिन झुका नहीं। भाग गया लेकिन झुका नहीं। नहीं तो बादशाह ने तो कह दिया कि, 'यदि

आप झुकोगे, तो फिर इस गद्दी पर बैठ जाओ।' तब कहा, 'नहीं। मुझे ऐसी गद्दी नहीं चाहिए। मैं चितौड़ का राणा नहीं झुकूँगा।'

प्रश्नकर्ता : अभी भी प्रकृति परेशान करती है। लेकिन जब अंदर असल में लाल-लाल हो जाता है, तभी दादा का असल अनुभव होता है।

दादाश्री : वह तप पूरा करना पड़ेगा। उसके बाद आत्मा का अपार आनंद रहेगा। इस बाड़ को पार किया कि फिर अपार आनंद।

विषय के विष की परख क्यों नहीं होती?

प्रश्नकर्ता : तो क्या ऐसा है कि विषय समझ से जाएगा? जैसे-जैसे समझ बढ़ती जाएगी, वैसे विषय चला जाएगा।

दादाश्री : समझ से ही चला जाएगा। यदि ऐसा समझ में आ गया न कि 'यह साँप ज़हरीला है और अगर काट लेगा तो तुरंत मर जाएँगे,' तो फिर वह ज़हरीले नाग से दूर ही रहेगा। उसी तरह इसमें भी समझ में आ जाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : हाँ। लेकिन वह समझ में क्यों नहीं आता?

दादाश्री : अनादिकाल से आराधन किया हुआ है न, उसी को सत्य माना है न।

प्रश्नकर्ता : वह ठीक है, लेकिन वह आराधन किया हुआ और आज का ज्ञान, उसमें अभी भी क्यों युद्ध चल रहा है?

दादाश्री : विस्तार से सोचने की खुद की शक्ति ही नहीं है न।

प्रश्नकर्ता : शक्ति नहीं है या उसकी इच्छा नहीं है?

दादाश्री : नहीं, शक्ति नहीं है। इच्छा तो है पूरी-पूरी।

प्रश्नकर्ता : अब मुझे ऐसा लग रहा है कि शक्ति तो है ही।

दादाश्री : और सारी शक्ति होती तो है, लेकिन वह उत्पन्न नहीं हुई है न?!

प्रश्नकर्ता : तो वह शक्ति उत्पन्न कैसे होगी?

दादाश्री : वह तो रात-दिन उसी के विचार हों, उसी पर विचारणा करता रहे और उसमें कितना आराधन करने योग्य है और वह कितना करने योग्य है, तुरंत अंदर जैसे-जैसे हमें विचारणा होती जाएगी न, वैसे-वैसे खुलता जाएगा।

प्रश्नकर्ता : यानी इसका मीनिंग यही हुआ न कि कुछ भी करके यह व्यवहार खत्म कर देना चाहिए।

दादाश्री : इसलिए वे थ्री विज़न इस्तेमाल करते हैं न? और सोचा हुआ होगा तो थ्री विज़न भी इस्तेमाल नहीं करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : दिन भर के जो व्यवहार हैं, वे व्यवहार आवश्यक हैं। वही उसकी प्रगति में अंतरायरूप हैं न अभी, क्योंकि उसे सोचने का टाइम ही नहीं मिलता।

दादाश्री : इसलिए इसके बजाय, सब से अच्छा यह है, कि अपनी दृष्टि कहीं पर भी चिपके, तो उखाड़ देना और प्रतिक्रमण कर लेना, बस।

प्रश्नकर्ता : उसके बाद मन कब तक इस एक ही सिद्धांत पर चलेगा? मन एक सिद्धांत पर कन्टिन्युअस नहीं चलता। बार-बार दृष्टि बिगड़ती है और प्रतिक्रमण करना या यह करना, यह सिद्धांत कन्टिन्युअस नहीं चलता। थ्री विज़न भी एट-ए-टाइम नहीं चलता। कन्टिन्युअस रहना चाहिए और जब विस्तार से उसे समाधान होता जाए, तब वह आगे बढ़ता है।

दादाश्री : वह विस्तार से भी सप्लाइ करना पड़ता है। अपने

से हो सके तब तक, पहले तो यह उखाड़ देना चाहिए, तो चला फटाफट। खुद के खेत में सारा जो कपास बोया है तो कपास को पहचानते हैं कि यह कपास है, तब फिर अगर दूसरा कुछ उगे तो सिर्फ उसे निकाल देना है। उसे निराई कहते हैं। ऐसे निराई कर दें तो हो जाएगा। उगते ही सारा दबा दिया। तो हो गया। उससे पहले दबाया जा सके, ऐसा नहीं है। जब तक उगेगा नहीं तब तक बीज का पता नहीं चलेगा, उगते ही पहचान जाओगे कि यह बीज अलग है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसका निश्चय होगा तो दूसरा कुछ उगते ही उसे पता चल जाएगा न?

दादाश्री : दूसरा बीज दिखे तो उसे उखाड़कर फेंक देना यानी संक्षेप में कहें तो यहीं सब से अच्छा है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन इस एक सिद्धांत पर ही तो नहीं बैठे रह सकते हैं न, आगे बढ़ना तो पड़ेगा न।

दादाश्री : उस घड़ी फिर से मिल आएगा रास्ता। उस घड़ी अपने आप सभी संयोग मिल जाएँगे। तुझे काम आएँगी, ये सारी बातें? तुझे क्या काम आएँगी?

प्रश्नकर्ता : आएँगी ही न? अपने ध्येय का ही है न!

'उदय' की परिभाषा तो समझो

प्रश्नकर्ता : व्रत का ठीक से पालन हो रहा है या नहीं, वह हम कैसे समझें?

दादाश्री : ये तुम्हारी आँखों में चंचलता (विकारी भाव) आ जाती है या नहीं, उसका पता चलता है न? यदि कभी विषय के विचार तुम्हें अच्छे लगें तो? क्योंकि आत्मा थर्मामीटर जैसा है, तो तुरंत सबकुछ पता चल जाता है कि गलत रास्ते पर चला।

प्रश्नकर्ता : यानी खुद का निश्चय पक्का है। अब बाद में जो होता है, वह तो पूरा उदय का भाग आया न?

दादाश्री : उदय का भाग कौन सा कहलाता है कि संडास नहीं जाना है, वह ऐसे कहता है। यहाँ घर में तो संडास नहीं कर सकते न! इसलिए संडास को ठेठ तक रोककर रखता है और बाद में जाता है, वह उदय भाग कहलाता है। कहीं पर भी संडास करने बैठ जाए तो उसे उदय भाग नहीं कहा जा सकता। इस विषय में क्या होता है कि यह रस अच्छा लगता है, यह पुरानी आदत है। चखने की आदत है, इसलिए वह फिर उदय भाग में हस्तक्षेप करने जाता है। उदय भाग तो, खुद बिल्कुल मना करता हो और ठेठ तक स्ट्रोंग, मुझे फिसलना नहीं है, ऐसा कहता है। फिर फिसल जाए तो, वह बात अलग है। फिसलने वाला इंसान कितनी सावधानी रखता है? सावधानीपूर्वक रहना, तो हर्ज नहीं हैं।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् यह डिमार्केशन बहुत सूक्ष्म है।

दादाश्री : बहुत सूक्ष्म है।

प्रश्नकर्ता : और खुद ही सख़्त रहकर समझ सकता है। खुद ही सख़्त रहे।

दादाश्री : ऐसे सख़्त रहना चाहिए, फिर भी फिसल गए तो वह अलग बात है। जैसे तालाब में तैरने वाला इंसान, डूबने का प्रयत्न ही नहीं होता न उसका।

प्रश्नकर्ता : अभी जो ब्रह्मचर्य से संबंधित निश्चय हो रहे हैं, वे किस आधार पर हो रहे हैं? किस पर आधारित है? स्ट्रोंग निश्चय?

दादाश्री : आपको जो करना है, उस पर। कोई लड़का अगर पानी में कूद जाए, खेलने या तैरने के लिए तो। वह किस आधार पर निश्चय करता है बचने का?

प्रश्नकर्ता : जीना है इसलिए।

दादाश्री : अगर वह सोचे कि जीएँ तो भी क्या और मरें तो भी क्या, तो उसका क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : डूब ही जाएगा। खुद को यों ब्रह्मचर्य से संबंधित जो विवेक आता है, उसी के आधार पर यह निश्चय होता है?

दादाश्री : वह तो समझता है कि क्या करूँ तो सुखी हो सकूँगा। सुख ढूँढ रहा है और खुद का स्वभाव ब्रह्मचारी ही है, स्वभाव से!

दृढ़ निश्चय को कैसे अंतराय?

प्रश्नकर्ता : आपने कहा है कि 'अंतराय खड़े किए है और फिर कहता है कि मुझे दिख नहीं रहा।' तो इस संदर्भ में थ्री विज़न के बारे में कौन से अंतराय हैं और किस प्रकार से अंतराय बाधक है?

दादाश्री : जो निश्चय कर ले कि मुझे अब ब्रह्मचर्य पालन करना है, उसे कुछ भी बाधक नहीं हो सकता। ये सारे तो बहाने बनाते हैं। अपने महात्मा कितने निश्चय वाले हैं यों, ज़रा सा भी डिगते नहीं हैं। थ्री विज़न तो हेल्पिंग है। लेकिन जिसका निश्चय है, जिसे गिरना नहीं है, वह क्यों कुएँ में गिरे? तेरा निश्चय पक्का है न? एकदम पक्का?

प्रश्नकर्ता : एकदम पक्का।

दादाश्री : हाँ, ऐसा पक्का होना चाहिए।

सभी कितने पक्के। यह तो जिसके निश्चय का ठिकाना नहीं है, वह ऐसा सब ढूँढता रहता है और अंतराय डालता है। खुद ही तय कर ले कि भई, मुझे गिरना ही नहीं है। तो गिरेगा ही नहीं। फिर कोई धक्का मारेगा क्या! और तब आनंद रहता है, यों ऐसे अंतराय-वंतराय ढूँढने से कहीं आनंद रहता होगा?

प्रश्नकर्ता : दूसरे उपाय भी साथ में हैं ही न! फिर श्री विज्ञान के अलावा भी उपाय हैं ही न, प्रतिक्रमण है, वह सब...

दादाश्री : प्रतिक्रमण तो मन से गलती हो गई हो तो वर्ना प्रतिक्रमण की भी क्या ज़रूरत है? निश्चय अर्थात् उसे कोई डराता नहीं है। यह सब तो जिसका ठिकाना नहीं हो, उसके लिए यह सब है। ये दूसरे उपाय क्यों ढूँढते हैं। निश्चय मतलब निश्चय! जिसे शादी नहीं करनी है, उसे तय कर लेना चाहिए कि मुझे शादी करनी ही नहीं है। फिर कौन शादी करवाएगा? और जिसे शादी करनी है, उसे व्यर्थ में हाय-हाय करने की ज़रूरत नहीं है, शादी करके बैठ जाना। दही में और दूध में पैर नहीं रखना है किसी को भी।

जिसका ऐसा निश्चय है कि कुएँ में गिरना ही नहीं है, वह यदि चार दिन से सोया नहीं हो और उसे कुएँ की दीवार पर बिठा दिया जाए, फिर भी नहीं सोएगा वहाँ।

प्रश्नकर्ता : वहाँ तो प्रत्यक्ष दिखता है न कि गिर जाऊँगा यहाँ।

दादाश्री : हाँ, तो ऐसे प्रत्यक्ष से भी बुरा है यह तो। यह तो कितनी बड़ी खाई है! अनंत जन्मों के लिए जंजाल लिपट जाता है। अर्थात् मन मज़बूत हुआ होगा तो हो सकता है, वर्ना यों तो नहीं हो पाएगा। यों कच्चे मन से ऐसे, ये धागे सिलाई के लिए नहीं है। कैसा स्ट्रोंग होना चाहिए कि मर जाऊँ लेकिन छूटे नहीं।

तेरा निश्चय मज़बूत है न!

प्रश्नकर्ता : एकदम स्ट्रोंग। स्ट्रोंग-स्ट्रोंग कहने से भी स्ट्रोंग हो जाता है!

दादाश्री : ऐसा?

प्रश्नकर्ता : निश्चय स्ट्रोंग हो जाए तो सबकुछ आता ही जाता है।

दादाश्री : वह सीक्रेसी मिट गई तो 'ओपन टु स्काई' हो गया। उस गुप्त की वजह से यह सारी सीक्रेसी है। उसके बाद हमारी तरह बोला जा सकेगा, 'नो सीक्रेसी'।

जो निरंतर सुख भोग रहे हैं, उनके चेहरे तो देखो?! अरंडी का तेल पीया हो, वैसा दिखता है? और जो नहीं भोगते उनके?

प्रश्नकर्ता : निश्चय स्ट्रोंग है और मैंने कोई सीक्रेसी नहीं रखी है। आलोचना में आपके सामने सभी बातें ओपन की हुई हैं।

दादाश्री : वह सब ठीक है, लेकिन यह ऐसा सब तूफान ढूँढना ही नहीं होता। निश्चय मतलब कुछ भी ढूँढना नहीं होता। अपने आप ही आकर खड़ा रहे। अन्य किसी चीज़ की ज़रूरत ही नहीं है न! आए तो भी क्या और नहीं आए तो भी क्या। तो तू तेरे घर रह, कहना। वह स्थिति नहीं आ जाए, तब तक आपको आते रहना है।

प्रश्नकर्ता : मुझे ऐसा रहा करता है कि मेरा निश्चय इतना स्ट्रोंग है। ज्ञानी पुरुष के साथ का प्रत्यक्ष संयोग है, आप्तपुत्रों के साथ मैं रहता हूँ। मुझे इसमें बिल्कुल इन्टरेस्ट नहीं है, फिर भी आकर्षण क्यों रहा करता है?

दादाश्री : यह जो आकर्षण होता है न, वह पूर्व का हिसाब है इसलिए आकर्षण होता है। उसे तुरंत ही वो (निर्मूल) कर डालना।

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण।

दादाश्री : हाँ। वह कहीं अपने निश्चय को तोड़ता नहीं है। आँखों को कुछ ठीक लगे तो आकृष्ट होती है, इससे कोई गुनाह

नहीं लगता। वह तो प्रतिक्रमण कर लेने से धुल जाता है। वह पिछले जन्म की गलती है और जहाँ वैसा हिसाब होगा तभी वहाँ जाएगा, वर्ना जाएगा ही नहीं कभी भी। वह मिल जाए तभी आकर्षण होता है। वह तो प्रतिक्रमण से धुल जाएगा। उसका और क्या हिसाब है? वह तो, थ्री विज़न रखने के बावजूद भी दिखते ही आकर्षण होता है। समझ में आए ऐसी बात है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : समझ में आ रहा है न! मुझे ऐसा था कि इतना सुंदर ज्ञान मिला है और छूटने के ऐसे सब सुंदर संयोग मिले हैं, तो यदि प्योर हो जाएँ इस एक ही चीज़ में, तो बहुत अच्छा रहेगा, ऐसा।

दादाश्री : हाँ, लेकिन प्योर ही है। निश्चय है तब तक प्योर है और ऐसी इम्प्योरिटी मानी है, वह भी गलती है अपनी। निश्चय अपना था इसलिए प्योर रहता है। फिर जो आकर्षण होता है, उसके उपाय हैं! आकर्षण भी कैसा, फिसल गए तो क्या कोई गुनाह है? फिर से खड़े होकर चलने लगना। कपड़े बिगड़ गए हों तो धो लेना। हम फिसल पड़ें तो गुनाह है, फिसल गए तो गुनाह नहीं।

प्रश्नकर्ता : मुझे अंदर यों ऐसा खेद रहा करता है कि ऐसा सुंदर ज्ञान मिला है, फिर भी अभी तक ऐसी स्थिति क्यों अनुभव कर रहा हूँ?

दादाश्री : नहीं, वह तो सभी को ऐसा होता है। वह तो बल्कि यदि हम प्रतिक्रमण से धो डालें तो अपना काम होगा। वर्ना बाकी रहा, ऐसा कहा जाएगा। पिछले जन्म में जो हस्ताक्षर किए थे, वे छोड़ेंगे नहीं न!

[2.4]
विषय विचार परेशान करें तब...

वह तो है भरा हुआ माल

प्रश्नकर्ता : मुझे व्यापार के कारण बाहर बहुत घूमना पड़ता है।

दादाश्री : हाँ, लेकिन उन संयोगों में हमें सावधान रहना है, वह चढ़ बैठे तो चढ़ने मत देना। वह न्यूट्रल है और हम तो पुरुष है। न्यूट्रल कभी भी पुरुष को नहीं जीत सकता।

मांसाहार की दुकान में जाने पर भी विचार नहीं आते, ऐसा क्यों? क्योंकि वह माल नहीं भरा है न! तब फिर हमें समझ नहीं जाना चाहिए कि 'भाई, जो भरा हुआ है वही कूद रहा है। नहीं भरा होगा तो नहीं कूदेगा।' इतना समझ सकते हैं या नहीं?

प्रश्नकर्ता : वह ठीक है। लेकिन बहुत विचार आते हैं, इसलिए फिर ऐसा लगता है कि अरे! ऐसा सब?!

दादाश्री : बाहर लोग शोर मचा रहे हों और हम दरवाज़ा बंद करके बैठे हों एक तरफ, तो कोई झंझट है? अगर हमें उसके साथ व्यवहार ही नहीं करना है तो फिर हम रह सकेंगे। यानी कि वह तूफान आकर फिर पार निकल जाएगा, और तूफान शांत हो जाएगा। बवंडर क्या रोज़ आते हैं? बस दो दिन। पूरे दिन चलता रहे तो भी उसका रास्ता निकालेंगे। ये सब बताते हैं न। इन्हें क्या बवंडर नहीं आते होगे? अब इसे कितने बवंडर आते हैं, लेकिन क्या करे?

प्रश्नकर्ता : चंद्रेश विषय भोग रहा हो ऐसे विचार आते हैं। ऐसा वैसा सब दिखता है, फोटो दिखते हैं, अंदर। फिर अंदर कुछ भी अच्छा नहीं लगता।

दादाश्री : भले ही अच्छा न लगे। अच्छा नहीं लगता वह भी चंद्रेश को ही न? तुझे तो नहीं न? तू तो अलग है न इसमें! विषय नहीं होना चाहिए, अन्य कोई गलती हो जाए तो चला सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : ऐसा विचार आता है कि मुझे इन्टरेस्ट है, अतः चोर नीयत होगी तभी इन्टरेस्ट आता है। नहीं तो इन्टरेस्ट आना ही नहीं चाहिए।

दादाश्री : इन्टरेस्ट आए ऐसा माल लेकर आए हो तुम। तुम्हें पता चलता है कि ओहो! इन्टरेस्ट आए ऐसा है। अतः तब कहना, 'इन्टरेस्ट का इस्तेमाल करो तुम। शादी भी कर लो, कौन मना कर रहा है?'

आत्मा को इसमें इन्टरेस्ट है ही नहीं। यह इन्टरेस्ट है, आहारी को। आहारी देखे हैं तूने? ज़्यादा खा जाए तो भी दुःखी होते हैं और वापस वही आहारी उपवास भी करने बैठते हैं!

प्रश्नकर्ता : फिर ऐसे विचार आते हैं कि यह निश्चय में कमी है या चोर नीयत है या फिर ऐसा क्यों हो रहा है?

दादाश्री : नहीं, वह तो भरा हुआ माल है और टाइम आ गया है। आसपास के संयोग वैसे हैं, इसलिए फूट रहे हैं।

प्रश्नकर्ता : एक तो मूर्च्छित स्थिति में विषय में खिंच गए और दूसरा जागृतिपूर्वक खिंच गए, कुछ चला ही नहीं वहाँ पर। तब फिर क्या करें? और इसका कितना दोष लगता है?

दादाश्री : दोष तो है न! वैद्य ने कहा हो कि मिर्च मत खाना और हम मिर्च खाएँ, तो क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : आज्ञा का पालन नहीं हो सका तो क्या करना चाहिए फिर?

दादाश्री : वह तो उसने मिर्च खाई, इसलिए फिर रोग बढ़ा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसका उपाय तो होना चाहिए न?

दादाश्री : प्रतिक्रमण करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : लेकिन जिन्होंने आज्ञा दी है, उन्हें कहना तो पड़ेगा न?

दादाश्री : हाँ। कह दो फिर भी वे प्रतिक्रमण करने को कहेंगे। और क्या कहें? रूबरू प्रतिक्रमण कर।

कभी अगर अंदर कोई खराब विचार उग आए और निकाल देने में देर हो जाए तो उसका बड़ा प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। वह तो जब विचार उगे कि तुरंत *निकाल* देना है, फेंक देना है।

प्रश्नकर्ता : पहले ऐसी स्थिति थी कि मैं इन सब से अलग हो जाऊँ न, तो ब्रह्मचर्य रह ही नहीं पाता था, ऐसी स्थिति हो गई थी। ज़रा सा भी इस समूह से जुदा रहूँ या अकेला घर पर रहूँ न तो सभी विचार घेर लेते थे।

दादाश्री : विचार घेर लेते हैं, उसमें अपना क्या जाता है? हम देखने वाले हैं उसे! होली में क्यों हाथ नहीं डालते? होली का दोष निकाले, वह गलत है न! दोष तो, अगर तुम हाथ डाल दो, उसे कहते हैं।

विचार तो सभी तरह के आ सकते हैं। मच्छर घेर लेते हो, उन्हें हम यों-यों करे तो नहीं रहेंगे। इसमें तो हाथ दर्द करता है, लेकिन कुदरत का हाथ तो दुःख ही नहीं सकता। हम कहें कि मच्छर छूने नहीं देना है, तो अंदर वैसा ही हो जाएगा। ऐसा निश्चय करो तब कैसा सुंदर ब्रह्मचर्य पालन किया जा सकेगा!

जुदापन से जीत सकते हैं

दादाश्री : तुझे कैसा रहता है? तेरा ठीक हो जाएगा न?

प्रश्नकर्ता : हो जाएगा।

दादाश्री : हं। तू तो ऐसा ही कहता है न, 'गिर जाएगा, गिर जाएगा', उसी जगह से उगता है और उसी जगह पर ढलता है। वह गिरता नहीं न, वह कहता है, गिर जाएगा सूर्यनारायण!

प्रश्नकर्ता : ये अंदर का ठीक हो जाएगा, चंद्रेश का।

दादाश्री : ऐसा। लेकिन शादी करने का कहता है?

प्रश्नकर्ता : वैसी गाँठें फूट रही हैं।

दादाश्री : उसे कहना कि 'यदि गाँठें फूटेंगी न, तो जब तक हम एक्सेप्ट नहीं करेंगे तब तक तुम्हारा कुछ नहीं चलने वाला। बेकार में तेरे दिन ही बिगड़ेंगे, चुपचाप बैठा रह न।' बेकार में शादी करना और विधुर होना। शादी करना और विधुर होना, ऐसे करते रहते थे। बैठे रहो न, शादी भी मत करना और विधुर भी मत होना। हम कोई सहायोग नहीं देंगे।

प्रश्नकर्ता : यानी कि जब तक मैं दस्तखत नहीं करता, तब तक गाड़ी फर्स्ट क्लास चलती है।

दादाश्री : तुम्हें खुद को ही डाँटना पड़ेगा कि कुछ नहीं होगा। इसलिए चुप बैठो न! ऐसे दो-चार प्रकार के प्रयोग सेट कर देना ताकि जुदा रह सको।

दादाश्री : तुझे पछतावा नहीं होता, शादी नहीं की उसका?

प्रश्नकर्ता : नहीं, ऐसा नहीं है।

दादाश्री : तो शादी नहीं की, वह अच्छा लगा तुझे?

प्रश्नकर्ता : हाँ, दूसरे लोग जो शादीशुदा हैं, उनका सारा

दुःख देखने को मिलता है न? घर और बाहर, सभी ओर देखने को मिलता है। खुला ही है न!

दादाश्री : अरे, इन प्रत्यक्ष दिखाई देने वाले दुःखों को छोड़ो न। उन दुःखों को देख लेंगे थोड़ा बहुत। दादा के कहे अनुसार करेंगे तो, ठीक हो जाएगा। अपने महात्माओं को तो पच जाएगा। लेकिन एक वह (ब्रह्मचर्य की) किताब रखनी पड़ेगी साथ में। तू नहीं रखता?

प्रश्नकर्ता : रखता हूँ।

दादाश्री : पढ़ता है न फिर। थोड़ा-थोड़ा पढ़ना पड़ेगा। उसे पढ़ने से, मन जो बहुत उछल-कूद कर रहा था, वह शांत हो जाएगा। तेरा तो बिल्कुल ठीक रहता है न?

प्रश्नकर्ता : ठीक है। वह किताब हेल्प करती है थोड़ी-बहुत, लेकिन यह विज्ञान तो बिल्कुल जुदा ही रखता है।

दादाश्री : इस विज्ञान की तो बात ही अलग है। इस विज्ञान की तो बात ही क्या!

प्रश्नकर्ता : इस किताब की हेल्प लेते हैं न, लेकिन विज्ञान पर अधिक ज़ोर देते हैं हम।

दादाश्री : विज्ञान तो बहुत काम करता है।

प्रश्नकर्ता : फिर भले ही कैसे भी संयोग आएँ वे इस किताब में नहीं है।

दादाश्री : तेरी गाड़ी राह पर आ गई है, अब। पहले तो मुझे लगता था, कि यह स्त्री बन जाएगा। लेकिन फिर बहुत टोका। नहीं तो क्या करूँ? मैंने कहा, 'अगले जन्म में स्त्री के कपड़े पहनने पड़ेंगे, साड़ी-ब्लाउज।' और क्या कहूँ? अब सब निकल गया। चेहरे पर देख लेते हैं न हम! उसके विचार वगैरह सब

दिखाई देते हैं हमें। स्त्री के कपड़े पहनने अच्छे लगेंगे? विषय चाहिए तो स्त्री के कपड़े लाने ही पड़ेंगे न फिर?

प्रश्नकर्ता : आपने शुरू से ही हमारा बहुत ध्यान रखा है।

दादाश्री : वह तो रखना ही पड़ेगा न! अब ध्यान रखने जैसा नहीं है, अब चलता रहेगा। इसलिए अब दूसरे को पकड़ते हैं। जो कच्चा है, उसे पकड़ते हैं।

प्रश्नकर्ता : लेकिन अभी भी बहुत ज़रूरत है। अब सबकुछ जल्दी से खाली हो जाए, ऐसा कुछ कर दीजिए।

दादाश्री : ऐसा है न, जल्दी खाली होने का मतलब इस देह का खत्म होना।

प्रश्नकर्ता : यानी कि यह जो सारा विषय और कपट का जो माल भरा है, वह सारा माल खाली करना है।

दादाश्री : ओहोहो! विषय का! विषय का खाली करना है ज़रूर! लेकिन उसके टाइम पर खाली करोगे तब भी हर्ज क्या है लेकिन?

प्रश्नकर्ता : वह चुभता है अंदर।

दादाश्री : वह माल फूटे तो उसमें तुझे क्या परेशानी है? चुभेगा तभी जब तू उस तरफ सो जाएगा। इस ओर सो जाएँ, अपने अंदर सो जाएँ तो? 'स्त्री' के पलंग पर सो जाएगा, तब चुभेगा न! 'अपने' पलंग पर सो जाएँ तो फिर हमें क्या चुभेगा? बहुत चुभता है? तो फिर शादी कर ले।

प्रश्नकर्ता : नहीं, ऐसा नहीं। ये जो गाँठें फूटती हैं, वे चुभती हैं।

दादाश्री : उसमें चुभना कैसा? 'देखते' रहना है। उसमें चुभता क्या है? 'हम' 'वहाँ' बैठेंगे तभी चुभेगा।

प्रश्नकर्ता : हाँ। यानी कि चंद्रेश को ही चुभता है कि 'ऐसा नहीं होना चाहिए।'

दादाश्री : चंद्रेश को चुभे उसमें तुझे क्या है? चंद्रेश से कहना, 'ले अब ले स्वाद!' ले तेरा किया तू भुगत। हमें कुछ नहीं कर सकता। तुम्हारी तो उम्र छोटी है तो अभी परेशानी वाले स्टेशन आएँगे। निरी झाड़ी और जंगल सारा!

स्त्री विषय, वह गलत चीज़ है, ऐसा तुझे निरंतर रहा करता है?

प्रश्नकर्ता : निरंतर।

दादाश्री : और अभिप्राय भी वही रहता है?

प्रश्नकर्ता : वही।

दादाश्री : अब पहले माना था कि स्त्री विषय अच्छा है, इसीलिए तो अंदर गाँठें भर गई हैं, अब वे खत्म हो जाएँगी धीरे-धीरे। नया माल नहीं भर रहा है, इसलिए तुझे जोखिम नहीं रहा न! नया भर सके, अपना ज्ञान ऐसा है ही नहीं न!

सत्संग में भी सतर्क रहना है

जिन स्त्री-पुरुषों में विकार नहीं हों, वे पवित्र।

तुम जितना काम का बदला दोगे, उससे अधिक बदला तुम्हें मिलेगा, इसलिए यह करना है। जगत् कल्याण होगा और अपना भी। वर्ना इसमें तो कोई माल ही नहीं था। नमक-मिर्च भी नहीं था न! वह तो अब जो है, नए सिरे से बड़ी बड़ी दुकानें खुली हैं।

प्रश्नकर्ता : विषय से संबंधित खास ध्यान रखना पड़ता है। गाँवों में जाते हैं न, वहाँ जेन्ट्स से अधिक लेडीज़ होती हैं हमेशा। इन गाँवों में सत्संग में जाते हैं न तो सत्तर प्रतिशत तो

लेडीज़ ही होती हैं और पुरुष तीस प्रतिशत ही होते हैं इसलिए ब्रह्मचर्य से संबंधित अत्यंत जागृत रहना पड़ता है। उन लोगों का रिस्पोन्स बहुत होता है। जैसे कि अच्छे पद गवाएँ, तो वे लोग यों खुश हो जाती हैं।

दादाश्री : ऐसा स्थूल अब्रह्मचर्य तो नहीं होता न! झंझट तो सूक्ष्म में है। वे भी रास्ते में और शहरों में मिलते हैं। गाँवों में तो रुचि का इतना कारण ही नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : लेकिन गाँठें फूटती हैं कभी कभार।

दादाश्री : उन्हें तो तोड़ देना।

प्रश्नकर्ता : उनका निवारण तुरंत हो जाता है, तुरंत पाँच ही मिनट में।

दादाश्री : जितना धुल गया, उतना कम हुआ। 'शूट ऑन साइट' ही होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : 'शूट ऑन साइट' ही हो जाता है। यह तो हमें जब मिलने का मौका आता है न। यों घर पर रहते हैं तब नहीं आते।

दादाश्री : अनंत जन्मों से यही के यही प्रतिस्पंदन। पहले के संस्कार, वह भान ही नहीं है न!

मन की पोलों के सामने...

कोई स्त्री अपने सामने आँख मारती रहे तो, उसमें हमें क्या? वह तो स्त्री तो मारेगी ही। उससे हमें क्या? तू भी ग़ज़ब का है? ऐसा कानून है क्या, कि स्त्री आँखें नहीं मार सकती? क्या हम उसे ऐसा कह सकते हैं?

प्रश्नकर्ता : स्त्री से नहीं कह सकते। लेकिन चंद्रेश अंदर लपेट में आ जाता है। उसका क्या? चंद्रेश खिंच जाता है।

दादाश्री : इसीलिए, वह शादी कर ले तो अच्छा है न!

प्रश्नकर्ता : नहीं, ऐसा नहीं चाहिए।

दादाश्री : ऐसा ही है न! यही तेरी कमज़ोरी है! आँख मारे, उसमें तुझे क्या? हम थ्री विज़न से देखें तो, क्या दिखेगा उसमें? तू थ्री विज़न नहीं देखता?

माँ-बाप अगर तेरे ध्येय को बदलवा रहे हों तो तू वह नहीं सुनता तो मन की क्यों सुने? उठाकर ले गया कोई?

प्रश्नकर्ता : खुद ही खिंच गए।

दादाश्री : जो साँप के मुँह में जाए, उसका कोई क्या करे?

मन से कह देना कि 'तू अब फँसाएगा तो मैं आप्तपुत्रों को सौ रुपये की आइस्क्रीम खिलाऊँगा या खाना खिलाऊँगा।' तो फिर नहीं करेगा वैसा। एक गलती पर सौ रुपया का दंड!

प्रश्नकर्ता : तभी अंदर हुआ कि यह गलत है, फिर भी उस ओर चला गया। मन का मान लिया उस समय।

दादाश्री : तो फिर अब गलत हुआ, वह जानता है। ऊपर से यह भी जानता है कि 'समुद्र में डूब जाऊँगा और मर जाऊँगा,' फिर भी यदि कोई जाए तो क्या समुद्र उसे मना करेगा? समुद्र तो कहेगा, 'आ भाई, मैं तो विशाल पेट वाला हूँ। कई लोगों को समा लिया है।'

प्रश्नकर्ता : पिछले एक साल से मैं रज़िस्ट कर रहा था।

दादाश्री : मन तो बहुत मज़बूत है, लेकिन तू खुद कमज़ोर होगा तो फिर शादी कर लेगा।

प्रश्नकर्ता : जब ऐसा हो, तब मन मज़बूत कहलाता है?

दादाश्री : इंसान कमज़ोर ही कहलाएगा न! मन कमज़ोर

नहीं कहलाता। बल्कि मन उसे खींच ले गया। मन तो मज़बूत कहलाएगा।

प्रश्नकर्ता : इस केस में आपने मन को 'मज़बूत' कहा और इंसान को 'कमज़ोर' कहा। तो इंसान यानी कौन कमज़ोर कहलाएगा?

दादाश्री : अहंकार और बुद्धि कमज़ोर हैं। इसमें असल गवर्नमेन्ट का राज है, तो इसमें बुद्धि और अहंकार का हैं। इसमें अगर मन का राज हो जाए तो खत्म। मन का तो पार्लियामेन्टरी पद्धति से, उसका सिर्फ एक रोल ही है। वह भी अगर बुद्धि माने, स्वीकार करे, तब अहंकार दस्तखत करता है। वर्ना तब तक दस्तखत भी नहीं होते।

प्रश्नकर्ता : यों अकेले सो गए हों न, तो वे विचार फूटते हैं कि ऐसा हो जाए तो? इस तरह ये विषय भोगें तो? फिर उस समय मुझे आश्चर्य होता है कि मुझे तो ब्रह्मचर्य पालन करना है तो यह सब फूटा कहाँ से? और अच्छे भी लगते हैं, वे विचार।

दादाश्री : फूटें उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन वे तो तुझे अच्छे लगते हैं?

प्रश्नकर्ता : वे किसी को तो अच्छे लगते ही होंगे न अंदर?

दादाश्री : ओहो, तुझे किसी से लेना-देना है?!

प्रश्नकर्ता : वे जिसे अच्छे लगते हैं, उसे भी निकालना तो पड़ेगा न!

दादाश्री : उसे डाँटना, 'यहाँ क्या हंगामा मचा रखा है हमारे घर में? हमारे पवित्र घर में, होम में?'

प्रश्नकर्ता : तो फिर इसका इलाज क्या है?

दादाश्री : तुझे इलाज करके क्या करना है?

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह तो बहुत बड़ा रोग है। यह तो फिर वापस बिल्ली मटकी में मुँह डाले न, तो उसे लेकर घूमना पड़ेगा फिर।

दादाश्री : उसमें तो चारा ही नहीं है न। बाद में तो कौन निकालेगा? बीत गई यह पूरी ज़िंदगी! आ फँसे भई आ फँसे। दु:ख अच्छा लगता हो तो फिर उसका कोई उपाय ही नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : दु:ख अच्छा नहीं लगता। लेकिन वह विषय का इन्टरेस्ट अच्छा लगता है, उसमें कहाँ दु:ख है?

दादाश्री : नहीं, उसका फल ही दु:ख आता है न! जिसका फल दु:ख आए, वह चीज़ अच्छी नहीं लगनी चाहिए। वह दु:ख ही है।

प्रश्नकर्ता : ऐसे विचार आ गए, फिर बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता कि 'ये ऐसे विचार क्यों आए?'

दादाश्री : वह तो मटकी में मुँह डालने के बाद न? फँसने के बाद आएँगे विचार! अरे, एक बार विचारों को उखाड़कर-निकालकर कहना, 'इन सभी लोगों ने शादी की ही हैं न।'

प्रश्नकर्ता : शादी के विचार आते हों तो अच्छा है। एक बार शादी कर ले। ये तो विषय के विचार आते हैं। इसमें जोखिमदारी कितनी है! फिर ऐसा विचार आता है कि दादा तो कहते हैं कि ऐसा नहीं चलाएँगे, तो क्या होगा मेरा?

दादाश्री : क्या होने वाला है? क्या इस नर्मदा का गोल्डन ब्रिज गिर गया है? गोल्डन ब्रिज बनाने वाले चले गए, सभी चले गए! क्या हो जाएगा? क्या वह गिर जाएगा? अपनी तैयारी होनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : लेकिन तैयारी में अंदर पोल (ढील) बहुत हो

जाती है। संयोग नहीं मिलें तब तक अच्छा रहता है, लेकिन मिल जाएँ तब सारा माल निकलता है।

दादाश्री : नहीं, लेकिन यह जो बात तू कर रहा है न, वह सब के लिए नहीं है। यह सिर्फ तेरे लिए है। किसी और की बात नहीं है। तुझे जैसा ठीक लगे, उस अनुसार कर ले ताकि झंझट मिटे। फिर औरों का कोई झंझट नहीं। इससे तो दूसरों के मन बिगड़ते हैं फिर। क्या होगा फिर? अच्छा लगे, तब? अच्छा लगे, तब तक हम कुछ नहीं कह सकते। मालिक भी कहता है कि अच्छा लग रहा है और अच्छा लगने वाला कहता है कि अच्छा लग रहा है। दोनों ऐसा कहेंगे तो फिर क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : जो अच्छा लगे उसे खत्म करना पड़ेगा न?

दादाश्री : यह तो अच्छा लगने वाला कहता है, 'मुझे पसंद है' और मालिक कहता है, 'पसंद नहीं है' यदि इन दोनों में संघर्ष हो तो खत्म कर सकते हैं। यह तो संघर्ष नहीं है, एक मत है, फिर कैसे खत्म करेंगे?! मियाँ-बीवी राज़ी तो क्या करेगा मियाँ काज़ी? फिर काज़ी साहब क्या करेंगे?!

प्रश्नकर्ता : लेकिन फँसना तो अच्छा नहीं लगता मुझे। इस विषय में फँसना मुझे अच्छा नहीं लगता।

दादाश्री : देख अब क्या कह रहा है, पहले क्या कह रहा था, अभी?

प्रश्नकर्ता : वे जो विचार आते हैं, वे अच्छे लगते हैं, वे उतने समय के लिए ही। फिर बाद में....

दादाश्री : आत्महत्या करना अच्छा लगता है लेकिन मरना नहीं है! एक दिन करके तो देख!

प्रश्नकर्ता : वह जोखिमदारी है। उसके लिए सारी मार खानी पड़ेगी न! कभी ऐसे। फिर ऐसा विचार आता है कि इस *पुद्गल*

के फोर्स की वजह से ऐसा हो रहा होगा, इसलिए फिर *पुद्गल* के फोर्स को कम कर दें, खाना कम कर दें, उसका कोई रास्ता बताइए।

दादाश्री : लेकिन उससे तुझे क्या? तुझे अच्छा नहीं लगता हो तो रास्ता बता सकते हैं। तुझे तो अच्छा लगता है न?

प्रश्नकर्ता : ऐसे लगातार अच्छा नहीं लगता। वे विचार आते हैं न, तो थोड़े वक्त के लिए ही अच्छा लगता है। बाद में कहीं ऐसा अच्छा लगता होगा?

दादाश्री : नहीं, नहीं। अच्छा लगता है मतलब साइन हो गई न थोड़ी देर के लिए। तू अगर विरोधी हो तो बात काम की।

प्रश्नकर्ता : पूरे चौबीस घंटों में मैं विरोधी ही हूँ। लेकिन वे संयोग ऐसे आ मिलते हैं कि विचार फूटें तो एक ज़रा सा, एक मिनट के लिए अच्छा लग जाता है कि ये विचार अच्छे हैं।

दादाश्री : मिनट के लिए ही लोगों ने शादियाँ कर लीं।

प्रश्नकर्ता : पूरे दिन मैं ऑफिस में 'दादा, मुझे ब्रह्मचर्य पालन करने की शक्ति दीजिए' ऐसे माँगता ही रहता हूँ।

दादाश्री : हाँ, तो माँगता रह न फिर। लेकिन अगर अच्छा लगता है तो उसमें हर्ज नहीं है न! अंदर हैं न, ऐसे व्यापारी हैं न! हर तरह के व्यापारी होते हैं न! नुकसान करें ऐसे व्यापारी! कभी अगर डूब गए तो क्या हर्ज है?

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह जो आप एक्ज़ेक्ट उदाहरण देते हैं न, कि भाई एक बार तू नदी में डूब जाएगा तो? तो वह सोचने लगता है कि यदि एक बार विषय में स्लिप हो जाऊँगा तो?

दादाश्री : नहीं, लेकिन दूसरी बार उसे जागृति रहती है न! सौ दिन तक तैरे लेकिन एक दिन डूब गए तो फिर व्यर्थ ही है!

पिछले जन्म की माँ आज बेटी भी बन सकती है। जैसा ऋण बंधा हो वैसा ही होता है। काकी बन सकती है, मामी बन सकती है, मौसी बन सकती है, पत्नी भी बन सकती है। ऐसा सब हो सकता है! यदि माँ हो और इस जन्म में पत्नी बने तो वैराग्य नहीं आएगा? ऐसा समझना है!

प्रश्नकर्ता : जब तक कुसंग का वातावरण है, तब तक इसका निबेड़ा नहीं है।

दादाश्री : इस सत्संग से निबेड़ा आता ही है न! अपनी सारी मेहनत मिट्टी में मिला देता है कुसंग।

प्रश्नकर्ता : कुसंग में माल फूटता है।

दादाश्री : कुसंग की गंध ही ऐसी है। कुसंग में जाना पड़े तो भी प्रतिक्रमण करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : मतलब एक ओर विषय के विचार अच्छे लगते हैं और एक ओर नहीं भी लगते, इस प्रकार दोनों चीज़ होती हैं।

दादाश्री : ऐसा नहीं चलेगा, अगर ब्रह्मचारी रहना हो तो। वर्ना शादी कर लो।

बहुत लूज़ हो रहा हो तो मज़बूत कर दे अब! ऐसे पूछना और सारी बातचीत करना!

बुद्धि की वकालत, बिना फीस के

प्रश्नकर्ता : प्रकृति अभी भी एकदम अपना स्वभाव तुरंत छोड़ती नहीं है न! विचार वगैरह सब थोड़ा-थोड़ा रहता है।

दादाश्री : बहुत नहीं न लेकिन!

प्रश्नकर्ता : नहीं, लेकिन अभी भी अगर विचार आ जाएँ तो हम से वापस अंदर से गड़बड़ भी हो जाती है।

दादाश्री : ज्ञान तुरंत हाज़िर हो जाता है न!

प्रश्नकर्ता : ज्ञान हाज़िर रहता है लेकिन उस पर थोड़ा विश्वास रखने जाएँ और यह विचार आता है कि 'हमें क्या हर्ज है?'

दादाश्री : ऐसा कहता है?! उसे पहचानता नहीं है कि यह कौन कह रहा है? 'वकील बोल रहा है,' ऐसा नहीं जान जाता?

प्रश्नकर्ता : अंदर वकील ऐसा कहता है।

दादाश्री : इसीलिए तो तुझे मज़ा आ गया न(!)

प्रश्नकर्ता : उसका तो नहीं मान सकते।

दादाश्री : कभी मानना चाहिए क्या, उस वकील का? तू मानता है? अच्छा लगता है वह?

प्रश्नकर्ता : ऐसा विचार आए न तो तुरंत उखाड़कर फेंक देने चाहिए, इसके बजाय, 'देखते हैं क्या हो रहा है, सिर्फ विचार ही आया है न!' वकील ऐसा बताता है।

दादाश्री : तब तो आराम से शादी करवा देगा। तुझे तो हर्ज ही नहीं है, शादी का सिग्नल पड़ गया!

प्रश्नकर्ता : नहीं चाहिए ऐसा, लेकिन मन में ऐसा होता है कि दादा ऐसा क्यों कहते होंगे कि 'विचारों को उखाड़कर तुरंत फेंक देना चाहिए?'

दादाश्री : वह तेरा माल है न!

बढ़ता है विषय की लिंक से वह

कहीं भी बैठे हों या फिर नौकरी करते हुए फुरसत मिले तब भी यही करते रहो। ऑफिस में बैठे हों और फुरसत मिले,

तब भी निश्चय मज़बूत कर लेना, थोड़ी देर। दो शब्द पढ़ ले तो क्या टाइम लगेगा उसमें? इससे लिंक टूट जाएगी सारी। अंदर जो लिंक चल रही होंगी न, वे टूट जाएँगी सारी। तहस-नहस हो जाएँगी। लिंक तहस-नहस करनी हैं। लिंकों से विषय बढ़ता है।

अंदर आनंद होता है न, सामायिक प्रतिक्रमण करते हो उस समय? जैसे कि मुक्त हों, ऐसा लगता है न?

प्रश्नकर्ता : यह चित्त जो भटक रहा होता था, मन जो विचार कर रहा होता था, वह सब बंद हो जाता है, वहाँ सभी चीज़ें ठहर जाती हैं।

दादाश्री : सबकुछ ठहर जाएगा। ऐसा है न, आप और कुछ सेट कर दो तो विषय तो दूर खड़ा रह जाएगा। ऐसा है बेचारा। वह तो घबराता है बेचारा। जैसे कि, अगर यहाँ अच्छे लोग खड़े हों, तो उस समय हल्की जाति के लोग खड़े नहीं रहेंगे, उसी तरह।

प्रश्नकर्ता : यह आप जब से, दो दिन से बोले हो न, तो यों ऐसे पराक्रम जैसा खड़ा हो गया है कि यों जितनी पोलम्पोल चल रही थी, वह सब बंद हो गई है।

दादाश्री : हाँ, बंद हो जाती है। यह तो दादा के ये शब्द, सारी पोलम्पोल सबकुछ बंद हो जाती है। आप ध्यान रखो तो बहुत अच्छा है। अंदर सतर्क और इसमें भी सतर्क, लेकिन उतना ही यदि इसमें सतर्क रहे तो इसमें फर्स्ट क्लास हो जाएगा। वह कुशलता है न एक प्रकार की! लेकिन कहे अनुसार करोगे तो। बार-बार मौका नहीं मिलेगा ऐसा। यह आखिरी मौका है। उठा लो फायदा इस आखिरी मौके का।

कला से काम निकालो

कुछ बदलाव होने लगे तो कागज़ पर लिखकर मुझे चिट्ठी

भेज देना। अन्य सभी गलतियाँ चला लेंगे। अन्य सभी तरह की गलतियाँ नहीं चलाएँ तो इंसान परेशानी में पड़ जाए, वह परेशान हो जाएगा बेचारा। खाने-पीने की ही तक़लीफ है। फिर अगर खाना नहीं खाने दें कि यह नहीं खा सकते तो वह क्या करे? क्या कुएँ में गिर जाए? अपने यहाँ सारी छूट दी है। खाना भाई, आइस्क्रीम भी खाना। कुछ भी करके तेरे मन को मनाना।

प्रश्नकर्ता : मन को इस तरह मनाने से पूर्ण हो जाएगा?

दादाश्री : नहीं, पूर्ण नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : तो?

दादाश्री : अपना दिन बीत जाएगा न अभी।

प्रश्नकर्ता : यानी सिर्फ संतोष के लिए। लेकिन आगे जाकर वापस करना तो पड़ेगा न?

दादाश्री : वह तो फिर से ब्रेक लगाना वापस। ज़रा अभी का पल गुज़र गया। उसके बाद हथियार लेकर उसके पीछे पड़ जाना। अभी समय निकाल दो। टेढ़ा पुलिस वाला मिल जाए तो 'साहब, सलाम' करके एकबार खिसक जाना और बाद में उसे देख सकते हैं। बाद में उसके पीछे पड़ेंगे। लेकिन अगर अभी डाँटेंगे तो नहीं चलेगा। अभी हम हाथ लग गए, पकड़े गए तो फिर? कला से काम लेना पड़ेगा और मन तो जड़ है। वह जड़ है, इसलिए किसी की सुनता नहीं है न, हम कला से काम लेंगे तो ठिकाने पर आ जाएगा!

वापस ऐसा मौका नहीं मिलेगा और सरल तरीके से, कम मेहनत में और वापस आनंदपूर्वक। क्रमिक मार्ग के वे तप करना, वे सभी कठोर तप। सहन ही नहीं हो सकते, देखते ही घिन आए।

अपना ज्ञान है इसलिए हमें तो परेशानी है ही नहीं। ज्ञान

तो मन को देखता है कि मन क्या कर रहा है और क्या नहीं? ऐसा सब देख सकता है। बाहर क्रमिक मार्ग में मन की परेशानी और (मीठी) गोलियाँ खिलानी पड़ती हैं। फिर भी, हमें भी यदि कभी खिलानी पड़ें तो खिला देना।

इसलिए हम कहते हैं न कि गोलियाँ खिलाकर काम ले लेना। एक ही चीज़ नहीं जँचती, उसे ऐसा नहीं है। उसे तो सभी बातें, जिसमें टेस्ट आए, उसमें जँचता है!

[2.5]
नहीं चलना चाहिए, मन के कहे अनुसार

ज्ञान से करो स्वच्छ, मन को

दादाश्री : मन बिगड़ता है अभी भी?

प्रश्नकर्ता : बिगड़ता है।

दादाश्री : तेरी दुकान में माल होगा, तब तक बिगड़ेगा लेकिन अब जो माल है, तो फिर उसे धो देना। धोकर साफ करते हो या नहीं करते?

प्रश्नकर्ता : हाँ, करता हूँ।

दादाश्री : यानी स्वच्छ जीवन। मन भी नहीं बिगड़े कभी भी! देह तो बिगड़े ही नहीं लेकिन मन भी नहीं बिगड़े और बिगड़ जाए तो तुरंत ही धोकर साफ करके, इस्त्री करके एक तरफ रख देना।

जहाँ ज्ञान है, वहाँ संसार का एक भी विचार नहीं आना चाहिए। हमें संसार का एक भी विचार नहीं आता। और स्त्री का, ये सभी स्त्रियाँ बैठी हैं, लेकिन हमें स्त्री से संबंधित विचार तक नहीं आते। अर्थात् सब खाली हो जाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : हो जाना चाहिए या कर देना चाहिए?

दादाश्री : हो जाना चाहिए। यह मार्ग ऐसा है कि आपको खाली नहीं करना पड़ेगा। अपने आप खाली होता रहेगा। हमारी आज्ञा में रहोगे तो खाली होता रहेगा।

वर्ना मन हो जाए ढीला

प्रश्नकर्ता : हमने नियम लिया हो कि दो ही रोटियाँ खानी हैं। उसके बाद मन के कहे अनुसार चलें तो वह नियम टूट गया, ऐसा हुआ न?

दादाश्री : मन के कहे अनुसार चलना ही नहीं चाहिए। मन का कहा यदि अपने ज्ञान के अनुसार चल रहा हो, तो उतना एडजस्ट कर सकते हैं। अपने ज्ञान के विरुद्ध चले तो बंद कर देना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : अत: मन के कहे अनुसार चले तो नियम टूट जाता है, ऐसा है न?

दादाश्री : रहा ही कहाँ तब नियम? किसी की बात में अपनी होशियारी लगाएँ तो। लेकिन हमें तो ज्ञान के अनुसार चलना है। फिर भी, मन भी नियम वाला है। इसी वजह से तो इस जगत् के लोग बहुत अच्छी तरह से रह सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : अज्ञानता हो, तब भी अगर नियम तय करे तो एक्ज़ेक्ट उसी तरह चल सकता है न?

दादाश्री : वह तय करे कि मुझे नियम से ही चलना है, तब फिर नियम से ही चलेगा। फिर बुद्धि दखल करे तो वैसा ही हो जाता है। गाड़ी नियम में नहीं हो तो क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : हाँ। व्यवहार उलझ जाएगा सारा।

दादाश्री : हमारा मन बहुत कहता है कि यह खाओ, यह खाओ, लेकिन नहीं। वर्ना वश में नहीं रहेगा। देर ही नहीं लगेगी न। लेकिन जिसका हावी हो गया उसे पूरे दिन खिटपिट रहती है। दयनीय स्थिति! 'तू' तो चंद्रेश को रुलाने वाला आदमी है। 'तू' कोई ऐसा-वैसा आदमी है? और फिर यह मन तो चंद्रेश का है, तुझे क्या लेना देना? अब तू है शुद्धात्मा।

प्रश्नकर्ता : बिल्कुल।

दादाश्री : यह मन तो चंद्रेश का है। तुझे उस मन के कहे अनुसार नहीं चलना है। जो मन के कहे अनुसार चले न, तो उसका ब्रह्मचर्य नहीं टिकेगा, कुछ भी नहीं टिकेगा। बल्कि अब्रह्मचर्य हो जाएगा। मन का और हमारा क्या लेनादेना?

अब किसी के गहने पड़े हुए हों और मन कहे कि कोई नहीं है, ले लो न! लेकिन हमें समझना चाहिए। खुद का चलन नहीं रहे, तो मन चढ़ बैठता है।

प्रश्नकर्ता : खुद को समझ में ज़रूर आता है कि ये दो घंटे व्यर्थ चले गए।

दादाश्री : चले गए, वह अलग चीज़ है। वह तो अजागृति के कारण। लेकिन फिर भी मन चढ़ नहीं बैठेगा।

विरोधी के पक्षकार?

प्रश्नकर्ता : एक बार जब हम सत्संग में से उठकर बाहर चाय पीने गए थे, तब आपने कहा था कि बाकी सभी चीज़ों में ऐसे छूट रखना लेकिन सिर्फ ब्रह्मचर्य के बारे में ही मन की मत सुनना।

दादाश्री : और बाकी बातों में सुनोगे? यदि तुम्हें टेस्ट आता हो तो मानो न! मुझे क्या आपत्ति है? यह तो, अगर ब्रह्मचर्य के बारे में सुनोगे, तब भी मुझे आपत्ति नहीं।

यह तो, आप ब्रह्मचर्य में स्ट्रोंग (दृढ़) रहो, इसलिए कहना चाहता हूँ। ध्येय को नुकसान न पहुँचाए, इस हेतु से ऐसा कहा था। उसे लेकर अगर तुम ऐसा कहो कि 'बाकी सब चीज़ों में आराम से मन की सुनना।' तो तुम्हारा काम हो गया! क्या पाओगे इससे? कैसी वकालत कर रहे हो?

प्रश्नकर्ता : खुद की लॉ-बुक(कानूनी किताब) में ले जाते हैं।

दादाश्री : लॉ-बुक तो वही की वही। ये पक्षकार कैसे इंसान हैं? विरोधी के पक्षकार! अब सयाने हो जाओ। वर्ना चलेगा नहीं इस दुनिया में।

मन चलाए, मंडप तक...

देखो न, चार सौ साल पहले कबीर जी ने कहा है, कितने सयाने इंसान! कहते हैं, 'मन का चलता तन चले, ताका सर्वस्व जाए।' सयाने नहीं थे कबीरजी? और यह तो मन के कहे अनुसार चलते रहते हैं। अगर मन कहे कि 'इससे शादी करो।' तो शादी कर लोगे?

प्रश्नकर्ता : नहीं। ऐसा नहीं होगा।

दादाश्री : अभी तो वह बोलेगा। ऐसा बोलेगा, उस समय क्या करोगे तुम? ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करना हो तो स्ट्रोंग रहना पड़ेगा। मन तो ऐसा भी कहेगा और तुमसे भी कहलवाएगा। इसीलिए मैं कह रहा था न कि 'कल सुबह शायद तुम भाग भी जाओगे।' उसका क्या कारण है? मन के कहे अनुसार चलने वाले का भरोसा ही क्या? क्योंकि तुम्हारा खुद का चलन नहीं है। खुद के चलन वाला ऐसा नहीं करेगा।

इसलिए मैं तुम से कह रहा था कि अंदर मन कहेगा, 'अभी तो, यह लड़की अच्छी है, और अब हर्ज नहीं है। दादाश्री का आत्मज्ञान मिल गया है, हमें। अब कुछ बाकी नहीं रहा। उसने भी शादी कर ली है, अब पुरावे (एविडेन्स) में खास कुछ कमी नहीं है। चलो न, अब इसमें कहाँ गलती हो गई वापस?! ऊपर से फादर का आशीर्वाद बरसेगा।' अंदर ऐसा बताएगा और अगर तू बहक गया तो वह फजीहत करेगा। हम तो तुम सब से कहते हैं कि 'भाग जाओगे।' तब तू कहता है, 'भागकर हम कहाँ जाएँगे?' लेकिन किस आधार पर तुम भागे बिना नहीं रहोगे? क्योंकि तुम मन के कहे अनुसार चलते हो।

प्रश्नकर्ता : अब हम यहाँ से कहीं भी नहीं भागेंगे।

दादाश्री : अरे, लेकिन मन के कहे अनुसार चलने वाला इंसान यहाँ से नहीं जाएगा, वह किस गारन्टी के आधार पर? अरे, लो, मैं ज़रा दो दिन तक तेरा पानी हिलाता हूँ। अरे! छपछपाऊँ न, तो परसों ही तू चला जाएगा! यह तो तुझे पता ही नहीं है। तुम लोगों के मन का क्या ठिकाना? बिल्कुल बिना ठिकाने का मन। खुद के सेन्टर में भी नहीं खड़ा है। मन के कहे अनुसार ही तो चल रहे हो अभी भी। यह 'नहीं भागेंगे, नहीं भागेंगे', वह सिर्फ कहने के लिए ही लेकिन अभी तो न जाने क्या करोगे? स्ट्रोंग इंसान तो कौन कहलाता है कि जो किसी की भी नहीं माने। मन की या बुद्धि की, या अहंकार की या फिर कोई भगवान आ जाएँ, तो उनकी भी नहीं माने। तुम लोगों की तो बिसात ही क्या? तू मुझसे कह रहा था कि, 'स्मशान में जाऊँ फिर भी मन आपत्ति नहीं उठाता।' लेकिन और कहीं मन आपत्ति उठाए कि वहाँ नहीं जाना है, तो नहीं जाता?

प्रश्नकर्ता : मैंने यहाँ दादा के पास आकर जो निश्चय किया है, उस बारे में मन की कभी नहीं सुनी है।

दादाश्री : ऐसा? मन सीधा बोलता भी है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, सीधा बोलता है।

दादाश्री : उल्टा नहीं बोला है, इसलिए। थोड़ा-बहुत उल्टा बोलेगा, उसे तुम नहीं सुनोगे, लेकिन अगर सात दिन तक तुम्हें छोड़े नहीं और वापस अंदर कहे, 'यह ज्ञान वगैरह मिल गया है, अब कोई हर्ज नहीं है। लोगों में अपनी बहुत वैल्यू है। ऐसा है, वैसा है।' सब समझा-बुझाकर चलाएगा तुम्हें!

प्रश्नकर्ता : ऐसा नहीं होगा अब।

दादाश्री : बाद में तुम्हें बहुत नुकसान नहीं हो, इसलिए

हम सावधान करके कहते है कि इसमें 'मन का चलता' छोड़ दो चुपचाप, अपने स्वतंत्र निश्चय से जियों। मन की हमें ज़रूरत हो तो लेना और ज़रूरत नहीं हो तो छोड़ दो। एक ओर रख दो उसे। लेकिन यह मन तो पंद्रह-पंद्रह दिनों तक घुमाकर फिर शादी करवा देता है। बड़े-बड़े संत भी घबरा चुके हैं, तो तुम लोगों की तो क्या बिसात?

ध्येय का ही निश्चय

ब्रह्मचारी बनने का यह निश्चय तो तेरा है! लेकिन यह तो तू मन के कहे अनुसार तो सबकुछ कर रहा है तो फिर यह सब तेरा है ही कहाँ? वह तो तेरे 'मन' ने कहा था, उस हिसाब से शादी करने में मज़ा नहीं है। तो ऐसा सब तेरे 'मन' ने तुझे कहा था और तूने एक्सेप्ट कर लिया।

प्रश्नकर्ता : अब निश्चय हो गया है न लेकिन?

दादाश्री : अब निश्चय तेरा है। यदि उसे तू तय करे कि अब यह है मेरा निश्चय। बाद में मन से कह देना कि, 'अब अगर तू उल्टा करेगा, तो तेरी बात तू जाने!' अब तो इसे अपने सिद्धांत के रूप में स्वीकार करते हैं, तो अपना ही कहलाएगा, वह निश्चय।

प्रश्नकर्ता : सिद्धांत के रूप में स्वीकार करने के बाद 'अपना', वर्ना 'मन' का?

दादाश्री : तो और किसका? उसी का है। 'अपना' कहाँ है यहाँ इस जायदाद में? जो अपनी जायदाद थी, उसे दबोच लिया है, और उसमें भी अपने किराए के मकान में रहता है। उसमें भी वह चोरी करता है न ऊपर से?

किसी के छत पर से खपरैल का टुकड़ा गिरे और लग जाए, फिर भी कुछ नहीं बोलते हो। क्योंकि वहाँ मन कहेगा कि 'किसे कहूँ अब?' वह तो जैसा उसका मन सिखाता है, उसी

अनुसार वह बोलता है। अपने पास अभी जो सिद्धांत है, मन उसी के अनुसार चलना चाहिए। मन का कहा नहीं मानना है।

सामायिक में चलन, मन का

प्रश्नकर्ता : सामायिक में बैठना अच्छा नहीं लगता। गुल्ली मारने का मन करता है।

दादाश्री : मन भले ही चिल्लाता रहे लेकिन तुझे क्या लेना देना? तेरे सिद्धांत से विरुद्ध चल रहा है? चल रहा है, तो चलन उसी का है अभी भी। वह मना करे तो तुम्हें क्या? वह तो सामायिक ही नहीं करने देगा।

प्रश्नकर्ता : पहले शुरूआत में मैं एक-दो साल रेग्युलर सामायिक करता था। वह मुझे अच्छा लगता था, तब।

दादाश्री : तो तू, 'पसंद-नापसंद' वही मार्ग पर है न? ऊपर से कह रहा है कि मुझे अच्छा लगता था! मन की सुने वह इंसान ही नहीं कहलाएगा, वह मशीनरी नहीं कहलाएगा तो और क्या कहलाएगा? खुद का चलन नहीं है? तुम लोग पुरुष बने हो न?

मन अगर सत्संग में आने के लिए मना करे तो क्या करोगे? वहाँ मन की मानते हो? ऐसे मानोगे तो फिर भटक जाओगे न! रहा ही क्या फिर? जानवर भी उसकी सुनते हैं और तुम भी उसकी सुनते हो। कई बार मन के विरुद्ध करते हो या नहीं?

प्रश्नकर्ता : कई बार।

दादाश्री : अच्छा है। जो मन के चलाने से चले, वह तो मिकेनिकल कहलाता है। अंदर पेट्रोल भर दे तो मशीन चलती रहती है। क्या तुझे भी ऐसा होता है? तब तो तुझे शादी नहीं करनी होगी, फिर भी शादी करवा देगा!

प्रश्नकर्ता : इसमें ऐसा नहीं होगा।

दादाश्री : कैसे इंसान हो? अपनी इच्छा अनुसार नहीं चलने दे। तो फिर खुद का चलन ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : सामायिक करने की इच्छा इतनी स्ट्रोंग नहीं है।

दादाश्री : ओहो, तब तो यह सारा धर्म करने की इच्छा ही नहीं है। इसमें भी स्ट्रोंग नहीं है न फिर!

सामायिक मतलब अड़तालीस मिनट की चीज़ है। अड़तालीस मिनट तक ठिकाने नहीं बैठे रह सकते, तो इस ब्रह्मचर्य का पालन कैसे कर सकेगा? उसके बजाय तो चुपचाप शादी कर ले तो अच्छा।

यह ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, तो उसमें ब्रह्मचर्य यानी खुद का निश्चयबल। कोई डिगा न सके, ऐसा। जो किसी के कहे अनुसार चले, वह ब्रह्मचर्यपालन कैसे कर सकेगा?

ब्रह्मचर्य वाला इंसान तो कैसा होता है? अरे! स्ट्रोंग पुरुष! उच्च मनोबल वाला! वे कहीं ऐसे होते होंगे? इसीलिए तो मैं बार-बार कहता हूँ कि, 'तुम चले जाओगे, शादी कर लोगे।' तब तुम कहते हो कि 'आप ऐसे आशीर्वाद मत दीजिए!' मैंने कहा, 'मैं आशीर्वाद नहीं दे रहा हूँ। तुम्हारा भेस (वेष) दिखा रहा हूँ!' अभी से यदि सावधान नहीं हो जाओगे और खुद के हाथ में लगाम नहीं ले लोगे तो खत्म! गाड़ी कहाँ ले जा रहे हो? तब कहता है, 'बैल जहाँ ले जाए वहाँ!' बैल जिस दिशा में जाए, उस दिशा में गाड़ी जाने देगा कोई? बैल इस ओर जा रहा हो तो मार-ठोककर, कैसे भी करके, इस ओर मोड़ लेता है। खुद के तय किए रास्ते पर ही ले जाएगा न?

प्रश्नकर्ता : तय किए रास्ते पर ही ले जाएगा।

दादाश्री : जबकि तुम लोग तो बैल की इच्छानुसार गाड़ी चलाते हो। 'वह इस ओर जा रहा है तो मैं क्या करूँ?' कहते हैं! उससे अच्छा तो शादी कर लो न शांति से! गाड़ी इस ओर

जा रही हो तो अर्थ ही नहीं है न! निश्चयबल है नहीं। खुद का कुछ है नहीं। खुद की कोई काबिलियत है नहीं। तुझे क्या लगता है? गाड़ी जाने देनी चाहिए?

प्रश्नकर्ता : नहीं जाने देनी चाहिए।

दादाश्री : तो क्यों ये गाड़ियाँ जा रही हैं?

प्रश्नकर्ता : आप बताते हैं न तब पता चलता है कि यह मन के कहे अनुसार किया था। वर्ना पता ही नहीं चलता।

दादाश्री : हाँ, लेकिन पता चलने के बाद समझ जाएगा या नहीं?

प्रश्नकर्ता : समझ जाता है।

दादाश्री : अब वापस परसों आप ऐसा कहोगे कि, 'मुझे भीतर से ऐसा लगा, इसलिए उठ गया सामायिक करते करते!'

प्रश्नकर्ता : सामायिक करने बैठते हैं तो मज़ा नहीं आता।

दादाश्री : मज़ा नहीं आ रहा हो तो उसमें हर्ज नहीं। लेकिन मन के कहे अनुसार करे तो, वह नहीं चला सकते।

प्रश्नकर्ता : लेकिन मज़ा नहीं आता, इसलिए ऐसा लगता है कि अब नहीं बैठना है।

दादाश्री : लेकिन यों 'मन के कहे अनुसार चलना है' ऐसी इच्छा नहीं है न तेरी?

प्रश्नकर्ता : ऐसा तो अब पता चला न!

दादाश्री : मज़ा नहीं आता, वह अलग बात है। मज़ा तो, हम समझते हैं कि इसे इन्टरेस्ट (रस) कहीं और है, इसमें इन्टरेस्ट कम है। इन्टरेस्ट तो हम ला देंगे।

प्रश्नकर्ता : मज़ा नहीं आता इसलिए मन बताता है कि 'अब जाना है।'

दादाश्री : मैं मन की वह बात नहीं कर रहा हूँ। मज़े का और मन का कोई लेना देना नहीं है।

प्रश्नकर्ता : मज़ा नहीं आता तब फिर ऐसा लगता है कि सामायिक में नहीं बैठना है।

दादाश्री : मज़ा क्यों नहीं आता, वह मैं जानता हूँ।

प्रश्नकर्ता : मुझे सामायिक में कुछ दिखता ही नहीं है।

दादाश्री : कैसे दिखेगा लेकिन, जहाँ ये सारी गड़बड़ चल रही हो?

प्रश्नकर्ता : जब खुद को पता चलेगा कि ये सब गड़बड़ियाँ की हैं, उसके बाद दिखेगा न?

दादाश्री : नहीं, लेकिन पहले तो खुद को वहाँ तक समझ पहुँची ही नहीं है न! जब तक उसे वह समझ में नहीं आएगा, तब तक दिखेगा कैसे? ये क्या कहना चाहते हैं, वही समझ नहीं पहुँची न? उसमें दृष्टांत दे रहा हूँ, गाड़ी का दृष्टांत बताया, मिकेनिकल का दृष्टांत बताया, लेकिन एक भी समझ पहुँच नहीं रही है अंदर। अब कोई क्या करे?

प्रश्नकर्ता : फिल्म की तरह दिखना चाहिए न?

दादाश्री : कैसे देखेगा लेकिन? आप देखने वाले नहीं हो, गाड़ी के मालिक नहीं हो न? मालिक बनोगे तो दिखेगा। अभी तो आप बैल के कहे अनुसार चल रहे हो। इसलिए उसे कोई फिल्म नहीं दिखती। खुद के निश्चय से चले, उसे दिखता है सबकुछ।

प्रश्नकर्ता : सामायिक करने में इन्टरेस्ट नहीं है, इसलिए ऐसा होता है न?

दादाश्री : इन्टरेस्ट नहीं हो, उसे चला लेंगे, इसे नहीं चला सकते। इसके जैसी मूर्खता कोई करता होगा? तो वह क्या देखकर करता होगा?

प्रश्नकर्ता : 'मैं ऐसा कर रहा हूँ' ऐसा अभी भी पता नहीं चल रहा है, समझ में नहीं आ रहा।

दादाश्री : समझ में ही नहीं आ रहा? नहीं? कब आएगा समझ में? दो-तीन जन्मों के बाद समझेगा? शादी कर लेगा तो वह समझा देगी। 'समझ में नहीं आ रहा है,' कह रहा है?

यह बैल गाड़ी का दृष्टांत बताया, फिर निश्चयबल की बात की। जो अपना तय किया हुआ, नहीं करने दे, क्या उसकी सुननी चाहिए? माँ-बाप की नहीं सुनते और मन की कीमत ज़्यादा मानते हैं, ऐसा?

प्रश्नकर्ता : लेकिन मुझे सामायिक में कुछ दिखता ही नहीं है।

दादाश्री : क्या देखना होता है, जो दिखेगा?

प्रश्नकर्ता : आप कहते हैं न कि 'चार साल तक का दिखता है सारा।'

दादाश्री : वह ऐसे नहीं दिखता। वह तो, गहरा उतरने को कहते हैं, तब दिखता है।

जो मन के कहे अनुसार चलें, वे सब बैलगाड़ी जैसे ही हैं न?! फिर दिखेगा कैसे? 'देखने वाला' अलग होना चाहिए, खुद के निश्चयबल वाला!

अभी तक मन का कहा ही किया है। उसी की वजह से यह सारा आवरण आया है।

प्रश्नकर्ता : सामायिक कर रहे हों और मन सामायिक करने के लिए मना करे, तब क्या वह उदयकर्म है?

दादाश्री : उदयकर्म कब कहलाता है कि निश्चय होने के बावजूद निश्चय को टिकने नहीं दे, तब उदयकर्म कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : विचार उदयकर्म के अधीन तो नहीं फूटते हैं न?

दादाश्री : लेकिन अगर अपना निश्चय हो तो सामायिक करना। निश्चय नहीं हो, भीतर प्रकृति को अनुकूल नहीं आता हो तो मत करना।

बाकी विचार, वे तो उदयकर्म के अधीन आते हैं। 'उन्हें हमें देखना है', वह अपने पुरुषार्थ की बात है। विचारों को देखें तो, वहीं पर वह उदयकर्म खत्म हो जाता है। देखते ही खत्म! उनमें परिणमन हो जाए, (उस रूप हो जाएँ) तब तो उदयकर्म शुरू हो जाएगा!

ध्येय अनुसार चलाओ...

अभी तो छोटी बातों में, एक तय कर लिया है कि मन का नहीं सुनना मतलब जितना काम का हो उतना सुनना है और काम का नहीं हो उसे नहीं। गाड़ी अपने तय किए रास्ते पर चल रही हो तो हमें चलने देना है और बाद में यदि यों घूम जाए तो हमें ध्येय अनुसार चलाना है। हर एक चीज़ में ऐसा करना होता है। यह तो कहेगा, 'यह इस ओर दौड़ रही है। अब मैं क्या करूँ?' अब उस बैलगाड़ी को कोई घर में घुसने देगा?

प्रश्नकर्ता : नहीं। लेकिन अंदर जो अच्छी लगती हो, वह चीज़ नहीं करनी है?

दादाश्री : ऐसा करना किसे अच्छा लगता होगा? मैं क्या नाश्ता नहीं करता? लेकिन उसे ऐसा रखना है कि नापसंद है।

प्रश्नकर्ता : हम तो ऐसा रखते हैं कि सुबह उठकर आपके पास आना है। अन्य कोई निश्चय नहीं। कुछ बातों में मन का कहा सुनते हैं। जो व्यवहार मान्य हो, वैसा।

दादाश्री : अपने कहे अनुसार चलना। अपनी ज़रूरत हो, अपना ध्येय हो, उस अनुसार चलना। हम बोरसद जाने निकले, फिर आधा मील चले, फिर मन कहे, कि 'आज रहने दो न!' तब वापस चला जाता है यह तो। तो वहाँ पर वापस नहीं जाना है। लोग भी क्या कहेंगे? यह बेअक्ल है या क्या है? जाकर

वापस आ गए। तुम्हारा ठिकाना नहीं है क्या? लोग ऐसा कहेंगे या नहीं कहेंगे?

मोक्ष में जाने का निश्चय है क्या तेरा? उसमें कुछ बीच में आए तो? मन अंदर शोर मचा दे तो?

प्रश्नकर्ता : फिर भी निश्चय नहीं डिगेगा।

दादाश्री : वह इंसान कहलाएगा। इन सब का क्या करना है? तुझे ये सभी बातें समझ में आती है?

प्रश्नकर्ता : थोड़ा थोड़ा समझ में आ रहा है। मुझे तो ऐसा ही लगता है कि मेरा निश्चय है।

दादाश्री : कैसा निश्चय? मन के कहे अनुसार तो चलता है! निश्चय वाले का मन ऐसा होता होगा? मन होता है, लेकिन हेल्पिंग होता है, सिर्फ खुद की ज़रूरत जितना ही। जैसे कि जो बैल होता है, वह खुद के मालिक के कहे अनुसार चलता है न! लेकिन हमें इधर जाना हो और वे उधर जा रहा हों तो?

भले ही शोर मचाएँ

प्रश्नकर्ता : मन को इन्टरेस्ट नहीं आए, तो वह शोर मचाएगा न?

दादाश्री : भले ही शोर मचाए! सभी के मन ऐसे ही शोर मचाते हैं। मन तो शोर मचाएगा। वह तो टाइम हो जाए तब शोर मचाता है। शोर मचाए, उसमें क्या दावा करेगा? थोड़ी देर बाद फिर कुछ भी नहीं, जब उसकी मुद्दत पूरी हो जाए तब। फिर पूरे दिन शोर नहीं मचाएगा। यदि उसमें तू फँस गया तो फँसा। वर्ना अगर नहीं फँसा तो कुछ भी नहीं, तू स्ट्रोंग रह न!

प्रश्नकर्ता : कभी-कभी स्ट्रोंग रह सकते हैं।

दादाश्री : तेरा मन तो क्या कहेगा, 'यह पढ़ाई भी पूरी नहीं करनी है।' ऐसा कहे तो क्या वैसा करेगा?

प्रश्नकर्ता : दादा कहेंगे, वैसा करूँगा।

दादाश्री : क्या हम तेरा अहित करेंगे? तुम लोग अपना अहित कर सकते हो लेकिन हम से ऐसा नहीं होगा न! हमारे टच में आए इसलिए आपका हित करने के लिए ही हम सभी दवाई दे देते हैं। फिर भी अगर मन नहीं सुधरे तो फिर वह उसका हिसाब। सभी तरह की दवाईयाँ देते हैं और दवाईयाँ तो ऐसी देते हैं कि सबकुछ ठीक हो जाए। फिर भी यदि खुद टेढ़ा हो तो पीएगा ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : नाक दबाकर मुँह में डाल देना।

दादाश्री : नाक कौन दबाएगा? यह नाक दबाने से हो जाए, ऐसा नहीं है।

तू नहीं कह रहा था कि मुझे स्कूल जाना अच्छा नहीं लगता? निश्चय तो होना ही चाहिए न कि मुझे स्कूल पूरा करना है। फिर ऐसा करना है, वैसा करना है। फिर हमेशा के लिए सब के साथ संग में रहना है। ब्रह्मचर्य पालन करना है। ऐसी अपनी योजना होनी चाहिए। यह तो, बिना योजना के जीवन जीने का क्या अर्थ है?

प्रश्नकर्ता : कॉलेज में जाना तो मुझे भी अच्छा नहीं लगता।

दादाश्री : कॉलेज में जाना ही पड़ेगा न! सभी के मन का समाधान करना ही चाहिए न? फादर-मदर, उनके मन का समाधान करके मोक्ष में जाना है। वर्ना तू कैसे मोक्ष जा पाएगा? यों बलवा करके घर में से भाग जाओगे तो क्या पूरा हो जाएगा?! तो क्या मोक्ष हो जाएगा? यानी *तरछोड़* (तिरस्कार सहित दुत्कारना) नहीं लगनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : इस ब्रह्मचर्य के बारे में कर्म का सिद्धांत लागू होता है?

दादाश्री : सिर्फ ब्रह्मचर्य ही ऐसा है कि आप निभा सकते हो। किसी ने तय किया हो कि शादी नहीं करनी है, तो निभा सकोगे। अपना ज्ञान ऐसा है, इसलिए निभा सकते हैं। अन्य कर्म तो छोड़ेंगे ही नहीं न?

प्रश्नकर्ता : यह शादी वाला कर्म हमारे पीछे नहीं पड़ेगा?

दादाश्री : बहुत गाढ़ होगा तो पीछे पड़ेगा। और यदि वह गाढ़ होगा तो पहले से ही पता चल जाएगा। उसकी गंध आ जाएगी। लेकिन वह तो ज्ञान से राह पर आ जाता है। अपना यह ज्ञान ऐसा है कि इस कर्म को खत्म कर सकता है। लेकिन ये दूसरे कर्म तो खत्म नहीं हो सकते न!

ये तो, जैसे छोटे-छोटे बच्चों ने तय किया हो न कि 'हमें शादी नहीं करनी है,' उस तरह की बातें हैं। कितना तो समझे बगैर हाँकते रहते हैं। शादी नहीं करोगे, उसमें हर्ज नहीं। 'व्यवस्थित' में हो और शादी नहीं करोगे तो हमें हर्ज नहीं है। लेकिन 'व्यवस्थित' में नहीं हो और बाद में बड़ी उम्र में शोर मचाए कि मैं शादी किए बिना रह गया, तो कौन कन्या देगा? जिसके व्यवस्थित में ब्रह्मचर्य है वह ब्रह्मचर्य पालन कर सकता है, क्योंकि वह मन की मानता ही नहीं है। बिल्कुल भी नहीं न! मन की कोई भी बात नहीं माननी चाहिए। अपने अभिप्राय की ही मानना अगर मन का ज़रा सा भी माना तो फिर अगली बार वापस चढ़ बैठेगा।

प्रश्नकर्ता : मन बताए कि 'सत्संग में बैठना है,' तो?

दादाश्री : अपना अभिप्राय वही रहे तो वैसा करना। अपने अभिप्राय में हो तो करना। अभिप्राय नहीं हो तो नहीं।

प्रश्नकर्ता : मेरा मन ऐसा सब बताता है कि सत्संग में बैठना है, दादा के पास जाना है।

दादाश्री : मेरा कहना है कि यदि मन अपने अभिप्राय के अनुसार चल रहा हो तो हमें एक्सेप्ट है।

प्रश्नकर्ता : मुझे अंदर ऐसा तो है ही कि ज्ञानी पुरुष के सत्संग में ही पड़े रहना है।

दादाश्री : वह सब ठीक है। मन ऐसे अभिप्राय वाला हो जाए तो अच्छा है, लेकिन मन जब विरोध करेगा, उस समय तुझे डूबा देगा।

नहीं चलेगा वेवरिंग माइन्ड इसमें...

अपना आज का ज्ञान ब्रह्मचर्य पालन करने का हो और पिछला ज्ञान ब्रह्मचर्य पालन में सहमत रहता है। छः महीने बाद वापस नया तरह का बोलता है कि 'शादी करनी चाहिए'। इस प्रकार, मन की स्थिति कभी भी एक समान नहीं रहती, डाँवाडोल होती है, विरोधाभास वाली होती है।

प्रश्नकर्ता : छः महीने बाद मन शादी का बताता है, अलग-अलग बताता है। तो यदि ऐसा कुछ वक्त ज्ञान में बीत जाए तो फिर मन एक जैसा बताने लगेगा न? फिर उल्टा-सीधा बताना बंद नहीं हो जाएगा?

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं होता। बूढ़ा हो जाए फिर भी शादी करने का कह सकता है! खुद मन से कहता भी है कि 'अब उम्र हो गई, चुप बैठ!' अतः मन का ठिकाना नहीं है। ऐसा समझकर मन में तन्मयाकार होना ही नहीं है। अपने अभिप्राय को माफिक आए, उतना मन एक्सेप्टेड।

जहाँ सिद्धांत है ब्रह्मचर्य का...

प्रश्नकर्ता : इसमें हम सिद्धांत किसे कहेंगे?

दादाश्री : हमने जो तय किया हो कि भई, हमें ब्रह्मचर्य पालन करना है। तो फिर क्या मन की सुननी चाहिए?

प्रश्नकर्ता : फिर उस बारे में सुननी ही नहीं है।

दादाश्री : 'सुननी ही नहीं है,' यह तो बहुत समझदारी की बात कर रहा है लेकिन अगर छः महीने तक लगातार ऐसा कहे, तब तू क्या करेगा वहाँ? जहाँ छोड़े ही नहीं, वहाँ? अब, वह जब ऐसी बातें रखेगा, तब देह भी नहीं छोड़ेगी। देह भी उसकी ओर मुड़ जाएगी। मतलब सभी एक ओर हो जाएँगे। वे सब तुझे फेंक देंगे। इसलिए कह ही देना, 'इतनी चीज़ें हमारे नियम से बाहर है, उनमें तुझे कुछ भी नहीं करना है।'

प्रश्नकर्ता : तो फिर वहाँ क्या स्टेप कैसे लें?

दादाश्री : स्ट्रोंग रहना। मैं कहता हूँ कि यदि ऐसा निकले तो आप छोटी से छोटी बात के लिए भी स्ट्रोंग रहना। ज़रा सी भी उसकी मान लोगे तो वह आपको फेंक देगा, इसलिए उसे कह देना कि 'इतनी बात में तुझे हमारे नियम से बाहर बिल्कुल भी अलग नहीं चलना है। छोटी से छोटी बात में भी जागृति रखो वर्ना फिर वह ढीला पड़ जाएगा।

प्रश्नकर्ता : फिर अपने दूसरे सिद्धांत?

दादाश्री : इतना करो तो बहुत हो गया! देखो वापस दूसरे पूछ रहा है! बाकी का फिर चला लेंगे। तुझे करेले की सब्ज़ी पसंद हो और मन कहे कि, 'ज़्यादा खाओ' और ध्येय को नुकसान नहीं करता हो और थोड़ा ज़्यादा खा लिया तो चला लेंगे! ऐसा नहीं कहा है तुम लोगों को?

प्रश्नकर्ता : हाँ, ब्रह्मचर्य का सिद्धांत, वह अपना इन्डीविज युअल (व्यक्तिगत) हुआ। लेकिन जब दो इंसानों का व्यवहार आता है, तब मन सबकुछ बताता है, लेकिन अगर ज्ञान से देखने जाएँ तो सबकुछ ऑन द स्पोट खत्म हो जाएगा सब। लेकिन व्यवहार पूरा करना पड़े, ऐसा है, ज़िम्मेदारी है और उसके रिज़ल्ट्स (परिणाम) दूसरे को स्पर्श करते हैं। वहाँ मन कुछ बताए तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : अपना मुख्य सिद्धांत नहीं टूटना चाहिए। 'ब्रह्मचर्य पालन करना है,' यह सिद्धांत नहीं टूटना चाहिए। बाकी सब तो खुद का व्यवहार सँभालने के लिए थोड़ा बहुत करना पड़ता है। तू वहाँ सो मत जाना। यहाँ घर पर सोना। वहाँ ऐसा सब कर सकते हो तुम। लेकिन बाकी सब में तो ब्रह्मचर्य पालन करना और अब्रह्मचर्य का सौदा करना, ये दोनों साथ में नहीं चलेगा। उससे अच्छा तो शादी कर लेना। दही में और दूध में दोनों में नहीं रहा जा सकता। फिर तो भगवान आएँ तब भी ऐसा कह देना कि 'नहीं मानूँगा'। बाकी सब चला लेंगे। यदि तुम्हें सिद्धांत का पालन करना हो तो।

प्रश्नकर्ता : मन घेर ले, देह घेर ले, ऐसी स्थिति खड़ी न हो जाए, उसके लिए उसके स्टार्टिंग पॉइन्ट से ही (शुरूआत में) सावधानी से चलना है?

दादाश्री : चारों ओर से सभी संयोग घेर लेते हैं, देह भी बहुत पुष्टि बताएगी, मन भी पुष्टि बताएगा, बुद्धि उसे हेल्प करेगी और आपको अकेले को फेंक देगी।

प्रश्नकर्ता : मन का सुनना शुरू किया, तभी से खुद का वर्चस्व चला ही गया न?

दादाश्री : मन का सुनना ही नहीं चाहिए। खुद आत्मा है, चेतन। मन जो है वह निश्चेतन चेतन है, जिसमें बिल्कुल भी चेतन नहीं है। मात्र कहने के लिए, व्यवहार के लिए ही चेतन कहलाता है।

वह तो तीन दिन तक मन पीछे पड़ा रहे तो उस समय आप 'चलो, चलते हैं फिर' कहोगे न! तेरे पीछे कभी मन पड़ा है? ऐसे करना पड़ा है कभी कुछ? पहले मना किया, मना किया, फिर मन बहुत पीछे पड़े तो कर देता है तू?

प्रश्नकर्ता : हाँ, ऐसा हुआ है।

दादाश्री : इसका क्या कारण है? मन बहुत कहता रहे तो फिर उस रूप हो जाते हो। इसलिए सावधान रहना। मन तुम्हारे अभिप्राय को खा नहीं जाना चाहिए। अभिप्राय में रहकर वह जो-जो काम करता है, वे हमें एक्सेप्ट हैं। तुम्हारे सिद्धांत को तोड़ने वाला होना ही नहीं चाहिए। क्योंकि 'तुम' स्वतंत्र हो गए हो, ज्ञान लेकर। पहले तो मन के ही अधीन थे 'तुम'। 'मन का चलता तन चले!' ही था न!

प्रश्नकर्ता : अर्थात् ब्रह्मचर्य का सिद्धांत यह बहुत बड़ी और अनिवार्य चीज़ है।

दादाश्री : इतनी ही चीज़ है न! सब से बड़ी चीज़ यही है न! यही चीज़ पुरुषार्थ करने योग्य है।

चलो, सिद्धांत के अनुसार

अभी तो तुम्हारा मन तुम्हारी ऐसे हेल्प करता है कि 'शादी करने जैसा नहीं है, शादी में बहुत दुःख है।' सब से पहले यह सिद्धांत बताने वाला तुम्हारा मन था। यह सिद्धांत तुम ने ज्ञान से तय नहीं किया था, यह तुम्हारे मन से तय किया है। 'मन' ने तुम्हें सिद्धांत बताया कि 'ऐसे करो'।

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य पालन करने का सिद्धांत मन बताता है, उसी प्रकार यह विषय से संबंधित बातें भी मन ही बताता है?

दादाश्री : उसका टाइम आएगा, तब छः छः महीने, बारह-बारह महीने तक वह बताता ही रहेगा।

प्रश्नकर्ता : वह भी मन ही?

दादाश्री : हाँ। सभी साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स इकट्ठे हो जाते हैं, तब। मैं इन सब से कहता हूँ कि 'मन के कहे अनुसार क्यों चलते हो? मन मार डालेगा।'

तुम ने जो ब्रह्मचर्य का नियम लिया, वह भी मन के कहे

अनुसार ही किया है। यह सिद्धांत जो है, वह ज्ञान से तय नहीं किया है। 'मन' ने ऐसे कहा कि, इसमें क्या मज़ा है? ये लोग शादी करके दु:खी है। ऐसा है, वैसा है, 'मन' ने ऐसी जो दलीलें की, उन दलीलों को एक्सेप्ट करके तुम ने स्वीकार किया।

प्रश्नकर्ता : तो ज्ञान से यह सिद्धांत नहीं पकड़ा है, अभी तक?

दादाश्री : ज्ञान से कहाँ पकड़ा है? यह तो अभी भी मन की दलील पर चला है। अब तुम्हें ज्ञान मिला है, तो अब ज्ञान से उस दलील को तोड़ दो। उसका चलन ही बंद कर दो। क्योंकि दुनिया में सिर्फ आत्मज्ञान ही ऐसा है कि जो मन को वश कर सकता है। मन को दबाकर नहीं रखना है। मन को वश करना है। वश यानी जीतना है। हम दोनों किच-किच करें, तो उसमें जीतेगा कौन? तुझे समझाकर मैं जीत जाऊँ तो फिर तू परेशान नहीं करेगा न? और बिना समझाए जीत जाऊँ तो?

प्रश्नकर्ता : समाधान हो जाए तो मन कुछ भी नहीं कहेगा।

दादाश्री : हाँ, समाधान वाला व्यवहार होना चाहिए। तुम्हें यह ब्रह्मचर्य का किसने सिखाया? ब्रह्मचर्य को ये लोग क्या समझें? ये तो ऐसा समझा है कि 'घर में झगड़े है, इसलिए शादी करने में मज़ा नहीं। अब अकेले पड़े रहें तो अच्छा है।'

प्रश्नकर्ता : क्या ऐसा है कि मन जितना वैराग्य बताता है, उतना ही वापस एक दिन ऐसा भी बताएगा।

दादाश्री : मन का स्वभाव क्या है? वह विरोधाभासी है, वह दोनों तत्त्व बताता है। इसलिए सावधान रहने को कहता हूँ।

प्रश्नकर्ता : एक बार मन ब्रह्मचर्य का, वैराग्य का बताएगा, वैसे ही राग भी बताएगा, ऐसा है?

दादाश्री : हाँ, बिल्कुल! फिर वह राग का दिखाएगा।

प्रश्नकर्ता : ऐसा फोर्स होता है?

दादाश्री : उससे ज़्यादा होता है और कम भी होता है। उसका कोई नियम नहीं है।

सिद्धांत क्या कहता है? गरम नाश्ता खाओ। ठंडा मत लेना। फिर भी रोज़ दो मठिया खिलाते हैं। मन अगर कहे कि, 'पाँच मठिया खाने हैं'। तब हम कहते हैं कि, 'फिर कभी, अभी नहीं मिलेंगे। इस दिवाली के बाद।' ऐसा भी कहता हूँ।

प्रश्नकर्ता : मतलब पार्शियल (अंशतः) सिद्धांत का माना और पार्शियल मन का माना, तब उसका समाधान हुआ न?

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं। वह सिद्धांत को नुकसान नहीं पहुँचाता हो, तो ऐसी बातों में उसे ज़रा नोबिलिटी चाहिए। वहाँ नोबल रहना चाहिए हमें।

तुम्हें क्या लगता है इसमें? तुम्हारा निश्चय मन से किया हुआ है या समझ सहित?

प्रश्नकर्ता : मन से ही किया है।

दादाश्री : ज्ञान है, इसलिए हो सकता है। वर्ना मैं तुम्हें कहता ही नहीं न! कुछ भी नहीं बोलता। ज्ञान नहीं होता तो मैं तुम से इस सिद्धांत की बात ही नहीं करता। हो ही नहीं सकता इंसान से।

निश्चय, ज्ञान और मन के

प्रश्नकर्ता : मन के आधार पर किया हुआ निश्चय और ज्ञान से किया हुआ निश्चय, उसका डिमार्केशन (भेद) कैसे हो सकता है?

दादाश्री : ज्ञान से किए हुए निश्चय में तो बहुत सुंदर हो सकता है। वह तो बहुत अलग चीज़ है। मन के साथ कैसे

व्यवहार करना, वह सारी समझ तो होती ही है। उसे पूछने नहीं जाना पड़ता कि मुझे क्या करना चाहिए?! ज्ञान से किया हुआ निश्चय, उसकी तो बात ही अलग है न! यह तो तुम लोगों का मन से किया हुआ है न?! इसलिए तुम्हें जानना चाहिए कि किसी दिन चढ़ बैठेगा। वापस मन ही चढ़ बैठेगा! जिस 'मन' ने इस ट्रेन में बिठाया, वही 'मन' ट्रेन में से गिरा सकता है। मतलब ज्ञान से बैठे हुए होओगे तो नहीं गिरा सकता।

प्रश्नकर्ता : अभी तक मन से किया हुआ निश्चय, वह ज्ञान से हो जाए उसके लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : अब ज्ञान से आपको उसे फिट कर देना है, मतलब ब्रह्मचर्य की डोर अपने हाथ में आ जानी चाहिए। फिर मन भले ही कितना भी शोर मचाए फिर भी उसका कुछ चलेगा नहीं। दो-पाँच साल तक तू विरोध करे और वह कहे, 'शादी कर, शादी कर'। और सभी संयोग विपरीत हो जाएँ, फिर भी हमें विचलित नहीं होना है। क्योंकि आत्मा अलग है, सभी से। सभी संयोग, वियोगी स्वभाव के है।

प्रश्नकर्ता : निश्चय अगर ज्ञान से हुआ हो तो मन उसका विरोध करेगा ही नहीं न, ऐसा?

दादाश्री : नहीं। नहीं होगा। निश्चय अगर ज्ञान से हुआ हो तो उसकी फाउन्डेशन (नींव) ही अलग तरह की होती है न! उसके सभी फाउन्डेशन आर.सी.सी. के होते हैं। और ये तो रोड़े का, अंदर कंक्रीट किया हुआ। फिर दरारें पड़ ही जाएँगी न?

आप्तपुत्रों की पात्रता

प्रश्नकर्ता : आपकी दृष्टि में कैसा है? ये लोग (आप्तपुत्र) किस तरह से तैयार होने चाहिए?

दादाश्री : सेफ साइड! और किसी चीज़ का ज्ञान नहीं हो, तो उसमें हर्ज नहीं। दूसरे लोगों को उपदेश देना, वगैरह नहीं हो तो उसमें हर्ज नहीं है। उनके जो सिद्धांत हैं, उनकी सेफ साइड में रह सके।

प्रश्नकर्ता : यानी ब्रह्मचर्य का सिद्धांत?

दादाश्री : सिर्फ ब्रह्मचर्य नहीं, हर तरह का सिद्धांत। किसी के साथ कषाय नहीं हो। किसी के साथ कषाय करना, वह गुनाह है। ज्ञान मिलने के बाद कषाय करना शोभा ही नहीं देता न! ब्रह्मचर्य और कषाय का अभाव।

प्रश्नकर्ता : सेफ साइड की बाउन्ड्री कौन सी?

दादाश्री : सामने वाला व्यक्ति हमें अलग माने और हम उसे एक मानें। वह हमें अलग मान सकता है, क्योंकि वह बुद्धि के अधीन है, इसलिए। अलग मानते हैं न? हम में बुद्धि नहीं होनी चाहिए ताकि एकता लगे, अभेदता!

प्रश्नकर्ता : सामने वाला भेद ही डालता रहे तब?

दादाश्री : वह तो बल्कि अच्छा है। उसमें बुद्धि है, इसलिए वह और क्या कर सकता है? उसके पास जो हथियार है, वही इस्तेमाल करेगा न?!

प्रश्नकर्ता : तो हमें कैसे अभेदता रखनी है उसके साथ?

दादाश्री : लेकिन वह जो कुछ कर रहा है, वह तो परवश होकर कर रहा है न बेचारा! और उसमें वह दोषित कहाँ है? वह तो करुणा रखने जैसे हैं।

प्रश्नकर्ता : उस पर थोड़ी देर करुणा रहती है। फिर ऐसा लगता है कि, 'इस पर तो करुणा रखने जैसा भी नहीं है।' ऐसा होता है।

दादाश्री : ओहो! ऐसा तो कह ही नहीं सकते। ऐसा अभिप्राय तो बहुत डाउन ले जाएगा हमें! ऐसा नहीं कह सकते।

प्रश्नकर्ता : करुणा रखने जैसी नहीं है, वह डबल अहंकार कहलाएगा!

दादाश्री : अहंकार का सवाल नहीं है। 'करुणा रखने जैसी नहीं है।' ऐसा नहीं कहना चाहिए। वह हमें ऐसे नहीं कहता कि आप मुझ पर करुणा रखो। बल्कि वह तो कहेंगे कि, 'ओहोहो! बड़े आए करुणा रखने वाले!' इसलिए सबकुछ गलत।

प्रश्नकर्ता : करुणा रखने का प्रयत्न ही नहीं होना चाहिए न?

दादाश्री : करुणा तो सहज स्वभाव है।

प्रश्नकर्ता : ऐसे जो प्रयत्न करने लगा, उसके रिएक्शन में 'नहीं रखने जैसा' हो गया न?

दादाश्री : वह तो गलत है। वह बात ही गलत है। करुणा कह ही नहीं सकते, हम। उसे अनुकंपा कहते हैं। करुणा तो, जब बुद्धि से आगे जाए, तब करुणा कहलाती है।

[2.6]
'खुद' अपने आपको को डाँटना

खुद को डाँटकर सुधारो

प्रश्नकर्ता : आपसे आज्ञा ली थी लेकिन फिर घर जाने के बाद ज़रा बिगड़ गया।

दादाश्री : अब क्या होगा? ऐसा हो गया फिर अलीखान क्या करे?!

प्रश्नकर्ता : ऐसा क्यों होता है? ऐसा होने का कारण क्या है?

दादाश्री : नासमझी है तुम्हारी। यहाँ से तय करके जाते हो कि मुझे घर जाकर दवाई पी लेनी है, लेकिन न पीए तो फिर अपनी नासमझी ही कहलाएगी न! देखो न, इस भाई ने डाँटा था अपने आपको, धमका दिया था। यह रो भी रहा था, और वह डाँट रहा था, दोनों देखने जैसी चीज़ थी।

प्रश्नकर्ता : एक बार दो-तीन बार चंद्रेश को डाँटा था, तब वह बहुत रोया भी था। लेकिन मुझे ऐसा भी कह रहा था कि 'अब ऐसा नहीं होगा,' फिर भी वापस हो ही जाता है।

दादाश्री : हाँ। वैसा होगा तो सही, लेकिन वह तो बार-बार कहते रहना है। हमें कहते रहना है और वह होता रहेगा। कहने से अपना जुदापन रहेगा। तन्मयाकार नहीं होंगे। जैसे पड़ोसी को डाँट रहे हों, उस तरह चलता रहेगा। ऐसे करते-करते खत्म हो जाएगा और सभी फाइलें खत्म हो जाएँगी न!

विचारों को देखते रहना है। और ऊपर से तुम्हें ऐसा कहना है कि 'तो तुम सब अंदर बैठे हुए हो?' इतना सख्त कर्फ्यू लगाया है, फिर भी घुस गए हो?' कहना! इसलिए 'भागो, वर्ना यह कर्फ्यू है' कहना, 'अब आ बनेगी, समझो।'

ब्रह्मचर्य ठीक से पालन होने लगे तो धीरे-धीरे असर होने लगता है। चेहरे पर कुछ तेज आने लगता है। लेकिन अभी भी, चेहरे पर कुछ खास तेज नहीं दिखता। घाटा नहीं दिखता लेकिन तेज भी नहीं दिखता ठीक से!

प्रश्नकर्ता : उसका क्या कारण होगा?

दादाश्री : नीयत! नीयत तेरी खराब है। तेज कहाँ से दिखेगा? वह तो, देखने से पहले ही तेरी नीयत बिगड़ जाती है। कहीं विषय-विकार होने चाहिए? ब्रह्मचारी होने के बाद!

प्रश्नकर्ता : उसके लिए क्या करना चाहिए? यह नीयत ऐसी है तो नीयत सुधारने के लिए क्या करना चाहिए? उसका उपाय क्या है?

दादाश्री : ये जो विचार आ रहे हैं, वह मैं नहीं हूँ। हमें उसे डाँटना चाहिए। क्या तू डाँटता था? चंद्रेश को डाँटता था न? तूने कभी डाँटा है? फिर पुचकारता ही रहेगा तो क्या होगा? उसे डाँटना और, 'दो थप्पड़ मार दूँगा,' ऐसे कहना। रोएगा तो चंद्रेश रोएगा। तू डाँट रहा हो और चंद्रेश रोए! ऐसा होगा तब ठिकाने आएगा। वर्ना *अणहक्क* के विषय-विकार तो नर्कगति में ले जाएँगे। उससे अच्छा तो शादी कर लेना, वह हक़ का तो है! विषय-विकार की इच्छाएँ नहीं होतीं?

प्रश्नकर्ता : कभी-कभी ऐसे विचार आते हैं!

दादाश्री : लेकिन वह कभी-कभी न? यानी कि जैसे रोज़ खाने का विचार आता है, ऐसा नहीं है न? वह कभी-कभी हाज़िर हो जाता है। किसी दिन बारिश होती है, वैसे?

प्रश्नकर्ता : वह कभी-कभी ही। यानी पहले बहुत आते थे पूरे दिन! वे बंद हो गए।

दादाश्री : और अभी तो कुछ और टाइम बीतने पर तो वह दिशा ही बंद हो जाएगी। जहाँ पर जिस दिशा में हमें जाना था अपनी वह दिशा तय हो जाए, तो उसके बाद पिछली सारी अड़चनें आनी बंद हो जाएँगी और फिर वह दिशा ही बंद हो जाएगी। फिर नहीं आएगा। फिर ऐसा उत्पन्न हो जाएगा कि हमारी तरह रहा जा सकेगा।

प्रश्नकर्ता : आज कल, यह थ्री विज़न अच्छा रहता है।

दादाश्री : थ्री विज़न तो बहुत काम निकाल देता है। दादा का निदिध्यासन रहता है न? उस निदिध्यासन से सभी फल मिलते हैं। निदिध्यासन रहे तो इच्छा ही नहीं होगी किसी चीज़ की। भीख ही नहीं रहेगी।

विषय का विचार आए तब भी कहना, 'मैं नहीं हूँ' यह अलग है, उसे डाँटना पड़ेगा। बल्कि तुम्हें चंद्रेश को मार्गदर्शन देना है कि 'ऐसे कर, ऐसे काम कर, ऐसे काम कर।' नहीं कर रहा हो तो ज़रा कहना पड़ेगा कि 'इन सब के साथ नहीं चलोगे तो, तुम्हारी क्या दशा होगी?' चलाने वाला तो चाहिए या नहीं चाहिए?

प्रश्नकर्ता : चाहिए।

दादाश्री : यानी यह ज्ञान दिया है, तो शुद्धात्मा रहेगा ही। अब इसमें चूकना मत। अब जो कुछ भी आए, वह सबकुछ चंद्रेश का है। इसलिए चंद्रेश के साथ तुझे किच-किच करते रहना। 'तू तो पहले से ही ऐसा है, मुझे कोई लेना-देना नहीं।' तू ऐसा कह देना। 'देख, सीधे चलना, सीधे चलना हो तो चल, वर्ना मैं तो फिर बिल्कुल ही तिरस्कार कर दूँगा' कहना। किंचित्‌मात्र भी दु:ख, वह मेरा स्वरूप नहीं है। किंचित्‌मात्र भी भीतर *उपाधि* हो तो वह

स्वरूप मेरा नहीं है। दादा ने मुझे जो दिया है, वह निर्‌उपाधिपद, परमानंदी पद दिया है, वही मेरा स्वरूप है।

थोड़ा-थोड़ा चंद्रेश को भी डाँटता रह। तुझे डाँटने वाला कोई नहीं है। तुझे कोई डाँटे तो उसे तू काट खाए ऐसा है। तुझे धौल मारने की आदत है न? तो कहना, 'चंद्रेश, तुझे धौल मारूँगा अब तो! कुछ भी अंदर ऐसा लगे, वह विषय विकारी विचार तो समझ लेना कि यह चंद्रेश है, मैं नहीं। कुछ भी बदलाव हो, वह चंद्रेश है, तुम नहीं। तुम में तो हो ही नहीं सकता न!

प्रश्नकर्ता : खुद के सभी दोष जल्दी निकल जाएँ, उसके लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : भला जल्दी कहीं होता होगा? एक दोष है, जो जल्दी निकाल देने जैसा है। वह तो भ्राँति से यह दोष उत्पन्न होता है, सिर्फ विषय विकार ही। अन्य सभी दोष तो अपने आप टाइम पर ही जाएँगे, एकदम जल्दी नहीं जाएँगे। यह विषय विकार तो सिर्फ एक तरह की भ्राँति है।

प्रश्नकर्ता : ऐसी श्रद्धा बैठ गई है कि इसमें से पार उतर जाएँगे।

दादाश्री : बैठ जाती है। निकल पाओगे ऐसा करते-करते। दस साल बिता दिए न तो फिर ऐसा होने पर अलग ही तरह की हवा आएगी। अभी खाड़ी में हैं इसलिए लगता है ऐसा। खाड़ी में से बाहर निकले तो फिर निश्चिंत। बीमारी निकली है न, इसलिए घबराहट होगी ज़रा। लेकिन रौब जमाना, चंद्रेश पर 'अपने आपको क्या समझता है?' लेकिन मुझसे पूछकर डाँटना, हाँ! वर्ना ब्लड प्रेशर पर असर हो जाएगा। फिर यहाँ से छूटा कि खुद फायदे में रहा। फिर दूसरी उलझनों को उलझन मत मानना। हम इशारा करेंगे तुम्हें, हम जानते हैं कि तुम युवा हो।

साथ मिलकर काम करे तो वहाँ वह भागीदार, ज़िम्मेदारी से काम करते हैं। भागीदारी में मिलकर वे जो काम करते हैं,

वह उन दोनों को भुगतना पड़ता है। लेकिन यदि अलग रहकर करें न, तो हर एक की अपनी ज़िम्मेदारी। इसलिए तुम अलग रहकर करो, ताकि फिर सिर्फ चंद्रेश को ही भुगतना पड़े। तुम्हें नहीं भुगतना पड़ेगा और वह तो तुम्हें और चंद्रेश को दोनों को भुगतना पड़ेगा। है प्रकृति का, जब ऐसा नहीं रहेगा कि आत्मा ने किया है, तब ठिकाने आएगा।

पूरा करो प्रकृति को पटाकर

प्रश्नकर्ता : हर एक को खुद की फाइल देखकर करना चाहिए। हर एक की फाइल को अलग-अलग दवाई माफिक आती है। एक सी दवाई माफिक नहीं आती। मेरी फाइल को डाँटने की ऐसी कड़ी दवाई माफिक नहीं आती।

दादाश्री : हाँ, किसी को प्रेशर बढ़ जाता है, किसी को कुछ ऐसा हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : तो ये सब एक दूसरे का देख-देखकर करने जाते हैं।

दादाश्री : नहीं! देख-देखकर मत करना। 'मुझसे पूछना वह।' ऐसा मैंने कहा है। अरे, कोई मत करना। गेटआउट-गेटआउट, कहोगे तो ब्लडप्रेशर बढ़ जाएगा। इसलिए तुम्हें तो *अरीसे* (दर्पण) में देखकर कहना है कि 'भाई, मैं हूँ तेरे साथ। तू घबराना मत', कहना। उससे प्रेशर नहीं बढ़ेगा। निश्चय चाहिए इसमें, निश्चय।

प्रश्नकर्ता : आप जो प्रयोग बताते हैं न, *अरीसे* (दर्पण) में सामायिक करने का। फिर प्रकृति के साथ बातचीत करना, वे सभी प्रयोग बहुत अच्छे लगते हैं। फिर दो-तीन दिन अच्छे से होता है, उसके बाद उसमें कमी आ जाती है।

दादाश्री : कमी आ जाए तो फिर वापस नए सिरे से करना। पुराना हो जाए तो कमी आ ही जाती है। *पुद्गल* का स्वभाव है कि पुराना हो जाए तो बिगड़ता जाता है। फिर वापस नई सेटिंग करके रख देनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् उस प्रयोग द्वारा ही कार्य सिद्ध हो जाना चाहिए। ऐसा नहीं होता और बीच में ही बंद हो जाता है प्रयोग।

दादाश्री : ऐसा करते-करते सिद्ध होगा, एकदम से नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : वह प्रयोग अधूरा हो और फिर दूसरा प्रयोग करते हैं। वह अधूरा छोड़ देते हैं। कोई तीसरा प्रयोग बताया। वह भी अधूरा! मतलब सभी अधूरे रहते हैं।

दादाश्री : वह तुम वापस पूरा कर लेना, धीरे-धीरे एक-एक को लेकर। *अरीसे* का प्रयोग पूरी तरह से नहीं किया?

प्रश्नकर्ता : नहीं! जब भी करते हैं, उतना लाभ होता है। लेकिन उसके बाद जुदापन रहना ही चाहिए, इन भाई को जैसा अलग देखता हूँ, वैसा परमानेन्ट फिर नहीं देख पाता। प्रकृति को जानते ज़रूर हैं कि अलग है।

दादाश्री : कितना डाँटा था उसने। रोना आ गया तब तक डाँटता रहा। तो बोलो अब कितना अलग हो गया?! तूने डाँटा है, ऐसा कभी? रो दिया हो वैसे?

प्रश्नकर्ता : रोया नहीं था, लेकिन ढीला पड़ गया था।

दादाश्री : ढीला पड़ गया था। तू डाँटता है तो सीधा हो जाता है क्या! तो फिर वह प्रयोग कितना कीमती प्रयोग है। लोगों को आता नहीं है। देखो न, यह भाई बैठा रहता है घर पर, लेकिन ऐसा प्रयोग नहीं करता।

प्रश्नकर्ता : हम भी बैठे रहते हैं, तो इसमें कमी है या फिर प्रयोग का महत्त्व नहीं समझे? इसमें हकीकत क्या है?

दादाश्री : उतना उल्लास कम है।

[2.7]
पछतावे सहित प्रतिक्रमण

प्रत्यक्ष आलोचना से, नकद मुक्ति!

श्री विज्ञान से तो सबकुछ ठीक हो ही जाता है न!

प्रश्नकर्ता : कभी अगर मेरी दृष्टि पड़ जाती है न, तब मुझे लगता है कि 'अरेरे! यह दृष्टि क्यों पड़ी?! प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। चीढ़ मचती है।

दादाश्री : लेकिन चीढ़ मचती है न, वह तो ऐसा है कि दृष्टि पड़ जाती है। तुम्हें डालनी नहीं है फिर भी पड़ जाती है। इसलिए पुरुषार्थ करना है और प्रतिक्रमण करने की भी ज़रूरत है।

प्रश्नकर्ता : कुछ चीज़ों पर इतना गुस्सा आता है कि, ऐसा लगता है कि ऐसा क्यों हो रहा है? समझ में नहीं आता।

दादाश्री : पिछली बार प्रतिक्रमण नहीं किए थे, इसलिए इस बार वापस दृष्टि जाती है। अब प्रतिक्रमण करोगे तो, अगले जन्म में फिर से नहीं जाएगी।

प्रश्नकर्ता : कभी-कभी तो प्रतिक्रमण करने में चिढ़ मचती हैं। एकदम से इतने सारे करने पड़ते हैं।

दादाश्री : हाँ, यह अप्रतिक्रमण का दोष है। उस समय प्रतिक्रमण नहीं किए, इसलिए आज यह हुआ। अब प्रतिक्रमण करने से वापस दोष खड़ा नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन कईं बार तो बहुत सारे प्रतिक्रमण करते हैं और फिर से प्रतिक्रमण करना पड़े तो बहुत गुस्सा आता है कि ऐसा क्यों हो जाता है?

दादाश्री : जब अंदर बिगड़ जाए, उस समय तो प्रतिक्रमण करके धो देना चाहिए और फिर रूबरू आकर दादा से कह देना चाहिए कि 'इस तरह हमारा मन बहुत बिगड़ गया था। दादा, आपसे कुछ छिपाकर नहीं रखना है।' ताकि सब खत्म हो जाए। यहीं के यहीं दवाई दे देंगे। अन्य किसी के प्रति दोष हुआ होगा न तो हम धो देंगे।

जहाँ इन्टरेस्ट, वहाँ करो प्रतिक्रमण

प्रश्नकर्ता : बार-बार दृष्टि आकृष्ट हो जाती है, एक ही जगह पर दृष्टि आकृष्ट होती है, वह तो इन्टरेस्ट (रुचि) हो तभी न! क्या ऐसा नहीं कह सकते?

दादाश्री : इन्टरेस्ट ही है न? इन्टरेस्ट के बिना तो दृष्टि आकृष्ट होगी ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : अंदर रुचि है तो सही। दृष्टि आकृष्ट हो जाए तो उसके लिए प्रतिक्रमण होता है। फिर रात होते ही वापस दृष्टि उधर ही जाती है। रुचि हो जाए, तो उसका प्रतिक्रमण हो जाता है, वह चेप्टर (प्रकरण) खत्म हो जाता है। वापस पाँच-दस मिनट तक असर रहता है। तब लगता है कि यह क्या गड़बड़ है?

दादाश्री : उसे वापस धो देना चाहिए। इतना ही, बस।

प्रश्नकर्ता : बस इतना ही? बाकी मन में कुछ नहीं रखना है?

दादाश्री : यह माल हमने भरा है और ज़िम्मेदारी अपनी है। इसलिए हमें देखते रहना है, धोने में कमी नहीं रह जानी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : कपड़ा धुल चुका है, ऐसा किसे कहेंगे?

दादाश्री : हमें खुद को ही पता चल जाएगा कि मैंने धो दिया। प्रतिक्रमण करते हैं, उस पर से।

प्रश्नकर्ता : क्या अंदर खेद रहना चाहिए?

दादाश्री : खेद तो रहना ही चाहिए न? खेद तो, जब तक इसका निबेड़ा नहीं आ जाए, तब तक खेद तो रहना ही चाहिए। हमें तो देखते रहना है। खेद रखता है या नहीं, ऐसा हमें अपना काम करना है, वह अपना काम करेगा।

प्रश्नकर्ता : यह सब बहुत गाढ़ है। उसमें कुछ-कुछ फर्क पड़ता जा रहा है।

दादाश्री : जैसा दोष भरा है वैसा निकलेगा। लेकिन वह बारह साल में या दस साल-पाँच साल में सब खाली हो जाएगा। सभी टंकियाँ साफ कर देगा। फिर शुद्ध! फिर मज़े करना!

प्रश्नकर्ता : अगर एक बार बीज डल चुका हो तो वह रूपक में तो आएगा ही न?

दादाश्री : बीज डल ही जाता है न! वह रूपक में आएगा, लेकिन जब तक वह जम नहीं गया है, तब तक कम-ज़्यादा हो सकता है। मतलब मरने से पहले वह साफ हो सकता है।

इसलिए हम विषय के दोष वाले से कहते हैं न कि विषय के दोष हुए हों, अन्य दोष हुए हों, तो उसे कहते हैं कि, 'रविवार को तू उपवास करना और पूरे दिन वही सोचकर, सोच-सोच करके उसे धोते रहना। आज्ञापूर्वक इस तरह करे न तो कम हो जाएगा!

विषय से संबंधित सामायिक-प्रतिक्रमण...

प्रश्नकर्ता : विषय-विकार से संबंधित सामायिक-प्रतिक्रमण किस तरह करने हैं?

दादाश्री : अभी तक जो गलतियाँ हो चुकी हैं, उनके प्रतिक्रमण करने हैं। भविष्य में ऐसी गलतियाँ नहीं हों, ऐसा निश्चय करना है।

प्रश्नकर्ता : जो कुछ गलतियाँ हो गई हैं, वे हमें बार-बार सामायिक में दिखती रहें तो?

दादाश्री : जब तक दिखते रहें, तब तक उनके लिए क्षमा माँगनी चाहिए, क्षमापना लेनी चाहिए। उस पर 'वह' पछतावा करना चाहिए, प्रतिक्रमण करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : अभी सामायिक में बैठे और वह दिखा, फिर भी बार-बार क्यों आते हैं?

दादाश्री : वे तो आएँगे न! अंदर परमाणु होंगे तो आएँगे न! उसमें हमें क्या हर्ज़ है?

प्रश्नकर्ता : ये आते हैं, इसका मतलब यह कि अभी तक धुला नहीं है।

दादाश्री : नहीं, वह माल तो अभी बहुत समय तक रहेगा। अभी तो दस-दस साल तक रहेगा, लेकिन तुम्हें सारा निकालना है।

प्रश्नकर्ता : यह जो दृष्टि चली जाती है, उसके लिए क्या करना चाहिए? मतलब यों तो पता चल जाता है कि हम यहाँ उपयोग चूक गए, हमें 'यह 'स्त्री' है,' वह 'स्त्री' दिखनी ही नहीं चाहिए न?

दादाश्री : स्त्री दिखे, अंदर विचार आएँ, तब भी उन सब के लिए प्रतिक्रमण करने हैं। तुझे चंद्रेश से कहना है कि प्रतिक्रमण कर! वह कोई बड़ी बात नहीं है।

विषयों में सुखबुद्धि किसे?

प्रश्नकर्ता : जब तक पाँच इन्द्रियों के विषयों में सुखबुद्धि है, तब तक *निकाल* नहीं होगा न?

दादाश्री : मैंने आप सब को जो आत्मा दिया है, उसमें ज़रा सी भी सुखबुद्धि नहीं है। यह सुख उसने कभी भी चखा ही नहीं है। वह जो सुखबुद्धि है, वह तो अहंकार को है।

सुखबुद्धि रहे, उसमें कोई हर्ज नहीं है। सुखबुद्धि आत्मा की चीज़ नहीं है, वह *पुद्‌गल* की चीज़ है। तुम्हें कोई भी चीज़ दी जाए, तब उसमें आपको सुखबुद्धि उत्पन्न होती है। फिर से वही चीज़ और अधिक दी जाए, तब उसमें दु:खबुद्धि भी उत्पन्न हो सकती है। ऐसा आपको पता चलता है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, ऊब जाते हैं फिर।

दादाश्री : अत: वह *पुद्‌गल* है। *पूरण-गलन वाली* चीज़ है। यानी वह चीज़ हमेशा के लिए नहीं है, टेम्परेरी एडजस्टमेन्ट है। सुखबुद्धि अर्थात् यह आम अच्छा हो और उसे फिर से माँगें, तो उससे ऐसा नहीं माना जा सकता कि उसमें सुखबुद्धि है। वह तो देह का आकर्षण है।

प्रश्नकर्ता : देह का और जीभ का आकर्षण बहुत रहा करता है।

दादाश्री : वह जो आकर्षण रहा करता है, उसमें सिर्फ जागृति रखनी है। हमने आपको जो वाक्य दिया है न कि 'मन-वचन-काया की तमाम संगी क्रियाओं से मैं बिल्कुल असंग ही हूँ।' वह जागृति रहनी चाहिए, और वास्तव में एक्ज़ेक्टली ऐसा ही है। वह सब *पूरण-गलन* है। आप अगर यह जागृति रखोगे तो आपको कर्म बंधन नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : अगर वही नहीं रह सके तो वह हमारे चारित्र का दोष है ऐसा मानें?

दादाश्री : वैसा क्रमिक मार्ग में होता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उस चारित्रमोह के कारण ढीलापन रहता है?

दादाश्री : क्रमिक मार्ग में वह ढीलापन कहलाता है। उसके लिए तुम्हें उपाय करना पड़ता है। इसमें (अक्रम में) तुम्हारे लिए यह ढीलापन नहीं कहलाता। इसमें तुम्हें जागृति ही रखनी है। हमने जो आत्मा दिया है, वह जागृति ही है।

प्रश्नकर्ता : जागृति नहीं रहे, तभी राग होता है न?

दादाश्री : नहीं ऐसा नहीं है। अब तुम्हें राग होता ही नहीं है। यह जो होता है, वह आकर्षण है।

प्रश्नकर्ता : वह कमज़ोरी नहीं मानी जाएगी?

दादाश्री : नहीं, कमज़ोरी नहीं मानी जाएगी। उसका और आत्मा का कोई लेना-देना नहीं है। सिर्फ इतना ही है कि वह तुम्हें खुद का सुख नहीं आने देगा। इसलिए एक-दो जन्म अधिक करवाएगा। उसका भी उपाय है। अपने यहाँ ये सब लोग जो सामायिक करते हैं, उस सामायिक में उस विषय को रखकर खुद ध्यान करे तो वह विषय विलीन होता जाता है, खत्म हो जाता है। जो-जो आपको विलीन कर देना हो, उसे यहाँ पर विलीन किया जा सकता है।

प्रश्नकर्ता : ऐसा कुछ हो, तब वह काम का है न!

दादाश्री : है। यहाँ सभी कुछ है। यहाँ (सामायिक में) तुम्हें सभी कुछ बताएगा। तुम्हें किसी जगह पर जीभ का स्वाद बाधक हो, तो उसी को सामायिक में रखो। और जैसा बताएँ उस अनुसार उसे देखते रहो। सिर्फ देखने से ही वे सब गाँठें विलय हो जाएँगी।

हे गाँठों! हम नहीं या तुम नहीं

विचार मन में से आते हैं और मन गाँठों से बना हुआ है। जिसके विचार अधिक आते हैं, वे गाँठें बड़ी होती हैं! वस्तुस्थिति में विषय की जो गाँठ है, वह जैसे पिन को लोहचुंबक आकर्षित करता है, वैसे ही इसमें आकर्षण खड़ा होता है। लेकिन हमें यदि

आत्मा बहुत अधिक ध्यान में रहे तो नहीं छूएगा। लेकिन इंसान को इतनी जागृति ठीक से रह नहीं पाती न?

प्रश्नकर्ता : यह जो दो पत्तियों की अवस्था में ही उखाड़ने का विज्ञान है, कि 'विषय की गाँठ फूटे, तब दो पत्तियों से ही उखाड़ दो।' तो जीत सकते हैं न?

दादाश्री : हाँ, लेकिन विषय ऐसी चीज़ है कि यदि उसमें एकाग्रता हो जाए तो आत्मा को भूल जाता है। इसलिए यह गाँठ इस प्रकार से हानिकारक है, वह सिर्फ इसीलिए कि जब वह गाँठ फूटती है तब एकाग्रता हो जाती है। एकाग्रता हो जाए तब विषय कहलाता है। एकाग्रता हुए बगैर विषय कहलाएगा ही नहीं न! वह गाँठ फूटे, तब इतनी अधिक जागृति रहनी चाहिए कि विचार आते ही उखाड़कर फेंक दे, तो उसे वहाँ पर एकाग्रता नहीं होगी। यदि एकाग्रता नहीं है तो वहाँ पर विषय है ही नहीं, तो वह गाँठ कहलाएगी और जब वह गाँठ पिघलेगी तब काम होगा।

प्रश्नकर्ता : मतलब अगर वह गाँठ विलय हो जाए तो फिर वह आकर्षण का व्यवहार ही नहीं रहेगा न?

दादाश्री : वह व्यवहार ही बंद हो जाएगा। पिन और लोहचुंबक का संबंध ही बंद हो जाएगा। वह संबंध ही नहीं रहेगा। उस गाँठ की वजह से यह व्यवहार जारी है न! अब, ऐसा ध्यान में रहना बहुत मुश्किल है कि विषय स्थूल स्वभावी है और आत्मा सूक्ष्म स्वभावी है, इसलिए एकाग्रता हुए बगैर रहेगी ही नहीं न! वह तो ज्ञानी पुरुष का काम है, अन्य किसी का काम ही नहीं! बाकी इसमें हाथ डालना ही मत, वर्ना वह जल जाएगा। ज्ञानी पुरुष तो भय टालने के लिए आपसे कहते हैं। पूरा जगत् जैसा समझता है, आत्मा वैसा नहीं है। आत्मा तो जैसा महावीर भगवान ने जाना है वैसा है, ये दादा जैसा बताते हैं, आत्मा वैसा है।

ये गाँठें, वे तो आवरण हैं! जब तक ये गाँठें हैं तब तक

आत्मा का स्वाद नहीं आने देंगी। इस ज्ञान के बाद अब गाँठें धीरे-धीरे विलय होती जाएँगी, बढ़ेंगी नहीं अब। फिर भी कौन सी गाँठें परेशान करती है, कौन सी दुःख देती हैं, उतनी ही देखनी हैं। सभी गाँठें नहीं देखनी हैं। वह तो, जैसे इस मार्केट में सभी सब्ज़ियाँ पड़ी रहती हैं, लेकिन उनमें से कौन सी सब्ज़ी पर अपनी दृष्टि जाती रहती है, उसी का झंझट है, अंदर वह गाँठ बड़ी है! तेरी कौन-कौन सी गाँठ बड़ी है?

प्रश्नकर्ता : विषय की एक बड़ी है, फिर लोभ की आती है, फिर मान-अपमान की आती है। फिर कपट में तो, खुद का बचाव, स्व रक्षण करने के लिए कपट खड़ा होता है।

दादाश्री : अन्य किसी के लिए कपट नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : अपमान का भय हो या खुद की गलती हो तब।

दादाश्री : हाँ, लेकिन इसके अलावा अन्य किसी चीज़ के लिए कपट नहीं है न? ये सभी गाँठें कपट वाली ही होती हैं, कपट करे तभी इनका फल मिलता है! सभी गाँठें कपट वाली होती हैं।

प्रश्नकर्ता : वह कैसे?

दादाश्री : मान भी कपट करने से मिलता है, अपमान भी कपट करने से मिलता है, विषय भी कपट के बिना नहीं मिलता।

विकारी विचार आते हैं क्या?

प्रश्नकर्ता : ऐसा होता हैं अभी भी। वे परिणाम खड़े होते हैं, लेकिन खुद की पकड़ नहीं होती है उसमें। लेकिन अभी भी जो ऐसे परिणाम आ जाते हैं, वे क्या हैं?

दादाश्री : क्यों मांसाहार के विचार नहीं आते? ऐसा क्यों?

प्रश्नकर्ता : उसकी गाँठ नहीं है।

दादाश्री : उसकी गाँठ नहीं है, वह माल ही नहीं भरा है न! फिर वह माल निकलेगा कैसे? जो माल भरा है, वही निकलेगा!

प्रश्नकर्ता : इतना सोल्युशन बताया, वह बात तो ठीक है, लेकिन इसमें कमी क्या है? इसमें क्या कमी रह जाती है?

दादाश्री : जो माल भरा है वही निकल रहा है, इसमें कमी कहाँ रही? क्यों मांसाहारी डिश याद नहीं आतीं? और यह याद आता है, वह क्या है? क्योंकि यह माल भरा हुआ है।

इसलिए अब जब गाँठें फूटे हमें उसमें हर्ज नहीं है। गाँठों से तो कहना कि 'जितनी फूटनी हो उतनी फूट, तू ज्ञेय है और हम ज्ञाता हैं' ताकि हल आ जाए। जितना फूट चुका है उतना वापस नहीं आएगा। अब जो फूटता है वह नया है, लेकिन उस गाँठ का बढ़ना बंद हो गया। वर्ना वे गाँठें तो इतनी बड़ी, जमीकंद जितनी बड़ी होती हैं। किसी को तो मान की गाँठें घंटे भर में चार जगह फूटती हैं। इस ज्ञान के मिलने के बाद सभी गाँठें टूटने लगती हैं, वर्ना गाँठें टूटती नहीं हैं। यह ज्ञान नहीं मिला हो तब तक गाँठें प्रतिदिन बढ़ती ही जाती हैं! आत्मा प्राप्त हुआ मतलब निर्विषयी हुआ, फिर हमें उन गाँठों का निकाल करते रहना है। आपको हम डाँटते क्यों नहीं हैं? हम जानते हैं कि गाँठें हैं, उनका निकाल तो करेगा न! जो गाँठें हैं, वे फूटे बगैर रहेंगी क्या? जिन चीज़ों की गाँठें नहीं हैं, वे गाँठें नहीं फूटेंगी। हममें गाँठें नहीं होतीं। हमें अगर शादी में ले जाओ न, तो भी हम इसी रूप में रहते हैं, यहाँ पर बुलाओ तो भी इसी रूप में रहते हैं क्योंकि हम निर्ग्रंथ हो चुके हैं। विचार आते हैं और जाते हैं। कभी कोई विचार आकर खड़ा रह जाए, तब वह गाँठ कहलाती है।

यानी कि ऐसा है यह सब! आखिर में निर्ग्रंथ होना है और

इस जन्म में निर्ग्रंथ हो सकें, ऐसा है। अपना यह ज्ञान निर्ग्रंथ बनाए, ऐसा है। जो थोड़ी बहुत गाँठें बची होंगी, उनका अगले जन्म में निकाल हो जाएगा, लेकिन सभी ग्रंथियों का निबेड़ा आ जाएगा, ऐसा है!

विषय बीज निर्मूल शुद्ध उपयोग से

विषय के विचार जिसे अच्छे नहीं लगते हों और उनसे छूटना हो वह उन्हें इस सामायिक से, शुद्ध उपयोग से, विलय कर सकता है। इस 'ज्ञान' के बाद जिसे जल्दी हल लाना हो उसे ऐसा करना चाहिए। सभी को इसकी ज़रूरत नहीं है।

प्रश्नकर्ता : फिर भी ऐसा नहीं लगता कि इसे पहुँच पाएँगे।

दादाश्री : ऐसा कुछ भी नहीं है। एक *राजीपा* (गुरुजनों की कृपा और प्रसन्नता) और दूसरा सिन्सियरिटी, सिर्फ ये दो ही हों तो सबकुछ प्राप्त हो सकता है। बाकी इसमें कोई मेहनत करनी ही नहीं होती।

प्रश्नकर्ता : ये सुबह में सामायिक करते हैं, तो उसमें पचास मिनट बाद तो सुख छलकने लगता है।

दादाश्री : आएगा ही न! क्योंकि आप आत्मस्वरूप होकर सामायिक करते हो तो आनंद आएगा ही न! आत्मा अचल है।

अब कई यह सामायिक दिन में दो-दो, तीन-तीन बार करते हैं। क्योंकि स्वाद चख लिया है न! यह वीतरागी ज्ञान मिलने के बाद उसका स्वाद भी कुछ और ही होता है, फिर कौन छोड़ेगा? बाहर के लोगों की सामायिक में तो सब हाँकना पड़ता है और इसमें तो किसी को हाँकना करना नहीं होता। सिर्फ देखते ही रहना है, ज्ञाता-दृष्टा। उसमें भी वापस दो फायदे होते हैं! एक तो खुद को सामायिक का फल मिलता है, मतलब क्या? कि जब यह सब अचल हो जाता है तब आत्मा के स्वभाव का पता चलता

है, इसलिए सुख उत्पन्न होता है। यह जो चंचल भाग है, वह अचल हो जाता है, इसलिए आत्मा का स्वभाविक सुख उत्पन्न होता है। इस चंचलता की वजह से वह सुख प्लस-माइनस हो जाता है। दूसरा यह कि खुद के जो दोष हैं, उन्हें ज्ञाता-दृष्टा के तौर पर देखते रहने से दोष विलीन होते जाते हैं। इस तरह दो लाभ होते हैं।

सामायिक में तो, खुद का जो दोष है, उसी को रख देना! अहंकार हो तो अहंकार रख देना। विषय रस हो तो विषय रस रख देना, लोभ-लालच हो तो उसे रख देना। इन गाँठों को सामायिक में रख दीं और उन गाँठों पर ज्ञाता-द्रष्टा रहे तो वे विलय हो जाएँगी। अन्य किसी तरीके से ये गाँठें खत्म हो पाएँ, ऐसी नहीं है। यह सामायिक इतनी आसान, सरल और सब से ऊँची चीज़ है! यहाँ एक बार सामायिक करके जाए, तो फिर घर पर भी हो सकेगी! यहाँ सब के साथ बैठकर करने से क्या होता है कि सभी का प्रभाव पड़ता है और बिल्कुल पद्धतिपूर्वक अच्छा हो जाता है। इसके बाद आप घर पर करोगे तो चलता रहेगा।

विषय की गाँठ बड़ी होती है उसके *निकाल* की बहुत ही ज़रूरत है, वह कुदरती रूप से अपने यहाँ सामायिक में शुरू हो गया है! सामायिक करो, सामायिक से सब विलय हो जाता है। कुछ करना तो पड़ेगा न? जब तक दादा हैं, तब तक सारा रोग निकालना पड़ेगा न? एकाध गाँठ ही भारी होती है, लेकिन जो भी रोग है तो उसे निकालना तो पड़ेगा न? उसी रोग की वजह से अनंत जन्मों से भटके हैं न? यह सामायिक तो किस हेतु से है कि अभी तक विषय भाव का बीज खत्म नहीं हुआ है और उसी बीज में से चार्ज होता है और उस विषय भाव के बीज को खत्म करने के लिए यह सामायिक है।

आपको विषय नहीं चाहिए, लेकिन विषय छोड़ते नहीं हैं न? हमें गड्ढे में नहीं गिरना हो फिर भी गिर जाएँ तो क्या

करना चाहिए? तुरंत ही एक घंटे तक दादा से माँग करना कि, 'दादा, मुझे ब्रह्मचर्य की शक्ति दीजिए।' ताकि शक्ति मिल जाए और प्रतिक्रमण भी हो जाएँ। फिर दिमाग़ में उसकी 'वरीज़' (चिंता) मत रखना। गड्ढे में गिरे तो तुरंत ही सामायिक करके धो देना। सामायिक यानी हाथ-पैर धोकर, कपड़े धो-कर, सूखाकर और समेटकर साफ-सुथरे हो जाना। तुरंत सामायिक नहीं हो सके तो दो-चार घंटों बाद भी कर लेना, लेकिन लक्ष्य में रखना है कि सामायिक करनी बाकी है।

भगवान ने ऐसा नहीं कहा है कि, 'तू गड्ढे में मत गिरना।' भगवान ने तो ऐसा कहा है कि, 'गड्ढे में गिरने जैसा नहीं है, सीधे रास्ते पर चलने जैसा है।' ऐसा अभिप्राय दिया था। फिर कोई कहेगा कि, 'आपने मना किया है और मैं गिर गया तो क्या करूँ?' तब भगवान कहते हैं, 'गिर गए तो उसमें हर्ज नहीं है, अगर गिर जाए तो तू धो देना और अभी इस्त्री वाले कपड़े पहन ले।' एक घंटा सामायिक कर ली तो फिर कोई रुकावट नहीं रहेगी। किंचितमात्र भी रुकावट रहे तो मेरी ज़िम्मेदारी, फिर इतने छोटे गड्ढे में गिरे या बड़े गड्ढे में गिरे, लेकिन डूबेगा नहीं!! पूरा जगत् बिना गड्ढे के डूब रहा है, ढक्कन तक में डूब जाते हैं!

[2.8]
स्पर्श सुख की भ्रामक मान्यता

देखते ही जुगुप्सा

लोग विषय की गंदगी में पड़े हुए हैं। विषय के समय उजाला कर दे तो उसे अच्छा नहीं लगता। उजाला हो जाए तो घबरा जाता है। इसलिए अंधेरा रखता है। उजाला हो जाए तो भोगने की जगह को देखना तक अच्छा नहीं लगे। इसलिए कृपालुदेव ने भोगने के स्थान के लिए क्या कहा है?

प्रश्नकर्ता : 'यह चीज़ वमन करने योग्य भी नहीं है।'

दादाश्री : उल्टी करनी हो, तो उस जगह पर करोगे या दूसरी किसी अच्छी जगह पर करोगे?

प्रश्नकर्ता : कितना कुछ देखा होगा उन्होंने?

दादाश्री : देखा है न, ज्ञानियों ने। एक तो आँख को अच्छा नहीं लगता। कान को भी अच्छा नहीं लगता। नाक में तो दुर्गंध आती है। यदि उस जगह को छूआ हुआ हाथ सूँघ ले तो मरी हुई मछली हो न, ऐसी दुर्गंध आती है, और अगर चखने को कहा हो तो? एक भी इन्द्रिय को अच्छा नहीं लगता सिर्फ स्पर्श को अच्छा लगता है, वह भी सिर्फ रात को ही। दिन में करने को कहें न वहाँ पर, तो अच्छा नहीं लगेगा।

एक बनिया मेरे साथ बैठने आता था। उस समय मेरी उम्र 60-62 साल की थी। उसकी उम्र भी 60-62 की। उसने मेरे सामने शर्त रखी, 'एक आधा घंटा बैठने आऊँगा तो आप निभा

लोगे?' मैंने कहा, 'हाँ, निभा लूँगा।' बाहर मेरे साथ घूमने से लोगों में रौब बढ़ता था। फिर मेरे साथ बैठता था। यों उसकी बुद्धि अच्छी थी। मैंने उस भाई से पूछा, 'ये सभी पुरुष नेकेड जा रहे हों तो आपको उन्हें देखना अच्छा लगेगा?' तब वे बोले, 'नहीं लगेगा। मैं तो मुँह फेर लूँगा।' अरे, पुरुष नेकेड जा रहे हों तो क्या तू नेकेड नहीं है? यह तो ढका हुआ है इसलिए सुंदर है! उसके बाद उसे पूछा, 'यदि स्त्री और पुरुष नेकेड जा रहे हो तो उनमें से किसे देखना पसंद करोगे? तब उन्होंने कहा, 'पुरुष को देख सकते हैं लेकिन स्त्री को देखना अच्छा नहीं लगेगा। उल्टी हो जाएगी' इस प्रकार मैं उस बनिए की बुद्धि देख रहा था। उस भाई ने कहा कि, 'मेरी वाइफ नहा रही थी, तब उसे देख लिया था। तब से मुझे अंदर घिन आती है।'

रोंग बिलीफें, रूट कॉज़ में

अंधेरे में जाकर ऐसा करते हैं कि पाँचों इन्द्रियों को अच्छा नहीं लगे। बच्चे देखें तो शर्मा जाएँ। कोई विषय विकार कर रहा हो, और उसकी फोटो लें तो कैसा दिखेगा?

प्रश्नकर्ता : घिन आए ऐसा दिखेगा, जानवर जैसा दिखेगा।

दादाश्री : जानवर ही कहलाएगा। पूरी तरह से पाशवी इच्छा कहलाएगी।

प्रश्नकर्ता : स्त्री के अंगों के प्रति आकर्षण होने का क्या कारण है?

दादाश्री : मान्यता अपनी, रोंग बिलीफें हैं इसलिए। गाय के अंगों के प्रति आकर्षण क्यों नहीं होता?! सिर्फ मान्यताएँ। कुछ नहीं होता। सिर्फ बिलीफें हैं, बिलीफें तोड़ दो तो कुछ भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : वह जो मान्याता खड़ी होती है, ऐसा संयोग मिलने की वजह से होता है?

दादाश्री : लोगों के कहने से हमें हो जाता है। हमारे कहने से मान्यता खड़ी होती है। क्योंकि आत्मा की हाज़िरी में मान्यता खड़ी होती है इसलिए दृढ़ हो जाती है और इसमें ऐसा है ही क्या? मांस के लोथड़े हैं!

प्रश्नकर्ता : एक बार मैं स्तन का ऑपरेशन देखने गया था। शुरू में देखे तो इतने सुंदर दिख रहे थे लेकिन ऑपरेशन करने के लिए चीरा तो कँपकँपी आ गई।

दादाश्री : कुछ भी सुंदरता होती ही नहीं है, मांस के लोथड़े ही हैं।

प्रश्नकर्ता : यह रोंग बिलीफ कैसे खत्म करें?

दादाश्री : मैंने अभी कैसे खत्म की!

प्रश्नकर्ता : राइट बिलीफ से। बनिए की वह बात फिट हो गई मांस के लोथड़े वाली।

दादाश्री : बनिए को कहा जाए तो उसे स्त्री को नेकेड देखना अच्छा नहीं लगेगा। उसकी बुद्धि बहुत अच्छी कही जाएगी। मुझे तुरंत समझ में आ जाता है कि इसकी दृष्टि कितनी उच्च है। वाइफ के बारे में मांस के लोथड़े दिखते थे और हमेशा घिन आती थी उसे! साठ साल की उम्र में भी उसे घिन आती थी, वह अच्छा है न?! वर्ना घिन नहीं आती।

वह आवाज़, मन की ही

प्रश्नकर्ता : अंदर से जो शोर मचाते हैं कि 'देख लो। देख लो।' वह कौन है? कोई स्त्री बाथरूम में नहा रही हो या कोई विषय भोग रहा हो, तब?

दादाश्री : वह तो रोंग बिलीफ वाला मन ही कहता है। बाद में प्राप्त हुआ ज्ञान, उस समय आकर रोक देता है कि ऐसा

नहीं होना चाहिए। ये सब रोंग बिलीफें हैं। जगत् को पता ही नहीं है कि यह क्या है! बिलीफें ही रोंग हैं। सौ बार रोंग बिलीफ को सही मानी हों तो सौ बार उन्हें तोड़ना पड़ेगा, आठ सौ बार किया हो तो आठसौ बार और दस बार किया हो तो दस बार। दोस्तों के साथ घूम रहे हों और वे कहें कि 'ओहोहो कैसे हैं, कैसे हैं!' तब हम भी अंदर बोल उठते हैं कि 'कैसे हैं!' ऐसे करते करते स्त्री को भोग लिया।

मन में जो विचार आते हैं, वे विचार अपने आप ही आते रहते हैं, तो उन्हें हमें प्रतिक्रमण से धो देना है। फिर वाणी में ऐसा नहीं बोलना है कि, विषयों का सेवन करना बहुत अच्छा है और वर्तन में भी ऐसा नहीं रखना है। स्त्रियों के सामने आँखें नहीं गड़ानी हैं। स्त्रियों को देखना मत, छूना मत। स्त्रियों को छू लिया हो तो भी मन में प्रतिक्रमण हो जाना चाहिए, कि 'अरेरे, इसे कहाँ छू लिया!' क्योंकि स्पर्श से विषय के सभी तरह के असर होते हैं।

प्रश्नकर्ता : उसे तिरस्कार करना नहीं कहा जाएगा?

दादाश्री : उसे तिरस्कार नहीं कहेंगे? प्रतिक्रमण में तो हम उनके आत्मा से कहते हैं कि 'हमारी गलती हो गई, फिर से ऐसी गलती नहीं हो ऐसी शक्ति दीजिए। उसी के आत्मा से ऐसा कहना कि मुझे शक्तियाँ दीजिए। जहाँ अपनी गलती हुई हो, वहीं पर शक्ति माँगना तो वह शक्ति मिलती रहेगी।'

प्रश्नकर्ता : कोई स्त्री हमारे पास आकर बैठे तो उससे हम कह सकते हैं कि 'बहन, आप यहाँ से उठकर वहाँ बैठो?'

दादाश्री : नहीं, हम ऐसा क्यों कहें? अपने पास बैठे तो क्या अपनी गोद में बैठ जाती है?

प्रश्नकर्ता : नहीं, नहीं, यहाँ अपने पास।

दादाश्री : पास में बैठे तो हमें क्या? अपनी दृष्टि अलग,

हमें कुछ लेना देना नहीं है। वह तो गाड़ी में भी बैठते ही हैं न? गाड़ी में क्या करते हैं? यहाँ तो हम खिसका दें कि वहाँ बैठो, लेकिन गाड़ी में क्या करोगे? अरे, भीड़ में भी बैठना पड़ता है। यदि थक गए होओगे तो क्या करोगे?

प्रश्नकर्ता : तो स्पर्श का असर होगा न?

दादाश्री : उस समय हमें मन संकुचित कर लेना चाहिए। मैं इस देह से अलग हूँ, मैं 'चंद्रेश' हूँ ही नहीं, यह उपयोग रहना चाहिए, शुद्ध उपयोग रहना चाहिए। कभी जब ऐसा हो जाए तब शुद्ध उपयोग में ही रहना चाहिए कि 'मैं चंद्रेश हूँ ही नहीं।'

स्पर्श सुख के जोखिम

स्पर्श सुख भोगने का विचार आए तो उसके आने से पहले ही उखाड़कर फेंक देना। यदि तुरंत ही उखाड़कर फेंक नहीं दिया जाए तो पहले सेकन्ड में ही पेड़ बन जाता है, दूसरे सेकन्ड में वह हमें पकड़ में ले लेगा और तीसरे सेकन्ड में फिर फाँसी पर चढ़ने का वक्त आएगा।

हिसाब नहीं होगा तो टच भी नहीं हो सकता। स्त्री-पुरुष एक रूम में हों, फिर भी विचार तक नहीं आ सकता।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा कि 'हिसाब है, इसलिए आकर्षण होता है।' तो उस हिसाब को पहले से ही कैसे उखाड़ सकते हैं?

दादाश्री : वह तो उसी समय, ऑन द मोमन्ट करेंगे तभी जाएगा। पहले से नहीं हो सकेगा। मन में विचार आए न कि 'स्त्री के लिए पास में जगह रखें।' तो तुरंत ही उस विचार को उखाड़ देना। 'हेतु क्या है' वह देख लेना। अपने सिद्धांत के अनुरूप है या सिद्धांत के विरुद्ध है। सिद्धांत के विरुद्ध हो तो तुरंत ही उखाड़कर फेंक देना चाहिए। स्त्री पास में बैठे उससे पहले ही तुम्हें यह सुविधा कर लेनी चाहिए, वह विचार आए,

तभी उसे उखाड़कर फेंक देना। फिर स्त्री के बैठने तक तो उस विचार को हम पेड़ जितना कर देते हैं। उसके बाद वे (विचार) वापस नहीं पलट सकते।

प्रश्नकर्ता : यह तय तो है कि मुझे विषय नहीं भोगना है, लेकिन कोई लड़की या कोई लड़का मुझ पर विषय भोगे, मुझे स्पर्श करे, बस में चढ़ते-उतरते, बैठते, कहीं पर भी, तो उसमें मुझे हर्ज नहीं। मुझे विषय नहीं भोगना है। ऐसे विचार आते हैं।

दादाश्री : तब तो अच्छा ही है न (!)

प्रश्नकर्ता : उस समय मेरी तो सेफ साइड है न, मैं तो विषय भोग ही नहीं रहा हूँ। मुझे तो स्पर्श करना ही नहीं है। लेकिन वह सामने से स्पर्श करे, तो फिर मैं क्या करूँ?

दादाश्री : ठीक है। साँप जान बूझकर छू जाए, तो उसमें हम क्या करें?(!) छूना कैसे अच्छा लगता है, पुरुष या स्त्री को? जहाँ निरी दुर्गंध ही है, वहाँ छूना कैसे अच्छा लगता है?

स्त्री का स्पर्श लगे विष समान

प्रश्नकर्ता : लेकिन स्पर्श करते समय इसमें से कुछ भी याद नहीं आता।

दादाश्री : हाँ, वह याद कैसे आएगा लेकिन? उस समय तो स्पर्श करते वक्त, इतना अधिक पोइज़नस होता है वह स्पर्श, इतना अधिक पोइज़नस होता है, कि मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार, सभी पर आवरण आ जाता है। मनुष्य मूर्छित हो जाता है। जानवर ही देख लो न, उस समय!

प्रश्नकर्ता : उस समय उसका फोर्स इतना ज़ोरदार होता है कि उस वजह से वह मूर्छित हो जाता है।

दादाश्री : हं! ऐसा है न कि यह शराब तो पीने के बाद

चढ़ती है, और यह तो हाथ लगाते ही चढ़ जाता है। शराब तो, पीने के आधे घंटे बाद अंदर मन में असर होता है जबकि इसमें तो हाथ लगाया कि तुरंत ही अंदर चढ़ जाता है। तुरंत! देर ही नहीं लगती इसलिए हमें तो बचपन से ही, यह अनुभव देखते ही घबराहट हो गई थी कि 'अरेरे, यह क्या हो जाता है? यह तो इंसानियत मिटकर हैवानियत हो जाती है।' इंसान-इंसान से मिटकर हैवान बन जाता है। थोड़ी देर बाद यदि इंसानियत रहती तो हर्ज नहीं था। यानी कि थोड़ा बहुत भी अगर अपना कुछ रहता, मज़ा-मर्यादा में, तो हर्ज नहीं था, लेकिन यह तो मर्यादा ही नहीं रहती और हम तो अनंत जन्मों से ब्रह्मचर्य के रागी, इसलिए हमें यह अच्छा नहीं लगता था लेकिन मजबूरन यह सब हुआ था। थोड़ा बहुत संसार भोगा होगा, वह भी मजबूरन। अरुचिपूर्वक, प्रारब्ध में लिखा हुआ! शोभा नहीं देता यह तो! इसलिए तुम महापुण्यशाली हो कि तुम्हें दादा से ब्रह्मचर्यव्रत मिला।

दादा का आधार और ऊपर से यह ज्ञान। यदि यह ज्ञान नहीं होता न, तो ब्रह्मचर्य टिक नहीं सकता था। यह ज्ञान, 'मैं शुद्धात्मा हूँ' यह भान हुआ है, इसलिए ब्रह्मचर्य टिक सकता है और वास्तव में ब्रह्मचर्य कब टिकेगा, जब वहाँ रहने की अलग व्यवस्था हो जाएगी, तब। उसके बाद फिर थोड़े समय में उनके रहने की अलग व्यवस्था हो ही जाएगी और तभी खरा ब्रह्मचर्य और तभी चेहरे पर नूर आएगा। तब तक तो यह आबो-हवा, वातावरण असर करता रहेगा।

प्रश्नकर्ता : वह जो स्पर्श की बात की है न, तो वैसा ही बर्तता है, तो फिर क्या करना चाहिए? उसका उपाय क्या है? यानी इस स्पर्श में सुख नहीं है, ये सभी बातें खुद जानता है, फिर भी वर्तन में जब स्पर्श होता है, तब उसमें सुख आता है।

दादाश्री : वह आएगा लेकिन उसे तो तुरंत निकाल देना है न, तुम्हें क्या? वह सुख आया, वह तो इसलिए कि अपनी बिलीफ

है, वर्ना दूसरे को तो यों स्पर्श होते ही ज़हर जैसा लगेगा। कई लोग तो इसे छूते तक नहीं है। स्त्री को छूते तक नहीं हैं। ज़हर जैसा लगता है क्योंकि उसने ऐसा भाव किया हैं। पहले वाले में ऐसा माल भरा हुआ है कि स्पर्श को सुख माना है। इन दोनों के अलग-अलग माल भरे हुए हैं, इसलिए उसे इस जन्म में ऐसा लगता है। ज़हर भी नहीं लगना चाहिए और सुख भी नहीं लगना चाहिए। हमारे जैसा सहज, यों जैसे पुरुषों की तरह हम छूते हैं दूसरों को, उस तरह से रहना चाहिए। विषयमें स्त्री दोषित नहीं है। वह अपना दोष है। स्त्री का दोष नहीं है।

प्रश्नकर्ता : 'स्त्री को स्पर्श करने में सुख है' यह जो बिलीफ है, उसे कैसे हटाएँ?

दादाश्री : वह बिलीफ तो जब दस लोगों ने कहा तो बिलीफ बैठ गई। वहाँ अगर त्यागी बोले होते न तो बिलीफ होती तो भी चली जाती क्योंकि बिलीफ बैठ गई है। सही जगह पर बैठी है या गलत जगह पर? जलेबी तो स्वादिष्ट लगती है, उसमें भी अगर ताज़ा जलेबी हो, स्वादिष्ट लगेगी या नहीं लगेगी? घी की होगी तो!

प्रश्नकर्ता : लगेगी।

दादाश्री : ज्ञानी पुरुष से समझ लेना चाहिए। जबकि इन लोगों से सीखे हो! कवि लोग तो सभी ऐसे तारीफ करते हैं। पैर तो केले के तने जैसे, पैर और फलाने अंग के लिए ऐसा कहते हैं लेकिन ऐसा नहीं सोचता कि अरे! संडास जाए उस समय क्यों साथ में नहीं बैठता? यह तो सभी अपना-अपना गाते हैं। ज्ञानी पुरुष दिखाएँ न, तब अरुचि होती है भीतर।

प्रश्नकर्ता : आपकी ये सारी बातें सही हैं। यह श्रद्धा में भी बैठा है लेकिन फिर भी वर्तन में स्पर्श करना हो जाता है।

दादाश्री : वर्तन में तो यह मान्यता है न रोंग, मान्यता फल दिए बिना जाएगी नहीं न! वह डिस्चार्ज मान्यता है। एक बार मानी

हुई चीज़ें बिल्कुल विरुद्ध, खराब हों फिर भी मान्यता जाती नहीं है न! अतः हमें निकालनी पड़ेंगी कि 'ऐसे नहीं' लेकिन यह गलत है।

प्रश्नकर्ता : तो ऐसा कह सकते हैं कि अभी भी रुचि है।

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं है। ये रोंग बिलीफें रह गई हैं अभी भी अंदर इसलिए निकाल कर देना है। लोगों के कहने से 'इसमें सुख है' ऐसी रोंग बिलीफ जो बैठ गई है, वह इसमें रह गई है, वह जैसे-जैसे आएगी, वैसे-वैसे निकाल कर देंगे।

प्रश्नकर्ता : इस बिलीफ का निकाल कैसे करना है?

दादाश्री : 'नहीं है मेरी' ऐसा कहकर ही। वह अपनी नहीं है। उस बिलीफ का निकाल हो ही जाएगा उससे।

दोनों स्पर्शों के असर में भिन्नता

प्रश्नकर्ता : जब स्त्री का स्पर्श होता है, तब उसके परमाणु एकदम असर डालते हैं। जबकि ज्ञानी पुरुष को भी स्पर्श करते हैं, तब ज्ञानी पुरुष के जो परमाणु हैं, वे असर तो डालते ही हैं, लेकिन इतने फोर्स वाले नहीं लगते, इसका क्या कारण है?

दादाश्री : वह तो परमाणुओं का असर है, इसी कारण से न! जैसे परमाणु होते हैं, वैसा ही असर होता है। किसी चिंतातुर को यदि स्पर्श कर लें तो चिंतातुर कर देता है, वैसे परमाणु खड़े हो जाते हैं। जैसे परमाणु होते हैं, वैसा ही असर होता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसमें हमें अनुभव होता है। इसमें इतना स्पष्ट पता नहीं चलता, इसका क्या कारण है?

दादाश्री : हाँ, वह तो हर एक तरह के परमाणुओं के परिणाम हैं। परमाणुओं का असर हुए बगैर नहीं रहता। अंगारों को स्पर्श करे तो अंगारा और इस बर्फ को स्पर्श करे तो बर्फ, जैसे उनमें परमाणु होते हैं, तुरंत ही उनका असर होता है। उसे स्पर्श

करते समय उपयोग नहीं रहे तो बात अलग है, हर कोई अपने-अपने परमाणुओं का स्वभाव बताए बिना नहीं रहता।

प्रश्नकर्ता : उसमें तुरंत पता चल जाता है, पूरा अंत:करण डाँवाडोल हो जाता है।

दादाश्री : वह तो डाँवाडोल हो ही जाता है सबकुछ!

प्रश्नकर्ता : जबकि इसमें तुरंत पता नहीं चलता, इसका क्या कारण है?

दादाश्री : इनका कैसे पता चलेगा, इन हाइ लेवल के परमाणुओं का कैसे पता चलेगा जल्दी। डाँवाडोल हो जाएँ तो तुरंत पता चल जाता है।

प्रश्नकर्ता : वह जो नेगेटिव असर होता है परमाणुओं का, उसका पता चलता है।

दादाश्री : दस्त की दवाई लेते हैं, उस तरह से।

प्रश्नकर्ता : इसमें ऐसा नहीं है?

दादाश्री : इसमें नहीं होता। यह तो बहुत धीरे असर करता है। धीरे असर करे, ऊँचे मार्ग पर ले जाने वाला है न! जबकि वह वाला तो उसे गिरा देगा नीचे, स्पीडी असर, स्लिपिंग कहलाता है। स्लोप, फिसलने वाला और यह ऊँचे जाना, ऊँचे जाने के लिए तो बहुत ज़ोर लगाएँ तब जाकर एक इंच खिसकता है, जबकि वह माल तो फिसलने वाला है ही, हो सके तब तक छूना मत, उपयोग हो, भले ही कितना भी मज़बूत उपयोग हो फिर भी छूना मत।

प्रश्नकर्ता : यह तो उसकी बात है, जब स्पर्श हो जाता है। स्पर्श करने का तो किंचितमात्र भी भाव नहीं होता, लेकिन स्पर्श हो जाता है।

दादाश्री : स्पर्श हो जाए तो फिर हमें प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए तुरंत।

प्रश्नकर्ता : जबकि ज्ञानी पुरुष को स्पर्श करने से?

दादाश्री : वह तो बहुत, वह कितने हाई लेवल का और असर होते-होते तो कितना समय बीत जाता है।

प्रश्नकर्ता : या फिर मुझ में भी गलती हो सकती है न कि ये परमाणु तो एकदम आ रहे हैं। हमारे लिए लाभदायक हैं, यह बात शत प्रतिशत नक्की है।

दादाश्री : वे लाभदायक ही हैं लेकिन इसका पता नहीं चलता!

प्रश्नकर्ता : मुझे यह प्रश्न है कि इसका पता क्यों नहीं चलता?

दादाश्री : उसका इतना स्थूल असर नहीं होता कि जो आपको पता चल जाए। क्या कहा? यह तो बहुत सूक्ष्म असर है और वह वाला तो स्थूल असर, आपको पता चल जाए ऐसा। इस बर्फ का तो छोटे बच्चे को भी पता चल जाता है। उसी तरह आप पर वैसे दूसरे असर हो जाते हैं। इस असर का पता नहीं चलता। लेकिन अंत में कुल मिलाकर यों अंदर निराकुलता करती रहती है।

प्रश्नकर्ता : जैसा इस स्पर्श का है, वैसे ही जब दृष्टि मिलती है तब भी ऐसा होता है।

दादाश्री : दृष्टि मिलती है तब भी ऐसा असर होता है। ऐसा है न, एक ही टेबल पर स्त्री-पुरुष सभी खाना खाते ज़रूर हैं। एक ही तरह का खाना खाते हैं, लेकिन स्त्री में स्त्री के परमाणुओं के रूप में तुरंत बदल ही जाते हैं। पुरुषों में पुरुष के हिसाब से परमाणु तुरंत बदल जाते हैं। बीज के स्वभाव के अनुसार होता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वे साथ में भोजन के लिए बैठते हैं, आहार एक ही तरह का लेते हैं, तो अंदर जाकर उन परमाणुओं के बदल जाने का कारण क्या है?

दादाश्री : बदल जाते हैं तुरंत, बीज के अनुसार। जैसा भीतर बीज होता है न, उसके अनुसार। यह आहार तो एक ही तरह का, लेकिन बीज के अनुसार बदल जाता है। ये पानी पीते हैं, लेकिन भिंडी का बीज होगा तो भिंडी ही उगेगी और अरहर का बीज होगा तो अरहर उगेगी, पानी वही का वही, जमीन भी वही की वही। अतः पुरुषों को मासिक धर्म नहीं आया, वर्ना आया होता तो पता चलता कि यह क्या है? मासिक धर्म तो कितनी मुश्किलों वाला है! और उसमें से कितनी अशुचि निकलती है। उस अशुचि के बारे में सुने तो भी इंसान पागल हो जाए। लेकिन स्त्री बताती नहीं है कभी भी, कि क्या अशुचि निकलती है? इसलिए पति बेचारा समझता है कि कुछ भी नहीं है।

मोह व कपट के परमाणु अलग हैं अंदर। स्त्री के हिसाब से वे उत्पन्न होकर परिणमित होते हैं। वह खीर हो या जलेबी हो, वह स्त्री के बीज के अनुसार वह परिणमित होता है। पुरुष बीज हो तो पुरुष के बीज अनुसार परिणमित होता है। उसकी हद होती है। कुछ हद तक पुरुष के बीज का मोह रहता है, उस हद से बाहर नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : ये जो परमाणु हैं, उनका साइन्स क्या है वास्तव में?

दादाश्री : साइन्स यानी ये जो परमाणु हैं तो नेगेटिव परमाणु दुःखदायी होते हैं और पॉज़िटिव हों तो सुखदायी होते हैं। नेगेटिव सेन्स के सभी परमाणु दुःखदायी होते हैं, उन्हें अशुद्ध कहते हैं और पॉज़िटिव शुद्ध कहलाते हैं। सुख ही देते हैं, पॉज़िटिव।

आकर्षण, वह है मोह

प्रश्नकर्ता : कोई स्त्री पास में बैठी हो और ऐसे ज़्यादा कुछ हो जाए तो डर लगता है कि हम कुछ गलत कर रहे हैं, अंदर ऐसा लगता है लेकिन फिर भी अभी भी आकृष्ट हो जाता है।

दादाश्री : वह तो कर्म के उदय आपको खींचते हैं न! अभी तो आपको वह देखना पड़ेगा कि कर्म के उदय यहाँ खींच रहे हैं। सभी की ओर नहीं खींचते। चार बैठी हों तो एक के प्रति आकृष्ट होता है बाकी पर नहीं। यानी हिसाब है, पहले का, पिछला।

प्रश्नकर्ता : ऑफिस में काम कर रहे हों तब, जब वह व्यक्ति गुज़रे तभी अपनी नज़र ऊपर उठती है।

दादाश्री : हाँ, यानी वहाँ पर हिसाब है। इसलिए वहाँ पर प्रतिक्रमण करते रहना है। अतिक्रमण से वहाँ लिपटा हुआ है और प्रतिक्रमण से तोड़ दो। अतिक्रमण यानी पहले जो दृष्टियाँ की हैं, उनके प्रतिक्रमण करेंगे तो खत्म हो जाएगा।

जब तक दृष्टि में किसी भी चीज़ पर आकर्षण है, तब तक उसे मोह है। वह मोह गया। दर्शनमोह गया, चारित्रमोह रहा। वह तो कुछ देखते ही यदि बदलाव हो जाता हो तो दीवार को देखकर क्यों नहीं होता? बीच में कोई जानवर है, जो ऐसे बदलाव करवाता है। कौन सा जानवर? मोह नामक!

प्रश्नकर्ता : वह तो जितनी खुद की जागृति हो, तब पता चलता है कि अंदर कुछ बदलाव हुआ है, वर्ना कितना कुछ हो जाता है फिर भी पता नहीं चलता कि यह बदलाव हुआ है। पता ही नहीं चलता।

दादाश्री : जिसे भान ही नहीं है, उसे पता कैसे चलेगा? यह क्या हो रहा है? उसका भी भान नहीं है।

आकर्षण और मोह नहीं होने चाहिए। फिर बाकी गुनाह माफ कर देते हैं, ऑवर फ्लो हुआ हो या ऐसा वैसा कुछ हुआ हो तो उसे माफ कर देते हैं हम। हमें ऐसा कुछ नहीं है कि आपको गुनहगार ही बनाना है। हम समझते हैं कि घर में रहकर इस तरह रहना मुश्किल है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन रहा जा सकता है।

दादाश्री : रहा जा सकता है लेकिन उनकी अलग टोली हो, उसकी बात ही अलग है!

प्रश्नकर्ता : इस वातावरण में हो, तब तक सतर्कता रखना ताकि परीक्षा तो हो जाए न?

दादाश्री : सचमुच का टेस्ट होगा लेकिन अपना ज्ञान ऐसा है कि ज़रा सा आकर्षण हो जाए तो यों बीज पड़ा कि उखाड़कर फेंक देता है, तुरंत! फिर प्रतिक्रमण कर देता है, तुरंत ही। अपना विज्ञान इतना सुंदर है।

जहाँ आकर्षण है, वहाँ जोखिम समझ

स्त्री या विषय में रमणता की जाए, ध्यान किया जाए, निदिध्यासन किया जाए तो वह गाँठ पड़ जाएगी, विषय की। फिर कैसे खत्म होगी वह? तो कहते हैं कि, विषय विरुद्ध विचारों से खत्म हो जाएगी। इंसान केवल एक इतना ही संभाल ले तो कोई भी विषय-आकर्षण हो जाए तो अगर वहाँ पर तुरंत ही प्रतिक्रमण कर ले तो आगे उसका खाता बिल्कुल साफ रहेगा। ज़रा दो मिनट भी देर कर दे तो फिर उग निकलेगा। अतः यह तो प्रतिक्रमण से बंद होगा वर्ना यह तो बंद ही नहीं होगा न! फिर भी अगर पतन हो जाए तो जोखिमदारी नहीं रहेगी। लेकिन जहाँ पर भान ही नहीं रहे, वहाँ पर फिर आकर्षण हुआ तो फिर वहाँ सबकुछ ज्यों का त्यों पड़ा रहेगा। अतः देखते ही आकर्षण हो जाए, उसी के साथ उसका आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान और खराब विचारों को काटे तो बच सकेंगे, वर्ना कोई बचेगा ही नहीं इससे। यानी बहुत गहरा गड्ढा है यह तो।

यह आकर्षण क्यों होता है कि पहले की अज्ञानता से। हमें समझ नहीं थी इसलिए उसके साथ रमणता की थी, इसलिए फिर से आकर्षण खड़ा हो जाता है। अतः हमें समझ जाना चाहिए कि अब इसका कुछ हिसाब है।

प्रश्नकर्ता : वह पता तो चलता है लेकिन फिर भी बार-बार विचार आते रहते हैं।

दादाश्री : हाँ। लेकिन विचार आएँ तो फिर से उन्हें, वे जो विचार आएँ, उन सब को तोड़ना पड़ेगा। जैसे-जैसे आते जाएँ, वैसे-वैसे तोड़ते जाना है, आते जाएँ वैसे-वैसे तोड़ते जाना है। हर एक को देखकर प्रतिक्रमण करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : वह समझ में तो आता है कि कितनी बड़ी गलती की थी!

दादाश्री : लेकिन गलती तो की थी, तभी तो अंदर आया न! एक विचार तक भी आए तो उसे कैसे तोड़ना, उतना आना चाहिए न! उसे उसमें पूरा दिन गुज़ारना पड़ेगा, दो-दो घंटे। तब छेदन होगा वर्ना नहीं। उन्हें (कर्म) बाँधते समय कुछ सोचा ही नहीं था न! पूरी रात उल्टा लेटकर फिर पूरी रात विचार करता रहा।

प्रश्नकर्ता : 'उल्टे लेटकर विचार करते हैं' इसका मतलब समझ में नहीं आया।

दादाश्री : उसे कुछ अट्रैक्टिव लगा इसलिए फिर वहाँ वह उल्टा लेटकर सोचता ही रहता है। बाद में वह रमणता करता रहता है। अब वह तो चली गई तो अब क्यों रमणता कर रहा है? भाई उल्टा लेटकर रमणता करता है, अंदर वह टेस्ट आता है न एक तरह का। अब यदि रमणता ब्रह्मचर्य में रहे, उससे फिर कार्य ब्रह्मचर्य होगा। पतन कब होता है? रमणता अब्रह्मचर्य रहे, तब से होता है।

तेरी इस तरह की कोई दखल नहीं है न, श्री विज़न रहता है न?

प्रश्नकर्ता : फिर भी कभी कभार कच्चा पड़ जाता है।

दादाश्री : ऐसा! उस समय बायें हाथ से दाहिने गाल पर

थप्पड़ मार देता है?! तब क्या करता है? 'क्या समझता है?' कहकर एक लगा देना।

विषय रमणता की हो तो प्रतिक्रमण करके उसे धो देना। बाद में दांत-वांत तोड़ दें तो क्या दिखेगा, ऐसा सब देखना चाहिए। थ्री विजन (देखने) तो कहना चाहिए न।

प्रश्नकर्ता : लेकिन थ्री विजन देखने के बावजूद भी वह बार-बार याद आता है।

दादाश्री : यह याद, वह तो मन का काम है, तेरा क्या जाता है? तुझे 'देखते' ही रहना है।

प्रश्नकर्ता : तो इस पर से ऐसा लगता है कि अभी तक वह टूटा नहीं है।

दादाश्री : टूटेगा कैसे लेकिन? वह तो उसका सारा कस (अर्क) निकल जाएगा, तब अलग होगा। तब तक जितना कस (अर्क) भरा हुआ है, उसे हमें देखते ही रहना है।

प्रश्नकर्ता : लंबे समय तक विचार आएँ तो उनमें तन्मयाकार हो जाते हैं।

दादाश्री : विचार तो आएँगे, वह तो, जितना लंबा है उतने विचार आते ही रहेंगे। उनका हिसाब खत्म हो जाएगा तो मन बंद हो जाएगा, वह फिर दूसरा पकड़ लेगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह हिसाब कब पूरा होगा?

दादाश्री : अभी तो बहुत सारा है। बेहिसाब। अभी तो कोई हिसाब ही नहीं है। अभी तो इस पहाड़ का पहला पत्थर हटा है। लेकिन जो यहाँ से तुरंत काट दे, उसके लिए फिर कुछ खास नहीं रहेगा। दिखाई दे, तभी से प्रतिक्रमण करे और फिर किसी रमणता में नहीं पड़े, रात को, कहीं भी। ज़रा सा भी उसका

विचार आया कि रमणता में पड़ा नीचे, स्लिप हुआ कहलाएगा। ये तो रमणता से ही ये सारे दोष खड़े हुए है न! इसलिए उल्टे होकर फिर उसमें भोग लेते हैं, वह मैं देखता हूँ न!

दृष्टि बदलने के बाद रमणता शुरू होती है। दृष्टि बदले तो उसका भी कारण है। उसके पीछे पिछले जन्म के कॉज़ेज़ हैं। इसलिए हर किसी को देखकर दृष्टि नहीं बदलती। कुछ खास लोगों को देखे, तभी दृष्टि बदलती है। कॉज़ेज़ हों, उसका पहले का हिसाब चल रहा हो और बाद में रमणता हो जाए तो समझना कि बहुत बड़ा हिसाब है। अत: वहाँ पर अधिक जागृति रखना। उसके सामने प्रतिक्रमण के तीर चलाते रहना। आलोचना-प्रतिक्रमण और प्रत्याख्यान, ज़बरदस्त रहने चाहिए।

नियम आकर्षण - विकर्षण के

स्पर्श हो जाए या ऐसा वैसा कुछ हो जाए तो आकर मुझे बता देना तो मैं तुरंत साफ कर दूँगा।

प्रश्नकर्ता : नहीं। वह कभी भी, कहीं भी नहीं।

दादाश्री : लेकिन गलती से ऐसा हो जाए तो आकर तुरंत मुझे बता देना क्योंकि एक ही टच से अंदर इलेक्ट्रिसिटी का जो अट्रैक्शन होता है, वह इलेक्ट्रिसिटी फिर हमें निकालनी पड़ेगी।

प्रश्नकर्ता : मैं कितने सालों से मार्क कर रहा हूँ कि मैं बैठा होऊँ तो मेरे नज़दीक कोई स्त्री आती ही नहीं है। मुझसे यों दूर ही रहती है!

दादाश्री : बहुत अच्छा। इतना अच्छा है। बड़ा पुण्य लेकर आए हो।

प्रश्नकर्ता : मैं किसी भी स्त्री के साथ बात करता हूँ, जान-पहचान वाली हो या कोई और हो, लेकिन उसके सामने कभी भी यों नज़र मिलाकर बात नहीं करता।

दादाश्री : ठीक है। वह बहुत अच्छा है। यह तो मैं तुम्हें सावधान कर रहा हूँ कि कभी यों गलती से हाथ लग जाए न, तो मुझे बताना, स्त्री जाति जान-बूझकर छू जाती है, कई बार तो।

प्रश्नकर्ता : वह इलेक्ट्रिसिटी कैसी होती है? आपने कहा न कि 'इलेक्ट्रिसिटी ऐसी होती है कि मुझे धोनी पड़ेगी।'

दादाश्री : उसके परमाणुओं का असर हो जाता है। अट्रैक्शन के परमाणु बढ़ते जाते हैं और आँखों से देखा, उसके परमाणु सूक्ष्म होते हैं और सूक्ष्म में से स्थूल खड़ा होता है और फिर उसमें से आकर्षण होता है। आकर्षण बढ़ता ही जाता है। आकर्षण बढ़कर फिर उसका विकर्षण होता है। विकर्षण शुरू होना हो, तब पहले कार्य होता है। फिर विकर्षण होता रहता है। कार्य शुरू हुआ, तभी से विकर्षण शुरू होता है। कार्य की शुरूआत तक आकर्षण होता रहता है और कार्य पूरा हो जाने पर विकर्षण होता रहता है। परमाणुओं का अट्रैक्शन ऐसा हैं।

अब दिक्कत नहीं आएगी। दादा साथ हैं। दादा मेरे साथ हैं, ऐसे बोलोगे तो भी राह पर आ जाएगा।

प्रश्नकर्ता : परमाणुओं का यह नया विज्ञान बताया।

दादाश्री : यह सब कहने जैसा नहीं है। बाहर कहने जैसा नहीं है। यह तो निजी तौर पर लोगों को जितनी ज़रूरत हो, उतनी ही बात करते हैं और बाहर बताने का क्या अर्थ है? लोग, जगत् छूए बिना रहने वाला नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो उस स्पर्श से परमाणु उसे नीचे कहाँ तक घसीटकर ले जाते हैं?

दादाश्री : हाँ, मतलब परमाणु का अट्रैक्शन ही सब काम करता है। उस बेचारे के तो हाथ में ही नहीं रहती सत्ता और जब विकर्षण होता है, तब उसे अलग नहीं होना हो फिर भी वे परमाणु ही खुद विकर्षण करवाते हैं, अलग करवा देते हैं।

प्रश्नकर्ता : विकर्षण होता है तब खुद परमाणु ही अलग करवा देते हैं।

दादाश्री : हाँ, खुद ही विकर्षण करवा देते हैं, उसे अमल देकर।

प्रश्नकर्ता : मतलब वह कैसे?

दादाश्री : उसका अमल फल देकर और खुद ही विकर्षण रूपी बन जाता है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् यह उसका नियम ही है कि यदि आकर्षण हुआ तो फिर उसका ऐसा विकर्षण परिणाम आएगा ही।

दादाश्री : आकर्षण-विकर्षण, यह नियम ही है। आकर्षण कब तक कहलाएगा? विकर्षण जब तक इकट्ठा नहीं होता, तब तक फल नहीं देता है। विकषर्ण का संयोग इकट्ठा हुआ कि फल देना शुरू कर देगा।

प्रश्नकर्ता : आकर्षण फल देना शुरू कर दे तो, उसके बाद क्या होता है?

दादाश्री : फिर खत्म हो गया! इंसान मर ही गया। आप ब्रह्मचर्य के निश्चय वालों को कोई परेशानी नहीं है।

एक बार भोगा कि गया

यह विषय ऐसी चीज़ है कि जिस तरह मन और चित्त जा रहे हों, उन्हें उस तरह नहीं रहने देता। और एक बार इसमें पड़ा कि इसी में आनंद मानकर चित्त का वहाँ जाना बढ़ जाता है। और 'बहुत अच्छा है, बहुत मज़ेदार है' ऐसा मानकर निरे अनगिनत बीज डल जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : कईयों को तो इसमें रुचि ही नहीं होती, रुचि

उत्पन्न भी नहीं होती और कईयों में वह रुचि बहुत अधिक भी होती है। वह पहले का लेकर ही आया होता है न?

दादाश्री : सिर्फ यह विषय ही ऐसा है कि इसमें बहुत गड़बड़ हो जाती है। एक बार विषय भोगा कि फिर उसका चित्त वहीं का वहीं जाता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह पूर्व का लेकर आया होता है न वैसा?

दादाश्री : उसका चित्त वहीं का वहीं जाता है, वह पूर्व का लेकर नहीं आया। लेकिन फिर उसका चित्त निकल ही जाता है, हाथ से! खुद मना करे फिर भी निकल जाता है। इसलिए अगर ये लड़के ब्रह्मचर्य के भाव में रहें तो अच्छा है और फिर अपने आप जो स्खलन होता है, वह तो *गलन* कहलाता है। रात में हो गया, दिन में हो गया, वह सब *गलन* कहलाता है लेकिन इन लड़कों को यदि एक ही बार विषय छू गया हो न तो फिर दिन-रात उसी के सपने आते रहेंगे।

प्रश्नकर्ता : ये जो खराब विचार आते हैं, वे भी चित्त के बगैर आ सकते हैं?

दादाश्री : हाँ, चित का और विचार का कोई लेना-देना नहीं।

प्रश्नकर्ता : ऐसा मान लें कि 'मुझे बाहर से किसी चीज़ का विचार आया तो वह बाहर की चीज़ अपने चित्त का हरण करती है।' ऐसा है या नहीं?

दादाश्री : नहीं, उन दोनों चीज़ों का बैलेन्स नहीं है। यह हो तो यह होगा ही, ऐसा संभव नहीं है। शायद हो सकता है, लेकिन यह हो तो यह होगा ही, ऐसा नहीं है। कई बार सिर्फ विचार होते हैं, चित्त का हरण शायद न भी हुआ हो। कई बार चित्त गया हो लेकिन विचार में न भी हो। ऐसा हो सकता है और नहीं भी हो सकता।

मुक्त दशा का थर्मामीटर

तुझे ऐसा अनुभव है कि जब विषय में चित्त जाता है, तब ध्यान ठीक से नहीं रह पाता?

प्रश्नकर्ता : चित्त यदि ज़रा भी विषय के स्पंदनों को टच करके रहे तो कितने ही समय तक तो खुद की स्थिरता नहीं रहने देता और चित्त उसे छूकर वापस अलग हो गया हो तो खुद की स्थिरता नहीं जाती। वह यदि एक ही बार यों 'टच' हुआ हो, वह भी स्थूल में नहीं लेकिन सूक्ष्म में भी हुआ हो, तो भी वह कितने ही समय तक हिलाकर रख देता है।

दादाश्री : हमारा चित्त कैसा होगा?! वह कभी भी जगह से हटा ही नहीं है! हम बोलते हैं तब निरंतर यों मुरली की तरह डोलता रहता है। तब जाकर चित्त की प्रसन्नता उत्पन्न होती है। वर्ना मुँह खिंचा हुआ रहता है, जुबान भी खिंची हुई रहती है। लोग तो आँखें पढ़कर ही बता देते हैं कि 'यह खराब दृष्टि वाला है।' जिसकी ज़हरीली दृष्टि हो उसके लिए भी लोग बता देते हैं कि 'इसकी आँखों में ज़हर है।' उसी तरह यह भी समझ सकते हैं कि आँखों में वीतरागता है। लोग सबकुछ समझ सकते हैं, लेकिन दाल-चावल-रोटी-सब्ज़ी खाकर सोचेंगे तो! लेकिन खाकर सो जाएँ तो नहीं समझ सकेंगे।

मैं क्या कहना चाहता हूँ कि पूरी दुनिया में घूमो। लेकिन यदि कोई भी चीज़ आपके चित्त का हरण नहीं कर सके तो आप स्वतंत्र हो। कितने ही सालों से मैंने अपने चित्त को देखा है कि कोई चीज़ इसे हरण नहीं कर सकती इसलिए फिर मैं अपने आप समझ गया कि, 'मैं बिल्कुल संपूर्ण स्वतंत्र हो चुका हूँ।' मन में भले ही कैसे भी खराब विचार आएँ उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन चित्त का हरण तो होना ही नहीं चाहिए।

भटकती वृत्तियाँ चित्त की

चित्त वृत्तियाँ जितनी भटकेंगी, उतना ही आत्मा को भटकना पड़ेगा। चित्त वृत्ति जिस जगह जाएगी, उसी जगह आपको भी जाना पड़ेगा। चित्त वृत्ति नक्शा बना देती है। अगले जन्म के लिए आने-जाने का नक्शा बना देती है। फिर उस नक्शे के अनुसार हमें घूमना पड़ता है, तो कहाँ-कहाँ घूम आती होंगी चित्त वृत्तियाँ?

प्रश्नकर्ता : लेकिन चित्त भटके तो उसमें हर्ज क्या है?

दादाश्री : चित्त जैसी प्लानिंग (योजना) करेगा, उस अनुसार हमें भटकना पड़ेगा। इसलिए ज़िम्मेदारी अपनी है, जितना भी भटकता रहेगा उसकी!

चित्त चेतन है, वह जहाँ-जहाँ चिपका, वहाँ-वहाँ भटकते, भटकते, भटकते ही रहना पड़ेगा!

प्रश्नकर्ता : चित्त हर कहीं नहीं चिपक जाता, लेकिन अगर एक जगह चिपक जाए तो क्या वह पहले का हिसाब है?

दादाश्री : हाँ, हिसाब है तभी चिपकता है। लेकिन अब हमें क्या करना चाहिए? पुरुषार्थ वह कि जहाँ हिसाब हो वहाँ पर भी नहीं चिपकने दे। चित्त जाए लेकिन धो दिया तो, तब तक वह अब्रह्मचर्य नहीं माना जाता। लेकिन अगर चित्त जाए और धोए नहीं तो वह अब्रह्मचर्य कहलाता है। इसीलिए कहा है न, 'इसलिए सावधान रहना मन-बुद्धि, निर्मल रहना चित्तशुद्धि।' मन-बुद्धि को सावधान करते हैं। अब हमें चित्तवृत्ति निर्मल रखने के लिए क्या करना पड़ेगा? आज्ञा में रहना पड़ेगा। हमारा चित्त संपूर्णतः शुद्ध रहता है, इसलिए फिर कुछ छूता भी नहीं है और बाधा भी नहीं डालता। आप जैसे-जैसे आज्ञा में रहते जाओगे, वैसे-वैसे पहले का जो छू चुका होगा, जैसे कि चंद्र ग्रहण लिखा होता है

कि आठ बजे से एक बजे तक, मतलब आठ बजे शुरू होता है और फिर एक बजे के बाद फिर से चंद्र ग्रहण नहीं होता। उसी तरह आज्ञा में रहा करो ताकि जो ग्रहण हो गया है, वह छूट जाए और नया जोखिम उड़ जाए तो फिर कोई परेशानी नहीं रहेगी न!

चित्त की पकड़, छूटती है ऐसे...

जो चित्त को डिगा दे, वे सभी विषय हैं। ज्ञान से बाहर जिस-जिस चीज़ में चित्त जाता है, वे सभी विषय हैं।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा कि भले ही कैसे भी विचार आएँ, उसमें हर्ज नहीं है लेकिन चित्त वहाँ पर जाए, उसमें हर्ज है।

दादाश्री : हाँ, चित्त का ही झंझट है न! चित्त भटकता है, वही झंझट है न! विचार तो चाहे कैसे भी हों, उसमें हर्ज नहीं है लेकिन इस ज्ञान के मिलने के बाद चित्त विचलित नहीं होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यदि कभी ऐसा हो जाए तो उसका क्या?

दादाश्री : हमें वहाँ पर फिर ऐसा पुरुषार्थ करना पड़ेगा कि 'अब ऐसा नहीं होगा'। पहले जितना जाता था, उतना ही अभी भी जाता है?

प्रश्नकर्ता : नहीं, उतना स्लिप नहीं होता, फिर भी पूछ रहा हूँ।

दादाश्री : नहीं, लेकिन चित्त तो जाना ही नहीं चाहिए। मन में भले ही कैसे भी खराब विचार आएँ, लेकिन उसमें हर्ज नहीं है। उन्हें हटाते रहो। उसके साथ बातचीत का व्यवहार करो कि फलाना मिलेगा तो वह सब कब करोगे? उसके लिए गाड़ियाँ, मोटरें वगैरह कहाँ से लाएँगे? या फिर सत्संग की बात करेंगे तो मन वापस नये विचार दिखाएगा।

पहले जिन पर्यायों का खूब वेदन किया हो, अभी वे अधिक आते हैं तब चित्त वहीं चिपका रहता है। जैसे-जैसे वह चिपकाव, पकड़ धुलती जाएगी, वैसे-वैसे फिर चित्त वहाँ पर ज़्यादा नहीं रहेगा। चिपकेगा और अलग हो जाएगा। *अटकण* आए न तो, वहीं चिपका रहता है। तब हमें क्या कहना चाहिए? तुझे जितने नाच करने हों, उतने कर। अब 'तू ज्ञेय और मैं ज्ञाता' इतना कहते ही वह मुँह फेर देगा। वह नाचेंगे तो ज़रूर, लेकिन उनका टाइम होगा उतनी ही देर नाचेंगे। फिर चले जाएँगे। आत्मा के सिवा इस जगत् में और कुछ भी अच्छा नहीं है। यह तो, पहले जिससे परिचय किया हुआ हो, पहले का वह परिचय अभी गड़बड़ करवाता है।

चित्त अधिक से अधिक किस में फँसता है? विषय में! और जितना चित्त फँसा, उतना ही ऐश्वर्य टूट गया। ऐश्वर्य टूटा कि जानवर बन गया। अत: विषय ऐसी चीज़ है कि उसी से सारा जानवरपन आया है। मनुष्य में से जानवरपन, विषय के कारण ही आया है। फिर भी हम क्या कहते हैं कि यह तो पहले का भरा हुआ माल है, वह निकलेगा तो सही लेकिन अगर वापस नये सिरे से संग्रह न करो तो वह उत्तम कहलाएगा।

[2.9]
'फाइल' के सामने सख़्ती

विकारी दृष्टि के सामने ढाल

प्रश्नकर्ता : वह यदि मोह का जाल डाले तो उससे कैसे बचें?

दादाश्री : तुम्हें नज़र ही नहीं मिलानी है। तुम्हें पता है कि यह जाल खींच लेगा, तो उसके साथ नज़र ही नहीं मिलानी है।

प्रश्नकर्ता : लेडीज़ के साथ नज़र से नज़र नहीं मिलानी चाहिए?

दादाश्री : हाँ, नज़र से नज़र नहीं मिलानी चाहिए और जहाँ तुम्हें लगे कि यहाँ तो फँसाव ही है, तो वहाँ पर तो उससे मिलना ही नहीं चाहिए। तुम्हें तुरंत ऐसा पता चल जाएगा न कि यह बुरी है?

प्रश्नकर्ता : व्यवहार में जो अपने जान-पहचान वाले होते हैं, वे आकर हम से बात करें तो उसका हमें समभाव से निकाल करना चाहिए, लेकिन उसमें उसकी दृष्टि खराब हो तो हमें क्या करना चाहिए?

दादाश्री : तो तुम्हें नीची नज़र रखकर सारा काम करना चाहिए। छोटी उम्र के हो, इसमें और कुछ नहीं समझते, उसके सामने ऐसा कर देना चाहिए कि और उसे ऐसा ही लगे कि यह

कुछ समझता ही नहीं है, तो फिर फिर वह चली जाएगी। तुझे कोई ऐसी मिल जाए, तो वह ऐसा समझेगी कि यह सब समझ गया है? क्या तू ऐसा बताने जाता है? वह सब बेवकूफी कहलाएगी।

व्यापारी का बेटा व्यापार करने बैठा हो तो सौ रुपये की चीज़ की कीमत सौ रुपये के बदले अठासी रुपये बोल दे तो फिर वह ग्राहक कहेगा, 'माल बताओ।' तब वह लड़का समझ जाता है कि बोलने में मेरी गलती हो गई है, तो फिर वह क्या करेगा? उन्हें कहेगा कि, 'ऐसा माल छियासी में मिलेगा और दूसरा छियासठ वाला भी है और एक सौ पाँच रुपये वाला भी है' ऐसा सब बोलने से गलतियाँ सब खत्म हो जाएँगी और वह ग्राहक समझ जाएगा कि यह बात पूरी अलग है। उसी तरह इसमें भी सामने वाले इंसान को पता चल जाता है कि यह माहिर नहीं है। हम माहिर हैं या नहीं, ऐसा वह एक बार देख लेती है। ऐसा पता चल जाए कि माहिर नहीं है, तो राह पर आ जाएगा, फिर वह छोड़ देगी और बेवकूफ बन जाए तो उसका सब चला जाएगा। वह फँसा देगी। यदि अपना मन परेशान हो जाए तो हमें बुद्धि का इस्तेमाल करना है कि 'तुझ में अक्ल नहीं है।' ऐसा कहेंगे तो वह अपने आप ही भाग जाएगी लेकिन अगर भाग गई, तो फिर दवाई लगानी पड़ेगी। इस तरह भगाने में फायदा नहीं है, लेकिन वह तो अगर और कोई चारा नहीं हो तो। अपना मन परेशान हो जाए, तब ऐसा करना पड़ता है। वर्ना ऐसे के साथ नज़र ही नहीं मिलाएँ तो बहुत हो गया। सब से अच्छा यह कि नज़र ही नहीं मिलानी चाहिए। नीचे देखकर चलना, आगे-पीछे हो जाना, वे सब सरल मार्ग है।

आकर्षण में बह मत जाना, जहाँ आँखें आकृष्ट हों, वहाँ से दूर ही रहना। जहाँ सीधी आखें हों, ऐसी सब जगह व्यवहार करना लेकिन जहाँ आँखें आकर्षित होने लगें, वहाँ पर जोखिम है, लाल बत्ती है। किसी के भी साथ नज़रें मिलाकर बात मत करना, नज़रें नीची रखकर ही बात करनी चाहिए। दृष्टि से ही बिगड़ता

है। उस दृष्टि में विष होता है और फिर विष चढ़ जाता है। अत: यदि दृष्टि गड़ गई हो और नज़र खींच गई हो तो तुरंत प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए। इसमें तो सावधान ही रहना चाहिए। जिसे यह जीवन बिगड़ने नहीं देना है, उसे बिवेयर रहना चाहिए। जान-बूझकर कोई कुएँ में गिरता है क्या?!

विकारी चंचलता

अपने यहाँ कोई चाय पीए, खाए, सबकुछ करे फिर भी बाहर धर्मध्यान रहता है और अंदर शुक्लध्यान रहता है। किसी को ही, निकाचित कर्म वाला हो, उसी का मन विकारी हो जाता है, तब वह फिसल गया कहलाता है। निकाचित कर्म वाला कोई हो सकता है, इसमें। उसे विकारी विचार आते हैं। वह चंचलता वाला होता है। चंचल हो चुका होता है। चंचल को आप पहचानते हो या नहीं पहचानते? इधर देखता है, उधर देखता है। उसे कहें कि 'भाई, क्यों ऐसे हो रहे हो।' तो वह इसलिए कि विकारी विचार आया इसलिए चंचल हो गया और इस कारण से धर्मध्यान और शुक्लध्यान दोनों चले जाते हैं। बाकी अपने महात्माओं को धर्मध्यान और शुक्लध्यान दोनों रहते हैं। फिर भले ही खाए-पीए, ओढ़कर सो जाए, लेटकर सो जाए।

ऐसे निकाचित कर्म वाले को हम से पूछना चाहिए कि 'हमें क्या करना चाहिए? अब कौन सी दवाई लगाएँ?' बहुत गहरे घाव हो जाते हैं। ऐसे कर्म वाले हों तो हमें पूछने में हर्ज नहीं है। वह अकेले में पूछे तो हम दवाई बता देंगे कि यों दवाई लगाना ताकि घाव भर जाएँ।

फाइल बन गई, वहाँ...

प्रश्नकर्ता : एक ही स्त्री से संबंधित विचार बार-बार आएँ तो क्या ऐसा समझना है कि उसके प्रति राग है?

दादाश्री : वह बाँधी हुई फाइल है। अब, अगर विचार आएँ

वह फिर चले जाएँ और उसके बाद कुछ भी नहीं हो तो इसका मतलब उसे अभी तक फाइल नहीं बनाया है, अभी तक नई फाइल नहीं लाए हो। जबकि जिसके बारे में बार-बार विचार आते रहें, वह तो बाँधी हुई फाइल है, कितने ही केस हैं अंदर।

प्रश्नकर्ता : पहले कभी भी मिले नहीं हों, पहचान नहीं हो, सिर्फ आधे घंटे की ही मुलाकात हो, वैसे।

दादाश्री : उसी को फाइल कहते हैं। फाइल मतलब जो अपने दिमाग में घुस जाए। वे सब फाइल कहलाते हैं।

प्रश्नकर्ता : यह तो भूत की तरह घुस गया है।

दादाश्री : हाँ, भूत की तरह घुस जाता है।

प्रश्नकर्ता : उसके उपाय में प्रतिक्रमण तो चल ही रहे है।

दादाश्री : बस वही। दूसरा कोई उपाय नहीं है और वहाँ पर बहुत ही सावधान रहना पड़ता है, बहुत जागृति रखनी पड़ती है। तेरा ऐसा कुछ तो नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : तीन-चार दिन से वही विचार आ रहे हैं भूत की तरह, ऐसा पहले कभी नहीं हुआ।

दादाश्री : वह तो बल्कि अच्छा है, तीन-चार दिन से, लेकिन हमारी मौजूदगी में आ रहे हैं न? यहाँ हमारे पास हो तब आ रहे हैं न? बहुत अच्छा, निबेड़ा आ जाएगा। निकल जाएगा। जब सत्संग नहीं हो और अकेले हों, तब अगर यह सब आए, तो फिर वे दूसरी कल्पना करेंगे।

प्रश्नकर्ता : बुद्धि वापस ऐसी कल्पना करती है। लेकिन मैं हटा देता हूँ।

दादाश्री : फिर दूसरी कल्पना करती है।

प्रश्नकर्ता : शादी तक की।

दादाश्री : हाँ। सब करती है, इसलिए सावधान रहना है। अब बिवेयर बोर्ड लगाना, चोर जेब में से लूट ले जाए, उसमें हर्ज नहीं है। वह सब तो फिर से आ जाएगा लेकिन इस विषय में लुट गया! एक दिन का क्या फल मिलता है, अगर सचमुच लुट जाए तब? एक दिन में ऐसे लुट जाए तो क्या फल मिलेगा?

प्रश्नकर्ता : पाशवता कहलाएगी, अधोगति।

दादाश्री : हँ। बिवेयर लिखकर रखना, हर कहीं। बाकी कही पूरी दुनिया के साथ नहीं संभालना है। जहाँ आकर्षण हो रहा हो वहीं ध्यान रखना है। खींचने वाला कौन? बहुत हुआ तो पाँच, दस या पंद्रह होते हैं। ज़्यादा नहीं होते, उतना ही ध्यान रखना है। औरों की तो गोदी में बैठेंगे फिर भी आकर्षण नहीं होगा। इतनी सेफ साइड वाला जगत् है यह। तुम्हारे पाँच, दस या पंद्रह होंगी, बहुत छैल छबीला होगा तो उसकी पचास होंगी।

सामने 'फाइल' आए, तब...

प्रश्नकर्ता : कभी-कभी यह समझ नहीं रह पाती।

दादाश्री : अपना फोर्स टूट जाएगा तो वह समझ चली जाएगी। अपना निश्चय टूट जाएगा तो समझ चली जाएगी। अपने निश्चय से ही रह पाएगी। वर्ना *पुद्गल* ऐसा नहीं है बेचारा। *पुद्गल* को अच्छा-बुरा नहीं लगता। वह तो अगर 'बहुत अच्छी चीज़, अच्छी चीज़, अच्छी चीज़ है', ऐसा करे तभी वह धक्का मारेगा। 'खराब है, खराब है', ऐसा करें तो फिर वह टूट जाएगा। जहाँ मन खिंच रहा हो, वह फाइल आए, उस समय मन चंचल ही रहता है।

उस समय मन चंचल हो जाता है और मुझे अंदर बहुत दु:ख होता है कि इसका मन चंचल हो गया था इसलिए मेरी नज़र सख्त हो जाती है।

फाइल आए, उस समय अंदर हिलाकर रख देती है। ऊपर

जाता है, नीचे जाता है, ऊपर जाता है, नीचे जाता है। उसके विचार आते ही! वह तो अंदर निरी गंदगी भरी है, कचरा माल है। अंदर आत्मा की ही कीमत है!

फाइल गैरहाज़िर हो और याद आती रहे तो बहुत जोखिम कहलाता है। फाइल गैरहाज़िर हो और याद नहीं आए, लेकिन उसके आते ही तुरंत असर हो जाए, वह सेकन्डरी जोखिम। तुम्हें उसका असर होने ही नहीं देना है। स्वतंत्र बन जाने की ज़रूरत है। उस समय अपनी लगाम टूट ही जाती है। फिर लगाम रह नहीं पाती न!

लकड़ी की पुतली अच्छी

एक यही गलती नहीं होनी चाहिए। फाइल हो और संडास करने बैठी हो और कहे कि धो दो। तो क्या कहेंगे? धो देते हैं सब?

प्रश्नकर्ता : देखना ही अच्छा नहीं लगता तो धोना कैसे अच्छा लगेगा?

दादाश्री : तू तो धो भी देगा क्या? चाटेगा भी? मुझे लगता है! वह संडास करती हुई दिखे और फिर तुझे धोने को कहे, 'वर्ना नहीं बोलूँगी' कहे तो?

प्रश्नकर्ता : चलेगा, नहीं बोलेगी तो।

दादाश्री : उस समय छोड़ देगा, तो आज ही छोड़ दे न?

इसलिए कृपालुदेव ऐसा लिखते हैं, 'लकड़ी की पुतली तो अच्छी है।' उसमें से संडास नहीं निकलती। निरी गंध है यह तो! उसका मुँह देखो तो वह भी बदबू मारता है। भ्रांति चढ़ जाती है न इसलिए नशा चढ़ जाता है। तब भान नहीं रहता। इसलिए फिर घिन नहीं आती।

प्रश्नकर्ता : सभी को इसका अनुभव है ही!

दादाश्री : उस घड़ी जब संडास करने बैठी हो, तब देखे तो चंचल रहेगा या नहीं?

प्रश्नकर्ता : नहीं रहेगा। प्रेम टूट जाएगा।

दादाश्री : प्रेम है ही कहाँ यह? केवल साइकलॉजिकल इफेक्ट है। उस समय हमें लपेटते रहना पड़ेगा। ये सीधा लपेटा था, उसे उल्टा लपेटने से निकल जाएगा, खत्म हो जाएगा। 'मेरा, मेरा' करके चिपका था। अब 'नहीं है मेरा, नहीं है मेरा' करेगा तो चला जाएगा।

अग्नि और 'फाइल' एक से

जहाँ आकर्षण होता है, वहाँ जागृत रहो। आकर्षण नहीं हो रहा हो तो हर्ज नहीं है। बार-बार आकर्षण हो रहा हो तो समझना कि यह फाइल है।

प्रश्नकर्ता : कुछ फाइलों के प्रति आकर्षण होता है।

दादाश्री : सावधान रहकर चलना। अपना यह ज्ञान है तो ब्रह्मचर्यव्रत रह सकता है क्योंकि शुद्धात्मा को अलग कर दिया है इसलिए रह सकता है। वर्ना और कहीं नहीं रह सकता। दादा द्वारा दिया गया, 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा कहते ही वह कम्प्लीट अलग हो जाता है। वह शंका रहित है। बाकी सब जगह शंका वाला।

प्रश्नकर्ता : 'खुद' अलग रहता है इसीलिए यह सब पता चल पाता है कि यह कोई फाइल आई और चंचलता हुई।

दादाश्री : हाँ, पता चलेगा ही न। वह अलग नहीं हुआ होता तो पता नहीं चल पाता, तन्मयाकार ही रहता। पता चलता है, हिल उठा है, ऐसा समझ में आता है। अब सब कैसे करना है, वह भी जानता है, सभी संयोग उसे (समझ में) आते हैं।

तेरा ठीक रहता है या फिर सब यों ही? अभी भी चंचल हो जाता है न?

प्रश्नकर्ता : मेरे साथ ऐसा कुछ हुआ ही नहीं।

दादाश्री : ऐसा हुआ है। मैं तो चंचलता को देखता हूँ न! तुझे पता नहीं चलता। देह चंचल हो जाए, वह तुझे पता नहीं चलता। मैं पहचान जाता हूँ न चंचलता को!

प्रश्नकर्ता : मन बिगड़ जाए, तब खुद को पता चलता है न?

दादाश्री : मन बिगड़े, विचार बिगड़े तो तुझे पता चल जाता है। लेकिन देह चंचल हो जाए तो वह पता नहीं चलता। देह चंचल हो जाती है। उसके सामने देखने की शक्ति होनी चाहिए। संडास में उसका रूप देख लेना चाहिए। सख्त ही रहना चाहिए। यह तो अच्छा लगता है। बिल्कुल सख्त, अग्नि समझकर अलग रहना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : दादा कभी-कभार उल्टी साइड का कॉन्फिडेन्स बढ़ जाता है।

दादाश्री : उसमें चोर नीयत होती है। सख्त नहीं हुआ तो समझना कि यहाँ कमी है अभी। जिससे खुद को नुकसान होता है, उससे यदि दूर नहीं रहे न तो मूर्ख ही कहलाएगा न? और यह तो अधोगति कहलाती है। इस गलती को नहीं चला सकते। विषय-विकार और मृत्यु दोनों एक समान ही हैं।

काटो सख्ती से 'उसे'

जिसकी फाइल बन ही चुकी हो, उसके लिए बहुत जोखिम है। उसके प्रति सख्त रहना चाहिए। सामने आ जाए तो आँखें दिखाना, तो वह फाइल डरती रहेगी। फाइल बन जाने के बाद तो बल्कि लोग चप्पल मारते हैं, तो वह फिर से मुँह दिखाना ही

भूल जाता है। कई लोग एकदम सतर्क रहते हैं। जिसे सतर्क रहना है, उसे। वर्ना ढीला पड़ जाता है।

नज़र सख्त कर दें न तो फाइल बनेगी ही नहीं। उसे बुरा लगे ऐसा व्यवहार करेंगे तो फाइल नहीं बनेगी। मीठा व्यवहार करोगे तो चिपकेगी और खराब व्यवहार किया तो वह गुनाह दूसरे दिन माफ हो सकता है। हमें इस तरह बात करनी चाहिए कि वह हम से चिपके नहीं। वह गुनाह माफ होने का रास्ता है लेकिन यह चिपका, उसका गुनाह माफ होने का रास्ता नहीं है। उसी से यह संसार खड़ा रहा है सारा।

प्रश्नकर्ता : फाइल हो, उस पर हमें तिरस्कार नहीं हो रहा हो तो क्या जान-बूझकर तिरस्कार खड़ा करना चाहिए?

दादाश्री : हाँ। तिरस्कार क्यों नहीं होता? जो अपना इतना अहित कर रही है, उस पर तिरस्कार नहीं होता? मतलब अभी पोल है! चोर नीयत है! अपना अहित करे, अपना घर जला दिया हो फिर भी क्या हमें उसके प्रति तिरस्कार नहीं होना चाहिए? यह तो भीतर चोर नीयत है, ऐसा हम समझ जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : भीतर तिरस्कार होता है, लेकिन बाद में बुद्धि पलट देती है।

दादाश्री : पलट देती है, उसका कारण यह है कि चोर नीयत है।

प्रश्नकर्ता : बहुत परिचय हो चुका हो तो उसका अपरिचय कैसे करें? तिरस्कार करके?

दादाश्री : 'नहीं है मेरा, नहीं है मेरा' करके कई प्रतिक्रमण करना। 'नहीं है मेरा, नहीं है मेरा' करके फिर सब निकाल देना, फिर आमने-सामने मिल जाए तो उस समय सुना देना चाहिए, 'क्या मुँह लेकर घूम रही है, जानवर जैसी, यूज़लेस।' बाद में फिर वह मुँह नहीं दिखाएगी।

वहाँ है चोर नीयत

प्रश्नकर्ता : ज़बरदस्त अहंकार करके भी इस विषय को निकाल देना है।

दादाश्री : हाँ। बाद में इस अहंकार का इलाज कर सकते हैं लेकिन वह रोग कि जहाँ बलवा होने वाला हो, वहाँ दबा देना पड़ता है। यह तो नीयत चोर है, इसलिए मीठे रहते हैं। मैं समझ जाता हूँ।

प्रश्नकर्ता : जहाँ नीयत चोर है तो उसे सुधारने के लिए क्या करना चाहिए? उसका उपाय क्या है? निश्चय को स्ट्रोंग करना, वही न?

दादाश्री : अपना नुकसान करे तो उस पर द्वेष ही रहना चाहिए, खराब दृष्टि ही रहनी चाहिए। हमें मिलते ही वह घबरा जाए। सख्त हो गया है, पता चल जाएगा। ऐसा सख्त हो जाए तो फिर असर नहीं करेगा। फिर दूसरा ढूँढ लेगी वह।

प्रश्नकर्ता : आपके ज्ञान के बाद पता चलता है कि इसके साथ इतना सख्त हूँ और इतना नरम हूँ।

दादाश्री : हाँ। लेकिन नरम रहना वह पोल है। मैं तो जानता हूँ न सब कि यह पोल है।

प्रश्नकर्ता : जहाँ नरम रहते हैं, वहाँ कभी भी गुस्से वाली वाणी निकली ही नहीं है। बाकी जगह पर तो बहुत गुस्सा हो जाता है। आपकी बात बिल्कुल सही है।

दादाश्री : नीयत चोर है। हम तुरंत ही समझ जाते हैं न! बाहर तो एकदम नरम!

प्रश्नकर्ता : आप जो कह रहे हैं, हमें अभी भी वह समझ में नहीं आ रहा है।

दादाश्री : वह भी हम जानते हैं न! हम जमा नहीं करते! भले ही कितना भी आप प्रॉमिस दो फिर भी जमा नहीं करते। हम जमा कब करते हैं? वैसा वर्तन देखते हैं, तब।

प्रश्नकर्ता : यह एक बहुत बड़ा रोग हो गया है। खुद पर ज़रूरत से ज़्यादा विश्वास हो गया है, बेकार ही।

दादाश्री : भान ही नहीं है न, किसी भी तरह का। खुद पर और पराए पर भान ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : हम फाइल का तिरस्कार करें तो अंदर से ऐसा बताता है कि 'वह हमें गलत समझेगी।'

दादाश्री : गलत ही समझना चाहिए। उसे ऐसा लगना चाहिए कि हम पागल है। हमें किसी भी तरीके से तोड़ देना है और बाद में उसका इलाज हो जाएगा। यह बैर बंधा होगा, उसका इलाज हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : जब तक एक जगह पर भी फँसा हुआ रहे, तब तक दूसरी शक्ति प्रकट नहीं होती।

दादाश्री : यह तो मीठा पोइज़न है, पोइज़न और वह भी मीठा!

और 'फाइल' आए, उस समय तो सख्त हो ही जाना चाहिए तभी 'फाइल' काँपेगी! 'यूज़लेस फेलो' ऐसा भी कह देना अकेले में, ताकि वह बैर रखे। चिढ़ जाए तो भी हर्ज नहीं। चिढ़ जाए तो राग खत्म हो जाएगा, आसक्ति खत्म हो जाएगी सारी और वह समझ भी जाएगी कि अब यह फिर से मेरे हाथ में नहीं आएगा। वर्ना फिर वह मौका ढूँढती रहेगी। अब यह सब सँभालना।

फाइल तो अपने नज़दीक आए न, तभी से मन में कड़वा ज़हर जैसा हो जाना चाहिए, अभी ये कहाँ से? यह तो चोर

नीयत है! इतना ही सावधान रहने जैसा है। बाकी सभी कुछ खाना-पीना न, मैं कहा मना कर रहा हूँ?

सख्त, इस तरह हो सकते हैं

प्रश्नकर्ता : सामने वाली फाइल, वह हमारे लिए फाइल नहीं है, लेकिन उसके लिए हम फाइल हैं, ऐसा हमें पता चले तो हमें क्या करना चाहिए?

दादाश्री : तब तो और भी जल्दी खत्म कर देना। ज़्यादा सख्त हो जाना चाहिए। वह कल्पना करना ही बंद कर देगी न। न हो तो बेतुका बोलना। उससे कहना कि, 'चार थप्पड़ लगा दूँगा, यदि तू मेरे सामने आई तो! मेरे जैसा सिरफिरा नहीं मिलेगा कोई।' ऐसा कहोगे तो फिर वापस नहीं आएगी। वह तो इसी तरह खिसकेगी।

प्रश्नकर्ता : ऐसा क्रैक बोलना तो मुझे अच्छे से आता है।

दादाश्री : हाँ। तुझे ऐसा सख्त बोलना अच्छे से आता है और इन सभी को सिखाना पड़ता है। तुझे सहज आता है।

ढीला पड़ना, वह तो सब रोग ही है। यह तो तुम्हें भान ही नहीं है कि उल्टा बोलकर छूट सकते हैं। अपमान किसी को भी अच्छा नहीं लगता। जो फाइल हो, उसे भी अच्छा नहीं लगता। वह भी बेशर्म नहीं होती। अपमान करने पर क्या वह फाइल खड़ी रहेगी?! फिर कल्पनाएँ करना ही बंद कर देगी न? और जब तक यह ढीला रहेगा न, तब तक कल्पनाएँ करती रहेगी। उसके कल्पना करने से अपना मन ढीला पड़ जाता है। इफेक्ट है सारा। भले ही तेरी दृष्टि उस पर नहीं हो, लेकिन अगर वह कल्पना करे तो तेरे अंदर बहुत इफेक्ट होता है, इसलिए फिर गिरता है। इसलिए ऐसा कर देना चाहिए कि वह कल्पनाएँ करना ही बंद कर दे, बल्कि जब-तब गालियाँ दे। तब फिर अपने बारे में कहेगी,

'छोड़ो न उसकी बात, वह तो बहुत खराब है।' अत: यदि उल्टा सोचेगी तो हमें छोड़ देगी!

प्रश्नकर्ता : मतलब यदि हमें किसी के प्रति ऐसा बुरा विचार आए तो उसे भी आएगा ही, ऐसा?

दादाश्री : कई दिनों तक विचार आते रहें तो सामने वाले पर उसका असर पड़े बिना नहीं रहता। ऐसा है यह जगत्। इसलिए ऐसा सख्त बोलकर काट दो कि फिर से अपना नाम लेना ही बंद कर दे। दूसरे कई लड़के हैं, वहाँ जा न! यहाँ क्यों आ रही है? उसे ऐसा भी कह सकते हैं कि मेरे जैसा क्रैक हेडेड दूसरा कोई नहीं मिलेगा तो वह भी कहना शुरू कर देगी कि क्रैक हेडेड है। किसी भी रास्ते से छूटना है न हमें! अन्य सभी जगह सयाने बनना न!

तोड़ा जा सकता है लफड़ा कला से

अब्रह्मचर्य से तो यह सब ऐसा गड़बड़ है ही।

प्रश्नकर्ता : फिर खुद की दृष्टि से बाहर ही चले जाते हैं।

दादाश्री : विमुख ही हो जाता है! टच ही नहीं रहना चाहिए न! एक लड़की उसे छोड़ ही नहीं रही थी तो फिर किसी दूसरी लड़की को बुलाकर यों ही उसके साथ चलने लगा तो वह झगड़ने लगी! टैकल करना आना चाहिए। इसे कलाएँ आती हैं सभी। छूट गया मेरा भाई! इसे नहीं आती और तरह-तरह की गठरियाँ ही बाँधता रहता है।

प्रश्नकर्ता : कला सिखाईएगा।

दादाश्री : ये सिखाई तो हैं कितनी सारी! जो अकेले में कहने की होती हैं, वे भी! बंधा हुआ हो न उनमें से, फिर कोई एक जन खुद का तोड़ देने की कोशिश करे लेकिन टूटता नहीं

है। अगर वह तोड़ नहीं सके तो उसका फ्रैक्चर कर देना पड़ता है, वहाँ वहेम डाल देना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : कोई एक जन फ्रैक्चर करे, लेकिन सामने वाला नहीं करने देता उसे।

दादाश्री : सामने वाले का ही फ्रैक्चर करना है। खुद का फ्रैक्चर नहीं करना है। सामने वाला ही चिढ़ जाए कि यह तो बल्कि खराब निकला, बनावटी।

प्रश्नकर्ता : सामने वाले को ऐसा लगना चाहिए कि इसने बनावट की।

दादाश्री : अगर ऐसा रह कि 'यह टेढ़ा ही है' तो दिनोंदिन उसके अभिप्राय टूटते ही जाएँगे। बाद में कुछ और ऐसी-वैसी सुना दे, तब तुम्हें छूटना हो तो छूटा जा सकेगा।

प्रश्नकर्ता : यदि खुद का ही पूरी तरह से फ्रैक्चर नहीं हुआ हो तो? खुद का मन पूरी तरह फ्रैक्चर नहीं हुआ हो तो?

दादाश्री : तो फिर कौन मना कर रहा है? तो फिर यह समुद्र नहीं है? डूब जाएगा।

प्रश्नकर्ता : पहले खुद का फ्रैक्चर हो जाना चाहिए न?

दादाश्री : खुद का करने की ज़रूरत नहीं है। पहले सामने वाले का फ्रैक्चर कर देना, पूरा। बाद में जब तुम्हें खुद का करना होगा, तब हो सकेगा! जिसे यह करना है, उसका! पहले खुद का तो होगा ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : जब तक सामने वाले का आकर्षण है, तब तक खुद का पहले नहीं हो सकता, ऐसा है?

दादाश्री : कभी भी नहीं हो सकता। यदि सामने वाला गाली देना शुरू कर दे तो हमें जब छोड़ना हो तब छूट सकेंगे।

प्रश्नकर्ता : तो सामने वाले का फ्रैक्चर कैसे कर सकते हैं?

दादाश्री : हज़ार रास्ते हैं! नहीं तो एक दिन तो उसे मुँह पर कह देना कि 'क्या करूँ, मेरा मन दुविधा में हैं! तेरे जैसी दो-तीन हैं। सभी को वचन दिए हैं' कहना। यह तो यहाँ से चिट्‌ठी लिखता है कि, 'मुझे अच्छा नहीं लगता तेरे बिना।' तब छूटेगा कैसे? फिर और ज़्यादा चिपकेगी वह। अब तुझे आ जाएगा न?

अपना बनाया कहकर डियर, तोड़ो देकर फियर

अपना विज्ञान इतना सुंदर है कि हर तरह से आपको एडजस्ट हो जाए। बाहर का एक्सेस हो जाए तो आत्मा खो देता है। बहुत ज़ोरदार हो गया हो तो आत्मा का वेदक चला जाता है। ज्ञाता-दृष्टापन चला जाता है और उसे मोहनीय कर्म भ्रांति में डाल देता है।

प्रश्नकर्ता : बाहर का एक्सेस हो जाता है, ऐसा आपने कहा न, ऐसा कैसे है वह?

दादाश्री : किसी को स्त्री के साथ एकता हो गई। अब खुद छोड़ना चाहे लेकिन अगर वह छोड़े तब न? तू उससे मिलें नहीं न, फिर भी वह तुम्हारे ही बारे में सोचती रहेगी। तुम्हारे विचार करती रहे, तो तुम बंधे हुए कहलाओगे। विचारों से ही तुम बंधे हुए हो। वे विचार बंद होते नहीं और अपना छुटकारा हो नहीं पाता। इसलिए पहले समझ लेना चाहिए। और उसके विचार तोड़ने के लिए क्या करना पड़ेगा? उसके साथ झगड़े करने पड़ेंगे, ऐसा करना चाहिए, उसे सब उल्टा-उल्टा बताना चाहिए। दूसरी लड़की को यों ही कहना, तुम तो मेरी बहन हो, कहकर चलो ज़रा मेरे साथ घूमने, ऐसा उसे दिखाना, मतलब उसका मन फैक्चर कर देना, धीरे से।

प्रश्नकर्ता : दूसरी वाली चिपक जाए तो?

दादाश्री : दूसरी चिपक जाए तो दूसरी से छूटना। जिसे छूटना है, उसे सबकुछ आता है।

प्रश्नकर्ता : इसके अलावा, व्यवहार में ज़रूरत से ज़्यादा डूब जाएँ, धंधे-व्यापार में तो अपना ज्ञाता-दृष्टापन कम हो जाता है, ऐसा नहीं है न?

दादाश्री : व्यापार ऐसी फाइल नहीं है। यह तो दावा करे ऐसी फाइल है। वह दिन-रात तुम्हारे लिए सोचती रहेगी और तुम्हें दिन-रात बाँधती रहेगी। हम अपने घर हों तो भी व्यापार नहीं बाँधता या फिर जलेबी भी नहीं बाँधती, आम भी नहीं बाँधता। यह जो जीवित है, वह बाँधती है, इसमें क्लेम है न? तुम जो सुख ढूँढ रहे हो उस तरफ का, तो कोई माँगेगा मतलब यह क्लेम वाला है। सुख तो जलेबी खाई और अच्छी नहीं लगी तो फेंक दी। उसके अलावा क्या है? कोई दावा भी नहीं है जलेबी का, कोई हर्ज नहीं। ये सारी हमारी सूक्ष्म खोज हैं। वर्ना छूटेंगे कैसे?

तुझे ये बातें बहुत काम आएगी। कितने दिनों से मुझसे पूछता जा रहा है, 'कैसे छूटना?' लेकिन यों ही तो मुझसे कहा नहीं जा सकता, कभी ऐसा कुछ कहूँ तब समझ जाना। यह भी, अगर समझोगे तो हल आएगा, नहीं समझोगे तो फिर...

प्रश्नकर्ता : अब जल्दी हल लाने की ज़रूरत है।

दादाश्री : घर का बिगड़ेगा, घर में खड़ा नहीं रहने देंगे।

प्रश्नकर्ता : बाहर भी अगर बिगड़ गया तो सब जगह बिगड़ जाएगा।

दादाश्री : और घर पर भी फ्रैक्चर हो जाएगा। यहाँ पर भी सब फ्रैक्चर हो जाएगा।

पूरी रात मेरे लिए किसी को कुछ भी विचार आए कि

'दादा ने मेरा ऐसा किया और वैसा किया। दादा ने मेरा नुकसान किया या दूसरी और व्यापार में ऐसे हुआ, फलाना हुआ,' तो उससे बाँध लेता है, लेकिन मुझे उसके लिए ऐसा विचार आए, ऐसा मेरे पास है ही नहीं न, तो बाँधेगा कैसे? मैं वीतराग ही रहता हूँ, तो वह बांधेगा ही कैसे? मैं वहाँ चिपकूँगा तब मुझे बाँधेगा। वहाँ वीतराग रहना है। छूटने का रास्ता यही है।

प्रश्नकर्ता : कैसे वीतराग रहते हैं?

दादाश्री : भले ही कुछ भी करके भी हमें उस प्रकृति के प्रति द्वेष भी नहीं और राग भी नहीं करना है। वह कहलाता है समभाव से निकाल! वह कितना भी खराब करे, उल्टा करे, नुकसान करे, यदि मैं उसे थोड़ा भी रिपेयर करने जाऊँ तो उसका मतलब इतना है कि मैं राग-द्वेष में पड़ा तो मुझे अभी भी ज़रूरत है, इच्छा है मेरी, राग-द्वेष वाली प्रकृति है। उसका समभाव से निकाल करने को कहा है।

उसका मन अपने प्रति राग में रहेगा तो बाँधेगा। ऐसा नहीं होना चाहिए। राग या द्वेष से लोगों के मन बाँधते हैं, लेकिन मेरे साथ सच्चे प्रेम से बाँधे तो बल्कि पूरे दिन शांति रहेगी। भगवान महावीर इसी तरह छूटे थे, वर्ना नहीं छूट पाते।

[2.10]
विषयी आचरण? तो डिसमिस

यहाँ किए हुए पाप से मिले नर्क

दृष्टि बिगड़े तब वह गलत कहलाता है। दृष्टि नहीं बिगड़े वह ब्रह्मचर्य कहलाता है। बाहर बिगड़े तो हर्ज नहीं। उसका भी प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। यहाँ तो सभी विश्वास से आते हैं न!

अन्य जगह पाप किए हों न, वे यहाँ आने से धुल जाते हैं, लेकिन यहाँ पर किया हुआ पाप नर्कगति में भुगतना पड़ता है। जो हो चुके हों उन्हें लेट गो करते हैं, लेकिन नया तो नहीं होने देना चाहिए न! जो हो चुका है, उसका फिर कुछ उपाय है क्या?

एक बार उल्टा काम हो जाए, अपने आप ही यहाँ से कहीं और चला जाए, मुँह दिखाने के लिए भी खड़ा न रहे। वर्ना फिर दुनिया उल्टी ही चलेगी न, ब्रह्मचर्य के नाम पर! यहाँ ऐसा नहीं चलेगा!

'अन्य क्षेत्रे कृतम् पापम्, धर्म क्षेत्रे विनश्यति।'

बाहर जो संसार में पाप किया हों, वे धर्मक्षेत्र में जाने से नाश हो जाते हैं और 'धर्मक्षेत्र कृतम पापम् वज्रलेपो भविष्यति' वे नर्कगति में ले जाते हैं। बाहर पाप करने और यहाँ पाप करने में बहुत फर्क है! यहाँ पर तो पाप का विचार तक नहीं आना चाहिए, वज्रलेप होता है। वज्रलेप यानी नर्क के बंधन बंधते हैं, भयंकर यातना भुगतनी पड़ती है!

नहीं शोभा देता वह

प्रश्नकर्ता : अभी भी ऐसे विचार और ऐसा क्यों हो जाता है?

दादाश्री : अंदर विचार ही भरे पड़े हैं। वे तो निकलेंगे, लेकिन आचरण में नहीं आना चाहिए। आचरण में आ गया तो बिल्कुल बंद फिर। हमेशा के लिए बंद कर देते हैं हम। ऐसे अपवित्र इंसान यहाँ चलेंगे नहीं न? विचार आएँ तो उन्हें देखने वाले तुम हो।

प्रश्नकर्ता : वह तो ठीक है, सत्संग में तो ऐसा चलेगा ही नहीं।

दादाश्री : नहीं। नहीं चलेगा। यह तो बहुत पवित्र जगह है, यहाँ तो कभी ऐसा हुआ ही नहीं है।

ऐसों का आना तो हमेशा के लिए बंद ही कर देना चाहिए। कोई इतना विकारी होगा तभी ऐसा हो सकता है! आपको तो विचार आते ही तुरंत उसी समय देख लेना चाहिए। नहीं देख पाओ तो उसका पश्चाताप करना कि यह देख नहीं पाया इसलिए उसका पश्चाताप करता हूँ और अब तो सख्त कदम ही उठाना है, भले ही कोई भी हो लेकिन उसका आना बंद कर देना चाहिए। ऐसी पवित्र जगह! बाकी आचरण में ऐसा हो उसे, पहले एक-दो का आना बंद कर दिया था, तो देखो न अभी तक हमेशा के लिए आ ही नहीं पाते। मुँह भी नहीं दिखाते हैं न!

पहले जो कुछ हो गया हो, यहाँ पर उस भूल को स्वीकार करना है, नये सिरे से तो होनी ही नहीं चाहिए न! अब इतना देखना है कि आचरण में नहीं आए। आचरण में कभी-भी नहीं आए और जो आचरण में आए, उसे हम यहाँ एडमिट नहीं करते।

इसलिए अपवित्र विचार आएँ तो खोदकर निकाल देना, विचार

आते ही। जिस तरह अपने खेत-बगीचे में कोई फालतू चीज़ उग जाए तो उसे निकाल देते हैं, उसी तरह उल्टी चीज़ को तुरंत उखाड़ देना चाहिए।

पाशवता करने से तो अच्छा शादी कर लेना। शादी करने में क्या हर्ज है? वह पाशवता अच्छी है, शादी वाली! शादी नहीं करना और गलत नख़रे करना, वह तो भयंकर पाशवता कहलाती है, नर्कगति के अधिकारी! और वह तो यहाँ होना ही नहीं चाहिए न? शादी करना तो हक़ का विषय कहलाता है। सोचकर देखना, शादी करनी है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : सवाल ही नहीं। नो चान्स।

दादाश्री : अभी जब तक पक्का नहीं हो जाता, तब तक डिसीज़न नहीं लेना ही ठीक है, धीरे धीरे पक्का करने के बाद ही डिसीज़न लेना।

फिसलना सहज, यदि एक बार फिसला

ब्रह्मचर्य भंग करना, वह बहुत बड़ा दोष है। ब्रह्मचर्य भंग हो जाए, तो मुश्किल है। थे वहाँ से गिर पड़े। दस साल से रोपा हुआ पेड़ हो और गिर जाए तो फिर आज ही रोपा हो, ऐसा ही हो गया न और वापस दसों साल व्यर्थ गए! और ब्रह्मचर्य वाला गिर गया। एक ही दिन गिर जाए तो खत्म हो गया।

और जो इंसान यहाँ से फिसला तो फिर वह जो फिसला, वह उतना ही हिस्सा फिर से ज़ोर लगाएगा, वही हिस्सा फिर से उसे फिसलाएगा। फिर खुद के क़ाबू में नहीं रह पाता। फिर क़ाबू-कंट्रोल खो देता है, खत्म हो जाता है। वहाँ हम सावधान रहने को कहते हैं। 'मर जाएगा,' कहते हैं।

न हो संग संयोगी

जागृति रहती है न, अब? आनंद शुरू हो गया है न! वे

सब तो आनंद में आ गए। सभी के चेहरे पर नया ही तेज आ गया है। एक ही दीवार पार करे तो आनंद की शुरूआत हो जाती है और प्रकट हो जाता है तुरंत ही और अगर पार नहीं की और फिसल गया तो वहाँ पर फिर गाढ़ हो जाता है। फिर वापस उल्टा हो जाता है इसलिए कसौटी के टाइम पर संभाल लेना। पाताल फूटकर फिर आनंद उभरता रहता है!

अन्य कुछ भी हो जाए तो परेशानी नहीं है। संग संयोगी नहीं बन जाना चाहिए। बाकी कुछ हो जाए तो उसमें हर्ज नहीं है, उसका अर्थ ऐसा है कि वैसा हो तो बहुत हुआ इतनी फिक्र करने जैसा नहीं है लेकिन संयोग तो मृत्यु है। स्त्री-पुरुष का संयोग, वह तो मृत्यु ही है, तुम लोगों के लिए ऐसा ही है।

प्रश्नकर्ता : यानी कि मर जाएँ लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिए।

दादाश्री : नहीं, वह मृत्यु ही है। यों ही मृत्यु हो गई क्योंकि जो आनंद प्रकट होने वाला था, उसी समय फिसल गए। जैसे कि उपवास किया हो, तो थोड़े समय के बाद अंदर अच्छा हो जाने वाला होता है, लेकिन उससे पहले ही खा लेता है!

इसलिए सावधान रहना। वर्ना फिर से यह भूमिका नहीं मिलेगी। ऐसी भूमिका किसी काल में मिलने वाली नहीं है इसलिए सावधान रहना। यह सब बिल्कुल भी चूकना मत और बहुत बड़ा हमला हो तो मुझे खबर कर देना और इसके अलावा कुछ और हो तो वह सब बताने की कोई ज़रूरत नहीं है। वह सब यूज़लेस! स्त्री-पुरुष का संयोग नहीं होना चाहिए। बस इतना ही। बाकी सब को तो मैं लेट गो कर लूँगा।

प्रश्नकर्ता : यानी उसके जितना जोखिम नहीं है, बाकी सब में?

दादाश्री : नहीं, जोखिम नहीं। सब से बड़ा जोखिम यही है। यह तो आत्महत्या ही है। उसमें तो पट्टी लगा सकते हैं, उसकी दवाई है।

अभी तो, जितना खरा तप करोगे, उतना ही आनंद। यही तप करना है, और कोई तप नहीं। आमने-सामने छोटा हुल्लड़ हो जाए और खबर कर दें तो तुरंत प्रबंध हो जाता है। इस तरह से प्रबंध रखना है।

प्रश्नकर्ता : अब अंदर यों ब्रह्मचर्य का पक्का निश्चय हो ही गया है!

दादाश्री : तेरा निश्चय हो ही गया है। चेहरे पर नूर आ गया है न!

प्रश्नकर्ता : ज्ञान में थोड़ी कमी रह जाए तो हर्ज नहीं है, लेकिन ब्रह्मचर्य का तो बिल्कुल परफेक्ट (निश्चित) कर लेना है। यानी कम्प्लीट (संपूर्ण) निर्मूल ही कर देना है। फिर अगले जन्म का जोखिम नहीं रहेगा।

दादाश्री : बस, बस।

प्रश्नकर्ता : अभी तो दादा मिले हैं तो पूरा कर ही देना है।

दादाश्री : पूरा कर ही देना है। वह निश्चय डगमगाए नहीं, इतना रखना है। विषय का संयोग नहीं होना चाहिए। तुम से और कुछ भी होगा तो लेट गो करेंगे (चला लेंगे)। उसका इलाज बता देंगे। बाकी सभी गलतियाँ पाँच-सात-दस तरह की होंगी तो उसका सभी तरह का इलाज बता देंगे। उसका इलाज है, मेरे पास सभी प्रकार का इलाज है। लेकिन इसका इलाज नहीं है। नौ हज़ार मील आया और वहाँ पर नहीं मिला तो वापस लौट गया। अब नौ हज़ार पाँचसौ मील पर 'वह' था! यों वापस लौटने की मेहनत की, उससे अच्छा आगे बढ़ न! देखो न इसे निश्चय नहीं हुआ है, कितनी परेशानी है?

प्रश्नकर्ता : निश्चय तो है लेकिन गलतियाँ हो जाती हैं।

दादाश्री : दूसरी कोई गलतियाँ होंगी तो चला लेंगे। विषय संयोग नहीं होना चाहिए। लेकिन तुझे हमने इस गिनती में नहीं लिया है और जिसे गिनती में लिया हो, यह बात उसके लिए है। तू जब तेरा यह टेस्ट एक्ज़ामिनेशन देगा, तब तुझे गिनती में ले लेंगे। फिर तुझे भी डाँटेंगे। अभी तुझे नहीं डाँटेंगे। मज़े कर। खुद के हित के लिए मज़े करने हैं न? किस के लिए मज़े करने हैं?

प्रश्नकर्ता : मज़े करने में खुद का हित तो नहीं होता है।

दादाश्री : नहीं होता। तो फिर मज़े क्यों करता है?

वहाँ पर दादा की मौन सख्ती

विषय में संयोग हुआ तो हमारी नज़र कड़वी हो जाती है, हमें तुरंत सबकुछ पता चल जाता है। 'दादा' की नज़र कड़वी रहती है, वह सिर्फ विषय के बारे में ही, बाकी चीज़ों में नहीं। बाकी चीज़ों में कड़वी नज़र नहीं रखते। दूसरी गलतियाँ हो सकती हैं, लेकिन 'यह' तो होनी ही नहीं चाहिए, अगर हो जाए तो हमें बता देना। रिपेयर कर देंगे, छुड़वा देंगे।

प्रश्नकर्ता : हर तरह से छूटने के लिए ही यहाँ दादा के पास आना है।

दादाश्री : उसमें हर्ज नहीं। इसीलिए तो इन आप्तपुत्रों से मैंने सब लिखवा लिया है ताकि मुझे नहीं निकालना पड़े, तुम्हें अपने आप ही चले जाना है।

वह विषय यदि 'संयोग' रूप में हो रहा हो न, तो उस पर हमारी कड़वी नज़र होने पर वह अपने आप ही छूट जाता है। ताप ही छुड़वा देता है। हमें डाँटना नहीं पड़ता। इतनी कड़वी नज़र पड़ती है, उस ताप की वजह से उसे रात को नींद तक नहीं आती। वह सौम्यता का ताप कहलाता है। प्रताप का ताप तो

जगत् के लोगों के पास है। प्रताप तो, चेहरे पर तेज रहता है, ऐसे ब्रह्मचर्य भी अच्छा, शरीर बलवान होता है, वाणी ऐसी प्रतापवान, व्यवहार ऐसा प्रतापवान। प्रताप तो होता है संसार में, लेकिन सौम्यता का ताप नहीं होता किसी के पास। अब ये दोनों साथ में हों, तब जाकर काम होता है। सूर्य-चंद्र के दोनों गुण। सिर्फ प्रतापी पुरुष होते हैं, लेकिन कुछ ही, ज़्यादा तो इस दूषमकाल में होते ही नहीं हैं न!

प्रश्नकर्ता : और अपना यह ज्ञान ही ऐसा है कि अंदर से ही यों ज़ोर लगाकर सावधान करता रहता है।

दादाश्री : हाँ, वह ज़ोर लगाता है।

प्रश्नकर्ता : यानी थोड़ा सा भी कुछ इधर-उधर हो जाए न, तो अंदर शोर मच जाता है कि 'यहाँ चूके, वापस लौटो यहाँ से।' मतलब अंदर सेफ की तरफ ही पूरा खींच लाता है हमें।

दादाश्री : हारने लगो तो मुझे बता देना। एक ही जन्म यदि अपवित्र नहीं हुआ तो मोक्ष हो जाएगा, हरी झंडी। अगर शादी कर लो तो भी हर्ज नहीं है। तब भी मोक्ष में दिक्कत नहीं आएगी।

प्रश्नकर्ता : हम इच्छापूर्वक किसी को छूएँ तो वह वर्तन में आया ऐसा कहा जाएगा न?

दादाश्री : इच्छापूर्वक छूना? तब तो वर्तन में ही आया कहलाएगा न। इच्छापूर्वक अंगारों को छूकर देखना न?!

प्रश्नकर्ता : समझ गया।

दादाश्री : उसके बाद अगर आगे की इच्छा तो, इच्छा होते ही वहाँ से निकाल ही देना चाहिए जड़ से, उगते ही, बीज उगते ही जान जाओ कि यह कौन सा बीज उग रहा है? तो वह है विषय का। तो तोड़कर निकाल देना है। वर्ना उसे छूते ही आनंद

हुआ, तब तो फिर खत्म हो गया। वह जीवन ही नहीं रहा न, मनुष्य का! अब कानून समझकर करना यह सब। जिसके वर्तन में आ जाए, तो उसका आना हम बंद कर देते हैं क्योंकि नहीं तो यह संघ टूट जाएगा। संघ में तो विषय की दुर्गंध आनी ही नहीं चाहिए। अतः अगर ऐसा हो तो मुझे बता देना। शादी करेगा फिर भी उपाय है। शादी करने से मोक्ष चला नहीं जाएगा। तेरे पास उपाय रहे, ऐसा कर देंगे।

आप्तपुत्रों के लिए दफाएँ

जिसका निश्चय है न, वह रह सकता है! सिर पर ज्ञानी पुरुष की छत्रछाया है। ज्ञान लिया हुआ है, अंदर सुख तो रहता ही है न, फिर किसलिए कुएँ में गिरना? इसलिए यह जो प्रमाद किए हैं न, उसके बाद मुझे अच्छे ही नहीं लगते तुम। अभी भी प्रमादी और यों सारे यूज़लेस। कुछ ठिकाना ही नहीं है न! मेरी मौजूदगी में सोते हैं, फिर क्या बात करनी? कब लिखकर देने वाले हो?

प्रश्नकर्ता : आप कहें तब। अभी लिखकर दे देते हैं।

दादाश्री : दो दफाएँ, एक विषयी व्यवहार, यदि विषयी व्यवहार हो जाए तो हम खुद ही निवृत्त हो जाएँगे, किसी को निवृत्त नहीं करना पड़ेगा। ऐसा लिखना है। हम खुद ही यह स्थान छोड़कर चले जाएँगे और दूसरा अगर यह प्रमाद हो जाए तो उस समय संघ हमें जो भी दंड देगा, वह। तीन दिन तक भूखे रहने की या कुछ भी, जो भी दंड देंगे, उसे स्वीकार कर लेंगे। हम कहाँ बीच में आएँ! यह संघ है न। ये लोग मेरी मौजूदगी में इतना सोते हैं तो क्या यह अच्छा दिखता है? हाँ, दोपहर में तो सो रहे थे, तो ये पकड़े गए सब। पहले भी कई बार पकड़े गए थे। यह तो सारा कचरा माल है। वह तो जैसे तैसे थोड़ा बहुत सुधरा। तुझे ऐसा लिखकर देना है। आप्तपुत्र ऐसा लिखकर देंगे, हमें। दो दफाएँ, कौन-कौन सी दफाएँ लिखकर देंगे?

प्रश्नकर्ता : एक तो, कभी भी विषय से संबंधित दोष नहीं करूँगा और करूँगा तो यह...

दादाश्री : करूँगा तो तुरंत ही मैं अपने घर चला जाऊँगा। आप्तपुत्रों की यह जगह छोड़कर चला जाऊँगा। आपको मुँह दिखाने के लिए नहीं रुकूँगा।

और दूसरा ज्ञानी पुरुष की मौजूदगी में झोंका नहीं खाऊँगा। किसी भी प्रकार का प्रमाद नहीं करूँगा। ये दो शर्तें लिखकर सब तैयार हो जाओ। यानी कि ब्रह्मचर्य महत्वपूर्ण है।

मैं इन्हें कहता हूँ, शादी कर लो। लेकिन कहते हैं नहीं करनी। मैं मना नहीं करता। आप शादी कर लो। शादी करोगे फिर भी मोक्ष चला नहीं जाएगा। तब फिर हमारे सिर पर आरोप नहीं आएगा। आपको बीवी नहीं पुसाए तो उसमें मैं क्या करूँ! तब कहते हैं, हमें नहीं पुसाएगी। ऐसा खुलासा करते हैं न! इसलिए अगर तुझे पुसाए तो शादी करना और नहीं पुसाए तो मुझे बताना।

अंदर माल भरा हुआ हो तो शादी करके उसका हिसाब पूरा करो। शादी की, इसका मतलब हमेशा के लिए कहीं पति नहीं बन जाता। सभी रास्ते होते हैं।

मन बिगड़ जाए तो प्रतिक्रमण करने पड़ेंगे। वह भी शूट ऑन साइट होना चाहिए। मन से दोष हुए हों तो वह चला लेंगे। उसका हमारे पास इलाज है, उसका इस्तेमाल करके हम धो देंगे। वाणी से और काया से होगा तो नहीं चला सकते। पवित्रता आवश्यक है ही! दफाएँ तुझे अच्छी लगीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, अच्छी लगीं।

दादाश्री : तो लिखकर ले आना। अच्छी नहीं लगें तो नहीं। दफाएँ मंजूर नहीं हों तो अभी बंद रखना। जब एडमिशन लेने लायक हो जाए, तब करना।

हमारी मौजूदगी में बिल्कुल भी नींद नहीं आनी चाहिए, किसी को। कमी नहीं रहनी चाहिए। निरंतर विनय रहना चाहिए। मेरी मौजूदगी में कभी भी आँखें मिच जाएँ तो वह नहीं चलेगा और अपवित्रता तो बिल्कुल भी नहीं चलेगी, यहाँ बिल्कुल पवित्र पुरुषों का काम है। पवित्रता होगी तो वहाँ से भगवान जाएँगे नहीं!

मैंने सभी से कहा है, कि भई ऐसी पोल तो नहीं चलेगी। यह अनिश्चय है। इन आप्तपुत्रों ने शादी नहीं की लेकिन निश्चय है इसलिए आचरण मत बिगड़ने देना। हर एक जन बोलो, देखते हैं, कौन दृढ़ता से पालन करेगा? हर एक जन बोलो, खड़े होकर बोलो न!

जिसका आचरण बिगड़े, उसे तो डिसमिस कर देना। क़रार लिखकर दिए हैं मुझे। नहीं चलेगी अपवित्रता, सूअर जैसा व्यवहार! सूअर और इसमें फर्क क्या रहा फिर? पवित्र लोग तैयार हुए है, जगत् का कल्याण करेंगे!

[2.11]
सेफ साइड तक की बाड़

आवश्यकताएँ, ब्रह्मचर्य के साधक की

तुझे ब्रह्मचर्य की परख करना आता है? वह परख करना आ जाए तो काम का! सभी तरह से परख लेना चाहिए!

प्रश्नकर्ता : इसमें मुझे खुद को ऐसा लगता है, कि मेरा पुरुषार्थ बहुत मंद है।

दादाश्री : वह तो, वहाँ सभी के साथ रहेगा न, तब देखना पुरुषार्थ का योग! बाद में स्त्री को तो देखना तक अच्छा नहीं लगेगा। क्योंकि सत्संग में रहते हैं न वे सभी। फिर उस ओर के विचार ही नहीं आते!

प्रश्नकर्ता : उस संग का बहुत असर पड़ता है।

दादाश्री : फिर बहुत आसान हो जाता है। अभी तो संयोग नहीं हैं न? ये सारे विपरीत संयोग, कुसंग के और आज्ञा पालन करने की खुद की शक्ति नहीं है। दादा की आज्ञा पालन करेंगे तो कुछ भी बाधक नहीं होगा। यही है इसका उपाय, वहाँ सभी के साथ में रहेगा, तभी होगा। उसका और कोई उपाय नहीं है।

ब्रह्मचर्य पालन के लिए इतने कारण होने चाहिए। एक तो अपना यह 'ज्ञान' होना चाहिए, इसके अलावा इतनी आवश्यकता तो है ही कि ब्रह्मचारियों का समूह होना चाहिए। ब्रह्मचारियों की जगह शहर से ज़रा दूर होनी चाहिए और साथ ही पोषण होना

चाहिए। यानी ऐसे सारे 'कॉज़ेज़' होने चाहिए। ब्रह्मचारियों के समूह में रहे, तब तक वह प्रख्यात रहता है, लेकिन यदि अलग हो गया तो वह प्रख्यात नहीं रहेगा। फिर वह दूसरे ताल में आ जाता है न?! समूह में रहे तब तो दूसरा विचार ही नहीं आता न? यही अपना संसार और यही अपना ध्येय! दूसरा विकल्प ही नहीं न! और अगर सुख चाहिए, तो वह तो अंदर अपार है, अपार सुख है!

संग, कुसंग के परिणाम

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य के लिए संगबल की ज़रूरत पड़ती है न?

दादाश्री : हाँ, ज़रूरत पड़ती है।

प्रश्नकर्ता : तो उसका मतलब ऐसा है कि मेरा निश्चय उतना कच्चा है?

दादाश्री : नहीं, संगबल की ज़रूरत तो है। भले ही कैसा भी ब्रह्मचारी हो, लेकिन कुसंग उसके लिए मात्र हानिकारक ही है। क्योंकि कुसंग का रंग यदि लग जाए तो वह हानि किए बगैर रहेगा ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : इसका मतलब ऐसा हुआ कि कुसंग निश्चयबल को काट देता है?

दादाश्री : हाँ, निश्चयबल को काट देता है! अरे, इंसान में पूरा ही परिवर्तन कर देता है और सत्संग भी इंसान में परिवर्तन कर देता है। लेकिन एक बार जो कुसंग में चला गया हो, उसे सत्संग में लाना हो तो बहुत मुश्किल हो जाता है और सत्संग वाले को कुसंगी बनाना हो तो देर नहीं लगेगी। क्योंकि कुसंग वह फिसलन वाला है, नीचे जाना है जबकि सत्संग का मतलब चढ़ना है। कुसंगी को सत्संगी बनाना हो तो चढ़ना होता है, उसमें

बहुत देर लगती है और सत्संगी को कुसंगी बनाना हो तो तुरंत, एक कुसंगी परिचित मिल जाए तो तुरंत सबकुछ ठिकाने(!) पर ला देता है। इसलिए वह तो किसी पर भी विश्वास नहीं कर सकते। जो कोई अपना विश्वासपात्र हो, उसी के संग घूमना चाहिए।

कुसंग ही पोइज़न है। कुसंग से तो बहुत दूर रहना चाहिए। कुसंग का असर मन पर होता है, बुद्धि पर होता है, चित्त पर होता है, अहंकार पर होता है, शरीर पर होता है। सिर्फ एक ही साल के कुसंग से होने वाला असर तो पच्चीस-पच्चीस साल तक रहा करता है। यानी एक ही साल का कितना खराब फल आता है, फिर वह पछतावा करता रहे फिर भी छूट नहीं पाता और एक बार फिसलने के बाद और ज़्यादा गहराई में उतरते जाता है और ठेठ तले तक उतार देता है। फिर अगर पछतावा करे, वापस लौटना चाहे फिर भी लौट नहीं सकता। अत: जिसका संग सुधरा, उसका सबकुछ सुधर गया और जिसका संग बिगड़ा, उसका सबकुछ बिगड़ गया। सब से बड़ा जोखिम कुसंग है। सत्संग में पड़े रहने वाले को दिक्कत नहीं आती।

लश्कर तैयार करके उतरो जंग में वीरो

प्रश्नकर्ता : जितनी भी गाँठें हैं, उनमें से विषय की गाँठ ज़रा ज़्यादा परेशान करती है।

दादाश्री : कुछ गाँठें ज़्यादा परेशान करती हैं। उसके लिए हमें लश्कर तैयार रखना पड़ेगा। ये सभी गाँठें तो धीरे-धीरे एकज़ॉस्ट होती ही रहती हैं, घिसती ही रहती हैं, एक दिन वे सब इस्तेमाल हो ही जाएँगी न?!

पाकिस्तान का लश्कर भले ही कभी भी हमला करे, उसके लिए अपने हिन्दुस्तान ने तैयारी रखी है या नहीं? वैसी तैयारी रखनी पड़ेगी।

प्रश्नकर्ता : इसीलिए ब्रह्मचारियों के संग में रहना है न?

दादाश्री : नहीं, तैयारी में सिर्फ इतना ही नहीं चलेगा। अभी तो ठेठ तक लश्कर रखना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : संपूर्ण सेफ साइड कब होगी?

दादाश्री : संपूर्ण सेफ साइड कब होगी, उसका तो ठिकाना ही नहीं न! लेकिन पैंतीस साल के बाद ज़रा उसके दिन ढलने लगते हैं, इसलिए वह आपको बहुत परेशान नहीं करता। फिर आपके तय किए अनुसार चलता रहेगा, वह आपके विचारों के अधीन रहेगा। आपकी इच्छा नहीं बिगड़ेगी तो फिर आपको कोई नुकसान नहीं पहुँचाएगा। लेकिन पैंतीस साल तक तो बहुत ही जोखिम है!

प्रश्नकर्ता : पैंतीस साल तक सेफ साइड क्या है?

दादाश्री : वह तो अपना निश्चय! दृढ़ निश्चय और साथ में प्रतिक्रमण!

प्रश्नकर्ता : एक बार निश्चय दृढ़ हो जाए तो उसके बाद में क्या?

दादाश्री : बाद में निश्चय डगमगाए नहीं तो बहुत हो गया!

प्रश्नकर्ता : अभी हमारा निश्चय दृढ़ हो गया कहलाएगा?

दादाश्री : अभी नहीं माना जाएगा। अभी तो बहुत देर लगेगी। इसलिए अभी तो तुम्हें ब्रह्मचारियों के संग में ही रहना है। बाकी निर्भयपद है, ऐसा मान लेने जैसा नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लश्कर मतलब क्या? प्रतिक्रमण?

दादाश्री : प्रतिक्रमण और दृढ़ निश्चय, यह सारा लश्कर रखना पड़ेगा और 'ज्ञानी पुरुष' के दर्शन। इस दर्शन से अलग हो जाओ तो भी गड़बड़ हो जाएगी। अत: सेफ साइड कोई आसान चीज़ नहीं है।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा था कि ब्रह्मचारियों का संग, संसारियों

से दूर और सत्संग की पुष्टि, इन तीन 'कॉज़ेज़' का सेवन होगा तो सबकुछ हो जाएगा।

दादाश्री : यह सब निश्चय को हेल्प करता है और निश्चय मज़बूत करना, वह अपने हाथ की बात है न!

सत्संग के परिचय में रहने से इंसान बिगड़ता नहीं है। कुसंग के परिचय से तो इंसान खत्म हो जाता है। अरे, कुसंग ज़रा सा भी छू जाए तो भी खत्म हो जाएगा। खीर में ज़रा सा भी नमक डाल दिया तो?

प्रश्नकर्ता : ऐसा आनंद तो कहीं भी देखा ही नहीं है। इसलिए कहीं भी जाने का मन नहीं करता। यहीं अच्छा लगता है।

दादाश्री : सिनेमा में आनंद मिलता होगा न?

प्रश्नकर्ता : लेकिन फिर बाहर निकलने पर वैसे के वैसे ही।

दादाश्री : हाँ, जैसा था वैसा ही वापस। अठारह रुपये खर्च हो गए और बल्कि परेशानी हो गई, तीन घंटे का टाइम खो दिया। मनुष्य जन्म के तीन घंटे कहीं बिगाड़े जाते होंगे?

प्रश्नकर्ता : तीन घंटे तो देखने में, लेकिन आगे-पीछे दूसरी तैयारी करने में भी समय जाता है न!

दादाश्री : हाँ, ऊपर से वह टाइम अलग। मैं लोगों से पूछता हूँ कि, 'चिंता होती है तब क्या करते हो?' तब कहते हैं कि, 'सिनेमा देखने चला जाता हूँ।' अरे, यह सही उपाय नहीं है। यह तो पेट्रोल डालकर अग्नि को बुझाने जैसी बात है। यह जगत् पेट्रोल की अग्नि से जल ही रहा है न? उसी तरह क्योंकि यह सूक्ष्म अग्नि है इसलिए दिखाई नहीं देती, स्थूल में नहीं जलता।

कलियुग की हवा बहुत खराब है। यह तो ज्ञान की वजह से बच जाते हैं, वर्ना कलियुग की हवा का फटका ऐसा लगता है कि इंसान को खत्म कर दे।

इस बवंडर में तो फ्रैक्चर हो जाता है सबकुछ। इसलिए जितने हमें मिले उतने सभी बच गए। यह तो बवंडर है, प्रवाह है, उसमें टकराकर-कुटकर मरना है! दिन-रात जलन! कैसे जीते हैं, वही आश्चर्य है!

विषयी वातावरण से फैला व्यापार

प्रश्नकर्ता : ऑफिस में सभी और कुसंग बहुत ही है। वहाँ सब ऐसी विषय की और ऐसी ही बातें चलती रहती हैं, इसलिए उसी की रमणता चलती रहती है।

दादाश्री : यह जगत् अभी कुसंग रूपी ही है। इसलिए किसी के साथ खड़े रहना जैसा नहीं है, कहीं भी।

प्रश्नकर्ता : ऐसा होता है कि कब छूटेगा यह।

दादाश्री : या तो अकेले बैठे रहना, या फिर यहाँ आकर सत्संग में पड़े रहना। कभी भी कुसंग में खड़े रहने जैसा नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन मुझे नौकरी का बिल्कुल भी शौक नहीं है।

दादाश्री : क्या करोगे नहीं जाओगे तो? बाहर का कुसंग छूना नहीं चाहिए, दादा का निदिध्यासन निरंतर रहना चाहिए। आँखें मींचकर दादा दिखें तो कुसंग छूएगा ही नहीं न! ऑफिस में कुसंग मिल जाता है, नहीं?

प्रश्नकर्ता : यानी हमें अच्छा नहीं लगता हो, ऐसा आए तब फिर संघर्ष होता है।

दादाश्री : संघर्ष होकर भी निकाल हो जाता है न? वह आता है न, 'और भी कोई हो तो आ जाओ, मुझे तो निकाल कर देना है', कहना, घबराना नहीं। जहाँ मानसिक संघर्ष है, वहाँ उसमें देर ही कितनी लगेगी? देह का संघर्ष नहीं होना चाहिए। मानसिक संघर्ष में हर्ज नहीं, उसका निकाल हो जाएगा।

नहीं सुननी चाहिए विषयी वाणी

विषय-विकार वाली जो वाणी सुनता तक नहीं है, खुद बोलता भी नहीं है, विषय की वैसी बातें सुने तो मन में क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : मन बिगड़ेगा।

दादाश्री : अतः ऐसी वाणी खुद बोलनी भी नहीं चाहिए, कोई बोल रहा हो तो सुननी भी नहीं चाहिए। यह वाणी महाभारत नहीं है कि सुनने जैसी हो।

प्रश्नकर्ता : ऑफिस में बैठे हों, तब मजबूरन वह सुननी पड़े तो?

दादाश्री : तो तुम पर असर न हो, ऐसा करना। तुम्हें इन्टरेस्ट हो तभी सुनाई देगा, वर्ना सुनाई नहीं देगा। अपना इन्टरेस्ट नहीं होगा तो कान सुनेंगे लेकिन तुम्हें नहीं सुनाई देगा!

प्रश्नकर्ता : उपयोग में कमी होगी, इसलिए ऐसा होता है?

दादाश्री : उपयोग में तो पूरी ही कमी है। यदि उपयोग होगा तो वह नहीं रहेगा और वह होगा तो उपयोग नहीं रहेगा!

प्रश्नकर्ता : वह आपने कहा था न कि छः महीने तक विचार आएँ कि 'शादी करनी है, शादी करनी है।' फिर भी अपने निश्चय में खुद स्थिर रहे तब तो पार निकल जाएँगे।

दादाश्री : वह खत्म हो जाएगा। निश्चय मज़बूत होना चाहिए। निश्चय ढीला नहीं होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : फिर सर्विस में ये सारे जो कुसंग मिलते हैं। उनका निकाल कर देना है। आपने जो वह कहा है, तो उसमें क्या करना है? वह निकाल कैसे करना है?

दादाश्री : अपनी आज्ञा का पालन करके, प्रतिक्रमण से निकाल कर देना है। जिसे निकाल करना है, उसका निकाल हो

जाएगा और जिसे लड़ना है, वह लड़ेगा और जिसे निकाल करना है, वह निकाल कर देगा। तेरी इच्छा तो निकाल करने की है न? कैसा भी हो फिर भी?

प्रश्नकर्ता : ऑफिस में सहकर्मी मुझसे पूछते हैं कि लड़की देखने पर तुझ पर कुछ असर होता है या नहीं?

दादाश्री : फिर?

प्रश्नकर्ता : फिर मैं कहता हूँ कि लड़की देखता हूँ तो आकर्षण होता है। लेकिन शादी नहीं करने वाला, ऐसा नहीं कहता। वर्ना वे लोग मज़ाक करेंगे कि तू लड़की देखता है और तुझ पर कुछ असर नहीं होता तो तुझ में कोई दम ही नहीं है। ऐसा सब तय कर लेते हैं, वे लोग। फिर उसका प्रचार करते हैं, इसलिए फिर कहता हूँ कि मुझे आकर्षण होता है।

दादाश्री : ऐसे झूठ नहीं बोलना है। दम उसी को कहते हैं कि जिसे आकर्षण नहीं हो, बल्कि बिना दम वाले को ही अधिक आकर्षण होता है। 'मुझे नहीं होता, मुझे तो छूता तक नहीं।' कहना। इसलिए हम कहते हैं न कि भाई, ये आप्तपुत्र एक जगह बस जाएँगे तो फिर ऐसी बातें सुनने को ही नहीं मिलेगी। पोइज़न नहीं चढ़ेगा।

समभावियों का समूह

यह बाहर का जो परिचय है, वह उल्टा परिचय है और अभी तक ज्ञानियों से पूरा परिचय नहीं हुआ है। यदि परिचय हुआ होता तो ऐसा नहीं होता। इसलिए ज्ञानियों के पास पड़े रहना है। बाहर के परिचय से ही तो यह सारी मार खाई है न?! बाहर के परिचय से सबकुछ बिगड़ता ही रहता है, बहुत बिगड़ता है। यदि ब्रह्मचर्य पालन करना हो तो बाहर का परिचय भी रखे और ब्रह्मचर्य का पालन कर सके, ये दोनों एक साथ नहीं हो सकते! वह तो पूरा समूह होना चाहिए, अलग निवास स्थान होना चाहिए,

वहाँ साथ में बैठकर बातचीत करें, सत्संग करें, थोड़ीदेर आनंद करें। उनकी दुनिया ही नई! इसके लिए तो ब्रह्मचारी साथ में रहने चाहिए। सब साथ में नहीं रहें और घर पर रहें तो परेशानी! ब्रह्मचारियों के संग के बिना ब्रह्मचर्य का पालन नहीं किया जा सकता। ब्रह्मचारियों का समूह होना चाहिए और वह भी पंद्रह-बीस लोगों का होना चाहिए। सभी साथ में रहेंगे तो दिक्कत नहीं आएगी। दो-तीन लोगों का काम नहीं है। पंद्रह-बीस होंगे तो उनकी तो हवा ही लगती रहेगी। हवा से ही सारा वातावरण उच्च प्रकार का रहेगा, वर्ना ब्रह्मचर्य पालन करना आसान नहीं है।

हम थोड़े ही कहीं वंश चलाने आए हैं? क्या राज्य स्थापित करने आए है? यह तो हम निकाल करने के लिए आए हैं, लेकिन यह तो बीच में नया आइटम निकल आया! तो ऐसा भी नहीं कह सकते कि तू ब्रह्मचर्य का पालन मत करना और हाँ भी नहीं कह सकते कि तू पालन करना। कर्म के उदय होंगे तो पालन कर भी सकता है और पालन कर सके तो फिर उसे अपने से मना भी नहीं किया जा सकता। ब्रह्मचर्य रहे तो लोगों का कल्याण करने में फिर निमित्त बन सकेगा!

ब्रह्मचर्य के लिए पिछले जन्म में कुछ निश्चय किया होगा, तभी तो इस जन्म में निश्चय करने का विचार आता है, वर्ना वह विचार ही नहीं आ सकता। बाकी देखा-देखी से किया जाने वाला काम का नहीं है। स्वाभाविक होना चाहिए। संग एक ही प्रकार का होना चाहिए। दूसरा संग नहीं घुसना चाहिए। दूध तो दूध और दही तो दही, और दूध और दही पास-पास रखे हों, तो भी दूध फट जाता है। फिर चाय नहीं बन सकेगी।

संगबल की सहायता, ब्रह्मचर्य के लिए

प्रश्नकर्ता : संग का इतना अधिक महत्व क्यों है?

दादाश्री : संग पर ही तो आधारित है।

प्रश्नकर्ता : इतने सारे लोग इकट्ठा हो रहे हैं, तो संगबल बढ़ा है तो उससे परिणती भी बढ़ती जाएगी, ऐसा है?

दादाश्री : हाँ, जैसे-जैसे संगबल बढ़ता है, वैसे-वैसे परिणती बढ़ती है। अभी तीन ही सत्संगी हों तो कम परिणती रहती हैं, पाँच हों तो पाँच जितनी रहती हैं और हज़ार हों तो फिर कोई विचार ही नहीं आता। सभी का आमने-सामने इफेक्ट पड़ता है। अभी ब्रह्मचर्य रह पाता है, वह भी आपका पुण्य है और जब पुण्य बदले तब पुरूषार्थ की ज़रूरत है! इस वजह से समूह में रहना है। समूह में एक-दूसरे के विचारों का असर होता है! ब्रह्मचर्य का पालन करना आसान नहीं है, उसमें कुदरत का साथ चाहिए। अपना पुण्य और पुरुषार्थ चाहिए। फिर अंदर आनंद उत्पन्न होगा और वह भी आप सब साथ में रहोगे तब होगा। क्योंकि आमने-सामने असर होता है। पचास ब्रह्मचारियों के साथ पाँच नालायक लोगों को रख दें तो क्या होगा? दूध फट जाएगा।

दादा तो तैयार ही हैं, आप सब के निश्चय की ज़रूरत है। सब का हल आ जाएगा। अभी ठोकरे खा रहे हो, वह भी अच्छा है, क्योंकि अगर पहले अनुभव हो चुका हो तो बाद में आप देखोगे ही नहीं, लेकिन इस ओर का अनुभव नहीं हुआ हो तो फिर कच्चा पड़ जाता है। दीक्षा लेने के बाद कच्चा पड़े तो बल्कि बदनाम होगा और फिर उसे निकाल देंगे वहाँ से!

प्रश्नकर्ता : वह तो बहुत बड़ी जोखिमदारी कहलाएगी।

दादाश्री : जोखिमदारी ही है न! वहाँ से सब निकाल ही देंगे। फिर न रहे घर का और न रहे घाट का! इससे अच्छा अभी यहाँ गलती हुई होगी वह चला लेंगे, लेकिन बाद में वहाँ तो गलती होनी ही नहीं चाहिए। तुझे ठोकरें खाने को मिलती है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : वे ठोकरें भी खाने जैसी नहीं है।

दादाश्री : खाने जैसी नहीं हैं, लेकिन खा जाते हैं न! लेकिन वहाँ पर अगर ठोकरें खाओगे, वहाँ 'ब्रह्मचर्य आश्रम' में रहना हुआ, वहाँ पर अगर कुछ भूल-चूक हुई तो सब मिलकर निकाल ही देंगे। इसलिए पहले से संभलकर चलना, फिर भी अगर ठोकर खाएँ, तो याद रखना।

चारित्र से संबंधित शिकायत नहीं आनी चाहिए! जहाँ चारित्र से संबंधित शिकायत आए, वहाँ धर्म है ही नहीं। यह तो पूरी दुनिया कबूल करती है। चारित्र से संबंधित गड़बड़ नहीं होनी चाहिए वहाँ। यदि और कोई भूल-चूक होगी तो चला लेंगे, लेकिन चारित्र से संबंधित गड़बड़ तो चला ही नहीं सकते। चारित्र तो मुख्य आधार है। धर्म में तो विषय जैसा शब्द ही नहीं होता। धर्म हमेशा विषय के विरुद्ध ही होता है।

आप इस ब्रह्मचर्य को संभालोगे न?

प्रश्नकर्ता : हाँ दादा, संभालेंगे।

दादाश्री : मैं सभी से यही कहता हूँ कि आपको निश्चय मज़बूत करना चाहिए। अपना 'ज्ञान' यह ऐसा है कि पार उतार दे, बाकी अगर 'ज्ञान' नहीं हो तो पार ही नहीं उतरे। 'ज्ञान' के आधार पर, 'ज्ञान' की वजह से आपको शांति रहती है, आनंद रहता है। आप ज्ञान में रहो तो आप विषय का दुःख भूल जाओगे।

अपना ज्ञान इतना अच्छा है कि विषय बगैर रहा जा सकता है, क्रमिकमार्ग में तो स्त्री को देख भी नहीं सकते, छू नहीं सकते, सारा खाना एक साथ मिलाकर खाना पड़ता है, ऐसे तरह-तरह के नियम होते हैं। ब्रह्मचर्य तो ऐसा होता है कि यों चेहरा देखकर ही लोग प्रभावित हो जाएँ, ब्रह्मचारी पुरुष तो ऐसे दिखते हैं!

[2.12]

तितिक्षा के तप से गढ़ो मन-देह

सीखो पाठ तितिक्षा के

तितिक्षा क्या है?

घास या चारे में सो जाना पड़े, तब कंकर चुभें, उस समय याद आए कि, 'अरे! घर पर कितना अच्छा था।' तो वह तितिक्षा नहीं कहलाती। कंकर चुभें तब ऐसा लगना चाहिए कि यह अच्छा है। यह तो मैंने आपको सिर्फ सोने की ही बात बताई, बाकी जब वैसे संयोग आ जाएँ, तब क्या करना पड़ेगा? यानी हर एक चीज़ में ऐसा होना चाहिए। सहन नहीं हो, वैसी सख्त ठंड में ओढ़े बिना सोना पड़े तब क्या करोगे? आपने तो ऐसी प्रैक्टिस नहीं की होगी। मैंने तो पहले ऐसी बहुत प्रैक्टिस की थी। लेकिन अब तो इतने सरल संयोग इकट्ठा हो गए हैं कि बल्कि मेरा तितिक्षा गुण कम हो गया है। वर्ना मैंने तो सभी तितिक्षा गुण विकसित किए थे। इन जैनों ने बाईस प्रकार के परिषह सहन करने को कहा है। अतः यह सब समझने की ज़रूरत है। इसलिए अब आप शरीर के लिए तितिक्षा गुण विकसित करो ताकि इस शरीर को कठिनाईयों की प्रैक्टिस हो जाए! खाने में जो मिले उसमें आश्चर्य नहीं हो कि 'ऐसा? यह तो कैसे भाएगा?' वैसा ही सर्दी-गर्मी सभी में रहना चाहिए।

रात को दो बजे आपको कोई उठा ले जाए और फिर जाकर आपको स्मशान में रख दे तो आपकी क्या दशा होगी? एक और

चिता जल रही हो और दूसरी ओर हड्डियों में से फोस्फोरस के धड़ाके हो रहे हों तो उस समय आपको अंदर क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : ऐसा सोचा ही नहीं है!

दादाश्री : ऐसा सोचा ही नहीं?

प्रश्नकर्ता : हमें वस्तु (आत्मा) की समझ नहीं है, इसलिए अनुभव नहीं हो पाता। निरंतर वैसा अनुभव नहीं रह पाता?

दादाश्री : आपको तो इसकी समझ ही नहीं है न! यह तो आपको अंदर ठंडक अपने आप रहे तभी तक ठीक रहता है, लेकिन उसे गायब होने में तो देर ही नहीं लगेगी न! इन लड़कों को कुछ समझ ही नहीं है न! उन्हें अगर कोई कहेगा कि 'बच्चे, ले यह बिस्किट', तो वह बिस्किट देकर हीरा ले लेगा। तो इनकी समझ कैसी है? वस्तु की कीमत ही नहीं है न! फिर भी ये लड़के पुण्यशाली ज़रूर है, लेकिन हैं बालक। ये सभी व्रत लेने वाले तो बालक जैसे हैं। थोड़ा सा भी दुःख आए तो यह सबकुछ दाव पर लगा दें! किसी भी प्रकार के दुःख पर ध्यान नहीं दे, तब जाकर यह व्रत रह पाएगा। मेरी आज्ञा में पूरी तरह से रहे, तब यह व्रत रह पाएगा!

प्रश्नकर्ता : आप तितिक्षा गुण कह रहे थे कि किसी भी अवस्था में दुःख सहन करना, ऐसा?

दादाश्री : इन लोगों ने कोई दुःख देखा ही नहीं है। दुःख देखना पड़े, उससे पहले तो इन लोगों का आत्मा ही निकल जाए। फिर भी ऐसे करते-करते इन लड़कों का अगर पोषण हो जाए और ऐसे दस-बीस साल बीत जाएँ तो फिर उन्हें समझ में आ जाएगा सबकुछ और जड़ें डाल देंगे। बाकी ये सब तो कमज़ोर इंसान कहलाते हैं।

प्रश्नकर्ता : यों तो सभी स्ट्रोंग लगते हैं।

दादाश्री : कौन? ये? नहीं, वह तो ऐसा लगता है आपको। लेकिन ये तो सभी कमज़ोर! ये तो तुरंत सबकुछ छोड़ दें। स्ट्रोंग तो, कुछ भी हो जाए, मौत आ जाए फिर भी आत्मा मेरा है और दादा की आज्ञा छोड़ूँगा ही नहीं, उसे स्ट्रोंग कहते हैं। जो आना हो वह आओ, कहना! अब इन लड़कों की बिसात ही क्या? इनमें तितिक्षा नामक गुण का विकास ही नहीं हुआ है न?

प्रश्नकर्ता : आपको पैर में फ्रैक्चर हुआ था, जॉन्डिस हुआ था, ऐसे सारे कष्ट एक साथ आ गए। एक ही स्थान पर, एक ही पॉज़िशन में चार महीनों तक बैठे रहना, तो ये सब टेस्ट एक्ज़ामिनेशन कहलाएगा न?

दादाश्री : यह तो कष्ट था ही नहीं, इसे कष्ट नहीं कह सकते।

प्रश्नकर्ता : आपको नहीं लगता।

दादाश्री : नहीं, बाकी औरों के लिए भी कष्ट नहीं माना जाएगा। इसे कहीं कष्ट माना जाता होगा? अरे, कष्ट तो तुमने देखा ही नहीं हैं। ब्रह्मचारी जी पत्थर पर खड़े रहकर जो तप करते थे, यदि उन्हें देखा होता तो आपको मन में ऐसा लगता कि ऐसा तो अपने से एक दिन के लिए भी नहीं हो सकता। मुझे भी ऐसा लगता था न, कि ये प्रभु श्री के शिष्य ब्रह्मचारी जी ऐसा करते हैं तो प्रभु श्री कितना करते होंगे? और कृपालुदेव तो न जाने कितना करते होंगे! लोग उनके ऊपर से मच्छर उड़ा जाते और कुछ ओढ़ाकर जाते तो वे खुद ओढ़ने का निकाल देते और आराम से मच्छरों को काटने देते थे! सिर्फ आत्मा ही प्राप्त करना है, ऐसा ध्येय लेकर बैठे थे। अब इन्हें यह पुण्य से मुफ्त में प्राप्त हो गया है, बाकी तितिक्षा होनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : उन लोगों ने तो, क्रमिकमार्ग था इसलिए त्याग किया था। अपने अक्रम मार्ग में तितिक्षा करनी हो तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : अपने यहाँ त्याग करने की ज़रूरत नहीं है। जिसने आत्मा प्राप्त कर लिया है उन्हें कभी-कभी ऐसे संयोग मिल जाते हैं। उस समय यदि वह स्ट्रोंग रहा तो रहा, वर्ना घबरा जाएगा। इसलिए पहले से ही तैयारी रखनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : ये लड़के अभी जिस सुख के सराउन्डिंग में जी रहे हैं, उस सुख में से उन्हें उठाकर कोई स्मशान में रख आए तो वह दु:ख ज़्यादा ही लगेगा न?

दादाश्री : क्यों स्मशान में? वहाँ क्या दु:ख है?

प्रश्नकर्ता : वह ठीक है, लेकिन अमावस की रात में अंधेरे में कभी भी गया नहीं हो और वहाँ उल्लू बोले तो...

दादाश्री : हाँ, उल्लू तो क्या? लेकिन एक कौआ उड़े तो भी घबरा जाएगा। इसलिए इन लोगों को समतापूर्वक दु:ख सहन करना चाहिए। जो कुछ भी करो, वह मुझसे पूछकर करना। अभी तो इन लोगों में इतना सा दु:ख सहन करने की भी शक्ति नहीं है। पुलिस वाला मारे और कहे कि, 'आप पलटते हो या नहीं?' तो ये लोग पलट जाएँगे, आत्मा वगैरह सबकुछ छोड़ देंगे। जबकि क्रमिक-मार्ग वालों को घानी में पीलें फिर भी कोई आत्मा नहीं छोड़ेगा। तितिक्षा, यह जैनों का शब्द नहीं है, यह वेदांतियों का शब्द है।

विकसित होता है मनोबल, तितिक्षा से

प्रश्नकर्ता : हमें यह तितिक्षा विकसित करनी पड़ेगी न?

दादाश्री : अब अगर यह गुण डेवेलप करने जाए तो आत्मा खो देगा। इसलिए जब आपके जाने का समय आ जाए, फिर भी आत्मा को मत छोड़ना, अंदर सिर्फ इतना रखना। देह अगर छूट जाएगी, तो देह तो वापस मिल जाएगी, लेकिन आत्मा वापस नहीं मिलेगा।

प्रश्नकर्ता : जैसे जैसे काल बदलता जा रहा है, वैसे वैसे दु:ख सहन करने की शक्ति भी कम होती जा रही है न?

दादाश्री : ऐसा नहीं है। दु:ख से काल को कुछ लेना देना नहीं है। उसके लिए तो मनोबल चाहिए। हमें देखने से बहुत मनोबल उत्पन्न होता है और मनोबल होगा तभी काम होगा। कैसे भी दु:ख हों, फिर भी मनोबल वाला इंसान उन्हें पार कर देता है। 'अब, मेरा क्या होगा?' ऐसा वह नहीं बोलेगा।

स्मशान में जाएँ और अगर वहाँ आग देखें तो ये लोग काँप जाते हैं। क्या वहाँ कोई खा जाने वाला है? अरे, क्या आत्मा को खा जाने वाला है? खा जाएगा तो देह को खा जाएगा। वहाँ स्मशान में कुछ नहीं है। सिर्फ अपने मन की कमज़ोरियाँ है। हाँ, दो दिन प्रैक्टिस करनी पड़ेगी। बाकी, इनकी ऐसी वैसी परीक्षा नहीं ले सकते। नहीं तो फिर बुखार उतरेगा ही नहीं। डॉक्टरों से भी नहीं उतर पाएगा। इसे घबराहट का बुखार कहते हैं। घबराहट का बुखार तो हमारे बहुत विधियाँ करने पर ही उतरता है। इससे अच्छा सोए रहना न घर पर चुपचाप, देख लेंगे आगे।

इन वेदांतियों ने तितिक्षा गुण को विकसित करने को कहा है, जैनों ने बाईस परिषह सहन करने को कहा है। भूख लगे, प्यास लगे, अंदर कलपने लगे इस तरह जो कुछ भी हो उन सब को समताभाव से सहन करना सीखो। प्यास तो इन लोगों ने देखी ही नहीं है। जंगल में गए हों और पानी नहीं मिले, उसे प्यास कहते हैं। वह भूख-प्यास हमने देखी है। कॉन्ट्रेक्ट के काम में जंगल में और सभी जगह गए थे, तब देखी थी। और फिर बर्फ गिरे ऐसी ठंड सहन नहीं हो पाती थी, सख्त धूप होती थी, यहाँ शहर में होती है, ऐसी नहीं! बम गिर रहे हों, तब मनोबल का पता चलता है! मनोबल वाले को देखने से मनोबल उत्पन्न होता है। लेकिन जगत् ने, जीव ने मनोबल देखा ही नहीं है! हमारे में तो ग़ज़ब का मनोबल है। लेकिन अगर वह देखे न (निरीक्षण

करे), जितना वह देखेगा, उतनी ही उसमें शक्ति आएगी। मैं उस रूप हो गया हूँ और आप धीरे-धीरे उस रूप होते जा रहे हो। तो एक दिन उस रूप हो जाओगे। लेकिन आपको छोटा रास्ता मिल गया है और मुझे तो बहुत लंबा रास्ता मिला था। मैं त्याग और तितिक्षा कर-करके आया हूँ। तितिक्षा तो बेहिसाब की हैं। एक दिन चटाई पर सो जाना, एक दिन दो गद्दों पर सो जाना। यदि चटाई पर आदत पड़ जाए तो दो गद्दों पर नींद नहीं आए और गद्दे पर आदत पड़ जाए तो चटाई पर नींद नहीं आए!

प्रश्नकर्ता : हमें भी आपकी तरह त्याग और तितिक्षा में से गुज़रना पड़ेगा?

दादाश्री : नहीं, आपको ऐसा कुछ रहा नहीं न! आपको तो ऐसे ही 'फ्री ऑफ कॉस्ट' मिला है। इसलिए आपकी गाड़ी तो चलती रहेगी। आपके पुण्य तो बहुत ज़्यादा है न!

उपवास-उणोदरी मात्र 'जागृति' हेतु

मैंने पूरी ज़िंदगी में एक भी उपवास नहीं किया! हाँ, *चोविहार* (सूर्यास्त से पहले भोजन करना) किए हैं, बाकी कुछ भी नहीं किया। मेरी प्रकृति पित्त वाली इसलिए एक भी उपवास नहीं हो पाता। अब हमें इसकी ज़रूरत क्या है? हम आत्मा हो चुके हैं! अब यह सब पराया, पराए देश का और फॉरिन डिपार्टमेन्ट में हमें इतना क्या झंझट? यह तो जिन्हें ब्रह्मचर्य व्रत लेना है, उन्हें यह झंझट करना है। वर्ना अपने 'पाँच वाक्यों' में तो सबकुछ आ जाता है। ये पाँच वाक्य ऐसे हैं कि इनसे निरंतर संयम परिणाम रह सकता है। लोग जो संयम रखते हैं, वह संयम माना ही नहीं जाएगा। उसे व्यवहार संयम कहते हैं, जिसे कि व्यवहार में लोग देख सकते हैं! जबकि अपना तो वास्तव में संयम है। लेकिन लोग ऐसा नहीं कहेंगे कि आपको संयम है। क्योंकि आपका निश्चय संयम है। निश्चय संयम, वह मोक्ष का कारण है और व्यवहार संयम, वह संसार का कारण है, संसार में ऊँची पुण्य बंधवाता है।

हमें उपवास की ज़रूरत नहीं है, लेकिन 'अपना ज्ञान' ऐसा है कि उपवास में बहुत जागृति रहती है। अच्छा काल हो और उपवास हो तो केवलज्ञान हो जाता है! लेकिन यह काल ही ऐसा नहीं है न!

उपवास में क्या होता है? इस शरीर में जो जमा हुआ कचरा होता है, वह जल जाता है। उपवास के दिन वाणी की अधिक छूट नहीं हो तो वाणी का कचरा जल जाता है और मन तो पूरे दिन सुंदर प्रतिक्रमण करता रहे, तरह-तरह का करता रहे, तो ये बाकी का सारा कचरा भी जलता ही रहता है। इसलिए उपवास बहुत ही काम आता है। हफ्ते में एक दिन, रविवार को उपवास करना। लेकिन दो दिन लगातार मत करना, नहीं तो कोई रोग हो जाएगा। जिस दिन उपवास करते हो, उस दिन तो बहुत आनंद होता है न?

प्रश्नकर्ता : उपवास किया हो, उस रात अलग ही तरह का आनंद महसूस होता है, इसका क्या कारण?

दादाश्री : बाहर का सुख नहीं ले तो अंदर का सुख उत्पन्न होता ही है। बाहर के ये सुख लेते हैं इसलिए अंदर का सुख बाहर प्रकट नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : यदि खाने में से सुख जाए, तो फिर बाकी सब में भी फीका ही लगता है।

दादाश्री : बाकी में फिर रहा ही क्या? जीभ का ही सारा झंझट है न?! जीभ का और यह स्त्री परिग्रह, दो ही झंझट हैं न? और कोई झंझट है ही नहीं न?! कान तो, सुना तो भी क्या और नहीं सुना तो भी क्या? आँखो से देखना लोगों को बहुत अच्छा लगता है, लेकिन आप के लिए वह बहुत रहा नहीं है न! आँख के विषय रहे नहीं हैं न? सिनेमा देखने नहीं जाते न?

ज्ञानियों ने नवाज़ा है उणोदरी तप को

हमने ठेठ तक *उणोदरी* (जितनी भूख लगे उससे आधा भोजन खाना) तप रखा था! दोनों वक्त ज़रूरत से कम ही खाते थे, हमेशा के लिए! कम ही खाते थे ताकि अंदर निरंतर जागृति रहे। *उणोदरी* तप यानी क्या कि रोज़ चार रोटी खाते हों तो फिर दो कर दें, उसे *उणोदरी* तप कहते हैं। ऐसा है न, आत्मा आहारी नहीं है, लेकिन यह देह है, *पुद्गल* है, वह आहारी है और देह यदि भैंस जैसी हो जाए, *पुद्गल* शक्ति यदि बढ़ जाए तो आत्मा को निर्बल कर देती है।

प्रश्नकर्ता : *उणोदरी* करने का जब बहुत मन होता है, तभी अधिक खा लिया जाता है!

दादाश्री : *उणोदरी* तो हमेशा रखनी चाहिए। बिना *उणोदरी* के तो ज्ञान-जागृति रह ही नहीं सकती। यह जो आहार है, वही खुद दारू है। हम जो आहार खाते हैं, उससे अंदर दारू बनती है। फिर पूरे दिन दारू का नशा रहता है और नशा रहे तो जागृति बंद हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : *उणोदरी* और ब्रह्मचर्य में कितना कनेक्शन है?

दादाश्री : *उणोदरी* से तो अपनी जागृति अधिक रहती है। उसी से ब्रह्मचर्य रहेगा न! उपवास करने के बजाय *उणोदरी* अच्छी, लेकिन हमें ऐसा भाव रखना है कि '*उणोदरी* रखनी चाहिए' और खाना खूब चबाकर खाना। पहले दो लड्डू खाते थे तो अब आप उतने टाइम में एक लड्डू खाओ। तो टाइम उतना ही लगेगा, लेकिन कम खाया जाएगा। 'मैंने खाया', ऐसा लगेगा और *उणोदरी* का लाभ मिलेगा। ज़्यादा टाइम तक चबाएँगे तो बहुत लाभ मिलेगा।

प्रश्नकर्ता : यदि *उणोदरी* करते हैं, तो खाना खाने के बाद

दो-तीन घंटे में अंदर से खाने की इच्छा होती रहती है। फिर ऐसा लगता है कि कुछ खा लें, जो भी मिले वह।

दादाश्री : अकेले पड़ते ही फिर थोड़ा कुछ खा लेता है। वही देखना है न(!) यहाँ भले ही कितना भी रखा हुआ हो लेकिन फिर भी अकेले में भी छूए नहीं, ऐसा होना चाहिए! टाइम पर ही खाना है, उसके सिवा बीच में और कुछ भी नहीं खाना चाहिए। बेटाइम यदि खाते हैं, तो उसका मतलब ही नहीं है न! वह सब मीनिंगलेस है। उससे तो जीभ भी बहल जाती है, फिर क्या रहा? दिवाला निकल जाता है! सभी चीज़ें यों ही रखी हों फिर भी हम नहीं छूते, कुछ भी नहीं छूते! यह तो छूआ और मुँह में डाला तो फिर ऑटॉमैटिक शुरू हो जाएगा, यदि छूओगे न तब भी! आपको तो इतना ही तय करना है कि हमें छूना नहीं है, तो गाड़ी राह पर चलेगी। नहीं तो *पुद्गल* का स्वभाव ऐसा है कि यों भोजन करने बिठाएँ न, तो चावल आने में ज़रा देर हो जाए तो लोग दाल में हाथ डालते हैं, सब्ज़ी में हाथ डालते हैं और खाते रहते हैं। जैसे बड़ी चक्की हो न, वैसे अंदर डालता ही रहता है। अरे, चावल आने तक बैठा रह न चुपचाप, लेकिन बैठ नहीं पाता न! दाल में हाथ डालता है और न हो तो आखिर में जीभ पर चटनी चुपड़ता रहता है। बड़े मिल वाले भी! इस *पुद्गल* का स्वभाव ही ऐसा है! इसमें इन लोगों का कोई दोष नहीं है। मैं भी दाल में हाथ डालता रहता हूँ न!

प्रश्नकर्ता : तो हमें इसमें सिर्फ तय ही करना है? ऐसा?

दादाश्री : उसे यदि छू लिया तो फिर वह बढ़ता जाएगा। इसलिए हम तय कर लें कि पूरे दिन में इतनी ही मात्रा लेनी है। तो फिर गाड़ी नियम में चलेगी और बीच में इतने समय तक मुँह में कुछ डालना ही नहीं है। ये सब लोग पान क्यों चबाते होंगे? मुँह में कुछ रखना है, ऐसी आदत है इसलिए फिर पान चबाते हैं। कुछ भी मुँह में डालें, तब उन्हें मज़ा आता है। मुँह

में कुछ चलता रहना चाहिए। यानी कभी भी ऐसे खाते रहना, वह तो बहुत गलत है। बीच में नहीं खाना चाहिए। खाने के बाद कुछ भी नहीं डालना चाहिए।

उणोदरी मतलब हमें भोजन की मात्रा समझ में आ जाती है कि आज बहुत भूख लगी है, इसलिए तीन लड्डू खा सकेंगे तो एक लड्डू कम कर देना। कभी दो लड्डू खा सकेंगे, ऐसा लग रहा हो तो तब सवा लड्डू खाना। जितनी हमें समझ में आए, मात्रा उससे कुछ न्यून कर देनी चाहिए। कम कर देनी चाहिए। नहीं तो पूरे दिन डोज़िंग रहेगी। मूलतः जगत् के लोग, एक तो खुली आँखों से सोते हैं और ऊपर से वापस ऐसे डोज़िंग हो जाता है। जागृति और इसका, इन दोनों का मेल कैसे बैठ सकता है? अतः *उणोदरी* जैसा अन्य कोई तप नहीं है। भगवान ने बहुत ही सुंदर रास्ता बताया है कि कम रखना। कोई आठ लड्डू खाता हो तो उसे पाँच लड्डू खाने चाहिए। रोज़ एक लड्डू खाता हो तो वह कहेगा, 'मैं तो एक ही लड्डू खाता हूँ' वह भी नहीं चलेगा। उसे पौना लड्डू खाना चाहिए। वीतरागों ने एक-एक वाक्य बड़ी समझदारी से कहा है जो कि जगत् के लिए हितकारी रहे!

आहार जागृति से रक्षा करना व्रत की

प्रश्नकर्ता : भोजन और ज्ञान का क्या लेना देना है?

दादाश्री : भोजन कम होगा तो जागृति रहेगी, वर्ना जागृति रहेगी ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : भोजन से ज्ञान में कितनी बाधा आती है?

दादाश्री : बहुत बाधा आती है। आहार बहुत बाधक है। क्योंकि यह भोजन जो कि पेट में जाता है, उससे फिर दारू बनता है और पूरे दिन फिर शराब का नशा चढ़ता ही जाता है। वर्ना मैंने जो ये पाँच आज्ञाएँ दी हैं, उनकी जागृति क्यों नहीं रह पाती? उसमें कौन सी बड़ी बात है? और जागृति भी सभी को दी ही

है न?! लेकिन इस भोजन का बहुत असर होता है। हमने अब भोजन का त्याग करने को नहीं कहा है। अपने आप यदि त्याग हो जाए तो अच्छा। जिसे संयम लेना है, संयम यानी ब्रह्मचर्य पालन करना है, वह अगर अधिक भोजन लेगा तो उसे खुद को उल्टा 'इफेक्ट' होगा। फिर उसे उस उल्टे 'इफेक्ट' के रिज़ल्ट भुगतने पड़ेंगे। जिसे ब्रह्मचर्य पालन करना है, उसे ख्याल में रखना है कि कुछ प्रकार के आहार से उत्तेजना बढ़ जाती है। वह आहार कम कर देना चाहिए। चरबी वाले आहार जैसे कि घी-तेल वगैरह नहीं लेने चाहिए, दूध भी कुछ कम लेना चाहिए, लेकिन दाल-चावल-सब्ज़ी-रोटी वगैरह आराम से खाओ और उस आहार की मात्रा कम रखना। ज़बरदस्ती मत खाना। यानी आहार कितना लेना चाहिए कि नशा न चढ़े और रात को तीन-चार घंटे ही नींद आए, उतना आहार लेना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : ये साइन्टिस्ट कहते हैं कि छः घंटे की नींद होनी चाहिए।

दादाश्री : तो इन गाय-भैंसों से पूछ आओ कि तुम कितनी देर सोते हो? मुर्गे से पूछ आओ कि कितनी देर सोता है? निद्रा ब्रह्मचारी के लिए नहीं है! निद्रा तो कहीं होती होगी? निद्रा तो ये जो मेहनत करने वाले हैं, वे छः घंटे सोते हैं। उन्हें गहरी नींद आ भी जाती है! नींद तो कैसी होनी चाहिए कि जब ट्रेन में बैठकर जाते हैं, तब पाँच-दस झोंके आ जाएँ कि बस हो गया, फिर सुबह हो जाती है। यह तो आहार का पूरा नशा चढ़ता है, फिर सोता भी है!

आहार में घी-शक्कर करवाते हैं विषयकांड

आहार भी बहुत कम मत कर देना। क्योंकि आहार कम खाओगे तो ज्ञानरस जो कि आँखों को लाइट देता है, वह ज्ञानरस जो इन तंतुओ में से जाता है, वह रस फिर अंदर नहीं जाता और नसें सारी सूख जाती है। जवानी है, इसलिए यों घबराकर

आहार एकदम बंद मत कर देना। दाल-चावल वगैरह खाओ, वह तो ऐसा आहार है कि जो जल्दी पाचन हो जाए! और पचने के बाद जो खून बनता है, वही खून इस्तेमाल होता है। हररोज़ काम आए इतना ही खून बनता रहता है। आगे का (इससे ज़्यादा/अतिरिक्त) प्रोडक्शन जो था न, वह कम हो जाएगा!

प्रश्नकर्ता : शुद्ध घी हो तो उसमें क्या गलत है?

दादाश्री : घी हमेशा मांस बढ़ाने वाला होता है और मांस बढ़े तो वीर्य बढ़ता है, वह ब्रह्मचारियों की लाइन ही नहीं है न! यानी आप जो भी भोजन खाओ, सिर्फ दाल-चावल-कढ़ी खाओ, फिर भी भोजन का स्वभाव ऐसा है कि घी के बिना भी उसका खून बन जाता है और वह हेल्पिंग होता है। कुदरत ने ऐसा नियम रखा है क्योंकि जो गरीब इंसान है, वह ये सब कैसे खा पाएगा? तो गरीब इंसान जो खाता है, उससे भी उसे पूरी शक्ति मिल जाती है न! उसी तरह हमें इस सादे भोजन से पूरी शक्ति मिल जाती है! लेकिन जो विकारी है, वैसा भोजन नहीं होना चाहिए।

ये जो होटल का खाते हैं, उससे शरीर में खराब परमाणु घुस जाते हैं। फिर उनका असर हुए बिना रहता ही नहीं है। उसके लिए फिर उपवास करना पड़ेगा और जागृति रखनी पड़ेगी। फिर भी संयोग वश अगर बाहर का खाना पड़े तो खा लेना, लेकिन उसमें फिर लाभालाभ देखना। तले हुए पकोड़े खाने के बजाय दूध पी लेना अच्छा। बाहर की पूरी-सब्ज़ी के बजाय घर की खिचड़ी पसंद करना!

इतने छोटे-छोटे बच्चों को घी गोंद की मिठाइयाँ वगैरह खिलाते हैं, लेकिन बाद में उसका बहुत खराब असर होता है, वे बहुत विकारी हो जाते हैं। इसलिए छोटे बच्चे को ज़्यादा नहीं देना चाहिए, उसकी मात्रा संभालनी चाहिए। ये माल-मलीदा खाना, वह सब संसारियों के लिए हैं जिन्हें कि ब्रह्मचर्य की कुछ पड़ी नहीं

है। जिसे ब्रह्मचर्य पालन करना है, उसे माल-मलीदा नहीं खाना चाहिए। अगर खाना ही हो तो थोड़ा खाना कि भूख ही उसे खा जाए। माल-मलीदा खाते हैं तो वापस साथ में दाल-चावल चाहिए, सब्ज़ी चाहिए तब फिर भूख उसे नहीं खाती। खराब विकारों के आने का कारण यही है। उससे विकारी भाव उत्पन्न होते हैं। भूख खा जाए, तब तक विकारी भाव उत्पन्न नहीं होते। भूख न खाए, तब प्रमाद होता है। प्रमाद होता है इसलिए विकार होता है। प्रमाद यानी आलस नहीं, लेकिन विकार!

पुद्गल ऐसी चीज़ है जो परेशान करती है, वह अपना पड़ोसी है। *पुद्गल* अगर वीर्यवान हो, तब परेशान नहीं करता या फिर अगर बिल्कुल ही कम आहार लें, जीने लायक ही आहार लें, तब *पुद्गल* परेशान नहीं करता। आहार की वजह से तो ब्रह्मचर्य अटका हुआ है। आहार के बारे में जागृत रहना चाहिए। दिया जलता रहे, उतना ही खाना चाहिए। भोजन तो ऐसा लेना चाहिए कि नशा न चढ़े और नींद ऐसी होनी चाहिए कि भीड़ में बैठे हों और इधर नहीं खिसक सकें, उधर नहीं खिसक सकें, ऐसी भीड़ में बैठे-बैठे भी नींद आ जाए। वास्तव में नींद वही है। यह तो भोजन का नशा चढ़ता है, उससे फिर नींद आती है। खाना खाने के बाद विधि करके देखना, सामायिक करके देखना। होती है? ठीक से नहीं हो पाती।

नहाना भी है, निमंत्रण नुकसान को

नहाने से सभी विषय जागृत हो जाते हैं। ये नहाना-धोना किसके लिए है? विषयी लोगों के लिए ही नहाने की ज़रूरत है, बाकी तो ज़रा कपड़ा गीला करके यों पोंछ लेना चाहिए। जो अन्य आहार नहीं खाते, उसके शरीर से बिल्कुल दुर्गंध नहीं आती।

एक महीने से सिकनेस हो तो फिर विकार रहता है?

प्रश्नकर्ता : तो नहीं रहता।

दादाश्री : तो वैसी सिकनेस लाना।

प्रश्नकर्ता : लाना अपने बस की बात नहीं है न?

दादाश्री : तब अपने बस की बात क्या है? अगर चार दिन भूखे रहें तो अपने आप बीस दिन की सिकनेस आ जाएगी! चार दिन भूखा रहने के बाद विकार नहीं रहता।

आहार कम लिया कि चला। जीने के लिए खायें, खाने के लिए नहीं जियें। पहले रात को नहीं खाता था, तब अच्छा रहता था या अब अच्छा रहता है?

प्रश्नकर्ता : पहले बहुत अच्छा रहता था।

दादाश्री : तो जान-बूझकर बिगाड़ा क्यों?

प्रश्नकर्ता : खाने के दो-चार घंटे बाद भूख लगे तो और कुछ माँगता है।

दादाश्री : लेकिन आहार ऐसा लेना है कि भूख लगे ही नहीं, ऐसा शुष्क आहार कि जिसमें दूध-घी-तेल ऐसा बहुत पुष्टिकारक आहार न आए। ये दाल-चावल-कढ़ी खाना, वह ज़्यादा पुष्टिकारक नहीं होता।

इस काल में तो कंट्रोल किए जा सकें, ऐसे संयोग ही नहीं है! दबाने जाए तो बल्कि मन और ज़्यादा उछल-कूद करता है। इसलिए आहारी आहार करता है, ऐसे चलने देना। लेकिन वापस वह ब्रह्मचर्य को नुकसान नहीं करे, इतना ज़रा देखना! आहार के लिए आपको कंट्रोल या कंट्रोल नहीं, हमें ऐसा कुछ भी कहने की ज़रूरत नहीं है। सिर्फ यदि कभी विषय परेशान कर रहा हो, उदयकर्म का धक्का ज़्यादा लग रहा हो, तो उसे आहार पर कंट्रोल करना चाहिए। पुरुषार्थ और तो क्या है लेकिन तुम्हें चंद्रेश से कहना पड़ेगा। चंद्रेश के साथ जुदापन रखकर तुम्हारी बातचीत हो, वही। क्योंकि आत्मा तो कुछ बोलता ही नहीं है, लेकिन भीतर

जो प्रज्ञा नाम की शक्ति है, वह कहती है कि भोजन ज़रा कम लोगे तो तुम्हें ठीक रहेगा। क्योंकि अगर अहंकार करने जाए तो अहंकार जीवित हो जाएगा। यह जो ज्ञान दिया है, उससे अहंकार निर्जिव हो गया है। 'ज़रूरत से ज़्यादा नहीं खाना है', ऐसा तय करने के बाद अगर गलती से खा लिया जाए, तो उसके लिए कहना 'व्यवस्थित है'।

जीना है, ध्येय अनुसार

प्रश्नकर्ता : हर एक कार्य में तय करना पड़ता है। ज़्यादा नहीं खाना है, ऐसा तय किया और उसके लिए जागृति रखी, ऐसे हर एक कार्य में जागृति रखनी पड़ेगी?

दादाश्री : वह जो उपयोग रखा, वही जागृति! प्रमाद यानी खाना खाते रहना। इसलिए फिर कहीं भी ठिकाना ही नहीं रहता। पूरे दिन जो कुछ भी आए, वह खाता ही रहता है। मैं तो कितने ही सालों से मजबूरन खा रहा हूँ।

और अगर कोई इंसान बीमार हो, तीन दिन से और उसे विषय के लिए कहा जाए कि 'पचार हज़ार रुपये दूँगा,' तो करेगा?

प्रश्नकर्ता : नहीं करेगा, शक्ति ही नहीं रहेगी न!

दादाश्री : यह सब शक्ति करती है, आहार ही करता है यह सब।

प्रश्नकर्ता : पौद्‌गलिक शक्ति।

दादाश्री : हं। हमें दो-तीन दिन खाए बगैर ही बिता देने चाहिए। साधु, ऐसे ही बिताते हैं न? यह उपाय! शक्ति होगी तभी विषय में पड़ेगा न? उपाय तो करना पड़ेगा न?

मतलब महीने में दो बार भूखे रहना चाहिए। दो-दो दिन। इतना तप करने से वह (ब्रह्मचर्य का) तप हो ही जाएगा। महावीर भगवान ने यही किया था न! सभी ने यही किया था न!

प्रश्नकर्ता : इस निश्चय को टिकाकर रखने के लिए कोई उपाय नहीं हो पाते।

दादाश्री : यही उपाय है।

प्रश्नकर्ता : आप कहते हैं, फिर भी मानसिक तैयारी नहीं हो पाती अंदर से।

दादाश्री : तो फिर हमने कहाँ मना किया है, शादी करने को?

प्रश्नकर्ता : आपने तो नहीं कहा लेकिन हमने तो देखा है न! ऐसा प्राप्त होने के बाद, अब तो गलती कर ही नहीं सकते।

दादाश्री : तो फिर डिसाइड करने के बाद कुछ नहीं छू सकता! डिसीज़न लेने के बाद अगर ऐसे ढीला बोलोगे तो बल्कि चढ़ बैठेगा। 'गेट आउट' कहने से थोड़ा-बहुत बाहर भाग जाएगा। जब वापस इकट्ठा होकर आए तो वापस 'गेट आउट' कहना।

कंदमूल पोषण दें विषय को

देखा देखी वाला ब्रह्मचर्य व्रत नहीं टिकता। इसलिए फिर जो करना हो, वह करे। लेकिन मैं तो चेतावनी देता हूँ कि ब्रह्मचर्य पालन करना हो तो कंदमूल नहीं खाने चाहिए।

प्रश्नकर्ता : कंदमूल नहीं खाने चाहिए?

दादाश्री : कंदमूल खाना और ब्रह्मचर्य पालन करना, यह रोंग फिलॉसॉफि है, विरोधी है।

प्रश्नकर्ता : कंदमूल नहीं खाना, वह जीव हिंसा की वजह से है या दूसरा कोई कारण है?

दादाश्री : कंदमूल तो अब्रह्मचर्य को ज़बरदस्त पुष्टि देने वाले हैं। ऐसे नियम रखने पड़ते हैं ताकि उसका ब्रह्मचर्य रह

पाए-टिक पाए। और जिससे ब्रह्मचर्य टिक सके, उसका भोजन इतना सुंदर होना चाहिए। अब्रह्मचर्य से सारी रमणीयता चली जाती है और जो ब्रह्मचर्य का पालन करे, वह रमणीय बनता है। इंसान प्रभावशाली दिखता है।

प्रश्नकर्ता : अभी तक हम कंदमूल नहीं खाते थे। ज्ञान लेने के बाद खाना शुरू किया, तो बाधक नहीं रहेगा? दोष नहीं लगेगा?

दादाश्री : किसे दोष लगेगा इसमें? इस डिस्चार्ज में कैसा दोष? हम इन ब्रह्मचारियों को दोष लगने के लिए नहीं, उन्हें तो अगर यह सब नहीं खाएँगे न, तो विषय का ज़ोर कम हो जाएगा। उन्हें तो ऐसा रक्षण के लिए करना होता है। दोष का और इसका लेनादेना नहीं है।

प्रश्नकर्ता : यह जो वर्णन किया है कि सुई की नोक पर आलू का, उस नाप का एक पीस आए, तो उसमें अनंत जीव होते हैं, उन जीवों को...

दादाश्री : वह सब किसके लिए है? जिसे बुद्धि बढ़ानी हो न, उसके लिए है। उसके आग्रही बन जाएँ तो कब पार आएगा? और यह मोक्ष का मार्ग निराग्रही है। इसे जानना ज़रूर है और हो सके, उतना कम कर देना है।

[2.13]
न हो असार, पुद्गलसार

पुद्गलसार है, ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य, वह क्या है? वह *पुद्गलसार* है। हम जो खाना खाते हैं, पीते हैं, इन सब का सार क्या रहा? 'ब्रह्मचर्य'! यदि आपका यह सार चला जाए तो उसे जो आत्मा का आधार है, वह आधार 'लूज़' हो जाएगा! इसलिए ब्रह्मचर्य मुख्य चीज़ है। एक ओर ज्ञान हो और दूसरी ओर ब्रह्मचर्य हो तो सुख का अंत ही नहीं रहेगा न! फिर ऐसा चेन्ज आता है कि बात ही मत पूछो! क्योंकि ब्रह्मचर्य, वह *पुद्गलसार* है न?

यह सब जो खाते हैं, पीते हैं, उसका क्या होता होगा पेट में?

प्रश्नकर्ता : खून बनता है।

दादाश्री : और संडास नहीं बनती होगी?

प्रश्नकर्ता : बनती है न! कुछ आहार से खून और कुछ संडास के माध्यम से सारा कचरे के रूप में निकल जाता है।

दादाश्री : हाँ, और कुछ पानी के माध्यम से निकल जाता है। इस खून से फिर क्या बनता है?

प्रश्नकर्ता : खून से वीर्य बनता है।

दादाश्री : ऐसा! वीर्य को समझता है? खून से वीर्य बनता है, उस वीर्य से फिर क्या बनता है? खून की सात धातु कहते

हैं न? उनमें से एक में से हड्डियाँ बनती है, एक में से मांस बनता है, उनमें से फिर अंत में सब से आखिरी में वीर्य बनता है। अंतिम दशा में वीर्य बनता है। वीर्य, वह तो *पुद्गलसार* कहलाता है। दूध का सार घी कहलाता है, उसी तरह भोजन करने का सार वीर्य कहलाता है। अब इस सार को क्या मुफ्त में ही दे देना चाहिए या महंगे दाम पर बेचना चाहिए?

प्रश्नकर्ता : महंगे दाम पर बेचना चाहिए।

दादाश्री : ऐसा? लोग तो पैसा खर्च करके बेचते हैं और तू कहता है कि महंगे दाम पर बेचना चाहिए, तो महंगे दाम पर तुझ से कौन लेगा?

लोकसार, वह मोक्ष है और *पुद्गलसार,* वह वीर्य है। जगत् की सभी चीज़ें अधोगामी हैं। यदि ठान ले तो सिर्फ वीर्य ही ऊर्ध्वगामी बन सकता है इसलिए ऐसे भाव करने चाहिए कि वीर्य ऊर्ध्वगामी हो। वीर्य के दो गमन हैं। एक अधोगमन और दूसरा ऊर्ध्वगमन। जब तक अधोगमन है, तब तक पाशवता है।

प्रश्नकर्ता : इस ज्ञान में रहने पर तो अपने आप ऊर्ध्वगमन होगा ही न?

दादाश्री : हाँ, और यह ज्ञान ही ऐसा है कि अपने ज्ञान में रहो तो कोई दिक्कत नहीं आएगी, लेकिन जब अज्ञान उत्पन्न होता है तब अंदर यह रोग उत्पन्न हो जाता है। उस समय जागृति रखनी पड़ेगी। विषय में तो अपार हिंसा है, खाने-पीने में ऐसी कोई हिंसा नहीं होती।

इस जगत् में साइन्टिस्ट और सभी लोग कहते हैं कि वीर्य-रज अधोगामी है। लेकिन अज्ञानता है, इस वजह से अधोगामी है। ज्ञान में तो ऊर्ध्वगामी बन जाता है। क्योंकि ज्ञान का प्रताप है न! ज्ञान हो तो कोई विकार ही नहीं होगा, फिर भले ही कैसी भी बॉडी हो, भले ही कितना भी खाता हो। अतः मुख्य चीज़ ज्ञान है।

प्रश्नकर्ता : ऊर्ध्वगामी और अधोगामी, ये दोनों 'रिलेटिव' शब्द नहीं हुए?

दादाश्री : हाँ, 'रिलेटिव' ही कहलाएगा। लेकिन 'रिलेटिव' में यों बदलाव हो जाए तो हमें लाभ मिलेगा! अपने 'ज्ञान' से बदलाव हो सकता है। हम क्या कहते हैं कि हम ज्ञान प्रकट रखेंगे तो सारा बदलाव अपने आप होता रहेगा। अपना ज्ञान प्रकट नहीं रखने से बदलाव नहीं होता है। रिलेटिव में तो हम कुछ भी नहीं कर सकते, लेकिन हम अपने में कर सकते हैं और उसका फोटो 'रिलेटिव' पर पड़ता है। इसलिए हमें सिर्फ जागृति ही रखनी है। वीर्य के परमाणु सूक्ष्मरूप से ओजस में परिणमित होते हैं, उसे फिर नीचे उतरना, अधोगामी होना नहीं रहता, यह मेरा अनुभव है। वे शक्तियाँ जो डाऊन हो रही थीं, वे ऊपर चढ़ती हैं। जो संसार में खाया-पीया, वे सारी शक्तियाँ दो तरह से परिणमित होती हैं। एक संसार के रूप में और दूसरी ऐश्वर्य के रूप में!

अहो, अहो! उन आत्मवीर्य वालों की

प्रश्नकर्ता : यह जागृति बढ़ते-बढ़ते कुछ लिमिट तक आई यानी यहाँ तक आकर अटक जाती है। लेकिन दूसरे किसी भी प्रकार के, यों व्यवहार में रिवॉल्यूशन खुलने चाहिए, वह नहीं हो पाता।

दादाश्री : तुझे व्यवहारिक ज़्यादा नहीं है न! लेकिन अभी तो वह शक्ति खड़ी होगी। आत्मवीर्य ही नहीं है न! आत्मवीर्य प्रकट नहीं हो रहा है। ऐसा है न, तेरे मन में व्यवहार सहन करने की इतनी सी भी शक्ति नहीं है, इसलिए भागता है, भागकर एकांत में चले जाने की कोशिश करता है। लेकिन यह दर्शन प्रकट हुआ, इसलिए तुझे 'खुद की' गुफा में घुसना आ गया, वर्ना परेशानी हो जाती!

प्रश्नकर्ता : आपने जो कहा कि आत्मवीर्य प्रकट नहीं हुआ है। तो आत्मवीर्य कैसे प्रकट होता है?

दादाश्री : आत्मवीर्य प्रकट हो जाए, तो उसकी तो बात ही अलग है न!

प्रश्नकर्ता : वह क्या कहलाता है? जब आत्मवीर्य प्रकट होता है तो उसमें क्या होता है?

दादाश्री : आत्मा की शक्ति बहुत बढ़ जाती है।

प्रश्नकर्ता : तो यह जो दर्शन है, जागृति है। यह और आत्मवीर्य इन दोनों का कनेक्शन क्या है?

दादाश्री : जागृति, वह आत्मवीर्य में आती है। आत्मवीर्य का अभाव है इसलिए व्यवहार का सोल्यूशन नहीं कर पाता, लेकिन व्यवहार धकेलकर एक तरफ रख देता है। आत्मवीर्य वाला तो कहेगा, भले ही कोई भी हो, आओ न! उसे उलझन नहीं होती। लेकिन अब वे सभी शक्तियाँ उत्पन्न होंगी!

प्रश्नकर्ता : वे शक्तियाँ ब्रह्मचर्य से उत्पन्न होती हैं?

दादाश्री : हाँ, ब्रह्मचर्य का अच्छी तरह से पालन हो, तब और ज़रा सा भी लीकेज नहीं होना चाहिए। यह तो क्या हुआ है कि व्यवहार सीखे नहीं और यों ही यह सब हाथ में आ गया है!

बरते वीर्य, जहाँ जहाँ रुचि

जहाँ रुचि होती हैं, वहाँ आत्मा का वीर्य बरतता है। इन लोगों को रुचि किस में है? आइस्क्रीम में है, लेकिन आत्मा में नहीं। आत्मा के लिए यहाँ आना है या आइस्क्रीम के लिए? तो कहेंगे 'आइस्क्रीम खाने!'। कितने निर्वीर्य जीव हैं! तुझे समझ में आ रही है यह बात?

आत्मवीर्य वाला तो बहुत मज़बूत इंसान! किसी भी लालच की चीज़ से नहीं ललचाता। इस दुनिया में उसे कोई चीज़ ललचा नहीं सकती, और इसे तो आइस्क्रीम ललचा जाती है कभी-कभी!

उसे यह संसार अच्छा नहीं लगता, अत्यंत सुंदर से सुंदर चीज़ भी बिल्कुल अच्छी नहीं लगती। वही, आत्मा की तरफ का ही अच्छा लगता है, पसंद बदल जाती है। जब देहवीर्य प्रकट होता है, तब आत्मा का अच्छा नहीं लगता।

प्रश्नकर्ता : आत्मवीर्य कैसे प्रकट हो सकता है?

दादाश्री : निश्चय किया हो और हमारी आज्ञा का पालन करे तभी से ऊर्ध्वगति में जाता है। दो आँखों से आँखें मिलीं, वहाँ आकर्षण हुआ, उसका प्रतिक्रमण करते रहना है। ऐसे पच्चीस या पचास होंगे, ज़्यादा नहीं होंगे। उन सब का प्रतिक्रमण करके छोड़ देना है। वह अतिक्रमण से खड़ा हुआ है और प्रतिक्रमण से बंद हो जाएगा।

वीर्य को ऐसी आदत नहीं है, कि अधोगति में जाना है। वह तो खुद का निश्चय नहीं है, इसलिए अधोगति में जाता है। निश्चय किया कि दूसरी ओर मुड़ जाता है, और फिर चेहरे पर दूसरों को भी तेज दिखने लगता है और ब्रह्मचर्य पालन करने वाले के चेहरे पर कोई असर नहीं दिखे, तो 'ब्रह्मचर्य का पूर्णतः पालन नहीं किया' ऐसा कहलाएगा।

प्रश्नकर्ता : वीर्य का ऊर्ध्वगमन शुरू होना हो तो उसके लक्षण क्या हैं?

दादाश्री : नूर आने लगता है, मनोबल बढ़ता जाता है, वाणी फर्स्ट क्लास निकलती है। वाणी मिठास वाली होती है। वर्तन मिठास वाला होता है। ये सब उसके लक्षण होते हैं। उसमें तो बहुत देर लगती है, वह अभी यों ही नहीं हो सकेगा। अभी एकदम नहीं हो जाएगा।

उपाय करना, स्वप्नदोष टालने के लिए

प्रश्नकर्ता : स्त्री के बारे में जो सपने आते हैं, वे हमें इस

ब्रह्मचर्य की भावना की वजह से अच्छे नहीं लगते तो उसका कोई उपाय है?

दादाश्री : सपने, वह तो अलग चीज़ है। आपको अच्छे लगें तो नुकसान करेंगे और अच्छे नहीं लगें तो कोई नुकसान नहीं करेंगे। भले ही वे कैसे भी आए, अच्छे लगें तो वापस आपको वैसा होगा और अच्छे नहीं लगें तो कोई झंझट ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : स्वप्नदोष क्यों होते होंगे?

दादाश्री : ऊपर पानी की टंकी हो, वह पानी नीचे गिरने लगे तो नहीं समझ जाते कि छलककर उभर गई है! स्वप्नदोष मतलब उभरना। टंकी छलककर उभर रही हो तो कॉक नहीं रखना चाहिए?

यदि आहार पर कंट्रोल करे तो स्वप्नदोष नहीं होगा। इसलिए ये महाराज एक ही बार आहार करते हैं न, वहाँ! और कुछ भी नहीं लेते, चाय-वाय कुछ भी नहीं लेते।

प्रश्नकर्ता : उसमें रात का आहार महत्वपूर्ण है। रात का कम कर देना चाहिए।

दादाश्री : रात को खाने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती। महाराज, एक ही बार आहार लेते हैं। लेकिन चार रोटी खा जाते हैं, उनकी उम्र तो है न। बाकी चाय नहीं, और कोई झंझट ही नहीं। पूरे दिनके लिए टंकी भर ली। टंकी भर ली तो वह पेट्रोल चलता रहता है।

अत: डिस्चार्ज तो, यह खाना यदि कंट्रोल में हो तो और कुछ भी नहीं होगा। ये तो भर-भरके खाते हैं। जो हो वह और कोई विचित्र आहार हो, तब क्या होगा? जैन तो कैसे समझदार! ऐसा आहार नहीं। ऐसा वैसा कुछ नहीं होता। फिर भी डिस्चार्ज हो जाए तो, उसमें हर्ज नहीं है। भगवान ने कहा है 'उसमें तो हर्ज नहीं।' वह जब भर जाए तो फिर ढक्कन खुल जाता है। जब तक ब्रह्मचर्य ऊर्ध्वगमन नहीं हुआ है, तब तक अधोगमन ही

होता है। ऊर्ध्वगमन तो जब ब्रह्मचर्यव्रत लेना तय किया तभी से शुरूआत हो जाती है।

सावधानी से चलना अच्छा। महीने में चार बार हो जाए, फिर भी हर्ज नहीं है। हमें जान-बूझकर डिस्चार्ज नहीं करना चाहिए। वह गुनाह है। अपने आप हो जाए तो उसमें हर्ज नहीं। ये सब तो उल्टा-सीधा खाने का परिणाम है। जान-बूझकर डिस्चार्ज करना, वह भयंकर गुनाह है। आत्महत्या कहलाएगा। ऐसे डिस्चार्ज की छूट कौन देगा? वह भाई कह रहे हैं कि डिस्चार्ज भी नहीं होना चाहिए। 'तब क्या मर जाऊँ? कुएँ में पड़ जाऊँ?' कहना।

प्रश्नकर्ता : डिस्चार्ज हो जाए तो वह गुनहगार बन जाता है, उसे मन में क्षोभ होता है। क्योंकि ये सब ऐसा ही कहते हैं न कि डिस्चार्ज नहीं होना चाहिए।

दादाश्री : वे लोग विषय करते हैं, उसके बजाय तो यह डिस्चार्ज बहुत अच्छा। वह दो लोगों को बिगाड़ता है, कुत्ते जैसा तो शोभा नहीं देता!

वीर्यशक्ति का ऊर्ध्वगमन कब?

प्रश्नकर्ता : वीर्य का *गलन* होता है, वह *पुद्‌गल* स्वभाव में होता है या फिर कहीं पर हमारा लीकेज हो तब होता है?

दादाश्री : किसी को देखकर तुम्हारी दृष्टि बिगड़ जाए, तब वीर्य का कुछ हिस्सा एकज़ॉस्ट हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : वह तो विचारों से भी हो जाता है।

दादाश्री : विचारों से भी एकज़ॉस्ट होता है, दृष्टि से भी एकज़ॉस्ट होता है। वह एकज़ॉस्ट हुआ माल फिर डिस्चार्ज होता रहता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन ये जो ब्रह्मचारी हैं, उन्हें तो ऐसे कुछ संयोग नहीं मिलते, वे स्त्रियों से दूर रहते हैं, फोटो नहीं रखते,

कैलेन्डर नहीं रखते, फिर भी उन्हें डिस्चार्ज हो जाता है। तो उनका डिस्चार्ज स्वाभाविक नहीं कहलाएगा?

दादाश्री : फिर भी उन्हें मन में यह सब दिखता है। दूसरा, अगर वह भोजन बहुत खाता हो और उसका वीर्य बहुत बने तो फिर वह प्रवाह बह जाता है, ऐसा भी हो सकता है।

प्रश्नकर्ता : रात को ज़्यादा खा लिया तो खत्म...

दादाश्री : रात को ज़्यादा खाना ही नहीं चाहिए, खाना हो तो दोपहर में खाना। रात को यदि ज़्यादा खा लिया तब तो वीर्य का स्खलन हुए बिना रहेगा ही नहीं। वीर्य का स्खलन किसे नहीं होता है? जिसका वीर्य बहुत मज़बूत हो गया हो, बहुत गाढ़ा हो गया हो, उन्हें नहीं होता। ये सब तो पतले हो चुके वीर्य कहलाते हैं।

प्रश्नकर्ता : मनोबल से भी उसे रोका जा सकता है न?

दादाश्री : मनोबल तो बहुत काम करता है! मनोबल ही काम करता है न! लेकिन वह ज्ञानपूर्वक चाहिए। यों ही मनोबल नहीं रह पाता न!

प्रश्नकर्ता : सपने में जो डिस्चार्ज होता है, वे क्या पिछली खामियाँ है?

दादाश्री : उसमें कोई शंका नहीं है। वे सभी पिछली खामियाँ स्वप्नावस्था में चली जाती हैं। स्वप्नावस्था के लिए हम गुनहगार नहीं माने जाएँगे। हम जागृत अवस्था को गुनहगार मानेंगे। खुली आँखों से जागृत अवस्था! फिर भी सपने आते हैं। अत: उन्हें बिल्कुल निकाल देने जैसा नहीं है, वहाँ सावधान रहना। स्वप्नावस्था के बाद सुबह पश्चाताप करना पड़ेगा, उसका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा कि ऐसा नहीं होना चाहिए। हमारी पाँच आज्ञा का पालन करे तो उसमें कभी भी विषय विकार हो सकें, ऐसा है ही नहीं।

जोखिम, हृष्ट-पुष्ट शरीर के

यह पढ़, इसमें क्या लिखा है?

प्रश्नकर्ता : मैथुन संज्ञा चार प्रकार से जागृत होती है।

1) वेद मोहनीय के उदय से।

2) हड्डी, मांस, खून वगैरह से शरीर पुष्ट होने से।

3) स्त्री को देखने से।

4) स्त्री का चिंतवन करने से।

वेद मोहनीय उदय से, यानी?

दादाश्री : स्त्री को स्त्री वेद होता है, पुरुष को पुरुष वेद होता है, वह वेद जब उदय में आता है, तब वह विचलित कर देता है।

तुम्हें खास सावधानी कहाँ पर रखनी है कि 'खून और मांस से शरीर हृष्ट-पुष्ट होने से', वहाँ सावधान रहना है। तुम कहते हो कि हमें डिस्चार्ज हो जाता है तो उसमें यह कारण बाधक है। एक ओर श्रीखंड, पकोड़े, जलेबियाँ वगैरह खाते हो और फिर वीर्य को रोके रखना चाहते हो, वह कैसे हो सकेगा? शरीर को तो पोषण के लिए ही आहार देना चाहिए और वह भी भारी माल-मलीदे वाला भोजन नहीं। इस किताब में स्पष्ट लिखा हुआ है। इसीलिए तो मैंने यह किताब तुम्हें पढ़ने के लिए दी है। कई जैन साधु *आयंबिल* (जैनों में किया जाने वाला व्रत, जब भोजन में एक ही प्रकार का धान खाया जाता है) करते हैं। *आयंबिल* में कोई भी एक ही चीज़ खाते हैं हमेशा के लिए। पानी में रोटी डूबोकर खाते हैं, तब जाकर वे साधु ब्रह्मचर्य पालन कर सकते हैं। सर्दी के दिनों में ठंड में शरीर कस जाता है, गर्मी में धूप में कस जाता है। हमें तो ठंड-वंड सहन ही नहीं करनी है न!

रजाई लाकर ओढ़ ली कि चला! इसीलिए सावधान रहना। यदि तुम्हें ब्रह्मचर्य पालन करना हो तो सावधान रहना पड़ेगा। वीर्य ऊर्ध्वगामी होने के बाद अपने आप चलता रहेगा। अभी तक वीर्य ऊर्ध्वगामी नहीं हुआ है। अभी भी इसका स्वभाव अधोगामी है। वीर्य ऊर्ध्वगामी हो जाए, तब सबकुछ ऊँचे चढ़ता है। फिर तो वाणी-बाणी बढ़िया निकलती है, भीतर दर्शन भी उच्च प्रकार का खिला हुआ रहता है। वीर्य के ऊर्ध्वगामी होने के बाद दिक्कत नहीं आएगी, तब तक तो खाने-पीने में बहुत नियम रखना पड़ता है। वीर्य को ऊर्ध्वगामी होने में तुम्हें मदद तो करनी पड़ेगी या यों ही चलता रहेगा?

प्रश्नकर्ता : मदद करनी पड़ेगी। आहार में क्या क्या बंद कर देना है? तला हुआ, घी, तेल वगैरह बंद कर देना पड़ेगा न?

दादाश्री : कुछ भी बंद नहीं करना है, उसकी मात्रा कम कर देनी है।

प्रश्नकर्ता : चावल, यह ब्रह्मचर्य के लिए बिल्कुल अंतिम आहार है, सही है न?

दादाश्री : नहीं, सिर्फ चावल पर नहीं। वह तो सिर्फ रोटी होगी, कुछ भी होगा फिर भी चलेगा। बाकी कुछ खास प्रकार का फूड नहीं लेने चाहिए। चरबी वाला और ऐसा वैसा आहार नहीं लो तो अच्छा रहेगा।

प्रश्नकर्ता : और, मीठा आहार?

दादाश्री : मिठाई भी नहीं। खट्टा चलेगा लेकिन वह भी हिसाब से, ज़्यादा खट्टा नहीं खाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : मिर्च?

दादाश्री : थोड़ी थोड़ी खा सकते हैं। मिर्च से अच्छी तो कालीमिर्च। ब्रह्मचर्य पालन के लिए सब से अच्छी, सौंठ। अपने

इन ब्रह्मचारियों के लिए ही झंझट है न? बाकी सभी को तो अपने इस विज्ञान में तो कोई झंझट ही नहीं है न? अपने इस विज्ञान में तो धीरे से निकाल कर लेना है। ये तो ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, इसलिए सब कहना पड़ता है। अतः यदि यों कुछ सालों तक ब्रह्मचर्य संभल गया, कंट्रोलपूर्वक, तो फिर वीर्य ऊर्ध्वगामी हो जाएगा और तब ये शास्त्र-पुस्तकें ये सब दिमाग़ में धारण कर सकेंगे। धारण करना, कोई आसान चीज़ नहीं है, वर्ना पढ़ता है और फिर भूलता जाता है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, ऐसा ही होता है अभी।

दादाश्री : अब यदि वीर्य ऊर्ध्वगामी हो चुका हो तभी वह धारण कर सकता है, नहीं तो धारण नहीं कर सकता।

प्रश्नकर्ता : ये जो प्राणायाम करते हैं, योग करते हैं, वे ब्रह्मचर्य के लिए कुछ हेल्पफुल हो सकते हैं?

दादाश्री : वैसा अगर ब्रह्मचर्य के भाव से करे तो हेल्पिंग हो सकता है। ब्रह्मचर्य का भाव होना चाहिए और आपको शरीर स्वस्थ रखने के लिए करना हो तो उससे शरीर स्वस्थ रहेगा। यानी भाव पर ही सारा आधार है लेकिन इन सब में आप मत पड़ना, वर्ना अपना आत्मा रह जाएगा।

प्रश्नकर्ता : जहाँ स्त्री बैठी हो, उस बैठक पर ब्रह्मचारी को नहीं बैठना चाहिए?

दादाश्री : यह तो पुराने ज़माने की बात हुई। अभी इस काल में यह माफ़िक नहीं आएगा। वह सब मैंने निकाल दिया है। क्योंकि अगर बस में कोई स्त्री उठे और आप नहीं बैठो तो कहाँ बैठोगे? तो क्या खड़े रहोगे? और अगर वह स्त्री उठ जाए और आप ऐसा कहो कि 'मैं नहीं बैठ सकता' तो लोग तुम्हें ऐसा कहेंगे कि 'घनचक्कर है।' तुम मूर्ख नहीं दिखो इसलिए मैंने पहले से ही सबकुछ निकाल दिया है। ऐसी तो बहुत सी बातें

हैं। यहाँ स्त्री की फोटो भी नहीं लटका सकते। फिर गाय को भी नहीं देख सकते, गाय स्त्री है इसलिए। अब इसका अंत कब आएगा? शास्त्रकारों ने तो बहुत बारीक बुना है जबकि हमें तो दरियाँ बनानी हैं। इसलिए अब मोटा-मोटा बुनो न! फिर भी हमें कैसा आनंद-आनंद रहता है! वहाँ तो कभी भी आनंद ही नहीं रहता और ऐसा बारीक बुनने में बेचारा उलझ जाता है। हाँ, नहाने की उन लोगों की बात मैं एक्सेप्ट करता हूँ। नहाना नहीं, खाना, ब्रश नहीं करना, वह सब एक्सेपट करता हूँ। नहाना नहीं चाहिए क्योंकि नहाने से शरीर की सभी इन्द्रियाँ सतेज हो जाती हैं। जीभ साफ की कि ये सब जलेबी-पकोड़े भाएँगे और नहीं की हो तो स्वाद में 'राम तेरी माया!' स्वाद कम पता चलता है।

प्रश्नकर्ता : ये साधु गीले कपड़े से शरीर पोंछ लेते हैं।

दादाश्री : वह तो करना ही पड़ेगा न!

प्रश्नकर्ता : उससे इन्द्रिय सतेज नहीं होतीं?

दादाश्री : नहीं।

प्रश्नकर्ता : गरम या ठंडा पानी हो तो क्या उससे फर्क पड़ता है?

दादाश्री : उसमें कुछ खास फर्क नहीं पड़ता। गरम पानी अंदर ठंडक करता है और ठंडा पानी अंदर गर्मी करता है। उसका स्वभाव अंदर बदलाव लाने का, बाकी सब एक सा ही है।

निरोगी से भागें विषय

आप परिणाम को बाहर ढूँढ रहे हो, लेकिन जो निरोगी होता है, उसका परिणाम हमेशा ही जल्दी पता चलता है। ये सब प्रमाण है! शरीर निरोगी हो तो ब्रह्मचर्य अच्छा रहता है। अब्रह्मचर्य शरीर के रोगों की वजह से ही रहता है। जितना रोग कम, उतना विषय कम। दुबले इंसान में विषय अधिक होता है और मोटे इंसान में विषय कम होता है।

प्रश्नकर्ता : यानी रोगों की वजह से अब्रह्मचर्य है?

दादाश्री : रोगों से ही अब्रह्मचर्य है। निरोगी इंसान को अब्रह्मचर्य का झंझट ही नहीं रहता! उसे वह अच्छा ही नहीं लगता। उसे तो निरोगीपन का ही आनंद रहता है, इसलिए उसे विषय अच्छा ही नहीं लगता जबकि इस शरीर का तो... अभी ऐसा रोगी हो गया है, यानी इस काल में निरोगी हैं ही नहीं न! निरोगी तो सिर्फ तीर्थंकर होते हैं!

प्रश्नकर्ता : तो हमें निरोगी बनने के लिए, ब्रह्मचर्य पालन के लिए इस शरीर का भी ध्यान रखना पड़ेगा न?

दादाश्री : शरीर का ध्यान तो ऐसी चीज़ है कि आपके लिए अब यह निकाली बात है। ऐसा ध्यान तो कब रखना होता है, कि कर्ता साथ में हो तब। हमें भाव रखना है कि बॉडी निरोगी होनी चाहिए, ऐसा पक्षपात रहना चाहिए और फिर शरीर को ज़रा संभालना।

प्रश्नकर्ता : कोई इंसान तंदुरस्त है, तो वह तंदुरस्ती किस चीज़ के आधार पर टिकी हुई है? शारीरिक शक्ति का आधार वीर्य शक्ति है न!

दादाश्री : इन स्त्रियों में वीर्य नहीं होता, फिर भी शारीरिक शक्ति बहुत होती है।

प्रश्नकर्ता : तो तंदरुस्ती का जो स्तर है, वह किस आधार पर तय होता है?

दादाश्री : वह रोग मुक्तता पर आधारित है। रोग नहीं होता तब शक्ति अधिक होती है। रोग के कारण शक्ति कम हो जाती है।

वीर्य शक्ति अलग चीज़ है। वीर्य तो हर एक के अंदर होता ही है, रोगी हो या निरोगी हो, दोनों में, सभी में होता है।

दुबले इंसान में वीर्य शक्ति अधिक होती है और मोटे में कम होती है। दुबले में अधिक होती है। दुबला अधिक कामी होता है, मोटा कम कामी होता है। क्योंकि इसका खाया हुआ, सारा मांस बन जाता है, और इसका खाया हुआ सारा वीर्य बन जाता है।

प्रश्नकर्ता : जो इंसान मोटा होता है, उसमें चरबी का भाग मांस से भी ज़्यादा होता है।

दादाश्री : हाँ, उसका खाया हुआ सारा चरबी और मांस बन जाता है। इसका खाया हुआ सारा हड्डी बन जाता है। मोटे इंसान को कितना खून चाहिए? जबकि उसे तो, दुबले को तो खून ही नहीं चाहिए न। उसके सभी कारखाने चलते रहते हैं, इसलिए फिर बचा-खुचा वीर्य बन जाता है। कुछ समझ में आ रहा है? मोटे इंसान में विषय बहुत कम होता है। उसमें स्ट्रेन्थ (शक्ति) भी कम होती है।

प्रश्नकर्ता : एक बार ऐसा सुना था कि *पुद्गल* का फोर्स बढ़ जाए, *पुद्गल* की शक्ति बढ़ जाए तो विषय में खिंच जाता है, यह सच है?

दादाश्री : शरीर का ठिकाना नहीं हो और ठूँस-ठूँसकर खाना खाता हो तो वह ब्रह्मचर्य नहीं टिकता, अब्रह्मचर्य हो जाता है। यदि शरीर मज़बूत हो, लेकिन आहार कम लेता हो तो वह ब्रह्मचर्य संभाल सकता है। बाकी जिसे थ्री विज़न से वैराग आ जाता है, उसे तो अब्रह्मचर्य हो ही नहीं सकता। इस गटर को एक बार खोलकर देख लिया हो तो दोबारा खोलेगा ही नहीं न! खोलने की इच्छा ही नहीं होगी न? उसकी तो उस तरफ नज़र ही नहीं जाएगी। ब्रह्मचर्य तो कैसा होता है? हज़ार स्त्रियों के बीच भी मन न बिगड़े, उसे विचार तक नहीं आए। मन बिगड़ा तो सबकुछ बिगड़ गया क्योंकि वह चार्ज स्वरूप है इसलिए तुरंत चार्ज हो जाता है और चार्ज हुआ तो डिस्चार्ज होगा ही!

ज्ञानी की सूक्ष्म बातें

प्रश्नकर्ता : विषय के अलावा अन्य विचार आएँ और काफी देर तक चलते रहें, तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : भले ही चलें, उसमें दिक्कत क्या है? उन्हें देखते रहना है कि क्या आए और क्या नहीं। सिर्फ देखते ही रहना है और नोट भी नहीं करना है। जैसे पानी गिरता रहता है, वैसे ही विचार चलते रहते हैं। हमें उन्हें देखते रहना है।

प्रश्नकर्ता : खराब विचार आएँ तो प्रतिक्रमण करते जाना है?

दादाश्री : विचार खराब होता ही नहीं है। खराब विचार और अच्छा विचार, वे नाम तो संसार के लोगों ने दिए हैं। जिसे आत्मज्ञान है, उसके लिए विचार मात्र ज्ञेय हैं। विचार को खराब कहेंगे तो फिर मन चिढ़ जाएगा। हम क्यों किसी को बुरा कहें? वह उसका स्वभाव ही है। अच्छा विचार हो या दुर्विचार, मन दिखाता ही रहेगा। उन्हें हमें देखते रहना है।

मन में जो विचार आते हैं, वे उदयभाव कहलाते हैं। उस विचार में खुद तन्मयाकार हुआ तो *आश्रव* (कर्म में उदय की शुरूआत, उदय कर्म में तन्मयाकार होना) हुआ कहलाएगा। इससे फिर कर्म जमने लगेंगे। लेकिन यदि उसे मिटा देंगे तो फिर मिट जाएगा। यदि उसका काल पक जाए और अवधि पूरी हो जाए तो बंध पड़ जाएगा। इसलिए अवधि पूरी होने से पहले मिटा देना पड़ेगा, तो फिर उससे बंध नहीं पड़ेगा। इसलिए हमने कहा है न, अतिक्रमण तो हो ही जाएगा, लेकिन फिर तुरंत प्रतिक्रमण कर लेना। ताकि फिर बंध न पड़े।

शरीर तो परेशान नहीं करता न?

प्रश्नकर्ता : नहीं, यों तो ऐसा लगता है कि मन ही परेशान

करता है, शरीर परेशान करे, ऐसा नहीं लगता। बाकी ये जो भोग भोगते हैं, उससे शरीर को एक तरह की तृप्ति मिलती है।

दादाश्री : हाँ, वह संतोष होता है। संतोष यानी क्या कि किसी भी प्रकार की इच्छा हुई, शराब पीने की इच्छा हुई तो आखिर में जब वह शराब पीता है, तब उसे संतोष होता है। फिर भले ही कैसी भी बेवकूफ जैसी इच्छा होगी फिर भी उसे संतोष होगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, पहले तो वह मन पर ही असर करता है, तो देह का ज़ोर बढ़ जाता है न?

दादाश्री : नहीं, देह में और मन में इतना संबंध नहीं है। क्योंकि छोटे बच्चे भी आहार अधिक खाते हैं। उससे शरीर का ज़ोर बहुत रहता है। उनका मन इस विषय के बारे में जागृत नहीं होता, फिर भी उनके शरीर पर असर दिखता है।

प्रश्नकर्ता : क्या असर दिखता है?

दादाश्री : 'इन्द्रिय' टाइट हो जाती है, लेकिन उसके मन में कुछ नहीं होता। यानी शरीर का असर इतना नुकसान करे, ऐसी चीज़ नहीं होती। लेकिन लोग तो उल्टा मान लेते हैं। यह तो उल्टी मान्यताएँ हैं सारी। बाकी छोटे बच्चे कुछ विषय को नहीं समझते, उनके मन में विषय जैसा कुछ होता भी नहीं है। फिर भी यह शरीर का बल है। आहार और दूध वगैरह सब खाते हैं, इसलिए इन्द्रिय टाइट हो जाती है। इससे ऐसा मान लेना कि वह शरीर को नुकसान पहुँचाता है, तो वह गलत है। यह सारा मन का ही रोग होता है। मन का रोग ज्ञान से चला जाए ऐसा होता है, तो फिर हमें इसमें परेशानी कहाँ आती है?

प्रश्नकर्ता : अभी भी कुछ ठीक से समझ में नहीं आ रहा है। तो शरीर को कोई निष्पत्ति ही नहीं होती?

दादाश्री : हाँ, निष्पत्ति ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो शरीर को एकदम सुखा देना चाहिए और ऐसा मानना कि शरीर अच्छा होगा तो नुकसान होगा, इसमें ऐसा मान लेने की ज़रूरत नहीं है?

दादाश्री : ऐसा कुछ इतना ज़्यादा मान लेने की ज़रूरत नहीं है और ऐसे घबराकर अभी आहार ज़्यादा नहीं लोगे तो फिर वह शरीर को नुकसान पहुँचाएगा। मतलब इसका किसी को उल्टा अर्थ नहीं निकालना चाहिए कि दादा ने आहार की छूट दी है।

प्रश्नकर्ता : मतलब नॉर्मेलिटी रखकर लेना चाहिए, ऐसे?

दादाश्री : नॉर्मेलिटी मतलब घी-तेल, ऐसी कुछ चीज़ें तो कम कर ही दो। क्योंकि इन सब का शरीर पर असर होता है।

यह समझ में आया न? टाइट होना, वह शरीर का स्वभाव ही है। इसमें उल्टा मान लेते हैं कि दोष मन का ही है, मन है इसलिए ऐसा हो रहा है। ऐसा मान लेने की गलती हो जाती है। लेकिन ऐसा खुलासा होने के बाद यह मान लेने की गलती नहीं करेगा। इस शरीर पर असर हुआ, ऐसा कुछ होने से 'भूख' लगी, ऐसा कैसे कह सकते हैं हम? मैं क्या कहना चाहता हूँ, वह समझ में आ रहा है? छोटे बच्चे, वगैरह को देखा है? उसकी स्टडी नहीं की है? ये सुना न? अब स्टडी करना ताकि यह गलत मान्यता खत्म हो जाए।

प्रश्नकर्ता : मन से विषय भोगते हैं और शरीर से भोगते हैं, तो इन दोनों में कर्म किस में ज़्यादा बंधेगा? गाँठ किस में पड़ेगी?

दादाश्री : मन से भोगने में ज़्यादा होता है।

प्रश्नकर्ता : जब स्थूल में भोगने की बारी आती है, तब मन से तो पहले भोग ही लिया होता है न?

दादाश्री : मन भोग भी सकता है या नहीं भी।

प्रश्नकर्ता : सिर्फ मन से भोग रहा है, तब गाँठ पड़ती है, और मन और काया दोनों साथ में हों तो उसका कैसा कर्म बंधेगा?

दादाश्री : जहाँ मन आया, वहाँ सबकुछ बिगड़ता है और कई तो, मन, देह और चित्त से भोगते हैं, वह तो बहुत खराब है।

प्रश्नकर्ता : चित्त से भोगना मतलब क्या?

दादाश्री : फिल्म से भोगना, *तरंगें* (शेखचिल्ली जैसी कल्पनाएँ) भोगना, *तरंगी भोगवटा* कहते हैं उसे!

प्रश्नकर्ता : मन का जो विषय उत्पन्न होता है और शरीर का जो विषय उत्पन्न होता है, इन दोनों में जोखिम वाला कौन सा?

दादाश्री : शरीर से जो विषय उत्पन्न हुआ, अगर उस पर ध्यान नहीं देंगे तो चलेगा लेकिन मन से विषय नहीं होना चाहिए। ये सभी लोग शरीर के विषय से धोखा खा जाते हैं। उसमें धोखा खाने की कोई वजह नहीं है। मन में नहीं रहना चाहिए। विषय के बारे में मन साफ हो जाना चाहिए, मन निवृत्त हो जाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यानी मूल बीज तो मन से ही पड़ते हैं, ऐसा?

दादाश्री : अगर मन में होगा, तभी वह विषय है, वर्ना वह विषय नहीं है। इन्द्रिय टाइट हो जाए फिर भी मन न जागे, ऐसा है लेकिन लोग तो क्या कहते हैं कि इन्द्रिय टाइट होने के बाद मन में आता है। टाइटनेस न आए उसके लिए इन लोगों ने क्या किया कि आहार कम करो, आहार बंद करो, दूध बंद करो ताकि इन्द्रिय नरम पड़ जाए और टाइटनेस नहीं आए, इससे मन में नहीं आएगा। यानी इन लोगों की बात गलत है, ऐसा आपको समझ में आ रहा है? ये सारी बहुत सूक्ष्म बातें बता रहा हूँ, समझने में ज़रा देर लगे, ऐसी है।

उल्टी हो गई तो क्या मर जाना चाहिए?

ब्रह्मचर्य व्रत लिया हो और कुछ उल्टा-सीधा हो जाए न, तब उलझ जाता है। एक लड़का उलझन में था, मैंने कहा, 'क्यों भाई, उलझन में हो?' आपको बताते हुए मुझे शर्म आ रही है। मैंने कहा, 'क्या शर्म आ रही है? लिखकर दे दे।' मुँह से कहने में शर्म आती है तो लिखकर दे दे। 'महीने में दो-तीन बार मुझे डिस्चार्ज हो जाता है', कहता है। 'अरे पगले, इसमें तो क्या इतना घबरा जाता है? तेरी नीयत नहीं है न? तेरी नीयत खराब है?' तो कहता है, 'बिल्कुल नहीं, बिल्कुल नहीं।' तब मैंने कहा, तेरी नीयत साफ हो तो ब्रह्मचर्य ही है', कहा। तब कहने लगा, 'लेकिन क्या ऐसा हो सकता है?' मैंने कहा, 'भाई, वह क्या *गलन* नहीं है? वह तो जो *पूरण* हुआ है, वह *गलन* हो जाता है। उसमें तेरी नीयत नहीं बिगड़नी चाहिए। ऐसा रखना कि संभालना है। नीयत नहीं बिगड़नी चाहिए कि इसमें सुख है।' अगर अंदर उलझ जाए न बेचारा तो तुरंत ठीक कर देता हूँ।

प्रश्नकर्ता : नीयत ही मूल चीज़ है! 'नियत कैसी है' उसी पर आधारित है सबकुछ।

दादाश्री : तेरी नीयत किस तरफ की है? तेरी नीयत खराब हो और शायद डिस्चार्ज नहीं हो तो इसका मतलब यह नहीं है कि तू ब्रह्मचारी बन जाएगा। भगवान बहुत पक्के थे, कौन ऐसे समझाएगा? और कुदरत तो अपने नियम में ही है न! उल्टी हो जाए तो मर जाएगा, क्या ऐसा हो गया? शरीर है तो उल्टी नहीं होगी तो क्या होगा? रोज़ सुल्टी होती है तो फिर उल्टी नहीं होगी वापस?

प्रश्नकर्ता : अभी लास्ट थोड़े समय में कई बार पतन हो गया था, डिस्चार्ज हो गया था।

दादाश्री : तुम्हारा चित्त जितना किसी में चिपके उतना ही अंदर अपने आप डिस्चार्ज हो जाता है, फिर वह निकल जाता है। जो मृत हो जाता है, वह निकल जाता है। जो मृत नहीं होता, वह नहीं निकलता।

प्रश्नकर्ता : नहीं। उसका मतलब क्या यह हुआ कि अभी भी कहीं पर चित्त चिपकता है।

दादाश्री : हं, चिपका नहीं। अंदर चिपकता होगा थोड़ा बहुत, उसका फल है। चिपकने के बाद यह सब उखाड़ लो, यों प्रतिक्रमण करके। थोड़ा चिपक जाता है न? यानी चिपक जाए तो नियम ऐसा है कि अंदर वह तुरंत अलग हो जाता है और फिर मृत हो जाता है। वह तो अंदर रहता है, उसके बजाय अगर निकल जाए तो उसमें परेशान मत होना।

प्रश्नकर्ता : तो ऐसा समझना है कि यदि चित्त का चिपकना कम हो जाए तो डिस्चार्ज होने का जो गेप है, वह बढ़ता जाएगा?

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं। डिस्चार्ज का गेप बढ़ा होगा तो वह वापस कम भी हो सकता है, थोड़े दिनो बाद। इंसान का संडास जाना और डिस्चार्ज होना, इनमें अंतर नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तंदुरस्त इंसान को डिस्चार्ज होता है, अपने आप ऑटॉमैटिक कुछ समय पर होता है।

दादाश्री : होता है। *पुद्गल* संडास गया, उसे ऐसा कहेंगे तो राह पर आ जाएगा। इस शरीर में से जो कुछ भी निकलता है, वह सब संडास ही कहलाता है। नाक में से निकले, कहीं से भी निकले, वह संडास ही कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : तो इसे नुकसान हुआ, ऐसा ही कहेंगे न?

दादाश्री : नुकसान तो डिस्चार्ज होने के पहले से ही हो गया है। अंदर अलग हो जाता है, तभी से नुकसान है। अब

फायदे या नुकसान को क्या करना है? हमें तो इतना ही देखना है कि आत्मा मज़बूत रहता है या नहीं?

इस शरीर में से जो निकलता है, वह सारा संडास का माल। संडास का माल बनता है, तब बाहर निकलता है। तब तक बाहर नहीं निकलता। जब तक इस शरीर का माल हो न, तब तक बाहर नहीं निकलता।

विचार : मंथन : स्खलन

संडास का माल निकल ही जाता है समय आने पर, रहता नहीं है। अभी कोई विषय का विचार आया, तुरंत तन्मयाकार हुआ तब अंदर माल झड़कर नीचे चला जाता है। और फिर इकट्‌ठा होकर निकल जाता है एकदम। लेकिन विचार आते ही अगर तुरंत उखाड़ दे तो फिर अंदर झड़ेगा नहीं, ऊर्ध्वगामी हो जाएगा। वर्ना विचार आते ही नीचे झड़ जाता है। अंदर इतना विज्ञान है पूरा!

प्रश्नकर्ता : विचार आते ही।

दादाश्री : ऑन द मोमेन्ट। बाहर नहीं निकलता। लेकिन अंदर अलग हो जाता है वह। जो बाहर निकलने लायक हो गया, वह शरीर का माल नहीं रहा।

प्रश्नकर्ता : तो क्या प्रतिक्रमण करने से वापस ऊर्ध्वगमन होगा?

दादाश्री : विचार आए और विचार में तन्मयाकार नहीं हो, विचार को देखते रहे तो ऊर्ध्वगमन होगा। विचार आए और तन्मयाकार हो जाए, तो फिर अलग हो जाता है, तुरंत।

प्रश्नकर्ता : अलग होने के बाद प्रतिक्रमण कर ले तो वापस ऊपर आएगा क्या? ऊर्ध्वगमन नहीं हो सकता?

दादाश्री : प्रतिक्रमण करते हैं तो क्या होता है? कि तुम

उससे अलग हो। ऐसा अभिप्राय ज़ाहिर करते हैं कि हमें इससे लेना देना नहीं है।

प्रश्नकर्ता : वीर्य के ऊर्ध्वगमन का डिस्चार्ज के साथ कुछ रिलेशन है क्या?

दादाश्री : डिस्चार्ज हुआ मतलब ऊर्ध्वगमन का अधोगमन हो गया।

प्रश्नकर्ता : इसका मतलब अगर वीर्य का ऊर्ध्वगमन हो जाए तो डिस्चार्ज बंद हो जाएगा न धीरे धीरे!

दादाश्री : नहीं। ऐसा कोई नियम नहीं है। डिस्चार्ज भी होता है, डिस्चार्ज की तो, उसकी जोखिमदारी नहीं मानी जाती। जान-बूझकर डिस्चार्ज हो, तब फिर जोखिम है। अभी तो भीतर सिर्फ आहार का दबाव आए या दूसरा कोई दबाव आए, तब भी हो जाता है। जान-बूझकर नहीं होना चाहिए।

हो सके, तब तक डिस्चार्ज नहीं हो, ऐसी सावधानी रखनी है। विषय का विचार भी नहीं आना चाहिए और आए तो फेंक देना है, अंकुर फूटते ही फेंक देना चाहिए। तब जो वीर्य है, जो कि *पुद्‌गल* का एक्स्ट्रैक्ट है, वह ऊपर चढ़ता है। वह ऊर्ध्वरेता होता है। फिर वाणी वगैरह सब क्लियर रहती है। जागृति बहुत अच्छी रहती है। तुझसे रहा जा सकेगा न, मैं जो कह रहा हूँ, वैसा?

भरा हुआ माल है, वह तो निकले बिना रहेगा ही नहीं। विचार आया उसे पोषण दिया, तो वीर्य मृत हो जाता है। फिर किसी भी रास्ते डिस्चार्ज हो जाता है और यदि अंदर टिक गया, विषय का विचार ही नहीं आया तो ऊर्ध्वगामी हो जाएगा। वाणी वगैरह सभी में मज़बूत होकर आएगा। वर्ना विषय को तो हमने संडास कहा हुआ ही है। सबकुछ जो खड़ा होता है, वह संडास बनने के लिए ही होता है। जो ब्रह्मचर्य पालन करता है, उसमें

सबकुछ आ जाता है। उसे खुद को वाणी में, बुद्धि में, समझ में, सब में आ जाता है, प्रकट होता है। वर्ना अगर वाणी बोले तो खिलती नहीं है, उगती भी नहीं न। वह ऊर्ध्वगामी हो जाए तो वाणी फर्स्ट क्लास हो जाती हैं और फिर सारी शक्तियाँ खड़ी हो जाती हैं। आवरण टूट जाते हैं सारे।

प्रश्नकर्ता : उखाड़कर फेंक देने का मतलब विचार को सिर्फ देखना है?

दादाश्री : सिर्फ देखना ही है। देखना तो बड़ी बात है, यह तो विचार आया कि तन्मयाकार हो जाए तो उसे फेंक देना है। लेकिन अगर देख पाए तो फिर फेंकना नहीं पड़ेगा न।

प्रश्नकर्ता : यह ज़्यादा आसान है।

दादाश्री : विषय का विचार तो कब आता है? यों देखा और आकर्षण हुआ तो विचार आ जाता है। कभी ऐसा भी होता है कि आकर्षण हुए बिना विचार आ जाता है। विषय का विचार आते ही मन में एकदम मंथन होता है और ज़रा सा भी मंथन हो तो फिर उसका स्खलन हो ही जाता है, तुरंत, ऑन द मोमन्ट। इसलिए हमें पौधा उगने से पहले ही उखाड़ देना चाहिए। बाकी सबकुछ चलेगा, लेकिन यह पौधा बहुत खराब है। जो स्पर्श हानिकारक हो, जिस इंसान का संग हानिकारक हो, वहाँ से दूर रहना चाहिए। तभी तो शास्त्रकारों ने इतना सब सेट किया था कि जहाँ स्त्री बैठी हो, वहाँ उस जगह पर मत बैठना। यदि ब्रह्मचर्य पालन करना हो तो, और यदि संसारी रहना हो तो वहाँ आराम से बैठना, रहना।

ब्रह्मचर्य पालन करना हो तो 'ज्ञानी पुरुष' से समझ लेना चाहिए। पहले यह ज्ञान जान लेना पड़ेगा और यह ज्ञान समझ में आना चाहिए। ब्रह्मचर्य तो, जब मन बिल्कुल भी नहीं डिगे, तब वह ब्रह्मचर्य दिमाग़ में घुसता है और बाद में उसकी वाणी-वर्तन

सभी कुछ बदल जाता है!! वर्ना तब तक तो *पुद्गलसार* धुलता ही रहता है सारा। यह जो आहार खाया न, उसका सारा सार खत्म हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : मन को प्रशिक्षित करने में कुछ समय तो बीत ही जाएगा न?

दादाश्री : मन को प्रशिक्षित करने में तो ऐसे कितना समय बीत गया? अनादि काल से कर रहे हैं, यह सब।

प्रश्नकर्ता : हाँ, लेकिन जैसा आप कह रहे हैं, मन को उस तरह से प्रशिक्षित करने में कुछ समय तो बीत ही जाएगा न? मन क्या एकदम से प्रशिक्षित हो सकता है?

दादाश्री : थोड़ा समय लेता है, छः बारह महीने लेता है।

प्रश्नकर्ता : यानी पहले आकर्षण होता है और फिर विचार आता है, ऐसा कोई नियम नहीं है। यों ही विचार भी आ सकते हैं?

दादाश्री : विचार तो यों ही आ सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : फिर जब विचार आते हैं, उसके बाद मंथन शुरू होता है।

दादाश्री : विचार आते ही मंथन शुरू हो जाता है, लेकिन यदि प्रतिक्रमण नहीं करे तो। इसलिए हम कहते हैं कि विचार आते ही तुरंत उखाड़कर फेंक देना। एक क्षणभर के लिए भी विचार को रखना नहीं चाहिए, प्रतिक्रमण करके तुरंत फेंक देना।

प्रश्नकर्ता : और जिसे बहुत ही स्पीडिली विचार आएँ तो?

दादाश्री : बहुत स्पीडिली में तो उसे समझ में ही नहीं आएगा। क्योंकि अंदर मंथन हो चुका होता है, फिर मंथन से पूरा सार मर जाता है। उसके बाद वह मरा हुआ अंदर पड़ा रहेगा।

फिर जब सब इकट्‌ठा हो जाता है, उसके बाद बाहर निकलता है। तब उसे तो ऐसा ही लगता है कि आज मुझे डिस्चार्ज हो गया। डिस्चार्ज तो होता ही था अंदर, हो ही रहा था। वह बूंद-बूंद करते डिस्चार्ज होता रहता है।

प्रश्नकर्ता : बहुत पहले बात निकली थी, तब आपने कहा था कि जब अंदर तन्मयाकार होता है, उसी समय परमाणुओं का स्खलन होता है।

दादाश्री : बस, तन्मयाकार का मतलब ही मंथन। यदि इतना ही समझ ले, तब तो ब्रह्मचर्य का सब से बड़ा साइन्स समझ जाएगा। विचार आया और तन्मयाकार हो जाए तो अंदर स्खलन हो जाता है, लेकिन इन लोगों को समझ में नहीं आता, समझ ही नहीं है। उस समय भान ही नहीं रहता न! फिर भी प्रतिक्रमण करते हैं तो उससे चल जाता है।

प्रश्नकर्ता : यानी कि जैसे ही विचार आएँ, तभी से सावधान हो जाना है?

दादाश्री : विचार आया और यदि प्रतिक्रमण नहीं किया तो खत्म।

प्रश्नकर्ता : तो वास्तव में तो विचार ही नहीं आना चाहिए न?

दादाश्री : विचार तो आए बिना रहेंगे नहीं। अंदर भरा हुआ माल है, इसलिए विचार तो आएँगे, लेकिन प्रतिक्रमण उसका उपाय है। विचार नहीं आना चाहिए, ऐसा हो जाए तो गुनाह है।

प्रश्नकर्ता : वहाँ तक की स्टेज आनी चाहिए, ऐसा?

दादाश्री : हाँ, लेकिन विचार नहीं आना, वह तो बहुत समय के बाद डेवेलप होते-होते जब आगे बढ़ेगा, प्रतिक्रमण करते-करते आगे बढ़ेगा, तब उसके बाद पूर्णाहुति होगी न! प्रतिक्रमण

करने लगे तो फिर पाँच जन्मों में, दस जन्मों में भी पूर्णाहुति हो जाएगी न। एक जन्म में शायद खत्म न भी हो।

प्रश्नकर्ता : जो विचार आते हैं, वह भरा हुआ माल है?

दादाश्री : वह सब भरा हुआ माल ही है न! विचार अपने आप ही आते हैं।

प्रश्नकर्ता : कभी कभार ऐसा भी होता है कि विचार भी चलते रहते हैं और प्रतिक्रमण भी चलते हैं, दोनों क्रियाएँ साथ में चलती हैं।

दादाश्री : उसमें हर्ज नहीं है। भले ही विचार चलते रहें, लेकिन अगर साथ में प्रतिक्रमण भी चलते रहें तो फिर उसमें हर्ज नहीं है।

प्रश्नकर्ता : यह तो ग़ज़ब का साइन्स उजागर हुआ है, दादा!

दादाश्री : लेकिन लोगों को समझ में नहीं आ सकता न! यह तो सब पढ़ते हैं इतना ही, फिर भी इतना पढ़ते हैं, वह भी अच्छा है, ज़िम्मेदारी समझें तो भी बहुत हो गया! जोखिमदारी समझ में आ जाए तो भी बहुत हो गया। यह तो ऐसा समझता है कि विचार आ गया, तो उसमें क्या बिगड़ गया? लेकिन वह तो मूर्च्छा है। फिर भी जो बहुत विचारवंत हो, ब्रिलियेन्ट हो, उसे तो ठीक से समझ में आ जाता है और वह बात को समझ भी सकता है, उसे हेल्प भी होती है। यह तो लोग जानते नहीं है कि विचार आ जाए तो क्या होगा? ये तो कहेंगे कि विचार आया तो उसमें क्या बिगड़ गया? लोगों को पता नहीं होता कि विचार में और डिस्चार्ज में, इन दोनों की लिंक कैसे है? यदि अपने आप यों ही विचार नहीं आए तो बाहर देखने से भी विचार उत्पन्न हो सकता है।

प्रश्नकर्ता : कई बार अकेले होते हैं, फिर भी अपने आप अंदर से विचार फूटने लगते हैं।

दादाश्री : अकेले जैसा कुछ होता ही नहीं है, लेकिन जब टाइमिंग होता है, तब टाइम दिखा ही देता है।

ये सब सूक्ष्म बातें है, कुछ-कुछ विचारशील लोगों को ही समझ में आती हैं और अगर नहीं समझेगा तो मार खाएगा। कुदरत के घर कहाँ कोई हर्ज (आपत्ति) हैं?

प्रश्नकर्ता : मान लो कि उसकी वह विचारधारा पाँच-दस मिनट चली तो? और फिर तुरंत ही उसका प्रतिक्रमण कर ले तो?

दादाश्री : उसमें हर्ज नहीं है। लेकिन विचारधारा के कुछ समय के अंतराल में ही कर लेना चाहिए। एकदम टाइम भी नहीं जाने देना चाहिए, वर्ना फिर मंथन हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : यानी एक विचार आया कि तुरंत?

दादाश्री : तुरंत ही, यानी कि वह आगे और प्रतिक्रमण उसके पीछे, ऐसा। जैसे आगे वाले एक इंसान के पीछे दूसरा इंसान जा रहा हो, वैसा। तो आगे यह विचार हो और पीछे यह प्रतिक्रमण होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यानी एक सेकन्ड की भी देर नहीं लगनी चाहिए?

दादाश्री : सेकन्ड की देर लगी हो तो चल सकता है। क्योंकि इस प्रतिक्रमण में बहुत ताकत है। इसलिए वह विचार शुरू होते ही उसे तेज़ी से उड़ा देना। प्रतिक्रमण में तो बहुत ज़ोर होता है। प्रतिक्रमण का ज़ोर अतिक्रमण के ज़ोर से बहुत ज़्यादा होता है।

ज़हर पी लिया हो तो अगर घूंट उसके गले से नीचे उतरने

से पहले ही उल्टी कर दे तो कुछ नहीं, लेकिन घूंट नीचे उतर गया तो फिर असर हुए बिना रहेगा ही नहीं। अरे, फिर तो उल्टियाँ करवाने पर भी थोड़ा रह ही जाएगा। वैसा ही इस विषय के संबंध में है! जिसे ब्रह्मचर्य पालन करना हो, उसे विषय संबंधित विचार आएँ तो देखते ही तुरंत प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए। उसमें ज़रा सी भी देर हुई और अंदर मंथन हुआ कि मंथन होने के बाद स्खलन होता रहेगा। किसी भी रास्ते, एनी-वे स्खलन हो ही जाएगा।

अपना मार्ग ही बहुत उच्च है न? प्रतिक्रमण का पूरा मार्ग ही उच्च है। आधा घंटा उल्टा चले और यदि जागृत हो जाए तो दो मिनट में ही एकदम से सब फ्रैक्चर कर देगा। यह 'अक्रम विज्ञान' है ही बहुत उच्च कक्षा का। हमने तो यह सब हमारा निरीक्षण करके अपने अनुभव से यह पूरा विज्ञान रखा है। मेरे कितने ही जन्मों पहले के निरीक्षण होंगे, वह आज आपके अंदर अंकित हो गया।

हमें तो 'एट-ए-टाइम' कितने ही बेहिसाब दर्शन घेर लेते हैं, वाणी में तो कुछ ही निकल पाते हैं और जब आपको समझाते हैं, तब तो कुछ ही निकलते हैं। वह भी संज्ञा में, अंदर जो समझ में आया हो, वैसा तो होता ही नहीं है न?! फिर भी ज्ञानी पुरुष की वाणी है, इसलिए सुनने वाले के लिए क्रियाकारी हुए बिना रहेगी ही नहीं।

[2.14]
ब्रह्मचर्य प्राप्त करवाए ब्रह्मांड का आनंद

इससे क्या नहीं मिल सकता?

इस कलियुग में, इस दूषमकाल में ब्रह्मचर्य पालन करना बहुत मुश्किल है। अपना ज्ञान है कि जो इतना ठंडक वाला है। अंदर हमेशा ठंडक रहती है, इसलिए ब्रह्मचर्य पालन कर सकते हैं। बाकी, अब्रह्मचर्य है किस वजह से? अंतरदाह की वजह से। पूरे दिन कामकाज करके जलन, निरंतर जलन खड़ी हुई है। यह ज्ञान है, इसलिए मोक्ष में कोई बाधा नहीं होगी, लेकिन साथ में यदि ब्रह्मचर्य हो तो उसका आनंद भी ऐसा ही रहेगा न?! अरे! अपार आनंद। वह तो दुनिया ने चखा ही नहीं है, ऐसा आनंद उत्पन्न हो जाता है! यानी ऐसे व्रत में ही यदि वह पैंतीस साल का पीरियड गुज़ार दे तो उसके बाद तो अपार आनंद उत्पन्न होगा! अगर ऐसा उदय आया है, वह तो धन्य भाग्य ही कहलाएगा न? अब अच्छी तरह से पार उतर जाना चाहिए। जो आज्ञा सहित हो, वास्तव में वही ब्रह्मचर्य है और तभी काम होता है। गलती हो जाए तो दादा से माफी माँग लेना।

उधार जितना ज़्यादा होता है, विचार उतने ही खराब होते हैं, बहुत ही खराब विचार होते हैं।

प्रश्नकर्ता : खराब विचार तो मुझे भी आते हैं।

दादाश्री : हाँ, वह उसका उधार है।

प्रश्नकर्ता : वह उधार कैसे खत्म करना है?

दादाश्री : वह तो ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करोगे तो सरप्लस आ जाएगा। ब्रह्मचर्य सारे नुकसान की भरपाई कर देता है, हर तरह के नुकसान की भरपाई कर देता है।

प्रश्नकर्ता : इस तरह बहुत सारे खराब विचार आए तो? ऐसी इच्छा नहीं होती, लेकिन संयोग मिलते ही विचार आते हैं और कभी कभार स्लिप हो जाते हैं।

दादाश्री : इच्छा तो आपकी है नहीं, लेकिन अगर चिकनी मिट्टी में जाओगे तो फिर क्या होगा? अपने आप स्लिप हो जाओगे। यानी यह सारा जो पिछला उधार है न, वह वापस गड़बड़ करवाता है। वे गड़बड़ियाँ खत्म तो करनी पड़ेंगी न! इच्छा तो अभी है ही नहीं, लेकिन क्या हो सकता है?

प्रश्नकर्ता : वह कच्चा रह गया कहलाएगा?

दादाश्री : ऐसा है कि जिसने ब्रह्मचर्य बिगाड़ दिया, उसका सबकुछ बिगड़ गया।

प्रश्नकर्ता : सभी के साथ रहने का हो जाए तो जल्दी-जल्दी नुकसान की भरपाई हो जाएगी न?

दादाश्री : हाँ, जल्दी से सारे नुकसान की भरपाई हो जाएगी। नुकसान की भरपाई हो जाने के बाद तेज़ी आती है, फायदा मिलता है। फिर तो वचनबल भी उत्पन्न हो जाता है। जैसा बोलते हैं, वैसा हो जाता है। अभी तो मेहनत करते हैं फिर भी मेहनत व्यर्थ जाती है, यहाँ आना हो, फिर भी देर हो जाती है, और अंदर फिर टिमिडनेस (घबराहट) के विचार आते हैं, उससे सारे काम उलझ जाते हैं। इसलिए इन मन-वचन-काया से अच्छी तरह से ब्रह्मचर्य पालन करोगे न, तो दिनोंदिन सारे नुकसान की भरपाई हो जाएगी।

ब्रह्मचर्य सँभल पाए, तो चेहरे पर कुछ नूर आएगा। नूर तो होना ही चाहिए न? वर्ना यह भी पता नहीं चलता न कि किस

जाति के हैं? ब्रह्मचर्य से नूर आता है। काला-गोरा नहीं देखना है। कितना भी काला हो, लेकिन उसमें नूर होना चाहिए। बिना नूर के लोग किस काम के? वर्ना ब्रह्मचर्य का तेज तो ऐसा होना चाहिए कि सामने वाली दीवार पर पड़े! फॉरिन वाले देखें तो देखते ही खुश हो जाएँ कि इन्डियन ब्रह्मचारी आए हैं, ऐसा होना चाहिए। कोई गोरा हो सकता है, कोई काला लेकिन वह नहीं देखना है, ब्रह्मचर्य देखना है। इसलिए ऐसा कुछ करो कि ब्रह्मचर्यव्रत खिल उठे।

प्रश्नकर्ता : तो क्या करना है?

दादाश्री : करना तो अपने में कुछ है ही नहीं न! करोमि, करोसि और करोति तो अपने में कुछ है नहीं, लेकिन बात को समझो अब।

प्रश्नकर्ता : अभी जो करते हैं, उसमें मूलतः किस चीज़ की कमी है?

दादाश्री : ये तुम्हारे पहले के जो नुकसान हैं, तो उस नुकसान की भरपाई हो जाए, उसके लिए तुम जागृति रखो कि नुकसान की भरपाई हो जाए और उसके बाद फिर सरप्लस बढ़ेगा तो फायदा दिखेगा! मैं सोलह साल का था, तब जब मुहल्ले से गुजरता था तो आते-जाते हुए भी लोगों को सुनाई देता था कि यह जमीन खड़कती है! सोलह साल का था, तो भी जमीन इतनी खड़कती थी! तुम से हमारा ऐसा कहना है कि समझ लो कि पिछले नुकसान की भरपाई कैसे हो? गलतियाँ तो खत्म करनी ही पड़ेंगी न? या ऐसे ही चलने देना है?

जिसे शुद्धात्मा का वैभव देखना हो, उसके लिए ब्रह्मचर्य व्रत अत्यंत हितकारी है। हम भी रिलेटिव में इस एक ही व्रत के लिए हेल्प करते हैं, बाकी हम और किसी चीज़ में हस्तक्षेप नहीं करते। इस ज्ञान में यदि सचमुच में कोई चीज़ मददगार है तो

वह ब्रह्मचर्य ही है। ब्रह्मचर्य पालन करोगे तो ऐसा सुख भोगोगे, जो कि देवलोक भी नहीं भोगते, लेकिन अगर पालन नहीं कर पाए और बीच में ही फिसल गए तो मारे जाओगे! ब्रह्मचर्य व्रत, वह महान व्रत है और उससे आत्मा का स्पेशल अनुभव हो जाता है।

समझो गंभीरता, ब्रह्मचर्य व्रत की

सभी को ब्रह्मचर्यव्रत लेने की ज़रूरत नहीं है। वह तो जिसे उदय में आए। अंदर ब्रह्मचर्य के बहुत विचार आते रहते हों, वह फिर व्रत ले। जिसे ब्रह्मचर्य बरते, उनके दर्शन की तो बात ही अलग है न? किसी को उदय में आए, उसी के लिए ब्रह्मचर्य व्रत है। उदय में नहीं आए तो बल्कि दिक्कत हो जाती है, गड़बड़ हो जाती है। ब्रह्मचर्य व्रत साल भर के लिए ले सकते हैं या छः महीने का भी ले सकते हैं। जिसे ब्रह्मचर्य के बहुत विचार आते रहें, उन विचारों को दबाते रहने पर भी विचार आते रहें तभी ब्रह्मचर्य व्रत माँगना, वर्ना यह ब्रह्मचर्य व्रत माँगने जैसा नहीं है। यहाँ पर ब्रह्मचर्य व्रत लेने के बाद व्रत तोड़ना, वह महान गुनाह है। आपको किसी ने बाँधा नहीं है कि आप व्रत लो ही! अंदर यदि व्रत लेने के लिए इच्छाएँ बहुत उछल-कूद कर रही हों तभी व्रत लेना। कभी अगर व्रत भंग हो जाए तो ज्ञानी उसका इलाज भी बताते हैं। विषय का कभी भी विचार नहीं आए, वह ब्रह्मचर्य महाव्रत। यदि विषय याद आए तो व्रत टूटा।

हम तुम्हें ब्रह्मचर्य के लिए आज्ञा देते हैं, उसमें अगर तुम से गलती हो जाए तो उसकी जोखिमदारी बहुत भयंकर है। तुम यदि गलती नहीं करोगे तो फिर सबकुछ हमारी जोखिमदारी पर! तुम मेरी आज्ञापूर्वक जो कुछ भी करोगे उसमें तुम्हारी जोखिमदारी नहीं और मेरी भी जोखिमदारी नहीं! तुम आज्ञापूर्वक करोगे तो तुम्हारा अहंकार खड़ा नहीं होगा। इसलिए तुम्हारी जोखिमदारी नहीं आएगी और तो फिर आज्ञा देने वाले की जोखिमदारी तो है ही

न?! लेकिन आज्ञा देने वाला स्यादवाद हो तो उन्हें जोखिमदारी कैसे आएगी? अतः खुद जोखिम नहीं लेते, इस तरह से आज्ञा देते हैं! यह व्रत, क्या कोई बाज़ारू चीज़ है? व्रत के बिना इंसान में ब्रह्मचर्य रह सकता है, लेकिन अगर वह सहज भाव से हो तो, वर्ना मन कच्चा पड़ जाता है। यह ज्ञान मिलने के बाद सत्ता खुद के हाथ में आ गई, परसत्ता में होने के बावजूद स्वसत्ता में है। जिसका मन बंधा हुआ नहीं है, उसका मन परसत्ता में काम करता रहता है। बंधे हुए मन के लिए तो दादा का वचनबल काम करता है, उन एविडेन्सेस को तोड़ देता है। ज्ञानी पुरुष का वचनबल संसार की भक्ति तोड़ देता है।

यहाँ तो जो माँगोंगे, वह शक्ति मिले, ऐसा है! यहाँ याद न आए तो घर जाकर माँगना। दादा को याद करके माँगोगे तब भी मिले, ऐसा है। दादा से कहना कि मुझ में शक्ति होती तो आपके पास माँगता ही क्यों? आप शक्ति दीजिए। दादा भगवान तो ऐसे हैं कि जो माँगोगे वह शक्ति देंगे! यह तो सब संक्षेप में कहना होता है। इसके लिए कोई विवेचन नहीं करना होता। मार्ग ओपन हुआ है, तो क्यों न माँगे?

आजीवन ब्रह्मचर्य, शुरू करवाए क्षपक श्रेणियाँ

प्रश्नकर्ता : दादाजी, आप मुझे विधि कर दीजिए, मुझे ज़िंदगीभर के लिए ब्रह्मचर्य व्रत लेना है।

दादाश्री : तुझे दिया जा सकता है और तू पालन कर सकेगा, ऐसा स्ट्रोंगपन है तुझ में, फिर भी जब तक हम विधि न कर लें, तब तक यह भावना करना। दादा तो सोच-समझकर चलते हैं, बहुत सोच-समझकर चलते हैं, इसलिए अभी तू भावना करना, उसके बाद देंगे। इस काल में तो पूरी ज़िंदगी का ब्रह्मचर्य देने जैसा नहीं है। देना ही जोखिम है। साल भर के लिए दे सकते हैं। बाकी पूरी ज़िंदगी की आज्ञा ली और यदि वह गिर

जाए न, तो खुद तो गिरेगा लेकिन हमें भी निमित्त बनाएगा। फिर अगर हम महाविदेह क्षेत्र में वीतराग भगवान के पास बैठे हों तो वहाँ पर आकर भी हमें खड़ा करके कहेगा, 'क्यों आज्ञा दी थी? आपको किसने ज़रूरत से ज़्यादा समझदारी करने को कहा था?' तो वीतराग के पास भी हमें चैन से बैठने नहीं देगा! तो खुद तो गिरेगा ही लेकिन दूसरे को भी खींच ले जाएगा। इसलिए भावना करना और हम तुझे भावना करने की शक्ति दे रहे हैं। सही तरीके से भावना करना, जल्दबाज़ी मत करना। जितनी जल्दबाज़ी, उतना ही कच्चा। हम तो किसी को भी ऐसा नहीं कहते कि ब्रह्मचर्य पालन करना, ये आज्ञा पालन करना। ऐसा कह ही कैसे सकते हैं? यह 'ब्रह्मचर्य क्या चीज़ है?' वह तो हम ही जानते हैं! यदि तेरी तैयारी हो तो हमारा वचनबल है, वर्ना फिर जहाँ है वहीं पड़ा रह न! यदि यह ब्रह्मचर्य व्रत लेकर संपूर्ण करेक्ट पालन करेगा, तो वर्ल्ड में अनोखा स्थान प्राप्त करेगा और एकावतारी बनकर यहाँ से सीधा मोक्ष जाएगा। हमारी आज्ञा में बल है, ज़बरदस्त वचनबल है। यदि तू कच्चा नहीं पड़ेगा तो व्रत नहीं टूटेगा, इतना अधिक वचनबल है।

फिर इसका क्या फल आएगा? सर्वसंग परित्याग उदयमान होगा। उसे त्याग नहीं कहते, वह उदय में आता है। उदय यानी जो बरते! ऐसा सर्वसंग परित्याग उदय में आए तो फिर उसे वीतरागों की दीक्षा दे सकते हैं। ऐसी दीक्षा मिल जाए तो बहुत शक्ति उत्पन्न होती है। दीक्षा का स्वभाव ही ऐसा है। 'व्यवस्थित' भी वैसा ही लेकर आया होता है। सभी की भावना फलेगी। हमारी ओर से आशीर्वाद मिलने से इन सभी में बहुत शक्ति उत्पन्न होगी। यदि ऐसी दीक्षा मिल जाए तो वीतराग धर्म का उद्धार होगा, वीतराग मार्ग का उत्थान होगा और वह होने वाला है!

तब तक सबकुछ अंदर परखकर देख लेना कि भावना जगत् कल्याण की है या मान की? खुद के आत्मा को परखकर देखे

तो सबकुछ पता चले, ऐसा है। अगर अंदर मान पड़ा होगा तो वह भी निकल जाएगा। क्योंकि किसी प्रधान को बाहर सब अच्छा हो और घर में दुःखी हो तो उसे सत्ता दी जाए तो वह एक-दो लाख खा जाएगा, लेकिन बाद में तृप्त हो जाएगा न? और अपना तो यह विज्ञान है। इसलिए अब जो मान है, वह निकाली माल है न! वह धीरे-धीरे खत्म हो जाएगा, फिर भी तब तक पूरी जागृति रखनी पड़ेगी। कोई गाली दे, अपमान करे फिर भी मान नहीं जागना चाहिए। कोई मारे फिर भी मान क्यों जागे? हमें तो जानना चाहिए कि सात मारी या तीन? ज़ोर से मारी या धीरे से? ऐसे जानना है। खुद के स्वभाव में आना तो पड़ेगा न?! आपको तो सुबह में तय करना है, कि आज पाँच अपमान मिलें तो अच्छा और फिर पूरे दिन में एक भी नहीं मिला तो अफसोस रखना, तब मान की गाँठ पिघलेगी। जब अपमान हो, उस समय जागृत हो जाना।

अगर एक ही सच्चा इंसान होगा तो जगत् कल्याण कर सकेगा! संपूर्ण आत्मभावना होनी चाहिए। एक घंटे तक भावना करते रहना और अगर टूट जाए तो जोड़कर वापस शुरू कर देना। यह भावना की है तो भावना का जतन करना! लोगों का कल्याण हो इसलिए त्यागी वेष, दीक्षा लेने की इच्छा है। अगर मन नहीं बिगड़ता हो तो फिर दीक्षा लेने में हर्ज नहीं।

जगत् का कल्याण अधिक से अधिक कब हो सकता है? त्याग मुद्रा हो, तब अधिक होता है। गृहस्थ मुद्रा में जगत् का कल्याण अधिक नहीं हो सकता, ऊपर-ऊपर सब होता है। लेकिन भीतर में सारी पब्लिक प्राप्ति नहीं कर पाएगी! ऊपर-ऊपर के सभी, बड़े-बड़े वर्ग के लोगों को प्राप्ति हो जाती है, लेकिन पब्लिक को नहीं हो पाती। त्याग अपने जैसा होना चाहिए। अपना त्याग, वह अहंकारपूर्वक नहीं है न?! और यह चारित्र तो बहुत उच्च कहलाता है!

'मैं शुद्धात्मा हूँ' वह निरंतर लक्ष्य में रहे, तो वह महानतम् ब्रह्मचर्य है। उसके जैसा ब्रह्मचर्य और कुछ भी नहीं है। फिर भी अगर अंदर आचार्यपद प्राप्त करने के भाव हों, तब तो वहाँ बाहर का ब्रह्मचर्य चाहिए, वहाँ लेडी नहीं चलेगी।

ज्ञानी पुरुष की आज्ञा से चारित्र लेने में हर्ज नहीं, लेकिन इसके साथ ही चारित्र लेने के बाद इस चीज़ पर इतना अधिक सोच लेना चाहिए कि उस सोच के अंत में खुद का ही मन ऐसा हो जाए कि विषय तो बहुत ही बुरी चीज़ है। यह तो महा-महा मोह के कारण उत्पन्न हुई चीज़ है।

सिर्फ अब्रह्मचर्य छोड़ दे तो पूरा जगत् अस्त हो जाता है, तेज़ी से! सिर्फ ब्रह्मचर्य पालन करने से तो पूरा जगत् ही खत्म हो जाता है न! वर्ना हज़ारों चीज़ें छोड़ने पर भी उद्धार नहीं होगा।

चारित्र का सुख कैसा बरते

ज्ञानी पुरुष से चारित्र ग्रहण करे, सिर्फ ग्रहण ही किया है, अभी तक पालन तो हुआ ही नहीं है, तभी से बहुत आनंद होने लगता है। तुझे आनंद हुआ क्या?

प्रश्नकर्ता : हुआ है न, दादा! उसी क्षण से अंदर पूरा उघाड़ हो गया।

दादाश्री : लेते ही खुलासा हो गया न? लेते समय उसका मन क्लियर (साफ) होना चाहिए। उसका मन उस समय क्लियर था, मैंने जाँच लिया था। इसे चारित्र ग्रहण करना, कहा जाता है, व्यवहार चारित्र! और वह 'देखना' 'जानना' रखे, वह निश्चय चारित्र! चारित्र के सुख को जगत् समझा ही नहीं है। चारित्र का सुख कुछ अलग ही तरह का है।

हम इस स्थूल चारित्र की बात कर रहे हैं। जिसमें यह चारित्र उत्पन्न होता है, वह बहुत पुण्यशाली कहलाता है। ये सब

लड़के कितने पुण्यशाली हैं! इन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत की आज्ञा ली थी, सो उन्हें आनंद भी कैसा रहता है!

प्रश्नकर्ता : ऐसा आनंद तो मैंने कभी भी देखा ही नहीं था। निरंतर आनंद रहता है!

दादाश्री : अभी इस काल में लोगों का चारित्र खत्म हो गया है। कहीं भी अच्छे संस्कार रहे ही नहीं हैं न! यह तो, यहाँ आ गए और यह ज्ञान मिल गया, इसलिए ठीक हो गया है। ये तो कितने पुण्यशाली हैं, वर्ना कहीं के कहीं भटक गए होते। यदि इंसान का चारित्र बिगड़ जाए तो लाइफ यूज़लेस हो जाती है। दुःखी-दुःखी हो जाता है! वरीज़, वरीज़, वरीज़! रात को नींद में भी वरीज़! इन्हें तो बहुत आनंद रहता है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, पहले तो जीवन जीने योग्य ही नहीं था।

दादाश्री : ऐसा?! अब जीने जैसा लगता है?! घर में सभी की इच्छा हो कि बेटा दीक्षा ले, तो उसके 'व्यवस्थित' में वैसा है, ऐसा समझ सकते हैं। वही सबूत है। उसमें हम हस्तक्षेप नहीं करते। फिर अगर 'व्यवस्थित' में होगा तभी घर के सभी लोगों को इच्छा होगी। किसी का भी विरोध आया तो 'व्यवस्थित' बदला हुआ लगता है। क्योंकि 'व्यवस्थित' यानी क्या? किसी की तरफ से भी विरोध नहीं। सभी सिर्फ हरी झंडी ही बताएँ तो समझना कि 'व्यवस्थित' है।

ब्रह्मचर्य की आज्ञा मिलने के बाद यदि कोई (विषय के) बम फेंकने आए, तो हमें सावधान हो जाना चाहिए। यह आज्ञा मिली है, यह तो बहुत ही बड़ी चीज़ है! इस आज्ञा के पीछे दादा की खूब सारी शक्ति खर्च होती है। यदि आपका निश्चय नहीं छूटे तो दादा की शक्ति आपको हेल्प करेगी और आपका निश्चय छूट गया, तो दादा की शक्ति खिसक जाएगी। ब्रह्मचर्य तो बहुत बड़ा खज़ाना है! लोग तो लूट जाते हैं। छोटे बच्चे को बेर देकर

हाथ के कड़े निकाल लें, उसके जैसा है। बेर की लालच में बच्चा फँस जाता है और कड़े दे देता है, इस तरह जगत् लालच में फँसा हुआ है।

ब्रह्मचर्य व्रत लेने के बाद आनंद बहुत बढ़ गया है न? अव्रत की वजह से ही यह सारा झंझट खड़ा हुआ है? इससे आत्मा के यर्थाथ स्वाद का पता नहीं चलता। महाव्रत का आनंद तो अलग ही है न! उसके बाद तो आनंद बहुत बढ़ जाता है, बेहद आनंद होता है!

फायदा उठाएँ या नुकसान रोकें?

प्रश्नकर्ता : विषय से मुक्त हुआ कब कहलाएगा?

दादाश्री : उसे फिर विषय का एक भी विचार नहीं आता है।

विषय से संबंधित कोई भी विचार नहीं, दृष्टि नहीं, वह लाइन ही नहीं। जैसे वह जानता ही नहीं हो, ऐसे रहता है, वह ब्रह्मचर्य कहलाएगा।

प्रश्नकर्ता : जैसे बाल्यावस्था होती है, वैसा?

दादाश्री : नहीं, जैसे किसी चीज़ से आप अंजान हों, उसका विचार आपको नहीं आया हो, उसके जैसा होता है। जिसने कभी भी मांसाहार खाया ही नहीं हो तो उसे मांसाहार के विचार ही नहीं आते। उस ओर दृष्टि ही नहीं होती और उस ओर का कुछ भी नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : हमारी वह दशा कब आएगी?

दादाश्री : कब आएगी, वह नहीं देखना है! चलते रहो न तो अपने आप गाँव आ जाएगा। चलते रहने से गाँव आता है, बैठे रहने से नहीं आता। रास्ता ज्ञानी पुरुष ने बता दिया है और वह रास्ता तूने पकड़ लिया है। अब कब आएगा ऐसा कहने से

थकान लगेगी। इसलिए बस चलते रहो न! तो अपने आप आ जाएगा। तुम्हारे जैसी समाधि बड़े-बड़े संतों को भी नहीं रहती। फिर इससे अधिक और क्या सुख चाहिए?

प्रश्नकर्ता : फिर भी अभी बाकी ही है न?

दादाश्री : भगवान का कानून कैसा है? हमें जो मिला, वही सही है। जो मिला, उसे नहीं भोगता और जो नहीं मिला, उसके लिए झंझट करता है, वह मूर्ख इंसान है। आगे बढ़ने के प्रयत्न तो जारी ही हैं, उसका बोझ रखने की ज़रूरत नहीं है। हम चल रहे हों और फिर कहें कि, 'गाँव कब पहुँचेंगे? गाँव कब पहुँचेंगे?' तो क्या होगा?! अरे, तू चल तो रहा ही है, अब क्यों बार-बार बोल रहा है? चलने में आनंद आए तो देखने का मन होगा कि 'यह आम, यह जामुन' ऐसा आराम से सब देखे, लेकिन अगर 'कब पहुँचेंगे, कब पहुँचेंगे?' करते रहें न, तो फिर आनंद नहीं रहेगा।

प्रश्नकर्ता : व्रत लिए दो साल हो गए, फिर भी बाहर ऐसा कुछ खास परिणाम जैसा नहीं दिखता।

दादाश्री : वे तो तुम्हारे बेहिसाब घाटे हैं न!

प्रश्नकर्ता : लेकिन कितना घाटा?

दादाश्री : बहुत ज़बरदस्त घाटा! फिर भी अब तो जगत् जीत लेना है। अपना पद तो दिनोंदिन अपने आप आ ही रहा है।

प्रश्नकर्ता : कई बार ऐसा लगता है कि धीरे-धीरे कब पार उतरेंगे? यह महीना तो गया। इसमें कुछ प्रोग्रेस नहीं हुई।

दादाश्री : तुझे प्रोग्रेस नहीं देखनी है, लेकिन यही देखना है कि जिनसे नुकसान हो, ऐसे कोई साधन तो खड़े नहीं हो गए? फायदा तो निरंतर हो ही रहा है। आत्मा का स्वभाव है,

फायदा करना! प्रोग्रेस भी आत्मा का स्वभाव है। आपको तो सिर्फ जागृति ही रखनी है कि गिर न जाए। और नीचे गया हो, उसे सुधारने के लिए 'फुल' 'फेज़' में मशीनें और लश्कर-वश्कर सहित तैयारी करो! अपनी सेफ साइड रहे, उस तरह चलते ही रहना। अपनी ट्रेन मोशन में ही रहे, वैसा करते रहना। सिर्फ विषय के बम ही बहुत ज़बरदस्त होते हैं, एक मिनट के लिए भी उसका विश्वास नहीं रख सकते।

[2.15]
'विषय' के सामने विज्ञान की जागृति

आकर्षण के सामने चाहिए खुद का विरोध

प्रश्नकर्ता : *''स्त्री पुरुषना, विषय संगते,*
क़रार मुजब देह भटकशे,
माटे चेतो मन-बुद्धि।''

यह समझाइए क्योंकि आपने कहा था कि हर कोई अपनी-अपनी भाषा में ले जाता है, तो इसमें 'यथार्थ रूप से' क्या होना चाहिए?

दादाश्री : जहाँ आकर्षण हो जाए, उस आकर्षण में यदि तन्मयाकार हो गया तो वह चिपक गया। आकर्षण हो जाए, लेकिन आकर्षण में तन्मयाकार नहीं हो तो नहीं चिपकेगा। फिर अगर आकर्षण हो जाए तो उसमें हर्ज नहीं है।

प्रश्नकर्ता : खुद को यह चीज़ कैसे समझ में आएगी कि खुद इसमें तन्मयाकार हो गया है?

दादाश्री : उसमें 'अपना' विरोध होना चाहिए, 'अपना' विरोध, वही तन्मयाकार नहीं होने की वृत्ति है। 'हमें' विषय के संग में चिपकना नहीं है, इसलिए 'अपना' विरोध तो रहता ही है न? विरोध है, वही अलग रहना कहलाता है और गलती से चिपक जाए, गच्चा खाकर चिपक जाए, तो फिर उसका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : निश्चय से तो खुद का विरोध है ही, फिर भी ऐसा होता है कि उदय ऐसे आ जाते हैं कि उसमें तन्मयाकार हो जाते हैं, वह क्या है?

दादाश्री : विरोध है तो तन्मयाकार नहीं हो सकते और तन्मयाकार हुए तो 'गच्चा खा गए' ऐसा कहलाएगा। तो ऐसे गच्चा खाया, उसके लिए प्रतिक्रमण तो है ही लेकिन गच्चा खाने की आदत मत डाल लेना, गच्चा खाने के 'हेबीच्युएटेड' मत हो जाना। क्या कोई जान-बूझकर फिसलता है? यहाँ चिकनी मिट्टी हो, कीचड़ हो, वहाँ लोगों को जान-बूझकर फिसलने की आदत होती है या नहीं? लोग क्यों फिसल जाते होंगे?

प्रश्नकर्ता : वह मिट्टी का स्वभाव है और खुद मिट्टी पर चला, इसलिए।

दादाश्री : मिट्टी के स्वभाव को तो वह खुद जानता है इसलिए फिर पैर की उंगलियाँ जमाकर चलता है, और भी सभी प्रयत्न करता है। हर तरह के प्रयत्न करने के बावजूद भी अगर गिर जाए, फिसल जाए, तो उसके लिए भगवान उसे अनुमति देते हैं। लेकिन फिर वह ऐसी आदत ही डाल दे, तो क्या होगा?!

प्रश्नकर्ता : आदत नहीं पड़नी चाहिए।

दादाश्री : फिसलना तो अपने हाथ में, क़ाबू में नहीं रहा, इसलिए सब से अच्छा तो 'अपना' विरोध, ज़बरदस्त विरोध! फिर जो कुछ हुआ, उसका ज़िम्मेदार तू नहीं है। तू चोरी करने के बिल्कुल विरोध में हो, फिर तुझ से चोरी हो जाए तो तू गुनाहगार नहीं है। क्योंकि तू उसके विरोध में है।

प्रश्नकर्ता : हम विरोध में हैं ही, फिर भी यह जो चूक जाते हैं, वह क्या चीज़ है?

दादाश्री : बाद में चूक जाते हैं, उसका सवाल नहीं है।

उसे चूक जाने में भगवान के यहाँ कोई हर्ज नहीं है। जितना चूक गए हैं, भगवान तो उसे याद नहीं रखते। क्योंकि चूक जाने का फल तो उसे तुरंत ही मिल जाता है। उसे दु:ख तो होता ही है न? वर्ना अगर वह शौक की खातिर करता, तो उसे आनंद होता।

प्रश्नकर्ता : इस विषय के बारे में खुद की होशियारी कितनी चल सकती है?

दादाश्री : ज्ञान मिला हो तो पूरी होशियारी चल सकती है।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान मिल जाने के बावजूद भी कुछ अंश तक तो प्रकृति भूमिका निभाती ही है न?

दादाश्री : नहीं। ज्ञान से प्रकृति निर्मल हो जाती है। विषय में खुद की सहमति नहीं हो तो निर्मल होती जाती है।

प्रश्नकर्ता : विषय में सहमति नहीं होती फिर भी आकर्षित हो जाता है।

दादाश्री : वह आकर्षित तो हो सकता है। ऐसे आकर्षित हो जाए तो उसे भी जानना चाहिए। लेकिन स्ट्रोंग निश्चय कभी भी किया ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : कभी भी न चूकें ऐसा चाहिए।

दादाश्री : अपना तो निश्चय होना चाहिए कि हमारा यह ऐसा निश्चय है। फिर अगर कुदरत करे, तो वह अपने हाथ का खेल नहीं है। वह साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स है, उसमें किसी का नहीं चलता।

प्रश्नकर्ता : इसका अर्थ तो यह हुआ कि ऐसे संयोग मुझे मिलने ही नहीं चाहिए। लेकिन यह कैसे होगा?

दादाश्री : ऐसा होगा ही नहीं न! जब तक जगत् है, संसार

है, तब तक ऐसा नहीं हो सकता। ऐसा कब होगा? कि जैसे-जैसे आप आगे बढ़ते जाओगे, वैसे ही ऐसे संयोग कम होते जाएँगे, वैसे-वैसे उस जगह पर भूमिका अपने आप ही आएगी। ज्ञानी की भूमिका सेफ साइड वाली होती है! उनके सभी संयोग सुगम होते हैं।

प्रश्नकर्ता : उनका व्यवस्थित उस तरह गढ़ा हुआ होता है?

दादाश्री : हाँ, वैसा गढ़ा हुआ होता है। लेकिन वह एकदम से ऐसे नहीं हो सकता। आपको तो अभी कई मील पार करने के बाद वह रोड आएगी। सभी जगह आकर्षण नहीं होता। तुझे कितनी जगह पर आकर्षण होता है? क्या 'सौ' में से अस्सी जगह आकर्षण होता है?

पूर्व में चूके, उसके ये फल हैं

प्रश्नकर्ता : वह कैसा है कि यों दृष्टि गई कि अंदर खड़ा हो जाता है, और दृष्टि नहीं गई हो तो कुछ भी नहीं। लेकिन एक बार यों देख लिया हो तो फिर अंदर चंचल परिणाम खड़े हो जाते हैं।

दादाश्री : दृष्टि, वह वस्तु 'हम' से अलग है। तो फिर दृष्टि गई, उससे हमें क्या फर्क पड़ा? लेकिन हम अंदर चिपकना चाहें, तब दृष्टि क्या करे बेचारी?! होली की जब पूजा करने जाते हैं, तब वहाँ अपनी आँखें झुलस जाती हैं क्या? यानी होली को देखने से आँखें नहीं झुलसतीं। क्योंकि उसे हम सिर्फ देखते ही हैं। उसी तरह इस दुनिया में किसी भी जगह पर आकर्षण हो, ऐसा है ही नहीं, लेकिन अगर खुद के अंदर ही यदि कुछ टेढ़ा है तो आकर्षण होगा!

प्रश्नकर्ता : दो प्रकार की दृष्टि है, उसमें एक दृष्टि ऐसी है कि हम देखते हैं कि चमड़ी के नीचे खून-मांस और हड्डियाँ हैं, उसमें क्या आकर्षण? और दूसरी दृष्टि यह कि उसमें शुद्धात्मा

है और मुझ में शुद्धात्मा है। इन दोनों में कौन सी दृष्टि उच्च मानी जाएगी?

दादाश्री : उसमें तो दोनों दृष्टियाँ रखनी पड़ेंगी। वह शुद्धात्मा है, ऐसी दृष्टि तो अपने को है ही। और दूसरी दृष्टि तो अगर ज़रा सा भी यदि आकर्षण होने लगे तो जैसा है, वैसी ही रखनी चाहिए, वर्ना मोह हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : हाँ, ठीक है। मैं भी शुद्धात्मा और वह भी शुद्धात्मा ऐसा हो, तो जो अन्य प्रकार का आकर्षण है, वह नहीं रहेगा।

दादाश्री : नहीं रहेगा, लेकिन इतनी अधिक जागृति नहीं रह पाती। जब आकर्षण होता है, तब शुद्धात्मा को भूल जाता है। शुद्धात्मा भूले, तभी उसे आकर्षण होता है, वर्ना आकर्षण नहीं हो सकता। इसीलिए तो हमने तुम्हें ऐसा ज्ञान दिया है कि तुम्हें आत्मा दिखे। फिर क्यों मोह होता है?!

तुम्हें आकर्षित नहीं होना हो, फिर भी आँखें आकृष्ट हो जाती है। तुम यों आँखें दबाते रहो, फिर भी उस तरफ चली जाती हैं!

प्रश्नकर्ता : ऐसा क्यों होता है? पुराने परमाणु हैं इसलिए?

दादाश्री : नहीं, पहले आपने भूल की है, पहले तन्मयाकार होने दिया है, उसी का यह फल आया है तो अब उस आकर्षण में वापस तन्मयाकार नहीं होकर उसका प्रतिक्रमण करके वह भूल निकाल देनी है। अगर फिर से तन्मयाकार हो जाए तो फिर नये सिरे से भूल हुई, तो उसका फल अगले जन्म में आएगा। अत: तन्मयाकार नहीं हो, ऐसा यह विज्ञान है अपना! सामने वाले में शुद्धात्मा ही देखते रहना व और कुछ दिखे और आकर्षण हो जाए तो प्रतिक्रमण करना, अन्यथा भय-सिग्नल ही है। बाकी सब का तुम्हें समभाव से *निकाल* करना। इसमें तो सामने वाला ज़बरदस्त

बड़ी फरियाद करने वाला है, इसलिए सावधान रहना। हम चेतावनी देते हैं।

प्रश्नकर्ता : यही गड़बड़ हो जाती है न!

वहाँ पर देखो शुद्धात्मा ही

दादाश्री : तो तू सावधानी नहीं रखता?

प्रश्नकर्ता : सावधानी तो रखता हूँ न, लेकिन यह तो निरंतर सावधान रहना है।

दादाश्री : फिर भी जहाँ पर हमें आकृष्ट नहीं होना हो, उसके बावजूद भी आकर्षण होता रहे तो वह पहले की, पिछले जन्म की गलती है, इतना तय हो गया। नये सिरे से आकर्षण हो, वह चीज़ हमें समझ में आती है कि यदि हमें नहीं देखना है तो देखें ही नहीं, ऐसा होना चाहिए। लेकिन यह तो पुराना है, इसलिए वहाँ तो हमें नहीं देखना हो फिर भी खिंच जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : इस जगह पर पुरुषार्थ करना है। जागृति रखना, वही पुरुषार्थ है?

दादाश्री : हाँ, वैसी जागृति रखना। तू रखता है, इतनी जागृति?

प्रश्नकर्ता : वहीं पर पुरुषार्थ है पूरा।

दादाश्री : ऐसा?! तुझे समझ में आता है कि यह पिछले जन्म की गलती है, ऐसा? क्या आता है समझ में? तुझे ऐसा अनुभव हुआ है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, मतलब खुद की जागृति है कि यह दोष हुआ। अब उसे धोकर खुद तैयार हो गया, खुद उससे मुक्त हो गया लेकिन फिर से सरकमस्टेन्शिअल एविडेन्स मिल जाए, निमित्त मिल जाए तो फिर वापस विषय की गाँठ फूटती ही है। खुद की ज़बरदस्त तैयारी हो कि उपयोग चूकना ही नहीं है, लेकिन 'वह'

फूटता है। फिर वापस धो डालते हैं, लेकिन वह वापस खड़ा हो जाता है!

दादाश्री : अतः इस इन्द्रिय ज्ञान का स्वभाव ऐसा है कि सामने वाला बहुत आकर्षक हो और रागी स्वभाव वाला हो तो, वह आपकी आँखों में धूल झोंकता है। उस समय बहुत जागृत रहना पड़ेगा। हम जानते हैं कि इसे नहीं देखना है, फिर भी आकर्षण क्यों हो रहा है? वहाँ पर हमें क्या करना चाहिए कि शुद्धात्मा को ही देखते रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : उस समय फिर से प्रत्याख्यान करना चाहिए?

दादाश्री : प्रतिक्रमण भी करना है और प्रत्याख्यान भी करना है, दोनों करने हैं। प्रतिक्रमण इसलिए करना है कि पूर्व जन्म में कुछ देखा है, उसी से यह उत्पन्न हुआ है। यह संयोग क्यों मिला? वर्ना हर एक को कोई नहीं देखता। यह तो देखने को मिला सो मिला, लेकिन उसमें से आकर्षण का प्रवाह क्यों बह रहा है? अतः पूर्व जन्म का हिसाब है, इस जन्म में उसके प्रतिक्रमण करने पड़ेंगे। जो-जो विषय-विकारी भाव किए हों, इच्छा, चेष्टा, संकल्प-विकल्प किए हों, उन सब का प्रतिक्रमण करना पड़ेगा और फिर प्रत्याख्यान करना पड़ेगा और फिर उनके शुद्धात्मा को ही देखते रहना पड़ेगा।

पुद्गल का स्वभाव ज्ञानपूर्वक...

पुद्गल का स्वभाव यदि ज्ञानपूर्वक रह पाए तब तो फिर आकर्षण होगा ही नहीं। लेकिन *पुद्गल* का स्वभाव ज्ञानपूर्वक रहता हो, ऐसा तो होता ही नहीं है न किसी व्यक्ति को! *पुद्गल* का स्वभाव, हमें तो ज्ञानपूर्वक रहता है।

प्रश्नकर्ता : *पुद्गल* का स्वभाव ज्ञानपूर्वक रहे तो आकर्षण नहीं रहेगा, यह समझ में नहीं आया।

दादाश्री : मतलब क्या है कि किसी स्त्री ने या पुरुष ने भले ही कैसे भी कपड़े पहने हों, पर वे कपड़े रहित दिखते हैं, वह ज्ञानपूर्वक पहला दर्शन है। दूसरा, सेकन्ड दर्शन यानी शरीर पर से चमड़ी निकल जाए, वैसा दिखता है और थर्ड दर्शन यानी अंदर का सभी कुछ दिखाए ऐसा दिखाई देता है। फिर आकर्षण रहेगा क्या? ऐसा तुझे रहता है?

प्रश्नकर्ता : ऐसा अभ्यास दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है।

दादाश्री : तो अच्छा है। ऐसा अभ्यास करना अच्छा है।

दृष्टि निर्मल कर सकते हैं ऐसे

कोई स्त्री खड़ी हुई हो, उसे देखा लेकिन तुरंत नज़र वापस खींच ली। फिर भी वह दृष्टि तो वापस वहीं के वहीं जाती है, इस तरह दृष्टि वहीं आकृष्ट होती रहे तो वह 'फाइल' कहलाती है। यानी इतनी ही गलती इस काल में समझनी है। पिछली जो फाइल खड़ी हुई हो, भले ही छोटी सी भी, लेकिन 'फाइल' कि जो हमें आकर्षित करे ऐसी हो, ऐसा हमें पता चले कि यह 'फाइल' है तो वहाँ पर सावधान रहना है। अब सावधान रहने के अलावा और क्या करना है? जिसे शुद्धात्मा देखना आ गया है, उसे उसके शुद्धात्मा देखते रहना है। उससे वह पूरी तरह से चला जाएगा।

प्रश्नकर्ता : साथ-साथ प्रतिक्रमण और प्रत्याख्यान भी करना है न?

दादाश्री : हाँ, वह तो करना ही पड़ेगा न!

प्रश्नकर्ता : आकर्षण की फाइल कहीं 'कन्टिन्युअस' नहीं रहती। लेकिन जब यह आकर्षण उत्पन्न होता है, जैसे यहाँ पर लोहचुंबक रखा हो और पिन का यहाँ से गुजरना और खिंच जाना, लेकिन तुरंत पता चल जाता है कि खिंच गया, तो फिर तुरंत ही वापस खींच लेना चाहिए।

दादाश्री : जितना भी पता चलता है वह इस 'ज्ञान' की वजह से पता चलता है, वर्ना दूसरा तो मूर्छित हो जाए। इस 'ज्ञान' की वजह से पता चलता है इसलिए फिर हमें उसका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। फिर हमें निर्मल दृष्टि दिखानी चाहिए। अपने में रोग होगा तभी सामने वाला व्यक्ति अपना रोग पकड़ सकेगा न? और यदि वह अपनी निर्मल दृष्टि देखे तो? दृष्टि निर्मल करना आता है या नहीं आता?

प्रश्नकर्ता : ज़रा और समझाइए कि दृष्टि कैसे निर्मल करनी है?

दादाश्री : 'मैं शुद्धात्मा हूँ' इस जागृति में आ जाने के बाद, फिर दृष्टि निर्मल हो जाती है। अगर नहीं हुई हो तो शब्दों में पाँच-दस बार बोलना कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ, मैं शुद्धात्मा हूँ, मैं शुद्धात्मा हूँ' तब भी वापस आ जाएगा और 'दादा भगवान जैसा निर्विकारी हूँ, निर्विकारी हूँ' ऐसा बोलेंगे तब भी वापस आ जाएगा। इसका उपयोग करना पड़ेगा, बाकी कुछ नहीं। यह तो विज्ञान है, तुरंत फल देता है और यदि ज़रा सा भी गाफिल रहा तो दूसरी तरफ फेंक दे ऐसा है!

अन्य कोई चीज़ बाधक हो, ऐसी नहीं है। स्त्री का स्पर्श हो जाए और फिर भीतर भाव बदल जाए तो वहाँ जागृति रखनी है। क्योंकि स्त्री जाति के परमाणु ही ऐसे हैं कि सामने वाले के भाव बदल ही जाते हैं। यह तो, जब हम (दादाश्री) हाथ रखते हैं तो उसे अगर विचार आया हो तो बल्कि वह भी बदल जाता है, उसके ऐसे खराब विचार ही गायब हो जाते हैं!

विषय की योजना के अलावा बाकी सभी योजनाओं के समय अगर तोड़-फोड़ करे तो चला लेंगे। क्योंकि बाकी सभी मिश्रचेतन के साथ की योजनाएँ नहीं है, जबकि यह विषय की योजना तो मिश्रचेतन के साथ की योजना है। हम छोड़ दें, फिर भी सामने

वाला दावा करे तो क्या होगा? इसलिए इसमें सावधान रहने को कहा है। बाकी चीज़ों में अगर गाफिल रहे तो चलेगा। गाफिल रहने का फल यह कि जागृति ज़रा कम रहेगी। लेकिन यह विषय तो सब से बड़ा जोखिम है, सामने वाला जिस स्थान पर जाने वाला हो उसी स्थान पर अपने को ले जाएगा! अपने ज्ञान के साथ अब उस स्थान पर हम कैसे रह पाएँगे? एक तरफ जागृति और दूसरी तरफ यह बंधन, वह कैसे चलेगा? लेकिन फिर भी हिसाब चुकाना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : वह रूपक में तो आएगा न?

दादाश्री : हाँ, वह कैसा रूपक में आएगा कि वह स्त्री दूसरे जन्म में अपनी मदर बनेगी, वाइफ बनेगी, यदि विषय संबंधित उसके बारे में सिर्फ एक ही घंटे का ध्यान करे तो! ऐसा है यह! सिर्फ इसी में हमें सावधान रहने जैसा है! बाकी किसी में सावधान रहने को नहीं कहते।

विचार ध्यान में तो परिवर्तित नहीं होते न?

अंदर विषय का विचार उगे तो क्या करना चाहिए? इन किसानों का ऐसा रिवाज है कि जमीन में इतनी-इतनी कपास वगैरह उग जाए, उसके बाद अंदर साथ में अन्य चीज़ें घास या बेल उग आए हों तो उन्हें वे निकाल देते हैं। उसे निराई कहते हैं। कपास के अलावा अन्य किसी भी तरह का पौधा दिखाई दे कि तुरंत उसे उखाड़कर फेंक देते हैं। उसी तरह हमें सिर्फ विषय के विचारों को उगने के साथ ही तुरंत उखाड़कर फेंक देना चाहिए, वर्ना पौधे के इतना बड़े हो जाने के बाद उसमें फिर फल आएँगे, उन फलों में से वापस बीज गिरेंगे। इसलिए इसे तो उगते ही उखाड़ देना, फल आने से पहले ही उखाड़ देना।

प्रश्नकर्ता : वह कैसे?

दादाश्री : हमारे अंदर विचार बदले तो पता नहीं चलेगा

कि अभी किस का विचार शुरू हुआ? वह विचार आने के बाद उसे ज़्यादा नहीं चलने देना चाहिए। वह विचार ध्यान में परिवर्तित नहीं हो जाना चाहिए। विचार भले ही आए। विचार तो अंदर हैं इसलिए आए बिना रहेंगे नहीं। लेकिन वह ध्यान में परिवर्तित नहीं होना चाहिए। ध्यान में परिवर्तित होने से पहले ही विचार को उखाड़कर फेंक देना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : ध्यान में परिवर्तित होना यानी कैसे?

दादाश्री : उसी विचार में रमणता करते रहना, उसे ध्यान में परिवर्तित होना कहते हैं। अगर आप एक ही विचार में रमणता करते रहो, तो वह उस विचार का ध्यान कहलाता है। उससे फिर बाहर बेध्यानपना रहता है, क्या ऐसे बेध्यान वाले नहीं होते लोग? तेरा ध्यान कहाँ है, लोग ऐसा नहीं पूछते? तब हमें पता चलता है कि ध्यान यहाँ पर है। जहाँ 'दादा' ने मना किया था, वहाँ है। उन्हीं विचारों में रमणता चलती रहे तो वह ध्यान कहलाता है। वह ध्यान फिर उसे ध्येय स्वरूप बन जाता है। उन विचारों का ध्यान हुआ, फिर अपना चलता ही नहीं। ध्यान नहीं हुआ तो कोई हर्ज नहीं।

प्रश्नकर्ता : ध्यान में परिवर्तित नहीं हुआ और वह उखड़ गया है, ऐसा कैसे पता चलेगा?

दादाश्री : उगते ही हमें वह चीज़ फेंक देनी चाहिए और फिर आगे उस विचारधारा को बदल देना पड़ेगा, दूसरी रख देनी पड़ेगी। नहीं तो फिर जाप शुरू करना पड़ेगा। वह टाइम बीत जाए तो फिर उसकी मुद्दत निकल जाएगी। हमेशा हर एक चीज़ का टाइम होता है कि साढ़े सात से आठ तक ऐसे विचार आएँ और अगर उतना टाइम गुजार दें तो फिर हमें परशानी नहीं है।

देखने से पिघलें, गाँठें विषय की

प्रश्नकर्ता : लेकिन गाँठें तो देखने से पिघलेंगी न? तो यदि हम दूसरी ओर देखें तो उन गाँठों को देखना रह जाएगा न?

दादाश्री : वह तो अगर तुम में शक्ति हो तो नया उपयोग दूसरी ओर नहीं रखकर उसी को देखो। शक्ति नहीं हो तो उपयोग बदलकर दूसरी ओर नया उपयोग रख दो।

प्रश्नकर्ता : तो दोनों संभव है?

दादाश्री : संभव ही है न! इस ओर नया उपयोग रख दे। तो तू ऐसा करता है न? वह ठीक है।

प्रश्नकर्ता : विषय के बहुत ज़ोरदार विचार आएँ तो दूसरी ओर देख लेना है ताकि वे निकल जाएँ।

दादाश्री : बस। वे अपने आप चले जाएँगे। सब से आखिरी रास्ता यही है कि उन्हें एक्ज़ेक्ट देखकर जाने देना। लेकिन वह नहीं हो पाए तो इस रास्ते से करोगे तो भी तुम्हें चलेगा।

प्रश्नकर्ता : तो फिर यह बीच का रास्ता हुआ न!

दादाश्री : यह नज़दीकी रास्ता।

प्रश्नकर्ता : यानी सब से आखिरी तो देखकर जाने देना, वह है।

दादाश्री : फिर ज़्यादा नहीं रहा, थोड़ा सा ही हिसाब रहता है। लेकिन अभी तुम उलझ जाते हो, उसके बजाय भले ही नज़दीकी रास्ता लो।

प्रश्नकर्ता : मुझे ऐसा विचार आया था कि मैं त्रिमंत्र पढ़ रहा हूँ। नमस्कार विधि वगैरह सब पढ़ रहा हूँ और जब आपने इस तरह देखने को कहा तब ऐसे कुछ छू नहीं रहा था। तब बिल्कुल सीधा चल रहा था। लेकिन जब यह विधि करना चूक गए, तब वापस यह सब ऐसे ही आने लगा अंदर। इसलिए वापस मुझे थोड़ा इफेक्ट हो जाता था।

दादाश्री : नहीं, उसमें तो दूसरा शुरू कर दो वापस। देखने

बैठो, भले ही कुछ भी करो। उपयोग कहीं और रखो, किसी काम में लगा दो।

प्रश्नकर्ता : आखिर में ये गाँठें तो देखनी ही पड़ेंगी या फिर ऐसा ज़रूरी नहीं है?

दादाश्री : ऐसा है न, अभी तो सेकन्डरी स्टेज से काम लेना, तुम से सहन नहीं हो रहा हो तो। यानी कि तुम दूसरा उपयोग रखना ताकि वह स्टेज अपने आप गुजर जाए। जब कभी वह वापस आएगी, तब देखना तो पड़ेगा एक दिन, तब उस दिन अभी के बजाय काफी आसान रहेगा बिल्कुल सहज रूप से। कि हाथ लगाते ही चले जाएँगे सारे।

प्रश्नकर्ता : मतलब उस समय ज्ञाता-दृष्टा आसानी से रह पाएँगे!

दादाश्री : हाँ, सरलता से। बल्कि तुझे देखना अच्छा लगेगा। हल्का हो जाएगा बिल्कुल और तुझ में शक्ति बढ़ गई होगी, उस समय। अभी तो तू निर्बल हो गया है।

प्रश्नकर्ता : यानी जब तक वह देखने की शक्ति नहीं है, तब तक ऐसा करना पड़ेगा।

दादाश्री : यानी अभी किसी भी उपाय से, उसमें से अलग हो जाओ।

प्रश्नकर्ता : विषय से संबंधित दोष हो रहे हों तो इसका स्लिप होने का मुख्य कॉज़ तो मन है। तो इस मन से जो विषय हो रहे हों और उन्हें दूर करना हो तो कैसे कर सकते हैं?

दादाश्री : मन की ओर ध्यान नहीं देना है। 'मन' को 'देखते' रहना है।

प्रश्नकर्ता : क्योंकि अभी तो चंद्रेश का पूरा कंट्रोल 'मन'

ने ही ले लिया है। इसलिए मन के कहे अनुसार ही चल रहा है। दादा का सत्संग हो तब भी मन बताता है न, उसी तरफ वह खिंच जाता है। लेकिन कुछ बातों में मन की नहीं सुनता हूँ, जब सत्संग में आना हो तब मन वह सब बताता है, लेकिन उस ओर ध्यान नहीं देता। सत्संग में आ जाता हूँ।

तो इस मन से जो दोष हो रहे हों, उन्हें कैसे खत्म करना चाहिए?

दादाश्री : अपना ज्ञान लेने के बाद दोष होते ही नहीं हैं न।

प्रश्नकर्ता : हाँ, दोष तो नहीं होते। इसके बावजूद दूसरी ओर दृष्टि आकृष्ट हो जाती है, तो इसमें पूरा काम मन का ही है न?

दादाश्री : हाँ, मन तो होता ही है। लेकिन अपना 'ज्ञान' ज्ञान में रहता है न! 'ज्ञान' को ज्ञान में रखना चाहिए। 'ज्ञान' को अज्ञान में दाखिल नहीं होने देना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : मतलब अगर ऐसा हुआ तो जो हो रहा है, उसे 'देखते रहें' ऐसा?

दादाश्री : और कुछ भी नहीं।

प्रश्नकर्ता : लेकिन जो विषय है, उसमें तो देखना भी जोखिम वाला है न! कब स्लिप हो जाए, वह तो कह ही नहीं सकते न!

दादाश्री : कुछ नहीं होगा। खुद ज्ञाता-द्रष्टा रहे तो कुछ नहीं होगा। स्लिप हो जाएँगे, ऐसा कह ही नहीं सकते।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह डिसाइड कैसे कर सकते हैं, कि खुद ज्ञाता-द्रष्टा में है?

दादाश्री : जिसे शंका है, उसी को ऐसा सब हो जाता है। जिसे शंका नहीं है, उसे कुछ नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : तभी तो यह सब जो हुआ है, वह शंका के आधार पर ही हुआ है? अभी इस चंद्रेश की जो अवस्था है, पूरी शंका के आधार पर ही है?

दादाश्री : तो और किसके आधार पर?

प्रश्नकर्ता : इसीलिए खुद पर शंका हुई है उसे।

दादाश्री : ऐसा है न, 'चंद्रेश क्या कर रहा है' उसे देखते रहना है। उसे कह सकते हैं कि 'तू नालायक है' ऐसा वैसा सब कह सकते हैं। तन्मयाकार नहीं हो जाना, तो शक्ति उत्पन्न हो जाएगी बाद में। 'ज्ञान' अज्ञान में नहीं घुस जाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : कई बार तो यह भी डिसाइड नहीं हो पाता कि यह ज्ञान है या अज्ञान है?

दादाश्री : डिसाइड हुए बिना रहेगा ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : बार-बार अगर उस तरफ खिंच रहा हो तो खुद को शंका रहती है कि यह ज्ञान में है या अज्ञान में है।

दादाश्री : जो खिंच रहा है उसे भी, जिसे खींच रहा है, 'जो' वह सब 'जानता' है, वह 'ज्ञान' है। अगर जाने नहीं तो फिर ज्ञान हट गया है, ऐसा कहा जाएगा, अज्ञान में घुस गया।

प्रश्नकर्ता : कैसे?

दादाश्री : ऐसे तू अज्ञान में घुस जाता है फिर?

प्रश्नकर्ता : यही होता है, खुद के प्रति भी ऐसा हो जाता है कि यह चंद्रेश बिगड़ गया। खुद को ऐसा लगता है कि मैं बिगड़ गया। यों खुद के प्रति तिरस्कार होता है, कि ऐसा? कहाँ

पहले वाला चंद्रेश और कहाँ अभी का चंद्रेश। क्या ऐसा सब है? कई बार तो प्रतिक्रमण भी नहीं हो पाते।

दादाश्री : कैसे होगा लेकिन? ज्ञान अगर अज्ञान में घुस जाए फिर कैसे होगा? अलग रहता हो तो होगा।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान, अज्ञान में घुस जाता है, तो उसका इतना लंबा पीरियड है। तो अब उसके लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : कुछ भी नहीं करना है।

प्रश्नकर्ता : तो यह जो अज्ञान में घुस गया है, उसे भी देखना है?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : यह बिगड़ गया है, उसे सुधारना तो पड़ेगा ही न!

दादाश्री : तो सत्संग में ज़्यादा जाना चाहिए। सत्संग में ज़्यादा यानी रेग्युलर।

प्रश्नकर्ता : हाँ, वह तो देखा कि सत्संग में आते हैं, तब बहुत क्लियर हो जाता है।

दादाश्री : हाँ, लेकिन सत्संग में ज़्यादा पड़े रहना पड़ेगा। उतना टाइम निकालकर रखना चाहिए, सत्संग के लिए।

'देखना' 'जानना' आत्मस्वरूप से

प्रश्नकर्ता : देखने से *पुद्गल* शुद्ध हो जाता है, वह क्या विषय के लिए भी करेक्ट है?

दादाश्री : विषय में सब को ऐसा रह नहीं सकता न! सिर्फ विषय ही ऐसा है जिसे देख नहीं सकता। चूक जाता है। बाकी सब में देख सकता है तुरंत। विषय के अलावा बाकी सब में देख

सकता है, जलेबी खाता भी है और जलेबी खाने वाले को भी देखता है। जलेबी कैसे चबाता है, उस पर खुद हँसता भी है कि 'ओहोहो! क्या चंद्रेशभाई, क्या टेस्ट से जलेबी चबाने लगे हो आप तो!'

प्रश्नकर्ता : हम किसी जगह पर बैठे हों और वहीं पास में कोई स्त्री आ जाए, और हमें स्पंदन खड़े होने लगें, तो उन्हें 'देखेंगे' तो चलेगा या प्रतिक्रमण करना पड़ेगा?

दादाश्री : प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। 'देखना' उसे कहते हैं कि जब हम 'देख रहें' हो तो हम चंद्रेश से कहेंगे, 'ओहोहो चंद्रेशभाई! आप तो स्त्रियों को भी देखते हो, अब तो रौब में आ गए लगते हो।' उसे 'देखना' कहेंगे। आँखों से जो देखते हैं, वह तो इस दुनिया के सभी लोग देखते ही है न! आँखों से देखा हुआ इन्द्रिय ज्ञान कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : यह तो अंदर स्पंदन उत्पन्न होते हैं, उन्हें देखना है कि ये स्पंदन उत्पन्न हुए। ऐसा देखने से जाएगा!

दादाश्री : 'देखना'। 'देखने में', हम जो कहते हैं, वह अलग कह रहे हैं। हम तो, 'यह क्या कर रहा है,' उसे हम 'जानते' हैं। मैं तो कहता हूँ कि 'अंबालालभाई, आप तो मज़े से खाना खाने लगे न!'

प्रश्नकर्ता : इस तरह कहने को 'देखना' कहते हैं, आप ऐसा कहना चाहते हैं? यानी पूरी 'देखने' की जो प्रक्रिया है, वह इस तरह बातचीत के द्वारा स्पष्ट रूप से रह सकती है।

दादाश्री : हाँ। यानी तुम सब यह जो 'देखते' हो, उसे 'देखना' नहीं कह सकते। वह तुम्हारी भाषा में तुम्हारी होशियारी से करने जाओगे न, तो बल्कि मार खा जाओगे। हम से पूछना कि हमारी होशियारी ऐसी है, क्या वह ठीक है?

प्रश्नकर्ता : इसमें ऐसा होता है कि विषय का विचार आता

है और इस ओर छेदन हो जाता है, वापस आता है, वापस छेदन कर देते हैं। मतलब यह खुद की पकड़ नहीं छोड़ता लेकिन वे विचार भी चलते रहते हैं, दोनों आमने-सामने चलते रहते हैं।

दादाश्री : वह छोड़ेगा नहीं न! इसलिए पहले विचार को ही निकालकर फेंक देना। बाद में कोई जाप करने बैठ जाना, 'दादा भगवान को नमस्कार करता हूँ', ऐसा-वैसा करना, भजन गाने लगना, ये जाप ही है सारे। अंदर से कहना कि, 'चंद्रेशभाई, गाओ'। ज्ञान तो बोलता ही रहेगा, बेचारा। वह ज्ञान तो जागृत ही करता रहता है कि जागो, जागो, जागो! अंदर से ऐसा नहीं करता?

प्रश्नकर्ता : हाँ, बहुत करता है, उसके प्रताप से ही तो सब टिका हुआ है।

दादाश्री : अब बाहर के लोग कैसे टिक सकेंगे बेचारे? ज्ञान नहीं हो तो कैसे टिकेंगे? नहीं टिक सकेंगे। उन्हें तो प्रकृति जैसे ले जाए, वैसे घिसटते जाते हैं।

जहाँ जागृति में झोंका, वहाँ विषय की फटकार

प्रश्नकर्ता : इस ज्ञान की जागृति से प्रकृति के सामने बहुत बड़ा फोर्स खड़ा हो गया है।

दादाश्री : हाँ। यह ज्ञान है इसलिए प्रकृति के सामने जीत ज़रूर जाता है, लेकिन साथ ही साथ अपना जो अस्तित्व है, वह ज्ञान के साथ होना चाहिए। अस्तित्व अगर *पुद्गल* के साथ रहेगा तो खत्म कर देगा। यानी स्वपरिणामी होना चाहिए।

उन विचारों में मिठास लगे तो हो गया, वे फिर खत्म कर देंगे। क्योंकि उस ओर परपरिणाम हुए। अब वे विचार ऐसे होते हैं न कि मिठास आए? या कड़वाहट आती है?

प्रश्नकर्ता : मिठास आए ऐसे आते हैं।

दादाश्री : इसीलिए वहाँ सावधान रहना है! ऐसा विवेचन

और कहीं पर तो नहीं कर सकते न! यह तो विज्ञान है इसलिए विवेचन कर सकते हैं। यह रोग कोई निकालता ही नहीं है न! यह रोग कैसे निकले? इसका इलाज अपने यहाँ होता है। यहाँ पर स्त्रियाँ बैठी हों, फिर भी अपने यहाँ दिक्कत नहीं आती। और कहीं पर तो ऐसी बात होती ही नहीं न!

जागृति मंद हुई कि विषय घुस जाता है। जागृति मंद हुई कि फिर उसे धक्का लगता है। विषय एक ऐसी खराब चीज़ है कि उसमें एक बार फिसल जाए तो फिर जागृति पर गाढ़ आवरण आ जाता है। उसके बाद अगर जागृति रखनी हो, फिर भी नहीं रह पाती। जब तक एक भी बार गिरा नहीं है, तब तक जागृति रहती है। शायद आवरण आ जाए, लेकिन जागृति तुरंत ही आ जाती है। लेकिन एक ही बार फिसला तो ज़बरदस्त गाढ़ आवरण आ जाता है, फिर सूर्य-चंद्र नहीं दिखते। एक ही बार फिसले तो भी बहुत नुकसान है।

प्रश्नकर्ता : जागृति मंद यानी एक्चुअली कैसे होता है?

दादाश्री : एक बार आवरण आ जाता है उसे। उस शक्ति को संभालने वाली जो शक्ति है न, उस शक्ति पर आवरण आ जाता है, उसका काम करना मंद हो जाता है। फिर उस समय जागृति मंद हो जाती है। उस शक्ति के मंद होने के बाद कुछ नहीं हो सकता, कुछ नहीं होता। बाद में वापस मार खाता है, फिर मार खाता ही रहता है। फिर मन, वृत्तियाँ, वगैरह सब उसे उल्टा ही समझाते हैं कि, 'हमें तो अब कोई हर्ज नहीं। इतना सब तो है न?' फिर ऐसा समझाने वाले वकील अंदर होते हैं, उस वकील का जजमेन्ट वापस शुरू हो जाता है। फिर कहेगा कि परहेज करो, मुक्त थे उससे फिर हुए परहेज़। ऐसा हो, उससे तो शादी करना अच्छा, वर्ना ऐसा होना ही नहीं चाहिए।

प्रश्नकर्ता : उस शक्ति की रक्षा करने वाली शक्ति यानी क्या?

दादाश्री : एक बार स्लिप हुआ, तो अंदर जो स्लिप नहीं होने की शक्ति थी, वह घिस जाती है यानी वह शक्ति ढीली पड़ती जाती है। इसलिए फिर बोतल यों टेढ़ी हुई कि दूध अपने आप ही बाहर निकल जाता है, जबकि पहले तो हमें ढक्कन निकालना पड़ता था। यह तुझे समझ में आया?

प्रश्नकर्ता : एक असंयम परिणाम से फिर गुणन से ही (मल्टीप्लाई होकर) पूरा डाउन में चला जाता है और असंयम बढ़ता ही जाता है। ऐसा न?

दादाश्री : हाँ, तो असंयम बढ़ता ही जाता है! इसलिए वापस ढीला ही पड़ता जाता है। एक तो ढीला पड़ा हुआ है और वापस ढीला पड़ गया, तो फिर रहा ही क्या? बाद में तो अंदर मन-बुद्धि सलाह देने वाले और अंदर जज व बाकी सभी गवाही देने वाले निकल आते हैं। अरे, गवाही देने वाले कोई भी नहीं थे, तो फिर कहाँ से आए? तब कहते हैं कि 'हमें पहले से ही कहा था कि आप गवाही देने आना, सो हम गवाही देने आए है! कि अब कोई दिक्कत नहीं है। आपकी तो इतनी जागृति है। अब आपको क्या दिक्कत है, अब आपका ज़रा भी दोष नहीं है।' तेरे कभी ऐसे गवाही देने वाले नहीं आते?

प्रश्नकर्ता : हाँ, आते हैं न। लेकिन मेरे साथ कैसा होता है कि, पहले यों ग्राफ ऊपर जाता है, फिर जागृति मंद होती हुई दिखाई देती है, फिर पता चल जाता है कि अब डाउन होने लगा है। इसलिए फिर वापस तुरंत जोश आ जाता है कि यह तो गलती हो रही है, कहीं। इसलिए फिर खोजबीन होती हैं और वापस ऊपर आ जाता है, लेकिन ऐसे डाउन हो ज़रूर जाता है!

दादाश्री : हाँ, लेकिन अगर वह डाउन हो जाए तो वह कब तक चल सकता है? जब तक हम से एक बार भी गलती नहीं हो, तब तक चल सकता है, लेकिन एक बार गलती हुई कि ढीला पड़ जाता है। संसारीपने में हज़ार बार भूल खा जाए

तो उसमें हर्ज नहीं है क्योंकि जब ढीला हो ही गया है तो फिर उसमें हर्ज ही क्या? उसी को ढीला पड़ना कहते हैं न! लेकिन यहाँ तो तुमने टाइट रखा है, उसे टाइट ही रखना है, और यदि वह शक्ति ऊर्ध्वगामी हो गई तो बहुत काम निकाल देगी।

प्रश्नकर्ता : वह किस प्रकार के दोष से ढीला होना शुरू होता है?

दादाश्री : संयम, असंयम हुआ कि ढीला हो ही जाता है। संयम जब तक संयम भाव में रहता है, तब तक ढीला नहीं पड़ता। यों कम-ज़्यादा होता रहे तो उसमें हर्ज नहीं है। लेकिन वह संयम टूटा कि फिर हो चुका। वह संयम कब टूटता है? कि 'व्यवस्थित' के पिछले संबंध (जोड़) हों, तब टूटता है। और टूटने के बाद फिर उसे मटियामेट कर देता है।

मूर्च्छा चली जाए तो फिर हर्ज नहीं। मूर्च्छा ही निकालनी है। 'मेरी मूर्च्छा चली गई' ऐसा कहने से कुछ नहीं होगा, मूर्च्छा तो एक्ज़ेक्ट रूप से जानी ही चाहिए। और वह भी ज्ञानी पुरुष से टेस्ट करवा लेना चाहिए कि 'साहब, मेरी मूर्च्छा गई या नहीं, वह टेस्ट करके दीजिए।' वर्ना अंदर तो ऐसी ऐसी वकालत चलती है कि, 'बस, अब सारी मूर्च्छा चली गई है, अब कोई हर्ज नहीं है!' यानी वकालत करने वाले बहुत हैं न! इसलिए जागृत रहना। जहाँ अपराध होने की संभावना हो, ऐसी जगह पर से खिसक जाना। आत्मा तो दिया है और वह आत्मा असंग स्वभाव का है, निर्लेप स्वभाव का है। लेकिन अनंत जन्म से *पुद्गल* की खेंच है। आप अलग हुए, लेकिन *पुद्गल* की खेंच छोड़ती नहीं है न! वह खेंच जाती नहीं है न! स्त्री-पुरुष के आकर्षण में वह जागृति नहीं रखी तो *पुद्गल* की खेंच उसे अंधेरे में डाल देगी।

अंत में तो आत्मरूप ही होना है

प्रश्नकर्ता : जब से ब्रह्मचर्य की विचारणा शुरू हुई है, तब

से उस तरफ मज़बूत होने लगा है। तो साथ ही साथ अंदर यह अहंकार भी खड़ा होने लगा है, यह भी परेशान करता है कई बार।

दादाश्री : कैसा अहंकार खड़ा होता है?

प्रश्नकर्ता : 'मैं कुछ हूँ, मैं कितना अच्छा ब्रह्मचर्य पालन करता हूँ' ऐसा।

दादाश्री : वह तो निर्जीव अहंकार है।

प्रश्नकर्ता : अंदर इसकी खुमारी भर गई हो, ऐसा हो जाता है।

दादाश्री : हाँ, लेकिन फिर भी वह सारा तो निर्जीव अहंकार है। मरा हुआ इंसान उठ बैठे तो क्या हमें वहाँ से भाग जाना चाहिए? वर्ना ब्रह्मचर्य का सही अर्थ क्या है कि ब्रह्म में चर्या। शुद्धात्मा में ही रहना, वही ब्रह्मचर्य कहलाता है। लेकिन ये लोग तो ब्रह्मचर्य का क्या मतलब निकालते हैं? नल को डाट लगा दो। लेकिन दूध पीया, उसका क्या होगा? पूरे जगत् ने विषय को विष कहा है। लेकिन हम कहते हैं, 'विषय विष नहीं हैं, लेकिन विषय में निडरता, वह विष है।' वर्ना महावीर भगवान को बेटी कैसे होती? जगत् बात को समझा ही नहीं। रिलेटिव में ब्रह्मचर्य होना चाहिए, लेकिन यह तो वापस एक ही कोने में पड़े रहते हैं और ब्रह्मचर्य का ही आग्रह रखते हैं और उसी का दुराग्रह रखते हैं। ब्रह्मचर्य के आग्रही होने में हर्ज नहीं है, लेकिन अगर दुराग्रही हो गए तो उसमें हर्ज है। आग्रह, वह अहंकार है और दुराग्रह, वह ज़बरदस्त अहंकार है। ब्रह्मचर्य का दुराग्रह किया तो भगवान कहते हैं, 'बेकार है' फिर भले ही ब्रह्मचर्य पालन कर रहा हो।

प्रश्नकर्ता : सभी चीज़ों में मुझे किसी के दोष नहीं दिखते, लेकिन ब्रह्मचर्य के बारे में मुझे कोई कुछ उल्टा कहे तो मेरा दिमाग घूम जाता है, तुरंत ही उसके दोष दिखने लगते हैं।

दादाश्री : ऐसा क्यों? कि आत्मा पर प्रीति नहीं है, ब्रह्मचर्य पर प्रीति है। लेकिन ब्रह्मचर्य तो *पुद्गल* है। आत्मा खुद तो ब्रह्मचारी ही है, निरंतर ब्रह्मचारी है! यह तो हम बाहर का उपाय करते हैं और वह भी कुदरती तरीके से अगर डिस्चार्ज के रूप में आया हो, तभी हो पाएगा। इसलिए ब्रह्मचर्य कोई मुख्य चीज़ नहीं है। उसे मुख्य मानेंगे तो आत्मा का मुख्यत्व चला जाएगा। मुख्य वस्तु तो आत्मा है, बाकी कुछ भी मुख्य है ही नहीं। बाकी के ये सब तो संयोग हैं और फिर संयोग वियोगी स्वभाव के हैं। आत्मा और संयोग दो ही हैं, और कुछ है ही नहीं जगत् में। अतः मुख्यत्व एक मात्र आत्मा में आ गया, बाकी सब को संयोग कह दिया। संयोग को अच्छा-बुरा करने जाओगे तो बुद्धि इस्तेमाल की और बुद्धि इस्तेमाल की तो आत्मा दूर चला जाएगा। अपना साइन्स कितना अच्छा है!

ब्रह्मचर्य व्यवहार के अधीन है। निश्चय तो ब्रह्मचारी ही है न! आत्मा तो ब्रह्मचारी ही है न!

[2.16]

फिसलने वालों को उठाकर दौड़ाते हैं

सिर-माथे पर रखना ज्ञानी को, अंत तक

पंद्रह साल के लिए जेल में डाल दिया हो तो क्या करोगे? 'दादा की जेल में ही हूँ', कहना। कुछ तो शूरवीरता रखो न! शूरवीरता! एक ही जन्म। मोक्ष में जाना है यह तो। अन्य सभी जगह यही झंझट चल रही है न। 'इसमें क्या सुख है?' और अगर एक बाड़ तुम पार कर लोगे मेरे कहे अनुसार, तो फिर मुक्त हो जाओगे। एक ही बाड़ को पार करने की ज़रूरत है। तुझे दादा हाज़िर रहते हैं या नहीं रहते? तुझे दादा हाज़िर रहते हैं तो फिर क्या दुःख है? अरे, इसमें ऐसे तो कौन से सुख हैं कि इतनी पकड़ में आ गया है! दादा तो ऐसे है कि हर तरह से रक्षा करें, मूलतः इनका यह *आड़ाई* (अहंकार का टेढ़ापन) का स्वभाव है न, वह नहीं छूटता न! सपने में आ जाएँ, तब से कल्याण हो गया। सपने में ऐसे ही कोई चीज़ आती है क्या?! इसलिए इस दुनिया का जो होना हो वह हो, लेकिन इन दादा को नहीं छोड़ना है और दादा की इस एक आज्ञा का पालन कर लेना तो वश हो जाएगा सबकुछ। और वर्ना अगर तुझे शादी करनी हो तो बता न, हर्ज नहीं है। कर देंगे फिर रास्ता।

आज्ञा में नहीं रह सके तो क्या किसी को जेल में थोड़े ही डालते हैं? वर्ना ऐसे यदि जेल में डालना पड़े तो हमें कितनों को जेल में डालना पड़े? सभी को डाल देना पड़ेगा।

तुम्हें तो ऐसा तय करना है कि 'फिसल नहीं जाना है' और यदि फिसल गए तो फिर मुझे माफ कर देना है। आपका कभी अगर अंदर बिगड़ने लगे तो तुरंत मुझे बताना। ताकि फिर उसका कुछ हल निकले! थोड़े ही कहीं एकदम से सुधरने वाला है? बिगड़ने की संभावना है! ये नए मकान बनाते हैं, तो उनमें डिफेक्ट निकलता है या नहीं? मेरे जैसे को कुछ काम करना रहा नहीं, तो गलती निकलेगी ही नहीं न? जो लोग काम करते हैं, उन्हीं से गलती होती है। खराब से खराब काम हो गया हो तो 'दादाजी' को बता देना। तो मन समझेगा कि, 'यह तो भोला है, यह सबकुछ बता देता है। इसलिए अब हमें फिर से ऐसा नहीं करना है। इसके साथ अपनी नहीं बनेगी।' इसलिए फिर मन बचाव का रास्ता नहीं ढूँढेगा। मैं तो पहले जो भी होता था वह 'ओपन' कर देता था। तो मन को कैसा लगेगा अंदर? उलझता रहेगा, और तय करेगा कि फिर से हमें ऐसा नहीं करना है।

प्रश्नकर्ता : 'यह तो अपनी ही आबरू खत्म कर रहा है' ऐसा कहकर फिर मन चुप हो जाएगा।

दादाश्री : हाँ, मन समझ जाएगा कि 'यह तो अपनी आबरू खत्म कर रहा है।' बाहर के लोग तो ऐसा समझते हैं कि खुद की आबरू जा रही है। जबकि हम तो जानते हैं कि यह तो मन की आबरू जा रही है! जो करता है, उसकी आबरू जाती है। 'अपनी' आबरू क्यों जाएगी? ऐसा कहने से मन शांत हो जाएगा या नहीं? हमेशा हमारी दी गई आज्ञा में रहना ही अच्छा है। जिसने खुद के लेवल पर लिया, वह स्वच्छंद पर ले जाता है। इस स्वच्छंद ने ही लोगों को गिरा दिया है न! इसीलिए हम ये आज्ञा देते हैं न?! स्वच्छंद सब से बड़ा रोग कहलाता है कि, 'अब मुझे कुछ भी बाधक नहीं है।' वही विष है।

जानो गुनाह के फल को पहले

प्रश्नकर्ता : 'यह कार्य गलत है, यह करने जैसा नहीं है।'

यह हमें पता है, फिर भी वह हो जाता है। तो उसे रोकने के लिए क्या प्रयत्न करना चाहिए? कौन सा पुरुषार्थ करना चाहिए?

दादाश्री : ऐसा है न। जब तक जिस गुनाह का फल नहीं जानते, तब तक वह गुनाह होता रहता है। कुएँ में कोई क्यों नहीं गिरता? ये वकील कम गुनाह करते हैं। ऐसा क्यों? इस गुनाह का यह फल मिलेगा, ऐसा वे जानते हैं। इसलिए गुनाह का फल जानना चाहिए। पहले जाँच कर लेनी चाहिए कि गुनाह का क्या फल मिलेगा? 'यह गलत कर रहा हूँ, इसका क्या फल मिलेगा?' यह जाँच कर लेनी चाहिए।

इस दुनिया का ऐसा नियम है कि जो गुनाह के फल को पूरी तरह से जानते हैं, वे गुनाह करेंगे ही नहीं! गुनाह कर रहा है मतलब वह गुनाह के फल को पूरी तरह से जानता ही नहीं हैं! हम नर्क का फल जानते हैं, इसीलिए तो हम कभी भी नर्क का फल आए, ऐसी बात हो तो, यह शरीर टूट जाए फिर भी नहीं करते। तूने नर्क का स्वरूप सुना तो तुझे कैसा लग रहा है अब? इसलिए यह जान लेना कि कर्म का फल क्या? क्योंकि अगर गुनाह हो रहा है तो अभी तक यह समझा ही नहीं कि 'इसका फल क्या है?' इसलिए प्रकृति कौन सी बात में गलत कर रही है, यह किसी से पूछना चाहिए। ज्ञानी पुरुष हों तो उन्हें पूछना चाहिए कि, 'अब मुझे यहाँ पर क्या करना चाहिए?' और उसके बावजूद प्रकृति से वह हो जाए तो माफी माँगनी चाहिए! जो प्रकृति हमें पछतावा करवाए, उस प्रकृति का विश्वास ही कैसे कर सकते हैं?

प्रश्नकर्ता : प्रगति को रूंधने वाले अंतरायों में से कैसे निकलें?

दादाश्री : वह सब निकल जाएगा, कृपा से सबकुछ निकल जाएगा। कृपा यानी दादाजी को राज़ी रखना वह। दादा अपने लिए जो माथापच्ची कर रहे हैं, उसका फल अच्छा आए, अच्छे प्रतिशत आए तो दादा राज़ी! दादा को और क्या चाहिए? दादा कहीं पेड़ा

खाने नहीं आए है। फिर भी पेड़ा प्रसाद के तौर पर रखना। वह भी व्यवहार है न?!

व्यापार में खो गए कि खोए खुदा

यह तो अपने आप झूठ-मूठ का समाधान लेकर दिन निकाल रहा है! और उसका रिज़ल्ट भी आए बिना नहीं रहता न। भले ही कितना भी कहे, 'मैं पढ़ रहा हूँ, मैं पढ़ रहा हूँ।' लेकिन छः महीने के बाद उसका रिज़ल्ट तो आएगा ही न? तब पोल पता चल जाएगी न! तुझे समझ में आ रहा है यह सब? कॉलेज में जाने के बाद पास तो होना पड़ेगा न? जो व्यापार शुरू किया है, वह पूरी तरह से तो करना चाहिए न? 'शादी करनी है' तो ऐसा तय करके रखना और 'ब्रह्मचर्य पालन करना है' तो वह तय करके रखना। ब्रह्मचर्य पालन करना हो तो फिर पूरा-पूरा निश्चय तो होना चाहिए न? ये तो व्यापार में दुकान का करने जाते हैं और वापस फुटबॉल भी खेलने जाते हैं, बोल-बेट भी खेलने जाते हैं, तो उससे कहीं सही रूप से होता होगा? सही रूप से करना है, तो रास्ता तो निकालना पड़ेगा न? या ऐसा चलेगा? पोलम्पोल चलेगी?!

प्रश्नकर्ता : नहीं चलेगी।

दादाश्री : बाकी लोगों की टोली जा रही है, उस तरह टोली में रहते हैं, इस हिसाब से अच्छा है! उसमें फिर हमें कहाँ लक्ष्य रखना पड़ेगा कि, 'कौन आगे जा रहा है? वह क्यों आगे जा रहा है? मैं क्यों इतना पीछे रह गया?' बाकी मोक्षमार्ग में तो निरंतर जागृत रहना पड़ता है कि 'मेरी क्या गलती रह जाती है?' ऐसा पता तो लगाना ही पड़ेगा न! बाकी संसार की इच्छा तो करने जैसी है ही नहीं। संसार तो सहज स्वभाव से चलता रहे ऐसा है। अब इतने समय से मेहनत की है, उसमें मेरा भी इतना सारा टाइम गया है। तेरा भी कितना टाइम गया है। इसलिए मुझे कुछ संतोष हो, ऐसा कुछ कर। यहाँ ये सारे लड़के हैं, उन सभी को पूरा दिन कितना अच्छा बरतता है! यहाँ तो जो चिपक

गया और लिपट गया, उसी का चलता रहेगा। जब तक वह चिपका हुआ उखड़े नहीं तब तक तेरा अच्छा चलता रहेगा। अब वापस कब उखड़ जाएगा?

प्रश्नकर्ता : अब नहीं उखड़ूँगा।

दादाश्री : तब ठीक है! ऐसे चिपके रहोगे तभी चल पाएगा। क्योंकि यहाँ जो चिपका रहा, कृपा उस पर काम किए बिना रहेगी नहीं, ऐसा यह करुणामय मार्ग है। कैसा मार्ग है? खुद का बिगाड़कर भी करुणामय मार्ग है। खुद की कमाई भले ही कम हो जाए, लेकिन उसे संभालकर, उसकी कमाई शुरू करवाकर, दुकान फिर से शुरू करवा देते हैं। इस संसार में भी कोई दोस्त हो, जान-पहचान वाला हो, तो उसका नहीं चल रहा हो तो भी कुछ भी करके शुरू करवा देते हैं। व्यवहार में भी रास्ते पर ला देते हैं। ऐसा करवा देते हैं न?

अभी तो तू पढ़ रहा है, कॉलेज पूरा नहीं हुआ है। इसलिए अभी पूरा हिसाब निकालेगा तो चलेगा अगर अभी कर लिया तो उस समय काम आएगा। बाद में कोलेज खत्म हो जाने के बाद तो ऑफिस लेकर बैठेगा और ऑफिस में एक मिनट की भी फुरसत नहीं मिलेगी। हम समझते हैं कि अभी तो बहुत टाइम है और बाद में यह पूरा कर लेंगे! लेकिन इस काल में सभी व्यापार ऐसे हैं कि एक मिनट की भी फुरसत नहीं मिलती और पूरे दिन मगज़मारी, भले ही पैसे कमाएगा लेकिन यहाँ का कोई काम नहीं हो पाएगा। अभी किया होगा तो उस समय वहाँ बैठे-बैठे सब ध्यान में रहेगा, तो थोड़ा कुछ हो पाएगा। ये तो सारे ऐसे कामकाज हैं कि दादा भी वापस नहीं मिल पाएँ! अभी यह सब तुम्हारे लक्ष्य में नहीं है न? इसमें से किसी चीज़ का ध्यान भी नहीं रहता न? यह तो कुदरत चलाए, उसी तरह चल रहा है। खुद की जागृति का एक अंश भी नहीं है। अपने यहाँ कई अफसर दर्शन करके गए हैं। कहते भी हैं कि यही करने जैसा है। लेकिन

करें कैसे? व्यापार तो एक प्रकार की जेल है। उस जेल में बैठकर पैसा कमाना। तो अब तुझे क्या करना चाहिए? व्यापार शुरू होने के बाद तुझे एक मिनट का भी टाइम नहीं मिलेगा।

प्रश्नकर्ता : पहले काम निकाल लेना चाहिए।

दादाश्री : हाँ, पहले काम निकाल लेना चाहिए, इसलिए यह याद रखना। इसलिए तुझे यह सार निकालकर दिया है। बाद में हम बार-बार कहने नहीं आएँगे। हम तो पूरी तरह से समझा देते हैं ताकि तुम्हारा अहित न हो। यह तो आज मिला और इच्छा भी है, ऐसा हम जानते हैं, लेकिन मोह का मारा वह निश्चय हो ही नहीं पाता न? निश्चय टिकता नहीं है। हमने एक-एक ऐसे निश्चय देखे हैं कि परसेन्ट टु परसेन्ट करेक्ट। जब देखो तब करेक्ट। अत: जितना हो सके उतना कर लेना चाहिए! तुझे पता है न, यह ऑफिस का काम ऐसा है?

प्रश्नकर्ता : काम के बारे में ऐसा कुछ बहुत बड़ा नहीं सोचा है।

दादाश्री : लेकिन वह तो हो ही जाएगा और बड़े ऑफिसों में बड़ा कामकाज नहीं करें तो खर्चा भी नहीं निकलेगा। नौकरी करेगा तो ठीक है, तो भी तुझे कुछ खाली समय मिलेगा। कई तो ऐसे पुण्यशाली होते हैं कि व्यापार से संबंधित कोई बोदरेशन ही नहीं। अरे! पूरे दिन व्यापार अपने आप ही चलता रहता है, उसे पुण्य कहते हैं। अब तेरा सबकुछ ठीक हो जाएगा न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : बहुत सीढ़ियाँ लुढ़क जाए तो फिर कौन पकड़कर रखेगा? पहले तो एक सीढ़ी गिरता है, फिर दो हो जाते हैं, चार हो जाते हैं, बारह हो जाते हैं, ऐसे बढ़ते जाते हैं! अब यह गाड़ी कहाँ रुकेगी? फिर उसे कौन खड़ा रखेगा और कौन पकड़ेगा? इतनी ऊँचाई पर था, ऊँची दशा में था तब सीधा नहीं रहा, तो

अब गिरने के बाद क्या रहेगा? फिसला वह फिसला! अंदर भरपूर सुख पड़ा है। याद करते ही मिले अंदर ऐसा निरा सुख ही है! जहाँ चैन खींचोगे वहाँ गाड़ी खड़ी रहेगी, खुद की इतनी शक्तियाँ हैं! लेकिन जहाँ ढीला पड़ जाए वहाँ क्या हो सकता है? तुझे दादा का निदिध्यासन रहता है क्या?

प्रश्नकर्ता : इन दो दिनों से तो रह रहा है।

दादाश्री : जिसे दादा का निदिध्यासन रहता है, उसके तो सभी ताले खुल जाते हैं। दादा के साथ अभेदता, वही निदिध्यासन है! बहुत पुण्य होता है, तब ऐसा उदय आता है और 'ज्ञानी' के निदिध्यासन का साक्षात् फल मिलता है। वह निदिध्यासन, खुद की शक्ति को भी वैसी ही बना देता है, उसी रूप बना देता है। क्योंकि 'ज्ञानी' का स्वरूप अचिंत्य चिंतामणी है, इसलिए उसी रूप बना देता है। 'ज्ञानी' का निदिध्यासन निरालंब बनाता है। फिर 'आज सत्संग नहीं हुआ, आज दर्शन नहीं हुआ।' उसे ऐसा कुछ भी नहीं रहता। ज्ञान स्वयं निरालंब है, वैसा स्वयं निरालंब हो जाना पड़ेगा, 'ज्ञानी' के निदिध्यासन से।

एक ध्येय, एक ही भाव

हमने आंगन में पेड़ लगाया हो, हर रोज़ खाद-पानी डालें और अब कन्स्ट्रक्शन वाले का ऑर्डर मिले कि इस पेड़ को काट दो और वहाँ नींव खोदना शुरू कर दो, तो? अरे, तो फिर यह पेड़ लगाया ही क्यों था? यदि पेड़ लगाना हो तो काटना मत, तो उनसे कह दे कि कन्स्ट्रक्शन वाले को मकान की जगह बदलनी चाहिए। जिसकी हमने खुदने परवरिश की हो और उसे फिर हम काट दें तो क्या हुआ कहलाएगा? खुद के बच्चे की हिंसा करने के बराबर है। लेकिन लोग कुछ समझते नहीं और कहेंगे, 'काट दो न!' मैंने कभी भी यह गलती नहीं की। हमें तो तुरंत विचार आ जाता है कि यदि लगाया है तो काटना मत और काटना हो तो लगाना मत।

जिसने जगत् कल्याण का निमित्त बनने का बीड़ा उठाया है, उसे दुनिया में कौन रोक सकता है? कोई भी शक्ति नहीं है कि जो उसे रोक सके। पूरे ब्रह्मांड के सभी देव लोग उस पर फूल बरसा रहे है। अतः एक ध्येय तय करो न! जब से यह तय करोगे, तभी से इस शरीर के ज़रूरतों की चिंता नहीं करनी पड़ेगी। जब तक संसारी भाव है, तब तक ज़रूरतों की चिंता करनी पड़ती है। देखो न, 'दादा' का कैसा ऐश्वर्य है! यह एक ही प्रकार की इच्छा रहेगी तो फिर उसका हल आ गया। और देवसत्ता आपके साथ है। ये देव तो सत्ताधारी हैं, वे निरंतर हेल्प करें ऐसी उनकी सत्ता है। एक ही ध्येय वाले ऐसे पाँच लोगों की ही ज़रूरत है! अन्य कोई ध्येय नहीं, डांवाडोल नहीं। अड़चन में भी एक ही ध्येय और नींद में भी एक ही ध्येय!

जिस राह पर चले, बताई वही राह

'दादा' जिस रास्ते से गए है, वही रास्ता आपको बताया है। उसी रास्ते पर 'दादा' आपसे आगे हैं। रास्ता मिलेगा या नहीं मिलेगा?

प्रश्नकर्ता : मिलेगा।

दादाश्री : शत प्रतिशत? पक्का?

प्रश्नकर्ता : हाँ, शत प्रतिशत पक्का!

दादाश्री : 'दादा' तो सभी रोग निकालने आए हैं। क्योंकि 'दादा' संपूर्ण निरोगी पुरुष हैं। उनकी मदद से जो रोग निकालने हों, वे निकल जाएँगे। उनमें कोई भी रोग नहीं है, संसार का एक भी रोग उनमें नहीं है। इसलिए तुम्हें जो जो रोग निकालने हों, वे निकल जाएँगे।

इसलिए हम तुम्हें कहते हैं कि फिर अपने आप तुम पोल मारोगे तो तुम्हें मार पड़ेगी। हम तुम्हें चेतावनी दे देते हैं। अभी रोग निकल सकेगा, बाद में नहीं निकल सकेगा। यदि मुझ में ज़रा

सी भी पोल होती तो तुम्हारा रोग नहीं निकल सकता। हिम्मत आ रही है थोड़ी?

प्रश्नकर्ता : हाँ, पूरी तरह से हिम्मत आ रही है।

दादाश्री : 'दादा' की आज्ञा का पालन तुम से ठीक से नहीं हो पाता? अपना धर्म आज्ञा पालन करने का है। फिर जो माल निकले, उससे हमें क्या लेनादेना? कॉलेज के आखिरी साल में पढ़ रहा हो और किसी मौज-शौक में पड़ गया और फ़ेल हो गया तो उसके बाद पूरे साल उदास रहे तो क्या फायदा होगा? अगले साल क्या होगा? पहले नंबर से पास होगा? ऐसा डिप्रेशन आ जाए तो सात साल तक भी पास नहीं हो सकेगा। इसलिए यह भूल जाना कि मैं फ़ेल हो गया और नये सिरे से और नई तरह से दोबारा तैयारी करना। जो कर्म हो चुके है, उन्हें छोड़ो न! एकलौता बेटा मर जाए तो क्या हमेशा रोएगा? भले इंसान, दो दिन रोना हो तो रो और फिर बाज़ार में कुल्फी खा। यानी कि अगर फ़ेल हो गए तो नये सिरे से पढ़ना शुरू कर देना, पुराना सब भूल जाना। मतलब नये सिरे से आज्ञा में रहो ठीक से! हमें कहना है, 'चंद्रेश, यह तो बहुत गलत किया।' इतना हमें कह देना है, बस। बाद में फिर से हमें आज्ञा में ही रहना है। उसके बाद हम क्यों चूकें? और 'चंद्रेश' तो अपना पड़ोसी है न? फर्स्ट नेबर, फाइल नंबर वन है न? और दिवाला भी चंद्रेश का निकला न? 'तेरा' दिवाला तो नहीं निकला न? या दोनों ने साथ में दिवाला निकाला है? चंद्रेश दिवालिया हो जाए, तो उससे तुम्हें क्या लेना देना? लेकिन हम यह जो कह रहे हैं, वह तुम्हारे वापस पलटने के लिए। फिर उसका दुरुपयोग नहीं होना चाहिए कि दादाजी ऐसा कह रहे थे कि दिवाला निकले तो हर्ज नहीं है। यह तो, यहाँ से बचाने जाएँ तो वहाँ फिसल पड़ता है, तो इसका कब अंत आएगा? तुम कह देना कि 'चंद्रेश दिवालिया हो गया है, अब फिर से दिवालिया मत होना!' तुम लोगों से कहा है न, फाइल नंबर वन, फर्स्ट नेबर है। तो आज्ञा में रहना वही अपना धर्म है।

'दादा' बोलते ही दादा हाज़िर

प्रश्नकर्ता : आपकी मौजूदगी में यह सब बिल्कुल साफ हो जाए, सभी को ऐसे आशीर्वाद दीजिएगा।

दादाश्री : हम तो ऐसे आशीर्वाद देते हैं। लेकिन यह तो साफ करोगे तब न!

प्रश्नकर्ता : साफ कर देंगे।

दादाश्री : तुम्हें तो अपना काम निकाल लेना है। इसी की पूर्णाहुति के लिए शरीर घिस देना है। यदि ये कर्म खपा दिए होते और उसके बाद यह ज्ञान मिला होता तो एक घंटे में ही उसका काम पूर्ण हो जाता। लेकिन ये कर्म तो खपाए नहीं हैं और राह चलते को ज्ञान दे दिया है इसलिए अंदर जब कर्म के उदय बदलते हैं, तब बुद्धि के प्रकाश को पलट देते हैं, उस समय उलझ जाता है। अब उलझ जाए, तब 'दादा' 'दादा' करते रहना और कहना, 'यह लश्कर उलझाने आया है।' क्योंकि अभी भी ऐसे उलझाने वाले अंदर बैठे है, इसलिए सावधान रहना। और उस समय 'ज्ञानी पुरुष' का ज़बरदस्त आश्रय रखना। मुश्किलें तो न जाने कब आ जाएँ, वह कहा नहीं जा सकता। लेकिन उस समय 'दादा' से सहायता माँगना। ज़जीर खींचोगे तो 'दादा' हाज़िर हो जाएँगे।

अब तो एक क्षण भी गँवाने जैसा नहीं है। ऐसा अवसर बार-बार नहीं आएगा, इसलिए काम निकाल लेना चाहिए। इसलिए यदि यहाँ पर जागृति रखी तो सभी कर्म भस्मीभूत हो जाएँगे और एक अवतारी होकर मोक्ष में चले जाओगे। मोक्ष तो सरल है, सहज है, सुगम है।

ध्येयी का हाथ थामें, दादा हमेशा

मैं आपकी हेल्प करता हूँ, बाकी डिसीज़न आपको लेना है। आप सभी को, फादर-मदर और बच्चों को समाधान सहित डिसीज़न

लेना है। आप ऐसा डिसीज़न लो कि आप सभी को समाधान रहे। उसके बाद हम हेल्प करते हैं। आप जिस लाइन में हो, उस लाइन में हेल्प करते हैं। एक से शादी की होगी, फिर भी हमें हर्ज नहीं और शादी नहीं करोगे फिर भी हर्ज नहीं है। लेकिन आप सभी का डिसीज़न समाधानपूर्वक होना चाहिए। नहीं तो फिर हमारे लिए सभी की शिकायत आएगी, और हमारे लिए जिस इंसान की शिकायत आएगी, तो उस इंसान को हमारे लिए अभाव हो जाएगा तो उसका बिगड़ेगा। इसलिए मैं इन सब चीज़ों में नहीं पड़ता। सामने वाले का बिगड़ेगा तो उसकी ज़िम्मेदारी मेरी है। अगर मुझ पर ज़रा भी अभाव आए तो उसका क्या होगा? इसलिए हम कुछ (बाबत में) नियमपूर्वक ही रहते हैं। हम नियम से बाहर नहीं जाते। नियम से बाहर हम नहीं चलते। उसके जो लॉ हैं, वही लॉ है, उसी में रहना पड़ता है।

मन-वचन-काया, भावकर्म-द्रव्यकर्म-नोकर्म, सबकुछ दादा को अर्पण करके, 'मैं अनंत शक्ति वाला हूँ, मैं अनंत ब्रह्मचर्य शक्ति वाला हूँ' ऐसा सब बोल सकते हो। क्योंकि इस विषय में से पार निकलना, यह उम्र गुजारना, यह सब बहुत मुश्किल है। दादा तो, अगर तुम्हें इस तरफ जाना हो तो उसमें मदद करेंगे और शादी करनी हो तो शादी में मदद करेंगे। दादा को इसमें कुछ लेना देना नहीं है। तुम अपना तय करो! तुम में क्या माल भरा हुआ है? मैं कहाँ गहराई में उतरूँ और मेरे पास इतना टाइम भी नहीं है। इसलिए आपकी दुकान का माल आपको पहचानना है। यानी कि सभी को अपने आप समझ लेना है। मैं क्या कहता हूँ कि शादी करने पर भी तुम्हारा मोक्ष चला नहीं जाएगा। शादी नहीं करनी हो तो यह निश्चय मज़बूत करो और इसमें स्ट्रोंग रहो। दो में से एक ओर की एक्ज़ेक्टनेस पर आ जाना चाहिए। वर्ना बाकी सब में तो टकराव होगा।

जो भी विचार आएँ, उन सभी विचारों को देखना। अच्छे-बुरे विचार तो आते ही हैं! जो भरे हैं, वही आते हैं, और जितने

आते हैं उतने चले जाते हैं, साफ करके जाते हैं। इसलिए अगर खराब विचार आएँ तो घबराना मत। पहले तो ब्रह्मचर्य नहीं था, ज्ञान नहीं था तब हर एक बुरे विचार के साथ तन्मयाकार होकर उसी तरह करता था न? अब तन्मयाकार नहीं होते और बस इतना ही है कि बुरे विचार आते हैं। लेकिन उन्हें देखना और जानना है। खराब और अच्छा-गलत भगवान के वहाँ नहीं है। वह सब डिस्चार्ज होता रहता है। वह सारा मन का स्वभाव है। तुम सभी को तो रोज़ इकट्ठे होकर एकाध घंटा ब्रह्मचर्य संबंधित सत्संग रखना चाहिए। हमें तो मोक्ष से काम है न? और हम ऐसी ज़बरदस्ती भी नहीं करते कि तुम्हें शादी करनी है। हमारा किसी तरह का आग्रह नहीं होता। क्योंकि तुम्हारा पिछले जन्म का ब्रह्मचर्य का भाव भरा होगा तो 'शादी करो' हम ऐसा दबाव भी नहीं डाल सकते न! इसलिए हम तो ऐसा कुछ नहीं कह सकते कि 'ऐसा ही करो'। आपकी मज़बूती चाहिए। हम बार-बार आपको विधि कर देंगे और हमारा वचनबल काम करेगा, हेल्प करेगा! इसलिए इस तरफ जाना हो तो इस तरफ, वह तुम्हीं को तय करना है।

प्रश्नकर्ता : वह तय तो कर ही लिया है।

दादाश्री : हाँ, तय किया है और व्रत भी लिया है। लेकिन व्रत में भंग हुआ हो तो आपको पश्चाताप लेना पड़ेगा। अपने यहाँ एक-एक घंटा प्रतिक्रमण करते हैं। मन में ज़रा भी बदलाव हुआ हो, मुँह पर नहीं लेकिन विचार से, और दूसरा कुछ भी नहीं किया हो लेकिन वर्तन में ज़रा सा भी 'टच' हो गया हो, और यों 'टच' होने से आनंद हुआ हो, यों हाथ लगाने से वैसा हो जाए, तो आपको एक घंटा उसका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। यानी ऐसा सब करोगे तो आगे प्रगति होगी और यदि इसमें से पार उतर गए और 35-37 साल के हो गए तो तुम्हारा काम हो जाएगा। मतलब अकाल के ये दस-पंद्रह साल निकालने हैं! और अपना यह ज्ञान है, इसीलिए यह सब कह रहा हूँ न! वर्ना ब्रह्मचर्य

पालन के लिए किसी को नहीं कहता। इस कलियुग में ब्रह्मचर्य तो करने जैसी चीज़ ही नहीं है। इस कलियुग में सर्वत्र जहाँ-तहाँ विचार ही मैले हैं और तुम्हारी तो टोली ही अलग है, इसलिए चल सकता है। तुम सभी तो एक विचार के और तुम सभी साथ में रहो तो तुम सभी को ऐसा ही लगेगा कि अपनी दुनिया बस इतनी ही है, दूसरी अपनी दुनिया नहीं है, शादी वाली दुनिया अपनी नहीं है। अगर दो-तीन शराबी हों तो वे साथ बैठकर पीते हैं और फिर ऐसा समझते हैं कि हम तो तीन ही है, अब कोई है ही नहीं! जैसे-जैसे उन्हें चढ़ती जाती है, वैसे-वैसे फिर क्या बोलता है? मैं, तू और तू! हम तीन ही लोग, बस। इस दुनिया के मालिक हम सब ही हैं।

ज्ञानी मिटाए अनंतकाल के रोग

तुम पवित्र (प्योर, साफ) हो तो कोई नाम देने वाला नहीं है! पूरी दुनिया विरोध करे, फिर भी मैं अकेला (तुम्हारे साथ) हूँ। मुझे पता है कि तुम साफ हो, तो मैं किसी से भी निपट लूँगा, ऐसा हूँ। मुझे शत प्रतिशत भरोसा होना चाहिए। तुम तो दुनिया से नहीं निपट सकोगे, इसलिए मुझे तुम्हारा रक्षण करना पड़ता है। इसलिए मन में घबराना मत, ज़रा भी मत घबराना। हम साफ हैं, तो दुनिया में कोई नाम देने वाला नहीं है! इस दादा की बात दुनिया में कोई भी करे तो दादा दुनिया से निपट लेंगे। क्योंकि बिल्कुल साफ इंसान हैं, जिनका मन ज़रा भी नहीं बिगड़ा है। तुम्हें साफ रहना है। तुम साफ हो तो तुम्हारे लिए ये दादा दुनिया से निपट लेंगे। लेकिन अगर भीतर से तुम मैले हो, तो मैं कैसे निपटूँगा? वर्ना फिर शादी कर लो। दो में से एक डिसीज़न अपने आप ले लो। मैं इसमें हेल्प करूँगा और शादी करोगे तो उसमें भी तुम्हें हेल्प करूँगा। हेल्प करना वह मेरा फ़र्ज़ है। बाद में यदि तुम्हारा निश्चय नहीं डिगेगा तो मैं तुम्हें वाणी का वचनबल दूँगा। इस सत्संग में रहोगे तो तुम यह कर सकोगे, इसकी शत प्रतिशत गारन्टी!

दादा हैं, तब तक सभी रोग निकल जाएँगे! क्योंकि दादा में कोई रोग नहीं है! इसलिए जिसे जो रोग निकालने हों, वे निकल जाएँगे। मुझमें पोल होती तो तुम सब का काम नहीं हो पाता! विषय दोष होना, वह सब से बड़ा जोखिम है! सभी अणुव्रत, सभी महाव्रत टूट जाते हैं! करोड़ों जन्मों के बाद भी विषय छूटे ऐसा नहीं है। यह तो सिर्फ ज्ञानी पुरुष के पास उनकी आज्ञा में रहने से छूट सकता है। और हमें यदि विषय के ज़रा से भी विचार आ रहे होते तो भी आपका विषय नहीं छूटता। लेकिन ज्ञानी पुरुष को कभी विषय का विचार तक नहीं आता। इसलिए जैसा ब्रह्मचर्य पालन करना हो वैसा कर सकोगे। सच्चा भाव है न! सच्चा निमित्त और सच्चा भाव, ये दो यदि मिल जाएँ तो इस दुनिया में उसे कोई नहीं तोड़ सकता।

ज़बरदस्त कृपा पात्र हो सकते हो, ऐसा है।। तुम तुम्हारे घर रहो और दादा उनके घर रहें, फिर भी तुम पर कृपा रह सकती है, लेकिन तार जोड़ने आने चाहिए! एक तार में भी ज़रा सी गलती होगी, तो पंखे को दबाते रहोगे फिर भी पंखा नहीं घूमेगा। इसलिए फ्यूज़ बदल लो! तार में तो ज़्यादा कुछ नहीं बिगड़ने वाला, शायद कभी सड़ जाए, लेकिन फ्यूज़ बदलना पड़ता है। यह तो काम निकाल लेने जैसा अवसर आया है।

इस पतंग की डोर तुम्हारे हाथ में सौंप दी! अब पतंग उलट जाए तो ऐसे डोर खींचना। यह तो जब तक पतंग की डोर हाथ में नहीं थी, तब तक अगर पतंग उलट भी जाए तो हम क्या कर सकते थे? अब तो पतंग की डोर हाथ में आ गई है तो फिर दिक्कत नहीं है।

[2.17]
अंतिम जन्म में भी ब्रह्मचर्य तो आवश्यक

बिना निराई किए हुए खेत

ब्रह्मचर्य को तो पूरी दुनिया ने 'एक्सेप्ट' किया है। ब्रह्मचर्य के बिना तो कभी भी आत्मा प्राप्त हो ही नहीं सकता। जो इंसान ब्रह्मचर्य के विरुद्ध होता है, उसे आत्मा कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता। विषय के सामने तो निरंतर जागृत रहना पड़ता है। एक क्षण भर की भी अजागृति नहीं चलेगी।

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य और मोक्ष का संबंध-साझेदारी कितनी?

दादाश्री : बहुत लेना-देना है। ब्रह्मचर्य के बिना तो आत्मा का अनुभव पता ही नहीं चल सकता न! 'आत्मा में सुख है या विषय में सुख है' यह पता ही नहीं चलेगा न?!

प्रश्नकर्ता : तो फिर जो अब्रह्मचारी मोक्ष में गए हैं, वह कैसे? जो जो मोक्ष में गए, वे सभी ब्रह्मचारी नहीं थे।

दादाश्री : ऐसा कोई नियम नहीं है। ब्रह्मचर्य खुद को रहना चाहिए। और 'वह ज़रूरी है,' ऐसा इसमें वह पॉज़िटिव रहना चाहिए। ब्रह्मचर्य के लिए कभी नेगेटिव रहे और आत्मा प्राप्त हो, यह बात ही गलत है। उसे विषय बिल्कुल भी पसंद नहीं हो, फिर भी करना पड़ता हो तो आत्मा प्राप्त हो सकेगा। बाकी जो विषय के तरफदार होते हैं, उन्हें आत्मा प्राप्त हो ही नहीं सकता। विषय के सामने तो निरंतर जागृत रहना पड़ता है और आत्मा प्राप्त हुए बिना जागृति आ ही नहीं सकती। जैन साधुओं को

जागृति रखनी नहीं पड़ती फिर भी ब्रह्मचर्य रहता है क्योंकि सिर्फ वे ही गेहूँ साफ करके लाए थे। वैसे गेहूँ खेत में बोने के बाद उनके लिए खेत में निराई के लिए कुछ बचता ही नहीं है न! जबकि इन सभी लड़कों ने तो सभी तरह के अनाज इकट्ठे करके डाल दिए थे। इसलिए इन्हें अब सिर्फ गेहूँ रहने देना है और बाकी सब की निराई कर देनी है। तो अब निराई करते-करते दम निकल रहा है। और इन्हें तो रोज़ निराई करनी पड़ती है, वर्ना फिर गेहूँ के साथ बाकी सभी उग आता है। कोदो उगता है, एरंड उगता है, सबकुछ होता है। इन्होंने आत्मा प्राप्त किया है इसलिए जागृति खड़ी हो गई। इसलिए अब निरंतर जागृत रह सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : हमारे जैसे जल्दी निराई नहीं कर सकते। क्योंकि हम घास लेकर आए है।

दादाश्री : तुम्हें निराई करने की ज़रूरत ही नहीं है। तुम्हें कहीं बोम्बे सेन्ट्रल नहीं जाना है। तुम्हें तो माउन्ट आबू घूमने जाना है न? जिसे बोम्बे सेन्ट्रल जाना है, उसकी बात अलग है। जिसे माउन्ट आबू घूमने जाना हो उसे किसी भी चीज़ की निराई करने की ज़रूरत नहीं है।

प्रश्नकर्ता : कुछ पौधे तो ऐसे होते हैं कि उनके लिए सख्त परिश्रम करना पड़ता है। तब क्या करना चाहिए?

दादाश्री : उससे अच्छा तो निराई रहने देना और अंदर जो उगा वही सही। बहुत निराई करनी हो तो कहाँ माथा पच्ची करेंगे? निराई करने की भी हद होनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : फिर भी निराई करनी हो तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : जोत देना, उखाड़ देना। बाद में फिर धान के पौधे लगा देना।

ये जो त्यागी ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, वे पहले साफ करके

लाए हैं। इसलिए उन्हें निराई नहीं करनी पड़ती। नींद में भी ब्रह्मचर्य चलता रहता है।

नूर झलकता है ब्रह्मचर्य का

सचमुच में ब्रह्मचर्य तो वह है कि चेहरे पर ज़बरदस्त नूर हो। ब्रह्मचारी पुरुष तो कैसा होता है? इन लड़कों में कहाँ तेज दिखता है? क्योंकि ये सभी 'ऑवरड्राफ्ट वाले' हैं। इसलिए जितनी बैंकों ने उधार दिया, उतना सभी कुछ लेकर आए है। तो अभी जो ब्रह्मचर्य पालन कर रहे हैं, बल्कि वह सारा तो बैंकों में भर-भरकर थक गए है। अभी तक बैंकों में 'पार वैल्यू' नहीं आई है। 'पार वैल्यू' होने के बाद चेहरे पर लाइट आएगी। उस लाइट को आते-आते तो बहुत टाइम लगेगा। फिर भी इन्हें चौबीसो घंटे जागृति रहती है। क्योंकि आत्मा प्राप्त हुआ है, इसलिए आत्मा की जागृति वाले हैं। और इस ब्रह्मचर्य के लिए भी जागृति चाहिए। अगर आत्मा की जागृति नहीं हो और ज़रा सा झोंका आ जाए तो चलेगा, लेकिन ब्रह्मचर्य के लिए तो ज़रा सा भी झोंका खाए तो चलेगा ही नहीं न! चारों तरफ से साँप घुस गए, जिन्होंने ऐसा देखा तो उन्हें नींद नहीं आती। जिन्होंने नहीं देखा, वे सो जाते हैं। साँप देख लेने के बाद कैसे सो सकते हैं?

ये लड़के दीक्षा लेने की भावना वाले हैं। अंदर खुद का मोक्ष तो हो ही गया है। इसलिए उसे ढूँढने की तो इच्छा होती ही नहीं न! खुद का मोक्ष हुआ हो तो जगत् कल्याण करने की भावना होती है, नहीं तो अगर खुद का ही कल्याण नहीं हुआ हो, वहाँ जगत् कल्याण करने की भावना कैसे होगी? ये ब्रह्मचारी क्या कहते हैं कि, 'हमारा तो कल्याण हो गया, अब हमें जगत् का कल्याण करना है, तो हमें क्या करना चाहिए?' तब मैंने उनसे कहा, 'अब शादी कर लो।' तब वे कहते हैं कि 'नहीं, हमें शादी तो करनी ही नहीं है। शादी करने से जगत् का कल्याण करने में

दिक्कत आएगी, ऐसा है।' तब मैंने उनसे कहा कि, 'तो तुम ब्रह्मचर्य पालन करो तो तुम जगत् का कल्याण कर सकोगे।'

दोनों में से उच्च कौन सा?

प्रश्नकर्ता : इतने-इतने से लड़के ब्रह्मचर्य में क्या समझ सकते हैं? ब्रह्मचर्य तो एक उम्र के बाद ही आ सकता है न?

दादाश्री : नहीं, ये लोग तो ब्रह्मचर्य के बारे में सही तौर पर समझ गए है! ऐसा है न, कि यह तो हमें ऐसा लगता है, लेकिन तेरह साल के बाद वह ब्रह्मचर्य के बारे में समझने लगता है। क्योंकि जब तेरह साल का होता है, तभी से इमोशनल हुए बिना रह ही नहीं सकता। फिर वह मोशन में नहीं रह सकता।

प्रश्नकर्ता : अब, दो तरह के ब्रह्मचर्य है। एक अपरिणित ब्रह्मचर्य दशा और दूसरा शादी करने के बाद पालन करे, वह। इनमें से उच्च कौन सा?

दादाश्री : शादी करके पालन करना उच्च कहलाता है। लेकिन शादी करके पालन करना मुश्किल है। अपने यहाँ कई शादी करके ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, लेकिन वे चालीस की उम्र से ज़्यादा वाले हैं।

प्रश्नकर्ता : तो फिर शादी किए बिना जो ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, वह 'अनटेस्टेड' कहलाएगा न?

दादाश्री : नहीं। वह 'अनटेस्टेड' नहीं है। उसे खुद को ही शादी करने में रुचि नहीं होती। उसका कोई क्या कर सकता है? जिसे शादी करने में रुचि ही नहीं हो, उसके साथ हम ज़बरदस्ती कैसे कर सकते हैं? ज़बरदस्ती करनी चाहिए? मैं तो सभी से क्या कहता हूँ कि आप दो शादियाँ करो, आपको मोक्ष में दिक्कत नहीं आएगी। मेरे द्वारा जो ज्ञान दिया गया है, वह ज्ञान ही आपको मोक्ष में ले जाएगा, ऐसा है, लेकिन सिर्फ हमारी आज्ञा का पालन करना।

शादी करना तो जोखिम ही है न! लेकिन अंतिम जन्म में आखिरी दस-पंद्रह साल तक अलग रहना पड़ता है, जबकि ये लोग पहले से ही रह रहे हैं, इसमें क्या गलत कर रहे हैं? पहले से अलग नहीं रह सकते, उनके लिए यह रास्ता है कि शादी करो। और क्या हो सकता है? और ऐसा नियम है ही नहीं कि शादी करने वाले का मोक्ष नहीं हो सकता और अपरिणीत का ही मोक्ष होगा। बल्कि चारित्र वाले का मोक्ष होता है। शादी करने वाले को भी अंत में दस-पंद्रह साल छोड़ना पड़ेगा। सभी से मुक्त होना पड़ेगा। महावीर स्वामी भी आखिरी बयालीस साल तक मुक्त रहे थे न! इस संसार में स्त्री के संग तो अनगिनत परेशानियाँ है। जोड़ी बनी कि परेशानियाँ बढ़ती हैं। दोनों के मन कैसे एक हो सकेंगे? कितनी बार मन एक रहेंगे? चलो, कढ़ी दोनों को एक सी पसंद आई, लेकिन फिर सब्ज़ी में क्या? वहाँ पर मन एक हो नहीं पाता और दिन बदलता नहीं। जहाँ मतभेद हो, वहाँ सुख नहीं होता।

जिनके विषय छूट गए, उनके मज़े हैं! उस आनंद को भी वैसे ही लूटना होता है न! वह भी (अरे!) अपार आनंद! वह आनंद तो, दुनिया ने चखा ही नहीं हो, वैसा आनंद उत्पन्न हो जाता है। पैंतीस साल का पीरियड निकाल देने के बाद अपार आनंद उत्पन्न होता है। जो विचारक हो, उसे तो विषय अच्छा ही नहीं लगेगा न? इन ब्रह्मचारियों का उदय आया है, वही धन्यभाग्य है न? सही तरीके से पार करना पड़ता है। पहले खुद पर श्रद्धा होनी चाहिए। बाकी विषय की ज़रूरत तो, जो सुखी हो उसे होती ही नहीं है। बहुत मानसिक मेहनत वाले को विषय की ज़रूरत है। जो बहुत मेहनत करते हों, उन्हें खूब जलन उत्पन्न होती है। वह सहन नहीं होती, इसलिए विषय में पड़ते हैं।

मैं इन सभी लड़कों को समझाता हूँ कि शादी के बाद फँसाव होगा। फिर आजकल के लड़के ऐसे हैं कि बीवी के सामने

उनका ज़रा भी 'प्रभाव' नहीं पड़ता। जिसका प्रभाव पड़ता हो, वह तो अगर खुद कुछ भी नहीं बोले फिर भी बीवी को घबराहट हो जाती है। जबकि यहाँ तो बीवी का प्रभाव पड़ता है। लेकिन जिसके मन में ऐसे भाव हों कि मुझे शादी के बिना ही चलेगा ऐसा है, जिसका ऐसा स्ट्रोंग माइन्ड हो तब वह ब्रह्मचर्य पालन कर सकता है। इसमें सतही तौर पर किया गया नहीं चलेगा। इस संसार में तो दुःख है, इसलिए मुझे शादी नहीं करनी है, भय के मारे ऐसा बोले तो वह नहीं चलेगा।

चारित्रबल से कांपती हैं स्त्रियाँ

अभी तो ये शादी के लिए क्यों मना करते हैं? भगेडू वृत्ति, भाग छूटो, वर्ना फँस जाएँगे!

प्रश्नकर्ता : ऐसा ही होना चाहिए न! विषय से संबंधित और इस संसार से संबंधित, स्त्री से संबंधित तो भगेडू वृत्ति ही होनी ज़रूरी है न?

दादाश्री : यानी कल यदि स्त्री हाथ से हाथ मिलाए तो क्या रो पड़ना चाहिए?

प्रश्नकर्ता : लेकिन कैसे भी बचकर भाग निकलने का रास्ता ढूँढकर निकल जाना है, रास्ता ढूँढकर भाग तो जाना चाहिए न?

दादाश्री : नहीं, लेकिन हाथ पकड़ा तो क्या हो गया? बल्कि वह डरे हमसे। मतलब हाथ पकड़ने में उसे घबराहट हो, उसे डर लगे। यह तो इसे डर लगता है। 'अब क्या होगा, अब क्या होगा?' अरे क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : 'मुझे कुछ नहीं होगा।' ऐसे निडर तो नहीं हो सकते न, स्त्री हाथ पकड़े तो?

दादाश्री : उसमें तो चारित्रबल चाहिए। यों ऐसे नहीं चलेगा

कि कोई हाथ पकड़े तो डर जाए। उसमें तो चारित्रबल चाहिए। देखते ही बेचारी को घबराहट हो जाए। वह स्त्री समझे कि अपने से कोई सवाया मिला।

प्रश्नकर्ता : तो उनमें चारित्रबल नहीं होता? इन भगेडू वृत्ति वालों में?

दादाश्री : कैसा चारित्रबल? चारित्र बल वाले होते होंगे? क्या वे ऐसे होते होंगे?

प्रश्नकर्ता : एक तरफ तो आप कहते हैं कि हाथ पकड़े, तब रोना नहीं है।

दादाश्री : कैसे रह सकता है? इन्हें तो अंदर डर लगता है, यों घबराहट हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : एक तरफ चारित्रबल नहीं आया और दूसरी तरफ उनकी यह भगेडू वृत्ति है, तो क्या वह ठीक है?

दादाश्री : कौन मना कर रहा है? लेकिन यदि भगोड़ वृत्ति के बिना हो न, तब खरा कहलाएगा।

प्रश्नकर्ता : तो इन भगेडू वृत्ति वाले को खुद को कैसे पता चलेगा कि चारित्रबल आ गया?

दादाश्री : हाथ पकड़े तब। आप अकेले हों और हाथ पकड़े तब घबराहट नहीं हो तो समझना कि चारित्रबल आ गया। यह तो घबराहट, घबराहट, घबराहट...

नहीं डालना चाहिए दबाव ब्रह्मचर्य के लिए...

ये सभी लड़के ब्रह्मचारी रहने वाले हैं। मैंने इनसे कहा कि शादी कर लो। तब लड़के कहते हैं कि, 'नहीं, हमें ब्रह्मचारी रहना है।' अब, शादी के लिए हम उन पर दबाव भी नहीं डाल सकते क्योंकि उन्होंने पहले भावना की हुई है। दबाव डालना, वह भी

गुनाह है और अगर कोई शादी कर रहा हो और उसे शादी के लिए मना करें तो वह भी गुनाह है।

प्रश्नकर्ता : आपको ऐसा लगे कि इसे शादी करने की ज़रूरत है, तो क्या आप उसे वैसा कहेंगे?

दादाश्री : खुशी से। मैं तो उसे कहूँगा कि तू दो शादियाँ कर।

प्रश्नकर्ता : नहीं, ऐसे नहीं। आपको ज्ञानदृष्टि से दिखता है? आप ऐसा देख सकते हैं कि इसे शादी करने की ज़रूरत है?

दादाश्री : नहीं। ज्ञानदृष्टि से मैं कुछ नहीं देखता। मैं इसमें समय नहीं बिगाड़ता और ज्ञानदृष्टि इस तरह इस्तेमाल करने जैसी है भी नहीं। इसका मतलब क्या हुआ कि भविष्य देखने की आदत पड़ गई और जिसे भविष्य देखने की आदत पड़ जाए, वह तो साधु बाबा कहलाता है। फिर यहाँ भी लोग पूछने आएँगे कि मेरे बेटे के घर बेटा होगा या नहीं? अतः हम इस झंझट में नहीं पड़ते। मुझे तो लोग पूछने आते हैं तो मैं कह देता हूँ कि भविष्य के बारे में तो मैं जानता ही नहीं। कल मेरा क्या होगा? यह भी मैं नहीं जानता!

राजा-रानी का तलाक, शादी से पहले

एक भाई आया था, कह रहा था, 'मैं शादी नहीं करूँगा।' फिर दो-तीन साल ब्रह्मचर्य पालन किया। फिर एक दिन लड़की को लेकर आया। तब कहने लगा, 'दादाजी, आप ऐसी विधि कर दीजिए कि हम दोनों की शादी हो जाए।' 'अरे, ब्रह्मचर्य लेना था। यह क्या कर रहा है तू?' तब उन लोगों ने क्या कहा?

प्रश्नकर्ता : दादाजी के कहते ही उसी क्षण कहा, 'आप कहो तो आज से अलग।'

दादाश्री : 'अब आप फिर से हम दोनों की ब्रह्मचर्य की विधि कर दीजिए' कहते हैं। अरे, शादी का जोश चढ़ा था, वह

उतर कैसे गया? कितने ही दिनों का जोश चढ़ा होगा! हम चाय पीने का सोचकर गए हों तो भी चाय का विचार एकदम बंद नहीं हो जाता जबकि वह तो कहने लगा, 'हमें ब्रह्मचर्य की विधि कर दीजिए।' दोनों खरे निकले। मैंने कहा, 'अब शादी नहीं करनी है? अरे, करो न! मुझे हर्ज नहीं है। मुझे क्या हर्ज हो सकता है?' तुम तो पहले मना कर रहे थे इसलिए तुम्हें सावधान किया कि, 'भाई, मना कर रहा था, अब फिर से व्यापार क्यों शुरू कर रहा है?' लेकिन फिर भी हम एतराज़ नहीं उठाते। किसी की बेटी का भाग्य खिला हो बेचारी का, उसने पीपल पूजे हों। ऐसा पढ़ा-लिखा पति कहाँ से मिलेगा? कितने ही पीपल पूजे होंगे!

प्रश्नकर्ता : यहाँ पर तो छूटने का पूरा विज्ञान सीखना है और बाद में फिर से उस फँसाव में तो जाएँगे ही नहीं न! यहाँ पर तो ब्रह्मचर्य का पूरा परिचय प्राप्त करके, विषय से हमेशा के लिए मुक्ति मिले, ऐसी आराधना करना चाहते हैं।

दादाश्री : लोग यह सब समझ गए हैं। बहुत पक्के हो गए हैं, हं! मैं तो सिक्के को जाँचकर देख लेता हूँ, कच्चे हैं या नहीं? नहीं निकलते कच्चे। यह भी कच्चा नहीं पड़ता। 'कच्चा है', ऐसा पता चले तो तुरंत यहाँ किसी जैन की बेटी हो तो शादी करवा देंगे।

प्रश्नकर्ता : यहाँ तो विषय का तो है ही, उस ओर तो जाने जैसा है ही नहीं। लेकिन मोक्षमार्ग में बाधक अन्य कोई दोष होते हों, गलती से भी उन दोषों में स्लिप न हो जाएँ, ऐसा सब मज़बूत कर लेना है।

दादाश्री : वहाँ पर तो दोष चलेंगे ही नहीं न! अंधेर राज थोड़े ही है? आप जैसे बड़ी उम्र वालों की सेफ साइड हो गई क्योंकि आपको परेशान करने वाला कोई रहा नहीं न! इन्हें तो अभी कितने ही जोखिम आएँगे।

प्रश्नकर्ता : वह तो पता नहीं है, लेकिन इसमें रहना है। इस ज्ञान में, आज्ञा में, इस साइन्स में ही रहने जैसा है।

दादाश्री : तो रह पाओगे।

प्रश्नकर्ता : वे कैसे-कैसे जोखिम आते हैं?

दादाश्री : उनका दस मील का रास्ता बाकी रहा। आपके सात सौ मील बाकी है। कितने ठग मिलेंगे, कितने फँसाने वाले मिलेंगे!

प्रश्नकर्ता : तो उसमें सेफसाइड का रास्ता कैसे निकालें? क्या उसमें जोखिम सामने आते हैं?

दादाश्री : वह तो अगर इस सत्संग में पड़ा रहेगा तो चलेगा, कुसंग में नहीं जाए तो चलेगा।

प्रश्नकर्ता : एक ही उपाय है।

दादाश्री : यही बातें मिलती रहें, जहाँ जाओ वहाँ। कुसंग की बात ही नहीं आए तो तुरंत छुटकारा हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : यही सब से बड़ा उपाय है। सत्संग का ही अनुसंधान, पूरी तरह से!

दादाश्री : सत्संग के संसर्ग में रहना पड़ेगा! झुंड में हों तब, वहाँ पर छूटना हो फिर भी नहीं छूट पाएँगे।

व्रत की विधि से, टूटते हैं अंतराय

इस लड़के को ब्रह्मचर्य के भाव हैं। यह भाव तो गलत नहीं है न? ऐसे भाव वाले को हमें क्या करना चाहिए? हमें उन्हें आधार देना चाहिए या आधार ले लेना चाहिए?

प्रश्नकर्ता : आधार देना चाहिए।

दादाश्री : कोई ऐसे भाव कर रहा हो, फिर भले ही कुछ भी करे, फिर भी हम उसे आधार देने के लिए तैयार हैं क्योंकि हमारी इच्छा ही ऐसी है। अब आप ऐसे भाव करोगे तो आपको सभी संयोग भी वैसे ही मिलेंगे। हम तो बार-बार इन लड़कों का टेस्ट लेते रहते हैं। उन्हें लालच देते हैं कि 'कर ले न शादी अब, छोड़ न, शादी करने में तो बहुत मज़ा है।' उनका टेस्ट लेता हूँ कि उनका कच्चा है या पक्का है!

यह ब्रह्मचर्य व्रत किसी को नहीं दे सकते। यह तो हम एकाध साल के लिए या दो साल के लिए ही देते हैं। हमेशा के लिए देने के लिए तो मुझे कितनी सारी परीक्षा लेनी पड़ती है! हमारा वचनबल ब्रह्मचर्य पालन करवाए ऐसा है, सभी अंतराय तोड़ देता है, तेरी इच्छा होनी चाहिए। तेरी इच्छा प्रतिज्ञा में परिणमित होनी चाहिए। हाँ, बाद में यदि तुझे कोई अंतराय आएगा तो उसे हमारा वचनबल तोड़ देगा। कोई एक बड़ा पानी का नाला हो और कोई उसे पार नहीं कर पा रहा हो तो उसके पीछे जाकर मैं उसे कहता हूँ कि, 'कूद जा' तो फिर वह कूद जाता है। यों खुद कूद सके, ऐसी शक्ति नहीं हो फिर भी कूद जाता है क्योंकि इस शब्द से उसे शक्ति प्राप्त होती है। उसी तरह अभी इन लड़कों को ब्रह्मचर्य लेना है, उन सब में हम शक्ति डालते हैं, उससे शक्तिपात होता है लेकिन यह शक्तिपात अलग प्रकार का है। जगत् में जो शक्तिपात होते हैं, वे सब भौतिक हैं। वास्तव में शक्तिपात जैसी कोई चीज़ है ही नहीं। यह तो सामने वाले को ऐसा लगता है कि मुझे शक्ति प्राप्त हो गई। यह सब नियम से ही है। कोई किसी को देता नहीं और कुछ नहीं देता। यह तो खुद की ही शक्ति अनावृत होती है। ज्ञानी के बोलने से शक्ति अनावृत हो जाती है इसलिए खुद के मन में ऐसा लगता है कि मेरे अंदर कुछ डाला। ये सभी निर्बल ही थे न! ये अभी कितने आनंद में है, मानो दादाने शक्ति भर दी!

साधना, 'संयमी' के संग

प्रश्नकर्ता : इन सभी संयमी लोगों को साथ रहना हो, तब तो वह और कहीं जाएगा ही नहीं।

दादाश्री : हाँ, ऐसा भी हो जाएगा लेकिन तब तक विकसित करने की ज़रूरत है। अभी संभाल कच्ची है, इसीलिए वैसा नहीं हो रहा है न? बिना विकसित हुए तो वहाँ पर सब गलत कहलाएगा। मार खाए बिना वहाँ जाएगा तो गड़बड़ हो जाएगी। खूब मार खाई हो, अच्छी तरह से गढ़ चुका हो, उसके बाद वहाँ जाए तो दिक्कत नहीं आएगी।

इन लड़कों को हम जो यह ब्रह्मचर्य संबंधित ज्ञान देते हैं ताकि अभी से उनकी लाइफ बिगड़ न जाए और यदि बिगड़ी हुई हो तो उसे कैसे सुधारे और सुधरी हुई फिर से नहीं बिगड़े और उसकी कैसे रक्षा करे, उतना हम उन्हें सिखाते हैं।

हम तो सभी से कहते हैं कि शादी कर लो। बाकी शादी करना या नहीं करना, वह उनके हाथ की बात नहीं है या मेरे हाथ की बात नहीं है या आपके हाथ की बात नहीं है। इन्होंने तो ब्रह्मचर्य को पकड़ लिया है, तो क्या उनके हाथ में यह सत्ता है? कल सुबह यदि फिर से मन बदल जाए तो शादी कर ले, भले ही कुछ भी कर ले, फिर भी 'व्यवस्थित' के आगे कोई कुछ नहीं कर सका है। फिर भी अभी जो इच्छा हो रही है न, उसमें किसी को देखादेखी से इच्छा होती है और किसी को सच्ची इच्छा भी हो सकती है लेकिन 'व्यवस्थित' जो करता है, उसके लिए फिर कोई उपाय ही नहीं है न? इसलिए हम किसी की ज़िम्मेदारी नहीं लेते। हम किसी की ज़िम्मेदारी लेते ही नहीं। हम तो उन्हें मार्ग दिखाते हैं। जिस रास्ते पर चलना हो, वह मार्ग देते हैं। बाकी, हम वचनबल देते हैं लेकिन अगर अंदर उसी का ठिकाना नहीं हो तो उसके लिए हम क्या कर सकते हैं? इस वाणी के तो हम मालिक नहीं है, इस रिकॉर्ड में जो माल था

उतनी ही वाणी निकलती है। उसमें हमें कुछ लेनादेना नहीं है और इसमें हमें कुछ पड़ी भी नहीं है।

हम तो ऐसा भी नहीं कह सकते कि, 'भाई, तू शादी मत करना।' ऐसा दबाव नहीं डाल सकते। हम इतना कहते हैं कि 'तू शादी कर ले।' क्योंकि वह क्या माल भरकर लाया है, उसे वह खुद जानता है। उसे अंदर इस ओर का आकर्षण रहा करता है क्योंकि 'कमिंग इवेन्ट्स कास्ट देयर शैडोज़ बिफोर।' इसलिए खुद को पता चल जाता है कि 'उसके शैडोज़ क्या है?' इसलिए हम कोई दबाव नहीं डालते।

अब इसमें परेशानी कहाँ आती है कि इसमें अगर नकलें होने लगें तो। उसमें उनसे कहता हूँ कि 'नकल करोगे तो मार खाओगे, इसमें नकल मत करना।' इसलिए मैं इन्हें सावधान करता रहता हूँ कि, 'भाई, यदि इसमें नकल करोगे तो हम छूएँगे नहीं, हम एक्सेप्ट भी नहीं करेंगे, असली को एक्सेप्ट करेंगे।' नकली होगा तो फिर ज़िम्मेदारी उसकी। हमें तो असली लगे तभी कुछ ज़िम्मेदारी लेते हैं। लेकिन हमें ज़रूरत ही कहाँ है? हम तो मोक्ष का मार्ग दिखाने आए हैं। हमने उसे आत्मज्ञान दिया और कहा, 'आज्ञा पालन करना।' अत: हमारी ज़िम्मेदारी का वहाँ पर एन्ड आ जाता है।

प्रश्नकर्ता : वह नकल कर रहा है या असल है, वह कैसे परख सकते हैं? वह खुद नहीं परख सकता, तभी तो आपसे कहते हैं कि हमारी परख कर दीजिए।

दादाश्री : मैं कहाँ उसमें हाथ डालूँ? हम हाथ नहीं डाल सकते। हमें तो अन्य कई तरह के उपयोग रखने पड़ते हैं। हमारे तो इतने सारे अन्य उपयोग होते हैं कि अगर ऐसी बातों में मैं उपयोग रखने जाऊँ तो इसका अंत ही नहीं आएगा न! हम तो, उसका अहित नहीं हो, अंत तक उसके पीछे हमारी वैसी हेल्प रहती ही है। हमारा तो चारों ओर से रक्षण रहता ही है।

उसने अगर अंदर ऐसा माल भरा हुआ हो तो मैं उससे ऐसे भी नहीं कह सकता कि तू शादी कर। उससे दोनों का बिगड़ेगा। दोनों का नहीं, घर के सभी लोगों का बिगड़ेगा। हमें तो एट-ए-टाइम सभी तरह के विचार आते हैं न! वर्ना मेरे लिए इन सब का कब अंत आएगा? मुझे तो आपको मोक्ष में ले जाने का रास्ता दिखाना है। हम तो दूसरी ओर से हेल्प करने के लिए भी तैयार है। जब असल में वैसा हो जाएगा, तब मुझे पता चल जाएगा। दो-पाँच साल बाद उसका भी पता चल जाएगा न? अभी तो 'ऑन ट्रायल' रखा हुआ है। हाँ, असली हो जाएगा तब मुझे पता चल जाएगा। मुझे तो, कोई ज़रा भी अंदर कच्चा पड़ जाए तो पता चल जाता है और जगत् क्या छोड़ देगा? खुद की प्रकृति क्या छोड़ देगी? इसलिए हम ऑन ट्रायल देखते हैं।

अक्रम में ऐसे आश्रम की ज़रूरत

बाकी जिसे ब्रह्मचर्य व्रत लेना ही है तो उसे अब्रह्मचारी के साथ नहीं रहना चाहिए। वह 'टच' नहीं रहना चाहिए। उन्हें उनके जैसे ब्रह्मचारी के ही टच में रहना चाहिए। इसलिए उनकी यह बात तो सही ही है न, कि सब साथ में मिलकर रहे?

प्रश्नकर्ता : लेकिन अब्रह्मचारियों के साथ ही रहकर जब ब्रह्मचर्य व्रत पालन करे, तभी खरा है न? वही उसका टेस्ट है न?

दादाश्री : नहीं। हम वैसा नहीं कह सकते और वैसा नियम भी नहीं है। प्रकृति का नियम मना करता है। इतना टेस्टेड इंसान, वह तो फिर भगवान ही कहलाएगा न?

प्रश्नकर्ता : इनका तो पूरा समूह इकट्ठा हो जाएगा फिर।

दादाश्री : यों ही कुछ होता है? इसके पीछे 'व्यवस्थित' है। 'व्यवस्थित' का नियम तो है न? यह 'व्यवस्थित' कैसा है कि जो रोज़ यहाँ ब्रह्मचर्य का कार्य कर रहा हो और तीन दिनों

में 'व्यवस्थित' ऐसा भी आ जाए कि शादी कर ले। अतः यह 'व्यवस्थित' छोड़ता नहीं है। मेरे पास चारों ओर का हिसाब है। इसलिए ऐसा कोई डर मत रखना। 'व्यवस्थित' पर छोड़ दो न! 'व्यवस्थित' से बाहर कुछ भी नहीं होने वाला, इतना तो तुम्हें भरोसा है न? 'व्यवस्थित' पर थोड़ा बहुत तो भरोसा हुआ है न?

प्रश्नकर्ता : पूरी तरह से।

दादाश्री : अपने मार्ग में आश्रम जैसी किसी चीज़ की ज़रूरत ही नहीं है। लेकिन क्योंकि ये ब्रह्मचारी बने हैं, इसलिए इन्हें ज़रूरत है। बाकी अपने ज्ञान में तो भवन की भी ज़रूरत नहीं और किसी की भी ज़रूरत नहीं है। जहाँ हो, वहीं पर सत्संग कर लें और न हो तो बाहर बगीचे में पेड़ के नीचे सत्संग कर लें। लेकिन ये तो ब्रह्मचर्य पालन करने वाले बने, इसलिए यह प्रश्न हुआ कि, 'ब्रह्मचर्य पालन करना', घर में रहकर कोई उसका पालन नहीं कर सकता। वह तो ब्रह्मचारियों का गुट अलग ही होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : उन्हें वातावरण की ज़रूरत है?

दादाश्री : हाँ, वातावरण की ही ज़रूरत है। वातावरण से ही ब्रह्मचर्य पालन किया जा सकता है और अब्रह्मचर्य का मुख्य कारण भी वातावरण ही है। बाकी आत्मा वैसा नहीं है, यह तो सब वातावरण का असर है। इसलिए ब्रह्मचर्य साइकोलॉजिकल इफेक्ट है और अब्रह्मचर्य भी साइकोलॉजिकल इफेक्ट है लेकिन अब्रह्मचर्य का साइकोलॉजिकल इफेक्ट बहुत काल से गाढ़ हो गया है, इसलिए उसे पता नहीं चलता कि यह साइकोलॉजिकल इफेक्ट है।

ब्रह्मचर्य के बिना नहीं जा सकते मोक्ष में कभी

आज से चालीस साल पहले, मुझे एक अविवाहित इंसान मिले थे, उन्हें कोई औरत नहीं मिली थी। पहले ऐसा ज़माना था कि अविवाहित भी मिलते थे। तो मैंने उनसे पूछा कि, 'विषय में

सुख है क्या?' तब कहने लगे कि, 'उसके जैसा सुख कहीं है ही नहीं' अरे तेरी औरत नहीं है, फिर क्यों तू इसमें सुख मानकर बैठा है? कभी अगर खाना मिला हो तो उसमें उसका अभिप्राय रहा करता है, उसके बजाय अगर वह अभिप्राय बदल जाए तो हर्ज नहीं है। उस अभिप्राय का रहना, वह भयंकर गुनाह है। यह विषय तो सब से खराब चीज़ है, ऐसा निरंतर अभिप्राय रहेगा तो आपका आज का गुनाह थोड़ा-बहुत चौदह आने जितना माफ हो जाएगा। लेकिन जिसे ऐसा अभिप्राय बरतता है, कि विषय में कोई हर्ज नहीं है तो वह बेचारा तो मारा ही गया! क्यों मारा जाएगा कि अभी भी उसे अभिप्राय है कि इसमें कोई हर्ज नहीं है।

ये ब्रह्मचारी लड़के मुझसे कह जाते हैं कि अभी भी हमें तो अंदर ऐसे खराब विचार आते हैं और ऐसा सब होता हैं। तब मैंने कहा कि इसके लिए प्रतिक्रमण करना, लेकिन इसके लिए बहुत परेशान मत होना क्योंकि भगवान तो क्या कहते हैं कि अभिप्राय अब्रह्मचर्य का है या ब्रह्मचर्य का? ब्रह्मचर्य पालन करना अच्छा है या नहीं? तब जो लोग ऐसा कहते हैं कि 'ब्रह्मचर्य तो हम से नहीं हो सकेगा,' तो उन्हें एक ओर बिठा देते हैं और जो कहते हैं कि 'हमें अब्रह्मचर्य बिल्कुल भी नहीं चलेगा।' उन्हें दूसरी ओर बिठा देते हैं। इस तरह दो ही विभाग करते हैं। तुम्हें ब्रह्मचर्य का अभिप्राय रहता है इसलिए तुम ब्रह्मचर्य विभाग में बैठ गए।

अब तुम्हें सभी संसारी विचार आएँ तब भगवान क्या कहते हैं कि 'तुम्हें क्या पसंद है?' तब कहते हैं कि 'ब्रह्मचर्य।' इसलिए अब तुम ब्रह्मचर्य विभाग में बैठे हो लेकिन बाद में ब्रह्मचर्य का अभिप्राय बदल नहीं जाना चाहिए। यानी ब्रह्मचर्य के विरुद्ध होने के विचार आएँ, वहाँ तक मत पहुँचना। इसीलिए उन विचारों पर कंट्रोल रखना। अतः मुख्यतः तो तुम्हारा अभिप्राय नहीं बदलना चाहिए। मैं क्या कहना चाहता हूँ, वह तुम्हारी समझ में आया न?

प्रश्नकर्ता : हाँ। उगता और ढलता, ये दो भेद पड़ जाने के बाद कोई दिक्कत नहीं। उसके बाद विचारों का संघर्ष नहीं होगा।

दादाश्री : अब ऐसा कोई सिखाता ही नहीं है न! मैं यह महत्वपूर्ण बात बता रहा हूँ। इसमें संघर्षण नहीं होगा और काम हो जाएगा।

मन बिगड़े तब

प्रश्नकर्ता : आपका 'ज्ञान' लेने के बाद ब्रह्मचर्य लें तो अच्छा है न?

दादाश्री : ये सभी लड़के यहाँ बैठे रहते हैं, ये 'स्वरूप ज्ञान' में भी हैं और ब्रह्मचर्य में भी हैं। हर तरह से उन्हें सुख रहता है। 'ज्ञान' के साथ ब्रह्मचर्य हो, उसकी तो बात ही अलग है न! अत: ब्रह्मचर्य कैसा होना चाहिए? मन-वचन-काया से होना चाहिए। मन में विषय से संबंधित विचार तक नहीं आना चाहिए और ज़रा सा भी विचार आए तो तुरंत ही प्रतिक्रमण कर लेते हैं। ये सभी लड़के मन-वचन-काया से संपूर्ण ब्रह्मचर्य पालन करते हैं। विचार तो आते ही हैं इंसान को। जो विचार आते हैं, वे डिस्चार्ज हो रहे हैं। अत: खुद की इच्छा के विरुद्ध आते हैं, लेकिन विचार से जो दाग़ लगे उन्हें, हमने जो साबुन दिया है उससे धो देते हैं।

प्रश्नकर्ता : बार-बार दाग़ धोएँगे तो कपड़ा फट जाएगा न?

दादाश्री : नहीं, हमारा साबुन ही ऐसा होता है कि कपड़ा फट नहीं जाता। दोष होते ही 'शूट ऑन साइट' हो जाता है!

प्रश्नकर्ता : कई लोग ब्रह्मचर्य व्रत की आज्ञा लेते हैं, लेकिन मन बिगड़ता रहे तो उसका कोई अर्थ ही नहीं न?

दादाश्री : मन बिगड़ा कि सबकुछ बिगड़ा। फिर भी ये

सभी बहुत अच्छा कर रहे हैं। आज्ञा का जितना पालन किया, उतना तो मन बिगड़ना रुक गया! यह ज्ञान ऐसा है कि इससे सूक्ष्म ब्रह्मचर्य का पालन किया जा सकता है क्योंकि मन सुख खोजता है न? यह ज्ञान सुख वाला है, इसलिए ये सब लड़के मज़े करते हैं न? इन्हें क्या होता है कि जवानी है और भोजन खाते हैं, उस भोजन का असर होता है या नहीं? जिसने शादी की हो और उसे 'इफेक्ट' हो तो उसमें हर्ज नहीं है। लेकिन जिसने शादी नहीं की है उसका क्या होगा? इसलिए ये लोग डरते-डरते खाते हैं। क्या कहते हैं कि हमें 'डिस्चार्ज' हो जाता है। अरे, भले ही 'डिस्चार्ज' हो जाए। यह तो फिर अंदर असर हो जाता है कि डिस्चार्ज हो गया। लेकिन तूने नहीं किया न? खुद को नहीं करना चाहिए। इसलिए मैंने कहा वह बुद्धिपूर्वक नहीं है इसलिए हर्ज नहीं है। बुद्धिपूर्वक हो तो हर्ज है।

प्रश्नकर्ता : बुद्धिपूर्वक यानी कैसा?

दादाश्री : बुद्धिपूर्वक का मतलब खुद इच्छापूर्वक करे, वैसा। जबकि यह तो रात में सपने में हो जाता है। 'उसके लिए तुम गुनहगार हो ही नहीं,' ऐसा उन्हें कह दिया वर्ना परेशान होते रहेंगे, बिना वजह। तेरी इच्छा नहीं है न? वैसा हमें करना नहीं चाहिए। अब अगर वह हो जाता है, तो उसमें हर्ज नहीं। तेरा बुद्धिपूर्वक नहीं है न? तब कहते हैं 'नहीं'। और सपना, वह तो दुनिया ही अलग है। वह बात अलग ही दुनिया की है।

सपने के भोग का पूर्वापर संबंध?

प्रश्नकर्ता : नींद में जो अटपटे भोग भासित होते हैं, उनमें कुछ सत्यता है?

दादाश्री : है न! पिछले जन्म में भोगा था, उसके संस्कार दिखाई देते हैं अभी। पिछले जन्म में, अनंत जन्म में जो भोग भोगे हों न, वे सभी संस्कार आज सपने में दिखाई देते हैं।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह तो पूर्वापर संबंध के बिना दिखता है न?

दादाश्री : पूर्वापर संबंध है ही।

प्रश्नकर्ता : नहीं, नहीं, दिन भर में या फिर ज़िंदगीभर में कुछ नहीं किया हो तो वह पूर्वापर संबंध के बिना इस सपने में हो सकता है?

दादाश्री : हाँ, आज के संबंध के बिना हो सकता है। लेकिन उस संस्कार का उदय आया कि तुरंत दिखाई देता है। कोई साधु हो फिर भी उन्हें सपने में रनिवास आता है। अरे, त्याग किया, बीवी को छोड़ा, फिर भी रानी के सपने आते हैं?! क्योंकि जो पहले के संस्कार हैं, वही आते हैं।

प्रश्नकर्ता : क्या ऐसा नहीं है कि इस जन्म की अतृप्त वासना से वे सपने आते हैं?

दादाश्री : नहीं, नहीं। अगर इस जन्म की अतृप्त वासना हो न तो वह जहाँ-तहाँ मुँह मारता रहेगा। जो भूखा इंसान होता है न, वह जहाँ कहीं भी हलवाई की दुकान दिखाई दे, तो वहीं ताकता रहता है। मतलब अगर हलवाई की दुकान की ओर ताकता रहे तो लोग समझ जाते हैं कि यह भूखा है। और जो इंसान इन सारी औरतों को देखे या गायों-भैंसों को देखे और वहाँ पर भी ताकता रहे तो क्या हम नहीं समझ जाएँगे कि इसे कुछ अतृप्त वासनाएँ हैं?

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसकी वृत्तियों को हम कैसे बंद कर सकते हैं?

दादाश्री : उसमें तो हम से कुछ नहीं हो सकेगा। वह तो जब खुद सीधा होगा तभी हो सकेगा।

प्रश्नकर्ता : तो उसकी वृत्तियाँ निकालने का रास्ता क्या है? सत्संग?

दादाश्री : सत्संग के अलावा तो और कोई उपाय नहीं है। कुसंग से ही ये सारी वृत्तियाँ ऐसी हो जाती है, और दूसरा, विषयों में यदि कभी *तरछोड़* (तिरस्कार सहित दुत्कारना) मिली हो न, तब तो उसे पूरे दिन विषय के ही विचार आते रहते हैं। इसलिए हमने कहा है न, कि एक से शादी करना ताकि वृत्तियाँ शांत हो जाएँ। बाकी *तरछोड़* खाया हुआ इंसान तो सभी ओर ताकता रहता है। वह मनुष्य की स्त्री को तो देखता ही है लेकिन तिर्यंच की स्त्री को भी देखता है, और निरीक्षण भी करता है।

प्रश्नकर्ता : उपवास करने से तो उसकी वृत्तियाँ हमेशा संयम में रहेंगी, इस बात में कोई सच्चाई है?

दादाश्री : हाँ, रहती है लेकिन वह तो उसके संयम पर आधारित है, उसके संस्कार पर आधारित है।

प्रश्नकर्ता : संस्कार तो गढ़ना पड़ेगा न, क्योंकि अगर पिछले जन्म का कुछ भी लेकर नहीं आया हो तो?

दादाश्री : नहीं अगर वह संयम लेकर आया होगा न, तो जब वह उपवास करे, तब आप उसे जलेबी वगैरह दिखाओ, फिर भी उसका चित्त उनमें नहीं जाएगा, ऐसे भी लोग है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन ऐसे पूर्व के उदय तो महान पुरुष ही लेकर आते हैं, लेकिन सामान्य लोगों के लिए कुछ नहीं हो सकता?

दादाश्री : सामान्य लोगों की तो बिसात ही नहीं न! सामान्य लोगों की क्या बिसात?

प्रश्नकर्ता : तो सत्संग से उसमें कुछ जागृति आएगी?

दादाश्री : हाँ, सत्संग में आए, रोज़ पड़ा रहे इस सत्संग में, तब उसका पूरा होगा। उसका उपाय ही सत्संग, सत्संग और सत्संग है।

दादावाणी निकली ब्रह्मचारियों के लिए

बाकी विषय तो भयंकर दुःख और यातनाएँ ही है सिर्फ! फिर, जो चित्त है, वह पूरे दिन भटक, भटक, भटक करता रहता है। कमज़ोर पड़ जाता है, ढीला पड़ जाता है। तेरा ऐसे ढीला पड़ जाता है क्या?

प्रश्नकर्ता : कभी कभार ऐसा हो जाता है।

दादाश्री : कभी कभार होता है न? लेकिन पूरे दिन, हमेशा के लिए तो नहीं न? तो काम हो गया। जिसने नियम ही लिया है कि मुझे ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना ही है, तो उसमें अगर लीकेज होने पर भी भगवान उसे लेट गो करते हैं। कुदरत का न्याय लेट गो करता है और अगर सभी ब्रह्मचारी एक साथ रहें तो ब्रह्मचर्य टिक सकता है। वर्ना अगर यहाँ शहर में अकेला रहे तो उसका ब्रह्मचर्य टिकेगा ही नहीं न।

प्रश्नकर्ता : लेकिन खरा तो वही कहलाएगा न?

दादाश्री : वह खरा तो कहलाएगा लेकिन इतना टेस्टेड तो इस काल में कोई है नहीं न! वैसा टेस्टिंग तो ज्ञानी पुरुष के अलावा अन्य कोई नहीं दे सकता। ज्ञानी पुरुष को तो 'ओपन टु स्काय' ही होता है। रात में कभी भी उनके वहाँ जाओ, फिर भी ओपन टु स्काय होते हैं। हमें तो ब्रह्मचर्य पालन करना पड़े ऐसा भी नहीं होता। हमें तो विषय याद ही नहीं आता। इस शरीर में वह परमाणु ही नहीं हैं न। तभी तो ब्रह्मचर्य संबंधित ऐसी वाणी निकलती है न! विषय के सामने तो कोई बोला ही नहीं है। लोग विषयी हैं, इसलिए लोगों ने विषय पर उपदेश ही नहीं दिया, और अपने यहाँ तो ब्रह्मचर्य पर इतना कहा है कि पूरी किताब बन सके, और ठेठ तक की बात कही हैं क्योंकि हम में तो वे परमाणु ही खत्म हो चुके हैं, हम देह से बाहर रहते हैं। बाहर यानी निरंतर पड़ोसी की तरह रहते हैं! वर्ना ऐसा आश्चर्य मिल ही नहीं सकता न कभी भी!

ब्रह्मचर्य का एक और अब्रह्मचर्य के अनेक दुःख

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह ब्रह्मचर्य, वह कुछ खाने के खेल नहीं हैं।

दादाश्री : ब्रह्मचर्य कुछ खाने के खेल नहीं हैं, तो अब्रह्मचर्य भी खाने के खेल नहीं हैं। अब्रह्मचर्य की जो पीड़ा है न, ब्रह्मचर्य में उसके बजाय बहुत कम पीड़ा है। ब्रह्मचर्य में एक ही प्रकार की पीड़ा है कि विषय की ओर ध्यान ही नहीं देना है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन इस पीड़ा से सुख तो बहुत उत्पन्न होता है। यदि इतना संभाल लिया कि उस ओर ध्यान ही न दे, तो पीड़ा के बजाय अंदर सुख उत्पन्न होगा।

दादाश्री : उसमें तो स्वभाविक रूप से सुख ही उत्पन्न होगा लेकिन उस पर ध्यान नहीं देने के लिए विषय का विचार आने से पहले ही उखाड़ दे और प्रतिक्रमण करके पूरा एक्ज़ेक्टनेस में रहना पड़ता है। खेत में बीज पड़ने ही नहीं देंगे तो उगेगा ही कैसे? तेरा अंदर ठीक रहता है या बिगड़ गया है? पूरा ही बिगड़ गया है? थोड़ा-थोड़ा? तो अब कुछ सुधार कर ले! विषय के ये दुःख तो तुझसे सहन नहीं होंगे। यह तो मोटी खाल वाले लोग हैं कि जो सहन कर सकते हैं, वे यातनाएँ। बाकी तू तो पतली खाल वाला है, तो कैसे वे यातनाएँ सहन कर सकेगा?

प्रश्नकर्ता : लेकिन यदि बीज डल जाए और पेड़ बन जाए तो क्या करेगा? फिर फल खाना ही पड़ेगा न?

दादाश्री : नहीं, लेकिन यह तो उन से कह रहा हूँ जो सावधान हो चुके है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन जो लोग संसार में हैं, उसे बीज पड़ गया और पेड़ बन गया तो?

दादाश्री : उसका तो कोई उपाय ही नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : फिर फल खाना ही पड़ेगा न?

दादाश्री : फल खाए लेकिन पछतावे के साथ खाए, तो उस फल में से वापस बीज नहीं डलेंगे और खुशी से खाए कि, 'हाँ, आज तो बहुत मज़ा आया' तो वापस बीज डलेगा।

बाकी इसमें तो आदी हो जाता है। ज़रा भी ढीला छोड़ा कि वहाँ आदी हो जाता है इसलिए ढीला मत छोड़ना। मज़बूत रहना। मर जाऊँ फिर भी यह नहीं चाहिए। इतना मज़बूत रहना चाहिए।

दृष्टि से ही बिगड़ता है, ब्रह्मचर्य

ये लड़के हमारी बात का दुरुपयोग करेंगे, इसलिए हम ज्ञान की एक्ज़ेक्ट बात नहीं बताते। हमने तो ज्ञान में सबकुछ देखा हुआ है, लेकिन एक्ज़ेक्ट कह नहीं सकते क्योंकि यह अक्रम विज्ञान है और कर्म खपाए बिना का है। कर्म नहीं खपाए हैं इसलिए एक ओर ज़बरदस्त ज़ोर है, उसकी वजह से फिर मन मुड़ जाता है। इस बात का दुरुपयोग करने जाएगा तो मारा जाएगा। यह सारी छूट तो इसलिए दे रखी है ताकि आप डरो नहीं। खाना आराम से। इस-इस तरह का ब्रह्मचर्य पालन करे तो भी बहुत हो गया।

प्रश्नकर्ता : इससे तो बहुत बड़ा 'ब्रेक' आ जाता है न?

दादाश्री : हाँ, बड़ा 'ब्रेक' आ जाता है। हम चारित्र के बारे में बहुत सख्ती रखते हैं। फिर अगर 'व्यवस्थित' में शादी होगी, तो उसे कोई बाप भी नहीं छोड़ने वाला। वह मैं समझता हूँ न?! लेकिन अगर अभी चारित्र में रहेगा तो उनकी लाइफ सुधर जाएगी और शायद शादी कर ली तो भी बाद में दूसरों पर आँखें नहीं गड़ाएगा न?!

मोक्ष जाने में कुछ बाधक हो तो वह सिर्फ स्त्री विषय ही

है और वह भी सिर्फ देखनेमात्र से ही बहुत बाधक है। व्यवहार में इतना ही भय है, इतना ही भय सिग्नल है। अन्य कहीं पर भय सिग्नल नहीं है। इसलिए लड़कों को कह रखा है न, कि स्त्री की तरफ देखना भी मत और देख लो तो उसका उपाय दिया है। साबुन लगाकर धो देना। इस काल में सब से बड़ा पोइज़न हो तो वह विषय ही है। इस काल के मनुष्य ऐसे नहीं हैं कि जिन्हें ज़हर नहीं चढ़े। ये तो कमज़ोर हैं बेचारे। जैसा मनचाहे वैसे कहीं भी घूमोगे तो ज़हर चढ़ेगा या नहीं?! यह तो आज्ञा में रहते हैं इसलिए ज़हर नहीं चढ़ता लेकिन अगर आज्ञा में नहीं रहे तो? एक ही बार आज्ञा टूटी कि पोइज़न फैल जाएगा, तेज़ी से! इनकी बिसात ही नहीं न!

किसी की बहन पर दृष्टि बिगाड़ी है?

मुझे सब से ज़्यादा चिढ़ इस बात की रहती है कि किसी पर भी दृष्टि कैसे बिगाड़ सकता है तू? तेरी बहन पर कोई खराब दृष्टि डाले तो तुझे कैसा लगेगा? उसी तरह अगर तू किसी की बहन पर दृष्टि बिगाड़ेगा तो? लेकिन इन लोगों को ऐसा विचार नहीं आता होगा न?

प्रश्नकर्ता : ऐसा विचार आता हो तो ऐसा कोई करेगा ही नहीं न?

दादाश्री : हाँ, कोई करेगा ही नहीं। लेकिन इतनी मूर्च्छा है न! इन लड़कों में तो इस ज्ञान के बाद बहुत बदलाव आ गया इसीलिए मुझे आनंद होता है न! नहीं तो मैं इन्हें बुलाऊँ भी नहीं क्योंकि मुझे तो चिढ़ आती है। अपने यहाँ तो चौदहवें साल में तो शादी करवा देनी चाहिए। चौदह साल की बेटी और अठारह साल का बेटा, इस तरह शादी करवा देनी चाहिए। लेकिन यह तो नई ही तरह का हो गया। यह भी कुदरत ने किया है। इंसान थोड़े ही कुछ करता है? पहले तो सात साल में ही शादी करवा

देते थे। उससे फिर उन लोगों की दृष्टि और कहीं भी नहीं जाती थी और वह लाइफ कितनी अच्छी! बच्चे भी कितने अच्छे होते थे! एक जैसे बच्चे!

प्रश्नकर्ता : यह एक बड़ा पॉइन्ट है। जिनकी दृष्टि नहीं बिगड़ती, उनके बच्चे एक जैसे होते हैं।

दादाश्री : और उसी से परंपरागत संस्कार आते थे। यह तो मार्केट मटिरियल जैसा हो गया है। बाज़ारू माल नहीं होता? वैसा! ऐसा तो हो ही कैसे सकता है? यदि स्त्री एक पतिव्रत पालन करे और पति एक पत्नीव्रत पालन करे तो दोनों दर्शन करने योग्य कहलाएँगे।

इसलिए अपने यहाँ तो बेटे-बेटियों की जल्दी शादी करवा देनी चाहिए, अगर मेल खाए तो। मेल नहीं खाए तो भी तैयारी जल्दी शादी करवाने की रखना। यह माल रखने जैसा नहीं है तो फिर स्लिप होने से बचेगा, वर्ना यह तो बिगड़ता ही जा रहा है।

हमें तो बचपन से ही यह पसंद नहीं है कि लोगों ने इसमें सुख कैसे मान लिया है? मुझे ऐसा लगता है कि यह कैसा है? इन लोगों को तो खेलने के लिए जापनीज़ खिलौने चाहिए। खेलने के लिए ये जीवित खिलौने चाहिए, लेकिन जीवित खिलौने को मारोगे तो फिर काट लेगा न?! यह सब तो, कपड़े से ढका हुआ है इसलिए मोह होता है। हमें तो बचपन से ही थ्री विज़न की प्रैक्टिस हो गई थी इसलिए हमें तो बहुत वैराग्य आता रहता था। बहुत ही घिन आती थी। ऐसी चीज़ों में ही इन लोगों को आराधना रहती है। यह तो किस तरह का कहलाएगा?

प्रतिक्रमण ही एक उपाय

प्रश्नकर्ता : ऐसा कहा गया है कि ज्ञान के बाद कुदृष्टि जोखिम है। अब कुदृष्टि वह चार्ज भाव है या डिस्चार्ज परिणाम है?

दादाश्री : वह डिस्चार्ज परिणाम है, लेकिन साथ में उस परिणाम को धोने के लिए कहा है न? वह परिणाम तो आएँगे, कुदृष्टि तो होगी, लेकिन साथ में हमने धोने के लिए कहा है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन धोना कैसे है? प्रतिक्रमण करके धोना है न?

दादाश्री : कहा ही है, और उस तरह से सब कर ही रहे हैं। इन सभी लड़कों को सहज रूप से निरंतर तप होता ही रहेगा। ये सभी ब्रह्मचर्य व्रत वाले हैं। इन सभी को निरंतर ज्ञान-दर्शन-चारित्र और तप रहता है, इनके कपड़े ऐसे दिखते हैं लेकिन अंदर तो ज्ञान-दर्शन-चारित्र और तप रहता है।

युवा लोगों को विषय के बारे में मेरे पास समझना पड़ेगा। उसका विवरण समझना पड़ेगा तो फिर उस पर आसानी से अभाव होने लगेगा, नहीं तो अभाव होगा ही नहीं न! उसका विवरण होना चाहिए, ज्ञानी पुरुष विवरण कर देते हैं। ज्ञानी पुरुष वह विवरण सभी को पब्लिक में नहीं बताते, दो-पाँच लोगों को रूबरू कह सकते हैं कि यह हकीकत क्या है। विषय बुद्धिपूर्वक का होता तब तो बहुत वैराग्य आ जाता। यह तो 'फूलिशनेस' है।

प्रश्नकर्ता : वहाँ पर जो राग होता है? वह क्या है?

दादाश्री : वह राग किस वजह से होता है? हकीकत में इसे समझा नहीं इसलिए। राग तो लोगों को ताश पर होता है, शराब पर होता है, लेकिन हकीकत जानते ही वह छूट जाता है। इसलिए हकीकत जाननी पड़ेगी कि यह अहितकारी है, यह चीज़ अच्छी नहीं है, वास्तव में इसमें सुख है ही नहीं, यह तो भास्यमान सुख है, तो छूट जाएगा। तुझे कभी दाद हुआ है? उस दाद को खुजलाने में और इसमें बिल्कुल भी अंतर नहीं है।

आप ऐसा कहो कि मुझसे मिठाई नहीं छूटती। तब मैं कहूँगा कि, कोई हर्ज नहीं, खाना क्योंकि वह जो खाता है, वह तो

हकीकत है। बिल्कुल ही खोखली हकीकत नहीं है, लेकिन रिलेटिव में तो हकीकत है। जीभ को स्वाद आता है, वह तो रिलेटिव में हकीकत है। जबकि विषय तो किसी में है ही नहीं।

कैसा मोह, कि शौक से शादी करते हैं

यह स्त्री-पुरुष का जो विषय है न, उसमें दावे किए जाते हैं क्योंकि इस विषय में दोनों की मालिकी एक है और मत दोनों के अलग हैं। इसलिए यदि स्वतंत्र होना हो तो इस गुनहगारी में नहीं आना चाहिए और जिसके लिए यह गुनहगारी अनिवार्य है, उसे उसका *निकाल* करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : गुनहगारी में नहीं आना पड़े उसके लिए क्या शादी नहीं करनी चाहिए?

दादाश्री : शादी नहीं करनी चाहिए या करनी चाहिए, वह अपनी सत्ता की बात नहीं है। तुझे निश्चयभाव रखना चाहिए कि ऐसा नहीं हो तो उत्तम। जिस तरह गाड़ी में से गिरना चाहिए, क्या किसी की ऐसी इच्छा होती है? अपनी इच्छा कैसी होती है कि गिर न पड़ें तो अच्छा। फिर भी अगर गिर जाएँ तो क्या होगा? उसी तरह शादी के लिए गिर न पड़ें तो अच्छा। अपने भाव ऐसे रहने चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यानी शादी करना गाड़ी में से गिरने के बराबर है?

दादाश्री : उसी तरह का है न, लेकिन वह मजबूरन ही होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : फिर उसे नाटक रूप में लेना पड़ेगा?

दादाश्री : और क्या? फिर चारा ही नहीं रहेगा न!

प्रश्नकर्ता : शादी करने में इतना जोखिम है, वह सुख दाद

जैसा है तो फिर ये जो सब लोग शादी करते हैं, उन्होंने क्या मजबूरन शादी की है? शादी क्यों करते हैं?

दादाश्री : लोग तो खुशी से, शौक से शादी करते हैं। इसमें दुःख है, ऐसा नहीं जानते। वे तो ऐसा ही समझते हैं कि अंततः इसमें सुख है। लोग ऐसा समझते हैं कि थोड़ा बहुत नुकसान है लेकिन कुल मिलाकर फायदे वाली चीज़ है। जबकि हकीकत में बिल्कुल नुकसान ही है। वह जब 'इन्कमटैक्स' ऑफिस में जाता है तब पता चलता है कि यह सारा नुकसान ही था। और उसमें भी अपने हाथ में सत्ता नहीं है न? इस जन्म में अपने हाथ में नहीं है न? इस जन्म में तो अब नये सिरे से हमें 'डिसिज़न' आ जाता है, इसलिए साफ हो जाता है।

इसलिए श्रीमद् राजचंद्र ने कहा है कि, 'देखत भूली टले तो सर्व दुःखों का क्षय होगा।' वे खुद ही बताते हैं कि हमारे ज्ञान में तो बर्तता ही है कि इसमें पड़ने जैसा नहीं है। फिर भी देखते हैं और भूल हो जाती है। देखते हैं और भूल हो जाती है जबकि अपना ज्ञान तो ऐसा है कि देखता है फिर भी भूल नहीं होती क्योंकि जब देखे तब उसे 'शुद्धात्मा' दिखना चाहिए और 'शुद्धात्मा' दिखे तो फिर राग नहीं होगा।

'जवानी' सँभल जाए तो

इस जगत् में और किसी भी तरह का जोखिम नहीं है, सिर्फ इतना ही जोखिम है। कुछ लोगों को ऐसा होता है कि जो दाग़ लगा हो वह प्रतिक्रमण करने से धुल जाता है और कुछ लोगों को प्रतिक्रमण करने पर भी दाग़ नहीं जाते लेकिन ऐसे दो-चार ही होते हैं। उसके लिए उन्हें मेरे पास समझने के लिए आना पड़ेगा। तब मैं सब समझा दूँगा कि हकीकत में ऐसा है।

इस 'वॉर' (युद्ध) से आप बच जाओ। यह 'वॉर' बहुत बड़ी है। यह जवानी की 'वॉर' तो बहुत भारी है, पाकिस्तान से भी भारी।

प्रश्नकर्ता : कुरुक्षेत्र से भी बड़ा?

दादाश्री : हाँ, उसके लिए अकेले में पूछना चाहिए। दो-पाँच लोग हों तो हर्ज नहीं, लेकिन पूछने से सब हल मिलेगा।

प्रश्नकर्ता : आपसे पूछा था कि ज्ञान का अपच का मतलब क्या है? तब आपने कहा था कि यह बात तो युवा लड़कों के लिए है। उन्हें ज्ञान का अपच हो जाता है, तो वह क्या है?

दादाश्री : जवान लोगों को ज्ञानजागृति पर आवरण आते देर नहीं लगती। वह जो आवरण आता है, वही ज्ञान का अजीर्ण है। जबकि बड़ों को ऐसे आवरण नहीं आते। उन्हें जवानी के जोश से आवरण आ जाता है, वह स्वाभाविक कहलाता है। हम उन्हें ऐसा नहीं कह सकते कि तुम ऐसे क्यों कर रहे हो? क्योंकि हम जानते हैं कि नौ बजे पानी आता है, तो फिर उस समय पानी आए बिना रहेगा ही नहीं न! फिर बारह बजे पानी आएगा? नहीं। नहीं आता। वैसा ही जोश जवानी में होता है। वह जोश आया कि तुरंत ही अंदर घोर अंधेरा कर देता है। उस तरह का घोर अंधकार आप बड़ी उम्र वालों को नहीं होता। आपको जागृति रहती है।

यह तो उपयोग नहीं है इसलिए गलतियाँ हो जाती हैं। उपयोग रखें तो गलती नहीं होगी। जैसे कि पैसे कमाते समय नुकसान नहीं हो और हर एक चीज़ में फायदा होना ही चाहिए, इसलिए हर एक चीज़ का भाव-ताव देखकर बेचते हैं, वर्ना अगर गड़बड़ कर दें तो फिर दुकान में नुकसान ही होगा। उसी तरह हर एक में शुद्ध उपयोग रखकर काम लेना पड़ेगा। वहाँ व्यापार में वैसी जागृति रहती है और यहाँ क्यों नहीं रही? यह बड़ा व्यापार है और फिर यह तो खुद का व्यापार है। जबकि वह तो पराया, चंद्रेश का व्यापार है। उससे 'हमें' लेना भी नहीं है और देना भी नहीं। यह तो खुद का व्यापार, उसमें कभी भी उपयोग

के बिना नहीं होना चाहिए। कभी शायद आधा-पौना घंटा चूक गए, कहीं किसी की बात पर उलझ गए, तो प्रतिक्रमण कर लेना। प्रतिक्रमण करोगे तो फिर से जागृति आ जाएगी, लेकिन उलझते रहोगे तो अंत ही नहीं आएगा न? कभी किसी जन्म में ही ज्ञानी पुरुष मिलते हैं और वहाँ अगर हम कच्चे पड़ जाएँ, तो अपनी ही गलती है न?

प्रश्नकर्ता : ज्ञान का अपच नहीं हो, और उसमें से सेफ साइड की तरफ निकल जाएँ, वह कैसे?

दादाश्री : ऐसा है न, कि उसमें तो उस तरह से आज्ञा पालन करना पड़ेगा, पुरुषार्थ करना पड़ेगा। हमने एक ही बार कहा था कि विषय का यह जोखिम कितना है, उतना सुनकर तो सभी लड़कों ने पुरुषार्थ शुरू कर दिया।

यह 'अक्रम विज्ञान' तो बहुत ऊँची क्वॉलिटी का है। आज तुम्हें ऐसा लग रहा हो कि, कैसे हो पाएगा? लेकिन यह विज्ञान एक घंटे में तो क्या से क्या कर देता है! ज्ञानी पर आपको जैसा भाव आएगा, उतनी ही ज्ञान के परिणाम की मात्रा बढ़ती जाएगी। इसलिए इन लड़कों से मैंने कहा है कि 'तुम्हारी बात एक्सेप्ट करते हैं, लेकिन तुम्हें लालबत्ती रखनी है।' क्योंकि उन में अभी तक जवानी की शुरूआत नहीं हुई है। अभी उन्हें मुझ पर जितना लक्ष्य रहता है, उतना लक्ष्य जवानी में रहेगा और जवानी गुज़र जाएगी, तब उन्हें कोई दिक्कत नहीं आएगी लेकिन यदि लक्ष्य बदल गया तो दिक्कत आएगी, समझ लेना। फिर तो गिरा भी देगा। इसलिए उन्हें ये लालबत्तियाँ दिखाते हैं। कृपापात्र हो गए हो तो विषय को जीत जाएँगे, फिर भी लालबत्ती दिखानी पड़ती है। लालबत्ती नहीं दिखाएँगे तो ये लोग गाड़ी को यों ही छोड़ देंगे। इन कर्मों ने तो तीर्थंकरों को भी नचाया है, तो फिर इनकी तो बिसात ही क्या?

इन लड़कों से मैं कहता हूँ कि तुम इस जागृति में रहते

हो, लेकिन अभी तुम्हारा रिज पॉइन्ट आना बाकी है। अभी तो तुम्हारी जवानी भी नहीं खिली है इसलिए बहुत कठिनाईयाँ आएगी। फिर भी मैंने ऐसा रास्ता दिखाया है कि आरपार निकल जाएँ और यदि उस रास्ते पर जाएँ तो आरपार निकल भी जाएँ। ऐसा विज़न तो किसी के पास भी नहीं है क्योंकि इस तरफ का, इस शरीर के बारे में सोचा ही नहीं होता न? ऐसा मानते हैं कि 'यह मैं ही हूँ' इसीलिए तो किसी को खुद के दोष नहीं दिखते। जहाँ स्थूल दोष ही नहीं दिखते, वहाँ पर, विषय के सामने तो कितनी सूक्ष्मातिसूक्ष्म जागृति की ज़रूरत है?! वह कैसे आएगी? यानी किसीने इसका केल्क्युलेशन किया ही नहीं न!

यह अपना सत्संग, ये बातें, ऐसी चीज़ है जो कभी भी सुनने में नहीं आए। यह सत्संग तो बुद्धि से परे वाला कहलाता है। बुद्धि का सत्संग तो हर कहीं होता है।

आनंद की अनुभूति वहाँ

'अक्रम विज्ञान' में मैंने कुछ परिवर्तन नहीं किया है। लेकिन लोग 'अक्रम विज्ञान' को समझ नहीं सके हैं। अनादि से लोग क्रमिक के ही अभ्यस्त हैं। वर्ना पूर्णता तक का काम हो जाए, ऐसा यह विज्ञान है। अक्रम विज्ञान को कब समझा जा सकता है? कि जो विषय के वैराग्य वाला हो और उसे 'अक्रम विज्ञान' मिल जाए, फिर तो उसका कल्याण ही हो गया न?! जिसे विषय अच्छे ही नहीं लगते, वह तो उच्च स्थिति कहलाती है। जैनों में भी जो उच्च स्थिति तक पहुँचे हुए होते हैं, वही वैराग्य लेते हैं। उन्हें तो बचपन से ही कुछ अच्छा नहीं लगता। उन्हें तो विषय की बात सुनते ही कंपकंपी आ जाती है। डेवेलप परिवार की जो बीस-बीस साल की लड़कियाँ और बीस-बीस साल के लड़के होते हैं, उन से विषय की बात की जाए तो उन्हें तो कंपकंपी आ जाती है। यह ब्रह्मचर्य व्रत लेने के बाद उनका वह आनंद जाता ही नहीं है। अपार आनंद में रहते हैं क्योंकि मूल विषय

कि जिसके आधार पर दुनिया खड़ी है, जिसकी वजह से ध्यान फ्रैक्चर हो जाता है, उनके लिए वह आधार रहता ही नहीं। एक ही बार अगर अब्रह्मचर्य का भाव उत्पन्न हो तो वह तीन-तीन दिनों तक ध्यान नहीं होने देता। फिर आत्मा का मूल्य किस तरह समझ में आएगा? और इन ब्रह्मचर्य व्रत वालों को तो, यह ज्ञान है इसलिए आत्मा का आनंद तो पाया, लेकिन वह आनंद इस व्रत की वजह से टिका हुआ है। फिर वह आनंद जाता ही नहीं। ये लोग बारह-बारह महीनों का व्रत लेकर फिर यह अनुभव कर जाते हैं। फिर वापस आकर मुझ से क्या कहते हैं कि 'दादा, हम जो आनंद भोग रहे है, वह ग़ज़ब का आनंद है। एक क्षण भी कुछ नहीं होता।' कहना पड़ेगा! ब्रह्मचर्य की इतनी पहुँच है, ऐसा तो मुझे भी पता नहीं था।

प्रश्नकर्ता : आपके पास भी वही था न?

दादाश्री : नहीं, लेकिन मुझे यह पता नहीं था कि इसकी पहुँच इतनी अधिक है। मैं नहीं जानता था कि इस लड़के को इतना आनंद बर्तता है और वह भी ब्रह्मचर्य की वजह से! क्योंकि ज्ञान तो सभी को दिया है और आत्मा का आनंद भी उत्पन्न हुआ है, लेकिन अब कौन इस आनंद को स्पर्श नहीं होने देता? विषयभाव, पाशवता।

प्रश्नकर्ता : ये जो बाहर वाले लोग ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, उन्हें ऐसा आनंद नहीं होता न?

दादाश्री : उन्हें आत्मा का आनंद नहीं होता। उन्हें तो पौद्गलिक आनंद उत्पन्न होता है और वहाँ तो पौद्गलिक आनंद को ही आत्मा का आनंद माना जाता है। फिर भी उससे उन्हें आनंद रहता है। भीतर जो क्लेश का वातावरण उत्पन्न करे, वैसा सब नहीं होता क्योंकि उनके हाथ में *पुद्गलसार* आ गया न! ब्रह्मचर्य मतलब *पुद्गलसार* और अध्यात्मसार मतलब शुद्धात्मा। और

जिसे ये दोनों मिल जाएँ, उसका तो कल्याण ही हो गया न! लेकिन जिसके पास सिर्फ *पुद्गलसार* हो तो उसे भी थोड़ा-बहुत आनंद तो आएगा न? इस ब्रह्मचर्य के बल के सामने, उसे अन्य वृत्तियाँ परेशान नहीं करती।

प्रश्नकर्ता : उन ब्रह्मचारियों को कषाय परेशान नहीं करते?

दादाश्री : नहीं करते। ब्रह्मचारी कभी भी चिढ़ते ही नहीं। जो संसार के ब्रह्मचारी होते हैं, वे भी कभी नहीं चिढ़ते। उनका चेहरा देखने से भी आनंद होता है। ब्रह्मचर्य का तो तेज आता है। तेज नहीं आए तो ब्रह्मचर्य कैसा? अतः यदि संसार में भी ब्रह्मचर्य मानना हो तो किसका मानना कि जिनके चेहरे पर तेज हो। ब्रह्मचारी पुरुष तो तेजवान होते हैं।

ब्रह्मचर्य आत्मा के स्वभाविक गुणों को प्रकट होने देता है, आत्मा का अनुभव होने देता है, सभी गुणों का अनुभव होने देता है। जबकि अब्रह्मचर्य के भाव की वजह से आत्मा के सभी गुणों का अनुभव होने के बावजूद भी ऐसा लगने देता है कि अनुभव नहीं हुआ है। स्थिरता नहीं रहती। 'इस' एक चीज़ में अनुकूलता आ गई तो सभी में अनुकूलता आ जाती है। सबकुछ अनुकूल हो जाता है।

व्यवहार गढ़ता है ब्रह्मचारियों को

इन ब्रह्मचारियों की सभी पीड़ा ही मिट गई न, फिर भी उन्हें व्यवहार सीखने में बहुत टाइम लगेगा। व्यवहारिकता आनी चाहिए न? आत्मा जाना लेकिन वह व्यवहार समेत होना चाहिए। सिर्फ खुद का कल्याण हो गया, उससे क्या फर्क पड़ा? ये लोग तो कहते हैं कि 'हमें तो जगत् कल्याण में दादा का पूरा-पूरा साथ देना है।' इसलिए ये ब्रह्मचर्य पालन कर रहे हैं। यह तो मैंने कभी सोचा भी नहीं था, ऐसा नया ही अंकुर फूटा है।

मैं तो ऐसा समझता था कि इस काल में ब्रह्मचर्य रह ही

नहीं सकता। पिछले जन्म में भावना की हो, उसे तो रह ही सकता है, और अपने साधु-आचार्यों को रहता ही है न! लेकिन अन्य सामान्य लोगों की तो बिसात ही नहीं न! जहाँ निरंतर जलन में जलते रहते हैं, वहाँ पर कोई ब्रह्मचर्य की बातें करने जाएगा क्या? और करेगा तो कोई सुनेगा भी नहीं! लेकिन ऐसे काल में अपने यहाँ यह नया ही निकला है। ब्रह्मचर्य का ऐसा रास्ता निकलेगा, ऐसा तो मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था। इस जगत् का कल्याण होने वाला हो, तभी ऐसा मिलता है न? वर्ना ऐसा सब कहाँ से मिलेगा? हमने तो कभी कल्पना भी नहीं की थी कि हमें ऐसा चाहिए या हमें ऐसा करना है। अभी तो, लड़के सामने से ब्रह्मचर्य के लिए आ रहे हैं।

ऊर्ध्व रेत हो न, तो काम हो जाएगा। उसके बाद जो वाणी निकलती है, उसके बाद जो संयम सुख आता है, उसकी तो बात ही अलग है। इसलिए मैं ऐसा करना चाहता हूँ इन ब्रह्मचारियों के लिए। उन्हें समझा-समझाकर मोड़ने की कोशिश करके और ज्ञान के अनुसार ब्रह्मचर्य की ओर मुड़ जाएँ, ऐसा कर देता हूँ, और मुड़ सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : मुड़ सकते हैं, यह शब्द तो योग्य नहीं लग रहा है क्योंकि मुड़ सकते हैं, दबा भी सकते हैं, उछल भी सकते हैं, लेकिन ज्ञान से आप उन पर कृपा करें तो बहुत अच्छा हो जाएगा।

दादाश्री : हाँ, कृपा ही। वह तो ये शब्द मुँह से बोलने पड़ते हैं। बाकी कृपापूर्वक होता है।

प्रश्नकर्ता : कृपा के बिना वह साध्य नहीं है, दादा।

दादाश्री : और तैयार हो जाएँगे तो इस देश का कुछ कल्याण कर सकेंगे। तैयार हो जाएँगे सभी।

ब्रह्मचर्य के लिए दादा ने यह कितनी सुंदर बाड़ बना दी

है और उस बाड़ पर कितने तटस्थ रहे हैं, निरीक्षक जैसा काम करते हैं! बोलो अब, ऐसा कहीं हो सकता है? इस कलियुग में ऐसा हो रहा है तो इसके पीछे कोई नये ही प्रकार का सर्जन है, ऐसा तय ही है न? यह तो मेरी कल्पना में भी नहीं था कि इस काल में ऐसे ब्रह्मचारी तैयार होंगे? इन दादा में इतना अधिक त्याग बर्तता है कि सभी प्रकार के जीव यहाँ खिंचकर आएँगे। इन दादा का एक-एक अंग त्याग वाला है, एक-एक अंग पवित्र है, इसलिए फिर उसके हिसाब से सभी खिंचकर आ जाएँगे। यह आकर्षण किसका है? एक जैसों का।

प्रश्नकर्ता : कैसे?

दादाश्री : गुण मिलते हैं न, इसलिए! क्योंकि लोहचुंबक, पीतल को नहीं खींचता! यह तो दिमाग़ काम न करे, इतना सुंदर ब्रह्मचर्य पालन कर रहे हैं ये लोग। दादा का यह वचनबल इतना सुंदर है कि जो इतना सुंदर काम कर रहा है। हालांकि इन्हें बहुत मार्गदर्शन देना पड़ता है। अभी तो थोड़ा धमकाना भी पड़ता है।

वस्तु इन्हें एक्ज़ेक्टनेस में आ जाती है, लेकिन अभी तो व्यवहार में कुछ समझते ही नहीं न! इसलिए अब इन्हें हम व्यवहार सिखाते रहते हैं। व्यवहार नहीं होगा तो कोई बाप भी नहीं सुनेगा। व्यवहार में पास नहीं होंगे तो, वह व्यवहार इन्हें उलझा देगा। किसी का कल्याण करना होगा, फिर भी नहीं हो पाएगा। खुद का तो कल्याण हो जाएगा, लेकिन अन्य किसी का कल्याण नहीं कर सकेंगे। इसमें तो, अगर व्यवहार होगा, तभी दूसरों का कल्याण कर सकेगा। इनकी क्या भावना है कि अब हमें जगत् कल्याण करना है इसके लिए उन्हें मुख्यत: व्यवहार की आवश्यकता पड़ेगी।

व्यवहार तो कैसा होना चाहिए कि जब ज्ञानी पुरुष दहाड़ें, तो महात्मा में जो भी रोग हो न, वह दहाड़ के साथ ही निकल जाए। ऐसी कहावत है न, कि सिंह दहाड़े तब सियार और अन्य

हिंसक पशुओं ने जो मांसाहार किया हो, तो उन सब की उल्टी हो जाती है! उसी तरह ज्ञानी पुरुष का एक शब्द सुनते ही उल्टी हो जाए, वैसे व्यवहार की आवश्यकता है। यों सिर पर हाथ रखें न, या हाथ लगाएँ तो भी क्या से क्या कर दें, वह कहलाता है व्यवहार! व्यवहार यानी क्या कि कोई उनके हाथ-पैर आदि छू ले, तो भी काम हो जाए, और वह तो ज्ञानी की सिद्धि कहलाती है।

यह तो अपना ज्ञान है इसलिए चल रहा है, वर्ना गाड़ी चले ही नहीं न! रुक ही जाए गाड़ी। यह ज्ञान एकदम जागृति देता है और पापों को भस्मीभूत कर देता है।

निश्चय के साथ में वचनबल का पावर

प्रश्नकर्ता : इन सभी युवकों को दादा ने जो ब्रह्मचर्य की शक्ति प्रदान की है तो भविष्य में उन्हें जब पिछले जन्म के संस्कारों की वजह से काम-विकार जागेंगे, तब वे लोग उन संयोगों में कैसे अडिग रह सकेंगे? उन्हें क्या करना होगा? यह सब समझाइए, सभी को लाभ होगा।

दादाश्री : अपना यह 'ज्ञान' ऐसा है कि सर्व विकारों का नाश हो जाता है। हम जब व्रत की विधि करते हैं, तब हमारा वचनबल काम करता है। उसका निश्चय नहीं डिगना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : इनका जो निश्चयबल है, वह 'व्यवस्थित' के हाथ में है या उनके खुद के हाथ में है?

दादाश्री : 'व्यवस्थित' नहीं देखना है। 'व्यवस्थित' उसी को कहते हैं कि तुम्हारा निश्चयबल और हमारा वचनबल, ये दोनों इकट्ठे हुए कि अपने आप 'व्यवस्थित' चेन्ज हो जाता है। सिर्फ ज्ञानी का वचनबल ही ऐसा है जो 'व्यवस्थित' को चेन्ज कर सकता है। संसार में जाने के लिए वह आड़ी दीवार जैसा है, एक बार आड़ी दीवार बना दी कि फिर संसार में जा ही नहीं सकेगा।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा न कि तेरा निश्चय और हमारा वचनबल। इन दोनों में तेरा निश्चय नहीं टूटेगा, तो हमारा वचनबल काम करता रहेगा लेकिन यदि उन लोगों का निश्चय टूट गया तो?

दादाश्री : ऐसा कुछ टूटता ही नहीं। ऐसा होता ही नहीं और यहाँ से नीचे गिर गए तो मर ही जाएँगे न? उसमें ऐसा सोचते हैं कि ऐसे गिर जाऊँगा तो क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : यदि किसी का निश्चयबल टूट गया, तो वह 'व्यवस्थित' कहलाएगा? उसे क्या कहेंगे?

दादाश्री : उसका खुद का पुरुषार्थ मंद है, ऐसा कहलाएगा।

प्रश्नकर्ता : इसमें 'व्यवस्थित' नहीं आता?

दादाश्री : अज्ञानी इंसान के लिए 'व्यवस्थित' है, ऐसा कहलाएगा और ज्ञानी तो खुद पुरुष बना है, अब वह पुरुषार्थ सहित है!

प्रश्नकर्ता : खुद का निश्चय यानी हम यदि ऐसा कहें कि हम ही सबकुछ कर सकें ऐसे हैं, तो फिर वह अहंकार नहीं कहलाएगा? तो फिर यह पुरुषार्थ कहलाएगा या अहंकार सहित कहलाएगा?

दादाश्री : नहीं।

प्रश्नकर्ता : तो वह क्या कहलाएगा?

दादाश्री : कुछ नहीं कहलाएगा। निश्चय यानी निश्चय! और वह भी हमें खुद को कहाँ करना है, वह आत्मा को नहीं करना है। यह प्रज्ञा कहती है कि 'चंद्रेश, तुम निश्चय स्ट्रोंग रखो।' ऐसा है न, कि जब से इन लोगों ने यह व्रत लिया है, तब से उनकी दृष्टि उस ओर जाती ही नहीं है। वर्ना किसी-किसी उम्र में तो सौ-सौ बार दृष्टि बिगड़ती रहती है।

प्रश्नकर्ता : यह पिछला जो नुकसान हैं, उसे निश्चय से खत्म कर सकते हैं?

दादाश्री : हाँ, सारा नुकसान खत्म कर सकते हैं। निश्चय ही सब काम करता है।

जब भारी उदय आए, तब वह सबकुछ हिला देता है। अब भारी उदय का अर्थ क्या है? कि हम स्ट्रोंग रूम में बैठे हों और बाहर कोई चिल्ला रहा हो। फिर भले ही पाँच लाख लोग चिल्ला रहे हों कि 'हम मार डालेंगे' ऐसा बाहर से ही चिल्ला रहे हों तो हमारा क्या बिगाड़ सकते हैं? वे भले ही चिल्लाते रहे। उसी तरह यदि इसमें भी स्थिरता रही तो कुछ नहीं होगा, लेकिन स्थिरता डगमगाई कि फिर से वह चिपक जाएगा। अत: भले ही कैसे भी कर्म आ पड़ें, लेकिन उस समय स्थिरतापूर्वक 'यह मेरा नहीं है, मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा करके स्ट्रोंग रहना पड़ेगा। बाद में वापस आएगा भी सही और थोड़ी देर उलझाएगा लेकिन अगर अपनी स्थिरता रहे तो कुछ नहीं होगा।

हमें इन लड़कों की दो-पाँच बार विधि करनी पड़ती है, तब उनका मोह का वातावरण लगभग चला जाता है। वर्ना अगर निरे मोह के वातावरण में जब वह 'रिज पॉइन्ट' पर आएगा, तब उसे एकदम से उड़ा देगा इसलिए लगभग पैंतीस साल तक तो उसका रक्षण करना पड़ता है। यह तो लड़को के संस्कार अच्छे हैं और इस ज्ञान के प्रताप से इतना शुद्धिकरण हो गया है, इसीलिए यह ब्रह्मचर्य व्रत देते हैं क्योंकि जितनी पवित्रता रखी जा सके उतना तो उसका सीधा चले!

प्रश्नकर्ता : 'रिज पॉइन्ट' पर यदि उनका खत्म हो जाए तो फिर ज्ञान का बीज रहता है या फिर बीज भी खत्म हो जाता है?

दादाश्री : ज्ञान का बीज भी खत्म हो जाता है लेकिन व्यर्थ

नहीं जाता, दूसरे जन्म में फिर हेल्प करता है, मतलब हेल्प तो करता ही है। इस जन्म में ही यदि तीन-चार बार फिर से ज्ञान ले और पैंतीस साल की उम्र में फिर से ज्ञान ले तो वापस राह पर आ तो जाएगा। हमारे नाम से और वचनबल से दो-तीन साल तक रहा तो उतना तो साफ रहेगा और जब शादी करनी होगी तब देख लेंगे, लेकिन उससे पहले तो नहीं बिगड़ेगा। आज का ज़माना विचित्र है इसलिए हम इन सभी लड़कों को ब्रह्मचर्य व्रत दे देते हैं, और उस दबाव से और हमारे वचनबल से उतना तो साफ रहेगा। बाद में शादी करे तो भी उसका साफ रहेगा न? नहीं तो यह ज़माना तो इतना विचित्र है कि इंसान उलझ जाए। कितने दंपत्तियों ने तो साथ में ब्रह्मचर्य व्रत लिया है और ज्ञान भी लिया है, तो उनका आनंद कुछ और ही है न?!

हम ब्रह्मचर्य व्रत देते हैं, लेकिन स्टेबिलिटि आने के बाद देते हैं। उसके बाद अगर तुम्हारे कर्म के उदय दूसरी तरफ के आ जाएँ फिर भी हमारा वचनबल काम करता है, लेकिन तुम्हारी सतर्कता में कमी नहीं आनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यदि उसके कर्म के उदय में भोग हो, तो फिर वह उसमें पड़ेगा या नहीं? बीच में ही कर्म का उदय आ जाए तो क्या करे?

दादाश्री : नहीं। ज्ञानियों का वचनबल किसे कहते हैं कि जो भयंकर कर्मों को भी तोड़ दे। खुद का निश्चय यदि नहीं डिगे तो भयंकर कर्मों को तोड़ दे। वह वचनसिद्धि कहलाती हैं, ज्ञानियों की लेकिन वे व्रत नहीं देते किसी को। यह कोई लड्डू खाने का खेल नहीं है। हम तो सभी तरह से उसका चारों तरफ से टेस्ट करके बाद में ही देते हैं। ब्रह्मचर्य व्रत यों ही नहीं दे सकते। वह दिया जा सके ऐसा नहीं है, वह देने जैसी चीज़ नहीं है।

लेकिन ये जो लड़के ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, वे मन-वचन-

काया से पालन करते हैं। बाहर के लोगों द्वारा मन से तो पालन किया ही नहीं जा सकता। वाणी से और देह से सभी पालन कर सकते हैं। अपना यह ज्ञान है न, उसकी वजह से मन से भी पालन कर सकते हैं। मन-वचन-काया से यदि ब्रह्मचर्य पालन करे तो उसके जैसी महान अन्य कोई शक्ति उत्पन्न नहीं हो सकती। उस शक्ति से फिर हमारी आज्ञा का पालन किया जा सकता है। वर्ना ब्रह्मचर्य की वह शक्ति नहीं हो तो आज्ञा का पालन कैसे करेगा? ब्रह्मचर्य की शक्ति की तो बात ही अलग है न?!

ये ब्रह्मचारी तैयार हो रहे हैं और ये ब्रह्मचारिणियाँ भी तैयार हो रही हैं। उनके चेहरे पर नूर आएगा, फिर लिपस्टिक और पाउडर लगाने की भी ज़रूरत नहीं रहेगी। हेय! सिंह का बालक बैठा हो, ऐसा लगेगा। तब समझ जाएँगे या नहीं कि कुछ है! वीतराग विज्ञान कैसा है कि यदि पचा तो शेरनी का दूध पचाने के बराबर है, तब वह सिंह के बालक जैसा लगेगा, वर्ना बकरी जैसा दिखेगा! यह तो वीतराग विज्ञान है, इसलिए यों ही सिंह जैसा दिखता है। मुझे तो अभी भी ये लोग कहीं सिंह जैसे नहीं दिखते, लेकिन इन लोगों का पुरुषार्थ ज़बरदस्त है न! और वास्तविक पुरुषार्थ है, इसलिए वह आ ही जाएगा। सबकुछ प्राप्त हो सकता है और वह भी फिर ज्ञान सहित प्राप्त होगा!

ये युवा स्त्री, युवा पुरुष ब्रह्मचर्य व्रत लेते हैं, तो उन्हें कैसा सुख बर्तता होगा कि इसमें से छूटने का भाव होता है? इन सभी लड़कों को कैसा सुख बर्तता होगा? ऐसे पाँच ही लड़के तैयार हो जाएँ तो, वे पूरे हिन्दुस्तान में सभी जगह भ्रमणा करेंगे, हर एक बड़े शहेर में भ्रमण करें तो बहुत काम हो जाएगा। कहीं पर भी भाव ब्रह्मचर्य नहीं होता। बाहर के लोग जिस ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, वह भी वचन का और काया का, मन का नहीं। आत्मज्ञान के बिना मन का ब्रह्मचर्य नहीं रह सकता। अत: यह तो अपना साइन्टिफिक विज्ञान है, वास्तविक विज्ञान है। यह तो

आश्चर्य है! ऐसे ब्रह्मचर्य का यदि कोई पालन करे न तो उनके दर्शन से ही कल्याण हो जाएगा क्योंकि ज्ञानी हैं और साथ ही ब्रह्मचारी भी हैं, दोनों चीज़ें एक साथ हैं। उन्हें कितना आनंद बर्तता है! आनंद ज़रा सा भी कम नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : ये लोग शादी करने के लिए मना करते हैं, तो वह अंतराय कर्म नहीं कहलाएगा?

दादाश्री : हम यहाँ से भादरण जाएँ तो क्या इससे इन अन्य गाँवों के साथ हमने अंतराय डाले? उसे जहाँ अनुकूल हो, वहीं वह जाएगा। अंतराय कर्म तो किसे कहते हैं कि आप किसी को कुछ दे रहे हों, और मैं कहूँ कि नहीं, उसे देने जैसा नहीं है, तब मैंने आपको रोका तो मुझे वह चीज़ फिर नहीं मिलेगी। मुझे उस चीज़ का अंतराय पड़ा।

इसमें कर्मबंधन के नियम

प्रश्नकर्ता : यदि ब्रह्मचर्य का ही पालन करना हो तो उसे कर्म कह सकते हैं?

दादाश्री : हाँ, उसे कर्म ही कहते हैं! उससे कर्म तो बंधते हैं! जब तक अज्ञान है, तब तक कर्म कहलाता है! वह फिर ब्रह्मचर्य हो या अब्रह्मचर्य हो। ब्रह्मचर्य से पुण्य का बंधन होता है और अब्रह्मचर्य से पाप का बंधन होता है!

प्रश्नकर्ता : कोई ब्रह्मचर्य की अनुमोदना कर रहा हो, ब्रह्मचारियों को पुष्टि दे, सबकुछ उन्हीं के लिए। सभी तरह से उन्हें रास्ता कर दे, तो उसका फल क्या?

दादाश्री : फल का हमें क्या करना है? हमें एक अवतारी होकर मोक्ष में जाना है, अब फलों को कहाँ रखेंगे? उस फल में तो सौ स्त्रियाँ मिलेंगी, ऐसे फल का हम क्या करेंगे? हमें फल नहीं चाहिए। फल खाना ही नहीं है न अब!

इसलिए मुझे तो उन्होंने पहले से पूछ लिया था, 'यह सब जो कर रहा हूँ, तो मुझे पुण्य बंधन होगा?' मैंने कहा, 'नहीं होगा।' अभी यह सब डिस्चार्ज के रूप में है और बीज तो सभी सिक जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यदि वे बीज डलें तो उसका फल अच्छा आएगा न?

दादाश्री : वह अच्छा हो फिर भी हमें उसकी ज़रूरत नहीं है न! वह क्यों चाहिए! उसकी ज़रूरत ही नहीं है न और वह सब विषयों को ही खड़ा करने वाला होता हैं।

प्रश्नकर्ता : वह कैसे?

दादाश्री : सभी तरह से, विषय ही खड़ा करने वाला है। हमें तो कोई भी पुण्य नहीं चाहिए। हमें तो जो दादा की आज्ञा से हुआ वही ठीक और यह तो डिस्चार्ज के रूप में आया है। जितना आता है न, तो उतना रुपये, आने और पाई सहित पूरा हिसाब है। बाद में तो आपकी इच्छा होगी फिर भी नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : नहीं, लेकिन पिछले जन्म में ऐसा कुछ भाव किया होगा, तभी हो सकता है न? या इसी जन्म के भाव से होता है?

दादाश्री : नहीं, वह सारा तो पिछले जन्म का हिसाब है। परिणाम है और अन्य कुछ आपको करना होगा फिर भी नहीं हो पाएगा! वह भी आश्चर्य है न!

त्यागी भी फिर भावना करते हैं। मन में ऐसा होता है कि पूरी ज़िंदगी त्याग में ही बीत गई, इसमें तो महादु:ख है, इससे तो संसारी रहे होते तो अच्छा रहता। सेवा चाकरी करने वाले तो मिलते। बूढ़ापे में दु:ख आए तब ऐसी भावना करते हैं, इसलिए वापस संसारी बनता है और संसारी बना तब फिर ब्रह्मचर्य जैसा कुछ रहता ही नहीं।

ब्रह्मचर्य, चार्ज या डिस्चार्ज ?

प्रश्नकर्ता : ये जो सभी ब्रह्मचारी होंगे, वह 'डिस्चार्ज' में ही माना जाएगा न?

दादाश्री : हाँ, डिस्चार्ज में ही! लेकिन इस डिस्चार्ज के साथ उनका भाव है, भीतर वह चार्ज है। है डिस्चार्ज, लेकिन उसके भीतर का जो भाव है, वह चार्ज है और भाव होगा तभी मज़बूती रहेगी न! वर्ना डिस्चार्ज हमेशा ही ढीला पड़ जाता है। और यह जो उसका भाव है कि मुझे ब्रह्मचर्य पालन करना ही है, उससे मज़बूती रहती है। इस अक्रममार्ग में कर्ताभाव कितना है, कितने अंश तक है कि हमने जो आज्ञा दी है न, उस आज्ञा का पालन करना, उतना ही कर्ताभाव। किसी न किसी चीज़ का पालन करना ही पड़ता है, वहीं पर उसका कर्ताभाव है। अत: उसके इस निश्चय में कि 'ब्रह्मचर्य का पालन करना ही है,' तो इसमें 'पालन करना,' वह कर्ताभाव है। बाकी ब्रह्मचर्य, वह तो डिस्चार्ज चीज़ है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन ब्रह्मचर्य पालन करना, वह क्या कर्ताभाव है?

दादाश्री : हाँ, पालन करना, वह कर्ताभाव है, और इस कर्ताभाव के फल स्वरूप उन्हें अगले जन्म में सम्यक पुण्य मिलेगा। यानी क्या कि ज़रा सी भी मुश्किल के बिना सभी चीज़ें सामने से आ मिलेंगी और ऐसा करते-करते मोक्ष में जाएँगे। तीर्थंकरों के दर्शन होंगे और तीर्थंकरों के पास पड़े रहने का अवसर भी मिलेगा। मतलब उसके सभी संयोग बहुत सुंदर होंगे।

यह हमारी साइन्टिफिक खोज है, बहुत सुंदर खोज है! लेकिन अनादि की बुरी आदत जाती नहीं, इसलिए हमें यह रखना पड़ता है कि 'ब्रह्मचर्य पालन करो।'

बाकी, अगर शादी करनी हो तो ज्ञानी पुरुष की आज्ञा लेकर

शादी करना। आशीर्वाद लिए और 'ज्ञानी पुरुष' कहें कि अब तू गृहस्थ जीवन बिताना, फिर 'ज्ञानी पुरुष' से पूछने को रहा ही कहाँ? फिर ज्ञानी पुरुष को भी एतराज़ नहीं रहेगा। किसी को अंदर ऐसा हो रहा हो कि मुझे इस तरह से तय करना है, तो मैं कह देता हूँ कि 'शादी करना, लेकिन मेरी आज्ञा लेकर शादी करना।' बाद में तेरी ज़िम्मेदारी नहीं क्योंकि शादी करके स्त्री लाए, उसे तो हम कुछ भी करके ज्ञान में ला सकते हैं, लेकिन अगर हरहाए पशु जैसा हो जाए, तो फिर वह यूज़लेस चीज़ है। वहीं पर सब पाखंड हैं। पूरे जगत् का कपट वहीं पर है। जबकि अगर शादी करके लाएगा तो उसमें पाखंड नहीं है, उसमें कपट नहीं है। जगत् के लोग उसकी निंदा नहीं करेंगे।

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य के लिए कुदरत की हेल्प और पिछले संस्कार कुछ काम करते हैं?

दादाश्री : हाँ, करते हैं। वह तो बहुत संस्कार लेकर आया होता है, आस-पास के घर के लोग अच्छे संस्कारी होते हैं। पूर्व के संस्कार हों, तभी घर के लोग अच्छे मिलते हैं। उसका मन भीतर से इतना मज़बूत होता है और चारों और से सभी संयोग मिल जाते हैं। यह कहीं यों ही कोई गप्प थोड़े ही है? एक इंसान करोड़ रुपये कमाकर लाए तो वह भी गप्प नहीं होती, तो यह भी कोई गप्प है?!

विषय टूटे, विरोधी बनने पर

प्रश्नकर्ता : रविवार के उपवास का और ब्रह्मचारियों में क्या कनेक्शन है? उन्हें रविवार का उपवास क्यों करना है?

दादाश्री : वह तो कहने से करते हैं। दादा को सातों ही वारों से कुछ लेना-देना नहीं है, राग-द्वेष नहीं है। वह तो हमारे मुँह से जो निकल जाए वही वार अच्छा और कभी किसी मेज़बान के मन में ऐसा हो कि 'मेरे यहाँ अच्छा-अच्छा खाना

बनाया है और ऐसे संत पुरुष, बिना भोजन लिए जाएँ, भोजन नहीं ले रहे हैं,' तब मुझे इन लोगों से कहना पड़ता है कि आज खा लेना। हम एक टाइम खाने की आज्ञा देते हैं, ताकि उन घर वालों को दुःख नहीं हो। हाँ, अगर दूसरी बार खाओगे तो वह नहीं चलेगा। तुम्हें इस शरीर को बहुत कष्ट नहीं देना है, नॉर्मेलिटी में रखना है। उससे देह तेजवान बनता है, प्रभावशाली बनता है।

प्रश्नकर्ता : शरीर ज़रा पुष्ट बने ऐसा रखना चाहिए क्या?

दादाश्री : नहीं, पुष्ट नहीं लेकिन तेजवान होना चाहिए, जो स्टेन्डर्ड वज़न है, उतना ही रखना चाहिए।

रविवार का उपवास क्यों करते हैं? विषय का विरोधी बना है। विषय मेरी तरफ आए ही नहीं, इसलिए विषय का विरोधी बना, तभी से निर्विषयी हुआ। इस तरह मैं इन्हें विषय का विरोधी ही बनाता हूँ क्योंकि इनसे यों ही विषय छूट जाए, ऐसा नहीं है, ये तो सारे पके हुए फूट (ककड़ी जैसा फल) जैसे हैं, यह तो दूषमकाल के कुलबुलाते फूट है। इनसे कुछ छूट नहीं सकता, इसलिए तो दूसरे रास्ते निकालने पड़ते हैं न?

अब तुझे, ऐसा लगता है न कि तू खुद 'विषय का विरोधी है?'

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : विषय के विरोधी बन जाएँ, तो क्या रहेगा अपने पास?

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य रहेगा।

दादाश्री : संयम धारण करना, वह तो बहुत बड़ी चीज़ है। यह तो 'ज्ञानी' की आज्ञा से संयम धारण होगा। नहीं तो यह मार्ग व्यवहार संयम का नहीं है, यह तो ज्ञान मार्ग है। यह तो हम

आज्ञा देकर संयम रखवाते हैं। संयम आज्ञा से आता है। आज्ञा में रहने से संयम आता है।

प्रश्नकर्ता : इन सब का आत्मा का आनंद और उल्लास इतना बढ़ा दीजिए कि अन्य कहीं सुख खोजने जाना ही न पड़े।

दादाश्री : वह तो बहुत बढ़ा दिया है, लेकिन अब भी इन लोगों को अंदर अभिप्राय रहता है कि इस विषय में ठीक है, यह अच्छा है। उन सभी अभिप्रायों को मैं तोड़ रहा हूँ। एक अक्षर जितना भी अभिप्राय नहीं रखना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : सभी को ऐसा अभिप्राय थोड़े ही होता है?

दादाश्री : ऐसे तो कोई ही होता है। वह भी सीधे नहीं मिलते। मन तो बिगड़े हुए होते हैं उनके भी, शरीर बिगड़ा हुआ नहीं होता, फिर भी सीधे तो नहीं कहलाएँगे न?!

प्रश्नकर्ता : हमारे पूरे मन-वचन-काया-चित्त-बुद्धि-अहंकार, सभी में आत्मा का उल्लास क्यों व्याप्त नहीं हो जाता पूरा का पूरा?

दादाश्री : हाँ। व्याप्त हो जाता है, लेकिन भोग कहाँ पाता है? अभी तो वह पिछला घाटा है। पिछला जो *पूरण* किया है, वह *गलन* हो रहा है, उसमें एकाकार हो जाता है। जितनी जलेबी तुम्हें खानी हो, उतनी खाना, बाकी जलेबियाँ अगर तुम फेंक दो, तो जलेबी क्या तुम पर दावा करेंगी?

प्रश्नकर्ता : लेकिन विषय कैसे दावा करता है?

दादाश्री : वह तो आपको ऐसा लगता है कि सामने वाला दावा नहीं कर रहा है। सामने वाला दावा नहीं करे तो उसमें भी कोई परेशानी नहीं है, लेकिन इसमें तो परमाणु दावा करते हैं और इन परमाणुओं का तो इतना इफेक्ट होता है कि ओहोहो, आश्चर्यजनक इफेक्ट होता है!

प्रश्नकर्ता : लेकिन उस परमाणुओं का तो आप कहते हैं न, कि पुराना लेकर आए हैं, इसलिए उसी अनुसार असर तो होता होगा न?

दादाश्री : मेरा क्या कहना है कि असर हो रहा हो तो उससे भी आप अलग रहो, उसके दुश्मन बन जाओ ताकि उससे मित्रता न रहे, वर्ना वे पिला-पिलाकर आपको वापस गिरा देंगे!

जब हमने विषय की बात की, तब इन्होंने सब से पहले यही कहा कि विषय का सेवन गलत है, ऐसा हमें आज ज्ञान हुआ। लोगों को तो 'यह गलत है' ऐसा भी ज्ञान नहीं है। अरे, भान ही नहीं है न! जानवर में और इनमें फर्क कितना है? कुछ प्रतिशत का ही, ज़्यादा फर्क नहीं है। मतलब 'यह गलत है' ऐसा जानना तो पड़ेगा न?!

प्रश्नकर्ता : विषयों का सेवन गलत है, ऐसा तो ज़्यादातर हिन्दुस्तान के सभी लोग जानते हैं।

दादाश्री : नहीं, सभी को पता नहीं है। अभी तो आपको भी पता नहीं है न! 'क्या गलत है?' उसका पता नहीं चलता। आप अपनी समझ के अनुसार उसे गलत मानते हो कि 'ओहोहो, मियाँ-बीवी राज़ी तो क्या करेगा काज़ी' आप ऐसा समझते हो। अरे, मियाँ-बीवी लाख राज़ी हों, फिर भी उसमें क्या जोखिम है, वह आप नहीं समझोगे। और शादीशुदा और हरहाया में क्या फर्क है? वह आप नहीं समझोगे। शादीशुदा या हरहाया सब जोखिमदारी ही है। इसमें जोखिमदारी का भान है किसी को? जोखिमदारी का भान तो सिर्फ मैं ही अकेला जानता हूँ। अगर इंसान हरहाया शब्द नहीं समझे तो वह फिर कहाँ जाएगा? नर्कगति का अधिकारी बनेगा। शादी करनी ही हो तो करो न, दस के साथ शादी करो। उसके लिए कौन मना करता है! लेकिन हर कहीं दृष्टि बिगाड़ते हैं, वह जोखिम है और वह तो हरहाए पशु जैसी अवस्था कहलाती है। अगर देह हरहाया नहीं होता तो मन हरहाया होता है। अतः

अभी तक जो गलतियाँ हुई है, उनका प्रतिक्रमण कर-करके साफ कर देना है और उसे माफ करवाने का हथियार मेरे पास है। उसके बाद नये सिरे से साफ रहेगा।

आलोचना, आप्तपुरुष से ही

प्रश्नकर्ता : आपके पास ऐसे लोग आते हैं कि जो उनके खुद के पिछले हुए दोषों की आपसे आलोचना करते हैं तो आप उन्हें छुड़वा देते हैं?

दादाश्री : मुझ से आलोचना करे तो मेरे साथ अभेद हुआ कहलाएगा। हमें तो छुड़वाना ही पड़ेगा। आलोचना करने का अन्य कोई स्थान ही नहीं है, यदि स्त्री को बताने जाए तो स्त्री चढ़ बैठे, मित्र को बताने जाए तो मित्र चढ़ बैठे, खुद अपने आपसे कहने जाए तो खुद ही चढ़ बैठता है उल्टा इसलिए किसी को नहीं बताता और हल्का नहीं हो पाता इसलिए हमने आलोचना का सिस्टम (पद्धति) रखा है।

प्रश्नकर्ता : इस जन्म में हमने जो दोष किए हैं, ज्ञानी पुरुष के समक्ष उनके लिए माफी माँग सकते हैं?

दादाश्री : हाँ। वे दोष फिर कमज़ोर पड़ जाएँगे। जब ज्ञानी पुरुष से आलोचना करे, तब वह खुद कहे तो उत्तम। हमें रूबरू कहे। सभी की मौजूदगी में हम से कहे, वह ऑर्केस्ट्रा क्लास फिर आप कहो कि नहीं, मैं अकेले होऊँगा, तब दादा से कहूँगा, वह फर्स्ट क्लास। और फिर आप कहो कि दादा को मुँह से नहीं बताऊँगा, कागज़ में दूँगा, तो सेकन्ड क्लास। और आप कहो कागज़ में भी नहीं, मैं मन में ही घर पर कर लूँगा, वह थर्ड क्लास। जिसे जिस क्लास में बैठना हो, उसे छूट है लेकिन सभी को मेरे साथ एकता आ जाती है क्योंकि हार्ट 'प्योर' ही है न! मुझे तो अभेद ही लगते हैं सभी और वे खुद का जो एफिडेविट (शपथ पत्र, हलफनामा) लिखते हैं, उसमें एक भी दोष लिखना

बाकी नहीं रखते। पंद्रह साल की उम्र से लेकर चालीस साल की उम्र तक के सभी दोष लिखकर दे देते हैं, ये लड़के, लड़कियाँ वगैरह सभी ज़ाहिर कर देते हैं।

जिसे दोष निकालने हों, उसे हमारे पास आलोचना करनी चाहिए। जिससे बहुत बड़ा दोष हुआ हो और वह दोष निकालना हो और मेरे पास आलोचना करे तो आलोचना करते ही उसका मन मेरे पास बंध जाता है। फिर हम भगवान की कृपा उतारते हैं और उसे साफ कर देते हैं।

हमारे पास आलोचना लिखकर लाते हैं। जितने-जितने दोष वह खुद जानता हो, वे सभी दोष उसमें लिख लेता है। वह भी एक जन नहीं, हज़ारों लोग! अब उन दोषों का हम क्या करते हैं? उसका कागज़ पढ़कर, उस पर विधि करके वापस उसके हाथ में दे देते हैं। उसे कितना विश्वास! वर्ल्ड में कहीं नहीं हुए हों, ऐसे दोष लिखते हैं! दोष पढ़कर ही आपको ऐसा लगे कि अरेरे, ये तो कैसे दोष?!

ऐसे हज़ारों लोगों ने खुद के दोष लिखकर दिए है, स्त्रियों ने भी सभी दोष खुलकर बताए हैं, संपूर्ण दोष। सात पति किए हों तो, सातों के नाम के साथ लिखा होता है, बोलो अब हमें क्या करना चाहिए यहाँ? बात ज़रा भी किसी को पता चले तो वह आत्महत्या कर ले, तो हमारी बहुत जोखिमदारी आती है।

सही आलोचना की नहीं है लोगों ने। वही मोक्ष में जाने से रोकता हैं। गुनाह हुआ तो हर्ज नहीं है। सही आलोचना हो तो कोई दिक्कत नहीं आएगी। आलोचना तो ग़ज़ब के पुरुष के सामने करनी चाहिए। खुद के दोषों की कहीं पर आलोचना की है ज़िंदगी में? किसके सामने आलोचना करे? और आलोचना किए बिना चारा नहीं। जब तक आलोचना नहीं करोगे तो उसे माफ कौन करवाएगा?

अब तो उधार चुका दो

जिसे जो कुछ भी चाहिए तो उसे हमारे वचनबल से प्राप्त हो सकता है। अभी तक हुए तमाम दोष मैं धुलवा देता हूँ। अब उधार चुका देते हों तो अच्छा है या नहीं? फिर नये सिरे से उधार नहीं चढ़ाना, लेकिन अब तक का उधार चुका दिया तो फिर झंझट खत्म हो गया न? नहीं तो एक बार उधार लिया कि फिर उधार और भी ज़्यादा कर्जे में उतारता जाता है। क्या कहता है कि 'होगा, इतने कंगाल हुए तो इतना और सही!' फिर अंततः क्या आता है? दुकान नीलाम हो जाती है।

वास्तव में तो यह विज्ञान ऐसा है कि 'आप ऐसा करो या वैसा करो' ऐसा कुछ नहीं बोल सकते, लेकिन यह तो काल ही ऐसा है! इसलिए हमें यह कहना पड़ता है। इन जीवों के ठिकाने नहीं हैं न? यह ज्ञान लेकर बल्कि उल्टे रास्ते चल सकता है इसलिए हमें कहना पड़ता है और हमारा वचनबल है तो फिर हर्ज नहीं। हमारे वचन से करे तो उसे कर्तापद की जोखिमदारी नहीं रहेगी न! हम कहें कि 'आप ऐसा करो।' तो आपकी जोखिमदारी नहीं, और मेरी जोखिमदारी इसमें रहती नहीं!

वह पाए परमात्म पद

प्रश्नकर्ता : जब कसौटी हो, तब जो संयम का पालन करे, उसे संयम कहते हैं। जब विषय के वातावरण में आए और उसमें से निकल गया तो कह सकते हैं कि इसे संयम है।

दादाश्री : लेकिन विषय तरफ के विचार कभी भी नहीं आते हों तो उसकी तो बात ही अलग है न! क्योंकि पिछले जन्म में भावना की हो तो विचार नहीं आते। हमें बाईस-बाईस साल से विषय का विचार ही नहीं आया, ज्ञान होने से पहले के दो सालों में तो विषय का विचार तक नहीं आया था। हम से विषय-विकारी संबंध नहीं हुए थे। विकारी संबंध में हमें यह मिथ्याभिमान

था कि हम से यह नहीं हो सकेगा। हमारे कुल के अभिमान की वजह से इसकी बहुत रक्षा हो गई। ब्रह्मचर्य, वह तो सब से ऊँची चीज़ है। उसके जैसी बड़ी चीज़ कोई है ही नहीं न!

अब अनुपम पद छोड़कर उपमा वाला पद कौन ले? ज्ञान है तो पूरे जगत् की वह जूठन कौन छूएगा? जगत् को जो प्रिय हैं ऐसे विषय, ज्ञानी पुरुष को जूठन लगते हैं। इस जगत् का न्याय कैसा है कि जिसे लक्ष्मी से संबंधित विचार नहीं आते, विषय से संबंधित विचार नहीं आते, जो देह से निरंतर अलग ही रहता हो, उसे जगत् भगवान कहे बगैर रहेगा नहीं!

[2.18]
दादा देते पुष्टि, आप्तपुत्रियों को

मोह ढक देता है जागृति को

जगत् जानता ही नहीं न कि यह रेशमी चादर से लपेटा हुआ है सारा? खुद को जो पसंद नहीं है, वही कचरा इस रेशमी चादर में लपेटा हुआ है। ऐसा तुम्हें लगता है या नहीं लगता? इतना समझे तो निरा वैराग्य ही आ जाए न? इतना भान नहीं रहता, इसीलिए तो यह जगत् ऐसा चल रहा है न? ऐसी जागृति किसी को होगी इन बहनों में से? कोई इंसान सुंदर दिख रहा हो, उसे छीला जाए तो क्या निकलेगा?

प्रश्नकर्ता : खून-मांस वगैरह सब निकलेगा।

दादाश्री : मांस-पीप ऐसा सब ही न? और रूप कहाँ गया फिर? ऐसा सब सोचा नहीं है, इसीलिए यह मोह है न?!

प्रश्नकर्ता : हाँ, ऐसा ही लगता है।

दादाश्री : हाँ, देखो न कैसा फँसाव! सोचो तो फँसाव जैसा नहीं लगता, बहन?! बुद्धि से बात सही लगती है न, कि भीतर यह सारी गंदगी है? हर एक में गंदगी होगी या कुछ साफ भी होगे, मोम जैसे?

प्रश्नकर्ता : हर एक में गंदगी है।

दादाश्री : इन दादाजी में भी गंदगी है। दादाजी यानी 'दादा

भगवान' वे अलग हैं और ये 'ए.एम.पटेल' अलग हैं। पटेल में गंदगी ही है, 'दादा भगवान' में गंदगी नहीं है।

इस शरीर में ऐसी सब गंदगी है, ऐसी जागृति रहे तब फिर कोई कितना भी सुंदर दिखे, फिर भी मोह उत्पन्न होगा क्या?

प्रश्नकर्ता : नहीं होगा।

दादाश्री : वह जागृति नहीं है, उसी वजह से यह मोह उत्पन्न होता है और उस मोह में से फिर निरे दुःख ही खड़े होते हैं। वर्ना दुःख तो होता होगा? और कोई कहेगा कि तब शादी क्यों करते हो? तब मैं कहता हूँ कि शादी तो करनी पड़ती है, अवश्य करनी पड़ती है। अपनी इच्छा नहीं हो फिर भी मंडप में बिठा दें तो क्या होगा? बिठाते है या नहीं बिठाते?

प्रश्नकर्ता : बिठाते हैं।

दादाश्री : सभी मिलकर बिठा देते हैं न? 'साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल ऐविडन्स' बिठा देते हैं, उसमें चारा ही नहीं है। वह तो सब भुगतना ही पड़ता है। बाकी, यदि शादी नहीं करनी हो तो कौन लफड़ा खड़ा करेगा? शादी करनी हो तो कुदरती चारा ही नहीं। वर्ना बिना वजह राज़ी-खुशी से कोई लफड़ा खड़ा ही नहीं करेगा न? कोई करेगा? इस बात पर से सभी बहनों को समझ में आता है न?

कोई लड़का अच्छे कपड़े-वपड़े पहनकर, नेकटाई-वेकटाई पहनकर बाहर जा रहा हो और उसे काटे तो क्या निकलेगा? तू बेवजह क्यों नेकटाई पहनता है? मोह वाले लोगों को भान नहीं है इसलिए सुंदरता देखकर उलझ जाते हैं बेचारे! जबकि मुझे तो सबकुछ खुला आरपार दिखता है। ये सभी लोग कपड़े उतारकर घूमें तो तुझे खराब नहीं लगेगा?

प्रश्नकर्ता : बहुत खराब लगेगा।

दादाश्री : यानी कि इन कपड़ों की वजह से अच्छे दिखते हैं। क्या बिना कपड़े के अच्छे दिखते हैं? बिना कपड़े तो ये गाय, भैंस, बकरी, कुत्ते, सभी अच्छे दिखते हैं, लेकिन मनुष्य अच्छे नहीं दिखते। अब ऐसा ज्ञान कोई देता ही नहीं न? ऐसी सविस्तार समझ ही कोई नहीं देता न। फिर मोह ही उत्पन्न होगा न! दादाजी तो कहते थे कि यह सब तो ऐसी गंदगी है, फिर मोह कैसे उत्पन्न होगा? कोई स्त्री या पुरुष भले ही, कैसे भी बाल बनाकर घूम रहे हों, तो हमें क्या उसमें? चीरें तब भीतर से क्या निकलेगा उसमें से? जैसे यह लौकी छीलते हैं, वैसे ही जब उसे छीलेंगे तब क्या होगा? भीतर का कचरा दिखेगा न? किसी को यहाँ पीप पड़ गया हो और वह तुझे कहे कि 'लो, यह धो दो।' तो वह तुझे अच्छा लगेगा? उसे तो छूना भी अच्छा नहीं लगेगा न? और कोई मित्र हो और उसे पीप नहीं पड़ा हो तो तुझे हाथ लगाना अच्छा लगेगा न? लेकिन अंदर तो ऐसा कचरा माल ही भरा है। उसे तो हाथ भी नहीं लगा सकते। मोह करने जैसा जगत् है ही कहाँ? लेकिन ऐसा सोचा ही नहीं न! किसी ने बताया ही नहीं! माँ-बाप भी शर्म के मारे नहीं बताते। खुद फँसे हैं, वे सब को फँसाते रहते हैं। ये दादाजी नहीं फँसे इसलिए सभी को खुला कह देते हैं कि 'देखना, इस रास्ते पर फँसोगे। ये रास्ते अच्छे नहीं है। यह तो भयंकर मार्ग है।' दादाजी ऐसे लाल झंडी दिखाते हैं कि 'भाई, यह पुल गिरने वाला है' फिर गाड़ी को आगे नहीं जाने दोगे न?

अभी कम उम्र है आपकी, उसमें एक ही बार फँस गए, फिर बचना बहुत ही मुश्किल है इसलिए शुरू से ही सावधान रहकर चलना। बाहर तो जगत् देखने जैसा है ही नहीं। जगत् फ्रेन्डशिप करने जैसा है ही नहीं। तुझे ऐसा लगा?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : जगत् शादी करने जैसा भी नहीं है, लेकिन शादी किए बिना चारा ही नहीं। वह अपने हाथ में है ही नहीं न! हमें

शादी नहीं करनी हो फिर भी मार-पीटकर, रुला-धुलाकर मंडप में बिठा देते हैं। वह तो अनिवार्य है, दंड है एक तरह का। उसे भुगते बिना तो छुटकारा ही नहीं है, वह 'व्यवस्थित' है।

इस बहन को भी अगर मन में भावना हो कि ये सभी व्रत ले रहे हैं तो मैं भी ले लूँ, तो मैं मना करूँगा उसे। छः -बारह महीनों में जब कभी संयोग बैठे तब शादी कर लेना। हम आशीर्वाद देंगे और फिर तुझे लाभ हो ऐसा रास्ता कर दूँगा। और लाभ अच्छा होगा। यह जो उलझन हुई है, वह उलझन कोई नहीं छुड़वाएगा।

मैं तो लड़कियों को मना कर देता हूँ। ज्ञान में रहती हों, फिर भी मना कर देता हूँ।

प्रश्नकर्ता : हाँ, इसमें देखा-देखी करने जैसा नहीं है।

दादाश्री : पुरुष को तो निभा सकते हैं क्योंकि पुरुष को तो अन्य कोई भय नहीं है और इसे तो अन्य भय नहीं हो फिर भी कोई छेड़खानी कर सकता है।

शादी करने का आधार निश्चय पर

प्रश्नकर्ता : हम अगर शादी नहीं करने का निश्चय करें, तो फिर 'व्यवस्थित' वैसा ही आएगा न?

दादाश्री : शादी नहीं करने का ज़बरदस्त निश्चय हो तो शादी नहीं होगी लेकिन निश्चय ऐसा नहीं होना चाहिए कि फिर दूसरे दिन भूल जाए। निश्चय किसे कहेंगे कि निरंतर याद रहे। निश्चय भूल जाए तो फिर शादी होगी, वह बात निश्चित है। निश्चय नहीं भूले, तो शादी नहीं होगी, उसकी मैं गारन्टी लिख देता हूँ। क्योंकि जिस गाँव हमें जाना है, वह तो भूलना नहीं चाहिए न? हमें बोम्बे सेन्ट्रल जाना हो तो फिर अगर उसे भूल जाएँगे तो चलेगा? वह तो याद रहना चाहिए न? उसी तरह शादी नहीं

करनी है ऐसा जो निश्चय किया है, उस निश्चय को भूले नहीं, तो फिर उसकी शादी नहीं होगी। वे सभी शादी करवाना चाहें, लड़का ढूँढ लाएँ, फिर भी कुदरत मेल नहीं बैठने देगी। बाकी यह संसार तो निरा दुःख का समुद्र ही है, उसका अंत नहीं आ सकता।

दोष, आँखों का या अज्ञानता का?

अब यह सारा ज्ञान हाज़िर रहेगा न? वह तो हमें हाज़िर रहना ही चाहिए कि इसे छीलेंगे तो क्या दिखेगा? इन आँखों का स्वभाव है आकृष्ट होना। कोई सुंदर मूर्ति देखे न, तो आँखों को आकर्षण होता है। यह आकर्षण कैसे हुआ? तब कहते हैं कि पूर्व जन्म का हिसाब है, हमें आकर्षण नहीं करना हो फिर भी होता रहता है। आकर्षण, वह डिस्चार्ज हो रही चीज़ है इसलिए जहाँ आकर्षण हो, वहाँ हमें ज्ञान हाज़िर रखना है कि 'दादाजी ने कहा है कि चमड़ी छीलें तो क्या निकलेगा?' ताकि वैराग्य आ जाए और फिर मन टूट जाए, वर्ना आकर्षण के साथ मन एडजस्ट हुआ तो खत्म कर देगा। लफड़े ही चिपक जाएँगे। लफड़े चिपकें तो फिर छूटते नहीं हैं, सात-सात जन्मों तक नहीं छूटते, ऐसा बैर बाँधते हैं, लेकिन हमें तो मोक्ष में जाना है। मोक्ष में जाने वाले को ऐसे लफड़े वाला व्यापार सहन ही नहीं होगा। जो माल हमें नहीं चाहिए, सभी हलवाई की दुकानें हो, लेकिन हमें कुछ नहीं लेना हो, तो क्या हम उन्हें देखते रहते हैं?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : उसी तरह स्त्री को पुरुषों की ओर नहीं देखना चाहिए और पुरुषों को स्त्रियों की ओर नहीं देखना चाहिए क्योंकि वे अपने काम का नहीं हैं। दादाजी कहते थे कि 'यही कचरा है,' तो फिर उसमें देखने को क्या रहा?

एक बार एक बड़े संत छत पर बैठे-बैठे किताब पढ़ रहे

थे। सामने वाले किसी घर की खिड़की में एक स्त्री खड़ी होंगी, उन्होंने उसे देखा कि उनकी आँखें आकृष्ट हुई और वे तो विचारशील इंसान, इसलिए मन में लगा कि 'ऐसा क्यों हो रहा है? ऐसा नहीं होना चाहिए।' फिर वापस पढ़ने लगे, लेकिन फिर से आँखें आकृष्ट हुई तब उन्हें लगा कि 'यह तो बहुत गलत है।' इसलिए तुरंत वहाँ से उठकर रसोई में गए और रसोई में जाकर पिसी हुई लाल मिर्च आँखों में डाल दी। यह क्या उन्होंने अच्छा किया? वह क्या आँखों का दोष है? किसका दोष है?

प्रश्नकर्ता : मन का दोष है।

दादाश्री : नहीं, अज्ञानता का दोष है। अज्ञान है, इसीलिए न! अब आँखों में मिर्च डालना, ऐसा उनके किसी भी शिष्य ने नहीं सीखा। शिष्य जानते थे कि गुरु महाराज इमोशनल हो गए होंगे और मिर्च डाली होगी, हमें नहीं डालनी है भाई! आँखों में मिर्च डालने से क्या फायदा होगा? इसके बजाय मेरी बात याद रहे तो मोह उत्पन्न ही नहीं होगा न? और वास्तव में वैसा ही है। यह क्या कोई गप्प है?

प्रश्नकर्ता : आँखें आकृष्ट हों, लेकिन विकारी भाव नहीं हों तो?

दादाश्री : तो हर्ज नहीं। विकारी भाव अपने में नहीं हों लेकिन अगर सामने वाले में हों तब क्या होगा? इसलिए आकर्षण में नहीं फँसना है। जहाँ आँखें आकृष्ट हों, वहाँ से दूर रहना। अन्य कहीं, जहाँ आँखें सीधी रहें, वहाँ सब व्यवहार करना। जहाँ आँखें आकृष्ट हों, वहाँ पर जोखिम है, लाल झंडी है। अपने में विकारी भाव न हों, लेकिन सामने वाले का क्या? सभी जगह आकर्षण नहीं होता न?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : इसलिए आकर्षण के नियम हैं कि कुछ जगहों

पर ही आकर्षण होता है, हर कहीं नहीं होता। अब यह आकर्षण किस तरह होता है, वह आपको बता दूँ।

इस जन्म में आकर्षण नहीं हो, फिर भी किसी पुरुष को देखा, तब आपके मन में ऐसा हो जाए कि, 'ओहोहो, यह पुरुष कितना सुंदर है, खूबसूरत है।' ऐसा आपको हुआ कि तभी अगले जन्म की गाँठ पड़ गई। उससे अगले जन्म में आकर्षण होगा। कैसा रूप? इसे छीलें तो क्या निकलेगा? रूप किसे कहते हैं कि छीलने पर भी खराब नहीं निकले। इस रूप को तो देखने जैसा नहीं है। हीरे का रूप ठीक है। उसे अगर छीलें तो कुछ भी नहीं होगा, उसमें गंदगी नहीं है न?! सोने का, चाँदी का रूप ठीक है। इन मनुष्यों के गुण होते हैं, लेकिन वे कैसे गुण होते हैं? संसारी गुण। संसारी गुणों की प्रशंसा करने जाएँ, तब आकर्षण होता है। धार्मिक गुणों, ज्ञान के गुणों की प्रशंसा करे, वह बात अलग है। बाकी जगत् प्रशंसा करने जैसा नहीं है, सिर्फ एक शुद्धात्मा ही समझने जैसा है।

निश्चय उसे कहते हैं कि भूले नहीं। हमने शुद्धात्मा का निश्चय किया हैं, उसे भूलते नहीं न? थोड़ी देर भूल जाते हैं, लेकिन लक्ष्य में ही रहता है फिर, उसे निश्चय कहते हैं। किसी के साथ हम फ्रेन्डशिप भी न करें, बहुत घाल मेल नहीं रखें। एक बार यह लफड़ा चिपकने के बाद तो फिर अलग नहीं हो पाता।

'जेनुं निदिध्यासन करे, तेवो आत्मा थाय
जे जे अवस्थे स्थित थए, व्यवस्थित चितराय'

निदिध्यासन यानी कि 'यह स्त्री सुंदर है या यह पुरुष सुंदर है।' ऐसा सोचे, तो उतनी देर वह निदिध्यासन हो गया। सोचा कि तुरंत ही निदिध्यासन हो जाता है। फिर खुद वैसा ही बन जाता है। अत: अगर हम देखेंगे तभी झंझट होगा न? उससे अच्छा तो आँखें नीचे कर देनी चाहिए। आँखें गड़ानी ही नहीं चाहिए।

पूरा जगत् फँसाव है। फँसने के बाद तो छुटकारा ही नहीं है। कितने ही जन्म खत्म हो जाएँ, लेकिन फिर भी उसका 'एन्ड' ही नहीं है! शादी किए बिना तो चलेगा नहीं और शादी करना तो समझे कि मिलेगा, लेकिन ये दूसरे लफड़े तो खड़े न करें। लफड़े में बहुत दुःख है। शादी करने में इतना दुःख नहीं है। शादी तो एक तरह का व्यापार शुरू किया कहलाएगा। कुछ स्त्रियाँ नहीं कहतीं कि व्यापार शुरू किया? वह व्यापार फिर पूरा हो जाता है। यानी एक जगह तो शादी करनी ही होती है, हिसाब लिखा हुआ ही होता है, लेकिन दूसरे लफड़ों का अंत नहीं आता।

यह जो दादाजी ने बात बताई, वह तुम भूल जाओगी क्या? घर जाकर भूल नहीं जाओगी न?

प्रश्नकर्ता : अंदर टेप करने का निश्चय किया है।

दादाश्री : हाँ, ठीक है। हम तो वहाँ तक का सब दिखा देते हैं कि तुम्हें भीतर ठोकर नहीं लगे। फिर अगर तुम जान-बूझकर हमारे शब्दों को लांघो तो ठोकर लगेगी, फिर तो यह ज्ञान भी चला जाएगा। यह ज्ञान ठेठ मोक्ष में ले जाए, ऐसा है। इस संसार में कहीं सुख तो होता होगा? सुख तो यह जो आत्मा की बात करते हैं, उसमें आता है न? उसमें सुख है।

शादी किए बिना तो चारा ही नहीं है न? ऐसा तुम समझती हो या नहीं? तुम्हारे माँ-बाप और सभी मिलकर शादी करवा ही देते हैं। तुम्हारी इच्छा नहीं हो फिर भी शादी करवा देते हैं। तुम्हारी इच्छा क्यों नहीं होती? क्योंकि आपने एक सेम्पल देखा हो, वह सेम्पल इससे ज़्यादा सुंदर दिखता हो इसलिए वह अच्छा लगता है और यह अच्छा नहीं लगता। अरे, वह भी सेम्पल है और यह भी सेम्पल है। दोनों को छीलेंगे तो अंदर से क्या निकलेगा? लेकिन उसका तो उस सेम्पल में ही जीव रहता है कि 'वह कितना सुंदर था और मेरे फादर यह लाए, वह कितना बदसूरत!'

प्रश्नकर्ता : शरीर की बात जाने दें। यदि इंसान का मन अच्छी तरह से गढ़ा हुआ हो तो क्या उससे फर्क नहीं पड़ेगा?

दादाश्री : वैसे गढ़े हुए मन तो कुछ ही लोगों के होते हैं। सभी लोगों के मन गढ़े हुए नहीं होते न? ये जो सारे लोग घूमते हैं, उनके मन कोई गढ़े हुए नहीं हैं, वे तो दगाखोर मन। इसलिए हम यह गढ़ाई करते हैं। उसके बाद वे नहीं फँसते वर्ना अगर गढ़ाई नहीं की गई हो तो फिर फँस जाएँगे। यह जगत् तो शिकारी है, शिकार ढूँढते हैं। पूरा जगत् शिकार करने को निकला है। लक्ष्मी के, विषय वगैरह के जहाँ-तहाँ शिकार ही ढूँढते रहते हैं।

इन लड़कियों की उम्र छोटी है और अगर यह ज्ञान नहीं मिले तो कितना जोखिम है! एक बार फँसने के बाद इसमें से निकलना महामुश्किल है। फिर तो लफड़ा चिपक जाता है। अब यह फँसाव है, लफड़ा है ऐसा समझ गई न '*लफरुं जो जानी कह्युं, तो छूटुं पडतुं जाय*' आपको इसका क्या मतलब समझ में आया?

एक लड़का कॉलेज में पढ़ रहा था। वह पारसी लेडी के साथ घूमने लगा। वह जैन था इसलिए उसके पिताजी ने क्या कहा, 'यह लफड़ा तू कहाँ से लाया है?' तब लड़का कहता है कि, 'मेरी फ्रेन्ड को आप लफड़ा कहते हो? आप कैसे इंसान हो?' लड़के ने ऐसा कहा, उसका कारण? जब तक उसे 'यह लफड़ा है', ऐसा समझ नहीं आता है और 'यह फ्रेन्ड ही है' ऐसा समझता है तब तक लफड़ा मिलता रहेगा। लेकिन एक दिन जब उसने देखा कि वह पारसी लेडी किसी और के साथ घूम रही थी, तब उसके मन में शंका हुई कि 'यह तो लफड़ा है।' मेरे पिताजी कह रहे थे, वह बात सही है। जब से उसने जाना कि 'यह लफड़ा है', तब से वह अपने आप छूट गया। यह ज्ञान कैसा होगा? कि उसे लफड़ा समझे तब से अलग होता जाता है। कॉलेज में ऐसे लोग होते हैं न जो लफड़ा मोल लेते हैं?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : ऐसा तुझे पता चलता है न कि यहाँ उसका लफड़ा है? सबकुछ पता चलता है इसलिए हमें इस तरफ इतना सीख जाना चाहिए कि अपनी सेफ साइड किस में हैं? दादा ने जो यह बताया, वही सेफ साइड। ये सभी लौकियाँ काटो तो अंदर से निरा कचरा निकलेगा।

इन जानवरों में बुद्धि लिमिटेड है और मन भी लिमिटेड है इसलिए जानवरों को हमें सिखाने नहीं जाना पड़ता कि आप ऐसे लफड़े मत करना। क्योंकि जानवरों में तो आसक्ति होती ही नहीं। आसक्ति तो बुद्धि वाले में होती है। सभी जानवर कुदरती जीवन जीते हैं, नोर्मल जीवन जीते हैं जबकि ये मनुष्य तो बुद्धि वाले इसलिए आसक्ति खड़ी करते हैं कि कितनी अच्छी दिख रही है! अरे, घनचक्कर, उसे छील तो सही। छीलने पर अंदर से क्या निकलेगा?

इस सत्संग में ही रहने जैसा है। अन्य कहीं मित्रता करने जैसी नहीं है। सत्‌युग में मित्रता थी, ठेठ तक की, ज़िंदगी भर मित्रता निभाते थे। अभी तो दगा देते हैं।

वैराग्य लाने के लिए लोग किताबें लिखते रहे। अस्सी प्रतिशत किताबें वैराग्य लाने के लिए लिखी गई हैं, फिर भी किसी में वैराग्य नहीं दिखा। वैराग्य तो, अगर ज्ञानी पुरुष एक घंटा बोलें न तो जन्मोंजन्म तक वैराग्य याद रह जाता है। इस ज्ञान से वैराग्य रहता है या नहीं रहता?

प्रश्नकर्ता : हाँ, रहता है। आज के सत्संग से बहुत ही फर्क पड़ गया।

दादाश्री : यह सत्संग नहीं हो, तब तक मनुष्य उलझता रहता है। ऐसा पज़ल खड़ा हो तब क्या करना चाहिए, वह पता

नहीं होता। यह तो जब पज़ल खड़ा होता है, तब दादाजी के शब्द याद आते हैं।

कॉलेज में तो कई रोग उत्पन्न हो जाते हैं। कॉलेज में निरे रोग ही खड़े होते हैं। सबकुछ जोखिम है। हमें अपने आप ही पढ़ना-करना है, लेकिन अपनी सेफ साइड रखना। हमें सेफ साइड रखकर काम लेना है, वर्ना हर कहीं फिसलने के साधन हैं। एक बार फिसलने के बाद फिर ठिकाना नहीं पड़ेगा, समुद्र में गहरा उतर जाए तो फिर कब पार आएगा? सभी स्त्रियाँ तो कमल जैसी हैं और फिर अगर उन्हें दुःख हो तो वह दुःख दादाजी के नाम पर हुआ कहलाएगा तो क्या दादाजी आपको सावधान न करें? और दादाजी पर इतना भरोसा हुआ फिर भी दुःख आया?! इसलिए दादाजी तो सावधान करते हैं। दादाजी बोर्ड लगाते हैं कि 'बिवेयर।' ऐसे बोर्ड लगाते हैं न, 'बिवेयर ऑफ थीफ्स', 'चोरो पासून सावध रहा?' उसी तरह ये 'बीवेयर' का बोर्ड लगाते हैं।

हमने सभी आप्तपुत्रों से कहा है कि आपको शादी करनी हो तो हम आपको लड़की दिखाएँगे, फर्स्ट क्लास लड़की। फिर भी मना करते हैं। वर्ना लड़कों के माँ-बाप मुझे कहेंगे नहीं? कि 'आपकी वजह से ये लड़के कुँआरे रहते हैं।' मैं कहता हूँ, 'ठीक है।' लेकिन उनकी उपस्थिति में मैं कहता हूँ कि, 'शादी कर लो'। हम ऐसा नहीं कहते कि 'ऐसा ही करो' ऐसा किसी को नहीं कहते। शादी करना या नहीं करना, तेरे कर्म के उदय के अधीन है।

हम भी शादी करके विधुर हुए ही हैं न! जो शादी करेगा वह विधुर होगा। मुझे शादी करते वक्त विचार आया था कि 'शादी कर रहे हैं लेकिन विधुर होना पड़ेगा एक दिन।' शादी करते वक्त, मंडप में ही विचार आया था। पंद्रह साल की उम्र में। वह मैंने पुस्तक में ज़ाहिर किया तो लोग हँसते हैं! अगर शादी करेंगे तो विधुर होना ही पड़ेगा न! उन दोनों में से एक को तो विधुर

होना पड़ेगा न! तुझे पता नहीं था कि जो शादी करे उसे वैधव्य भुगतना पड़ेगा? शादी करेगा, उसे वैधव्य मिलेगा?

प्रश्नकर्ता : उस घड़ी, शादी करते वक्त तो ऐसा ही लगता है कि जन्म-जन्म का साथ हो।

दादाश्री : हाँ। लेकिन मन के वैरागी हो जाने के बाद ऐसा पता चलता है न! हिसाब निकालता है न! एक दिन हिसाब निकालना आएगा या नहीं!

प्रश्नकर्ता : आएगा।

दादाश्री : इस जगत् का हिसाब निकालना। हिसाब निकालना आ जाए तो निरा घाटा ही निकालेंगे न! लेकिन लोग निकालते नहीं हैं न कभी भी। हिसाब निकालना नहीं आता, वे तो फायदा ही देखते हैं इसमें। 'बेहद फायदा है', कहेंगे।

प्रश्नकर्ता : आपकी मौजूदगी में एडजस्टमेन्ट कर लेना है।

दादाश्री : हाँ। ये आप्तपुत्र तो ज्ञान की वजह से ब्रह्मचर्य रख सके, वर्ना ब्रह्मचर्य पालन करना वह तो महामुश्किल चीज़ है। ज्ञान और ज्ञानी की आज्ञा, क्या नहीं कर सकते? इसलिए मन में उल्टा विचार तक नहीं आता।

मेरे पास सभी लड़के आते हैं न हिन्दुस्तान में। 'अरे, भाई, शादी कर लो न' कहा। 'इतनी सारी लड़कियाँ, लोगों की लड़कियाँ कहाँ जाएँगी?' 'नहीं, हमने तो सारा सुख देखा, हमारे माँ-बाप का, लड़ते हैं वे तो। हम देखते हैं न सुख, इसलिए हमने जान लिया है कि भाई, इसमें सुख नहीं है। हमने इन माँ-बाप का अनुभव देखा, इसलिए अब हमें शादी नहीं करनी है।' कहते हैं। मेरे पास सौ-एक लड़के हैं। हाँ, ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, ज़बरदस्त। कड़ा ब्रह्मचर्य पालन करते हैं। स्त्री पर दृष्टि तक नहीं डालते, दृष्टि गई तो तुरंत प्रतिक्रमण।

ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने वाली लड़कियाँ भी हैं, ऐसी मज़बूत। कुछ पालन नहीं कर सकतीं, कुछ ही लोग। स्त्रियों में मोह ज़्यादा होता है, लड़कियों को, इसलिए पालन नहीं कर सकतीं। जिसे मोह कम हो उसे फिर अगर हम दवाई दे दें तो वे ऑलराइट हो जाती हैं।

इस विवाह-संबंध के स्वरूप को तो देखो

सभी लोग कहें, तब एक बार तुम्हें ठीक लगे तो शादी कर लेना। यह कहीं हज़ार-दो हज़ार साल का विवाह नहीं है। यह तो पच्चीस साल या पचास साल का क़रार है। लंबे क़रार नहीं हैं न? लंबे क़रार हों तो शादी नहीं करनी चाहिए। ये तो छोटे क़रार, शोर्ट क़रार हैं। ये क्या लंबे क़रार है? और उसमें भी अलग होने की सरकार ने छूट दी है न? छूट नहीं दी?

प्रश्नकर्ता : हाँ, दी है।

दादाश्री : यानी शादी कर लेना अच्छा है। कैसा भी नहीं! आपको पसंद आए उसके साथ। शादी हमेशा सुख देगी, ऐसा नक्की नहीं होता। शादी दुःख भी देती है। अभी जब तक संसार का मोह है, तब तक दुःख भुगतना पड़ेगा न? वर्ना जिसे ब्रह्मचर्य पालन करना हो उसे कोई दुःख ही नहीं है, झंझट ही नहीं है न! लेकिन यदि निर्बलता खड़ी हो रही हो, तो उसके बजाय शादी कर लेना अच्छा है, वर्ना ऐसा करते-करते चालीस साल हो जाएँगे और बाद में एक भी लड़का नहीं मिलेगा। अभी तुम्हें तीस-बत्तीस साल हुए हैं, तो बत्तीस-पैंतीस साल का लड़का मिल जाएगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन अगर मुझे ब्रह्मचर्य ही पालन करना हो तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : तो फिर मन में विषय का विचार आए, उस समय उस विचार को, हम जो साबुन देते हैं उससे धो देना और

किसी की आँखों के साथ अपनी आँखें मत मिलाना और यदि दृष्टि मिल जाए तो उसे धो देना। हम सभी तरह का साबुन देते हैं ताकि ब्रह्मचर्य पालन किया जा सके। विचार तो उत्पन्न होते हैं। 'अट्रैक्शन' उत्पन्न होता है, वह कुदरती है, लेकिन अट्रैक्शन होने के बाद साबुन से धो दें तो वापस अट्रैक्शन नहीं होगा।

आकर्षण कुछ के प्रति ही क्यों?

प्रश्नकर्ता : मन में तय किया हो कि किसी भी लड़के के लिए खराब विचार नहीं करने हैं और मुझे खराब विचार नहीं आते लेकिन उसका चेहरा दिखता रहता है, प्रतिक्रमण करती हूँ फिर भी वापस वह तो दिखता ही रहता है तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : दिखता रहे तो उससे क्या? हमें देखते रहना है, प्रतिक्रमण करके उखाड़ देना है बस!

प्रश्नकर्ता : उसकी ओर आकर्षण होता है, वह अच्छा नहीं लगता इसलिए उसका प्रतिक्रमण करती है, लेकिन फिर भी वह और भी ज़्यादा दिखता रहता है।

दादाश्री : वह दिखे तब प्रतिक्रमण होगा और प्रतिक्रमण करने से फिर धीरे-धीरे कम होता जाएगा। गाँठ बड़ी हो तो एकदम से कम नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : मुझे उसका चेहरा दिखे और उसके बारे में उल्टे विचार आएँ तो क्या वह खराब नहीं कहलाएगा?

दादाश्री : तुम स्ट्रोंग (दृढ़) हो तब फिर अगर उल्टे विचार आएँ, तो उन्हें देखो कि इसके लिए अभी भी बुरे विचार आ रहे हैं। तुम स्ट्रोंग हो तो कोई नाम नहीं लेगा। यह तो भरा हुआ माल है, वह आता है, वर्ना अगर नहीं भरा हो तो दूसरे किसी लड़के के बारे में नहीं आएँगे। इतने सारे लड़के हैं, क्या सभी के लिए आते हैं? जो माल भरा है, वही आ रहा है। तुम

पहचानती हो या नहीं, इस भरे हुए माल को? कुछ को देखा हो और उन पर दृष्टि पड़ गई हो तभी आएँगे।

हम तो सभी से कहते हैं कि शादी कर लो। फिर तुम अगर शादी नहीं करतीं तो वह तुम्हारी मर्ज़ी। शादी नहीं करके फिर चारित्र बिगड़े उससे तो शादी कर लेना अच्छा। लोकनिंद्य हो तो, वह सब व्यर्थ है। उससे तो मेरिज कर लेना अच्छा, वर्ना फिर हरहाए पशु जैसा कहलाएगा।

प्रश्नकर्ता : लोकनिंद्य होना, वह तो बाहर की बात हुई, लेकिन खुद का बिगड़ता है न?

दादाश्री : यानी खुद का तो बिगड़ता ही है, लेकिन फिर लोकनिंद्य हो जाए, वहाँ तक का बिगाड़ता है। वह फिर थोड़ा-बहुत नहीं बिगाड़ता। फिसला कि फिर देर ही नहीं लगती न? यदि ब्रह्मचर्य सँभाले तो भगवान बनने की तरकीब है उसमें! ज्ञानी तो सारी कलाएँ बताते हैं, सभी रास्ते बताते हैं, लेकिन उसे खुद को स्ट्रोंग रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : खुद स्ट्रोंग रहे, लेकिन फिर क्या आगे जाकर दिक्कत नहीं आएगी?

दादाश्री : नहीं, कुछ नहीं होगा। ज्ञानी पुरुष की कृपा साथ में रहेगी न! खुद स्ट्रोंग रहा तो ज्ञानी पुरुष की कृपा रहा करेगी, वचनबल रहा करेगा, उससे सभी काम होते रहेंगे। खुद कमज़ोर पड़े तो सबकुछ बिगड़ जाएगा। 'क्या होगा, अब क्या होगा' ऐसा हुआ तो बिगड़ा। 'कुछ भी नहीं होगा' कहा कि सबकुछ चला जाएगा। शंका हुई कि फिसला।

हमारी विधि तो आपको बाहर से नुकसान नहीं होने देगी लेकिन जिसे खुद को ही बिगाड़ना हो तो उसका क्या हो सकता है? अत: अगर निश्चय कर लो तो सही राह पर चलेगा सारा।

प्रश्नकर्ता : निश्चय तो ठीक से किया है लेकिन कमी कहाँ

रह जाती है कि आज्ञा है, ज्ञान है लेकिन पुरुषार्थ में कमी रह जाती है।

दादाश्री : वह सब तो कर देंगे हम। वे सारे कनेक्शन हम करवा देंगे। तेरी इच्छा हो तो हम सारे कनेक्शन करवा देंगे। इन लड़कों को सभी कनेक्शन करवा दिए, तो ज़रा भी विचार नहीं आता। वैसा करके देते हैं हम लेकिन अगर तेरा तय हो जाए, उसके बाद मुझसे कहना। देखो न, वह लड़की कह रही थी, शादी की न आखिर में!

प्रश्नकर्ता : मुझे आप्तपुत्री बनना है, लेकिन ये सारे जो मेरे भाव पहले हो चुके हैं, शादी करने के, नौकरी करने के। वे सभी मुझे पूरे करने पड़ेंगे या धुल जाएँगे?

दादाश्री : जो हो चुके हैं, उसमें हर्ज नहीं। जो हो चुका है, उसका रास्ता हम निकाल देंगे। लेकिन अब नहीं होने चाहिए और जॉब करने में भी हर्ज नहीं है लेकिन आप्तपुत्री के लिए सिर्फ ब्रह्मचर्य ही ज़रूरी है।

तुम ने अगर शादी नहीं की तो कोई तुम से पूछेगा कि तुम्हारे कितने बच्चे हैं?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : क्यों? क्योंकि शादी नहीं की इसलिए। मूल में पति ही नहीं है तो बीज कहाँ से डालेंगे? और बीज नहीं डाले तो पौधा उगेगा ही कैसे?

पति, पति जैसा हो, कि वह कहीं पर भी जाए फिर भी एक क्षण भी तुम्हें नहीं भूले, ऐसा हो तो काम का, लेकिन ऐसा किसी काल में हो नहीं सकता तो फिर ऐसे बेकार पति का क्या करना है? खरा पति मिले तब (उसके लिए) कोई एकांत शैयासन छोड़े। क्योंकि अगर उसकी चित्तवृत्तियाँ आपके साथ रहें, तो दूसरे

के साथ बाचतीच करते हुए भी आपकी चित्तवृत्तियाँ जहाँ पति हो, वहीं जाएँगी। तो हो गया न एक का एक! एकांत! अभी ऐसा नहीं मिलता न? तो बाकी का सारा माल तो सड़ा हुआ कहलाता है। ऐसी सड़ी हुई सब्ज़ी खाने से तो नहीं खाना अच्छा। यह सड़ा हुआ खाने जाएँगे तो उलटियाँ होंगी। यह प्रेम रहित संसार है, सिर्फ आसक्ति ही है। पहले तो प्रेम वाली आसक्ति थी। प्रेम यानी लगन लगी रहती थी। अब तो लगन ही नहीं लगती न? टिकट को भले ही कितना भी गोंद लगाया जाए फिर भी टिकट चिपकती ही नहीं। कागज़ ही ऐसा है, फिर इंसान तंग आ ही जाएगा न!

यानी इस काल में लोग प्रेम भूखे नहीं हैं, विषय भूखे हैं। जो प्रेम भूखे हों, उन्हें तो अगर विषय नहीं मिले फिर भी चलेगा। ऐसे प्रेम भूखे मिलें तो उनके दर्शन करेंगे। ये तो विषय भूखे हैं। विषय भूखे यानी क्या कि संडास। यह संडास, वह विषय भूख है। वहाँ जाने को नहीं मिलता तो क्यू नहीं लगती? आपने देखी है कहीं क्यू? कहाँ देखी है?

प्रश्नकर्ता : हमारी चाली में तो लाइन में ही खड़ा रहना पड़ता है।

दादाश्री : चाली में भी क्यू लगती हैं! हमने अहमदाबाद में पहले क्यू देखी थी। मुझे एक बार क्यू में खड़ा रहना हुआ। मैंने कहा, 'मुझे इस वक्त संडास नहीं जाना।' उससे बेहतर हम यों ही बैठे रहेंगे। हमें इस तरह क्यू में संडास नहीं जाना। जहाँ संडास की इतनी कीमत बढ़ गई! कीमत तो लॉज की बढ़ गई है, लेकिन यहाँ संडास की भी कीमत बढ़ गई! मुझे क्यू में खड़े रहना पड़ा! वह व्यक्ति कहने लगे कि, 'अभी थोड़ी देर, पाँच मिनट खड़ा रहना पड़ेगा।' मैंने कहा, 'नहीं, एक मिनट भी नहीं, चलो वापस आता हूँ। कब्ज़ होगा तो चूरण ले लेंगे लेकिन यह नहीं चलेगा। यह कैसे चलेगा? वहाँ खड़े रहकर किसका इंतज़ार

कर रहे हो?! इसकी भी कीमत?' मुझे तो शर्म आई। मैं तो अगर भोजन के लिए भी क्यू हो तो खड़ा नहीं रहता। उसके बजाय तेरी रोटी तेरे घर रहने दे। थोड़े चने खा लेंगे। हाँ, मोक्ष दे रहा हो तो चलो न, हम दिन-रात क्यू में खड़े रहेंगे।

यानी आज के विषय संडास जैसे हो गए हैं। जैसे संडास के लिए खड़ा रहता है न! वैसे ही इन विषयों के लिए लाइन में खड़ा रहता है। संडास लगी कि भागा।

इसे प्रेम कहेंगे ही कैसे? प्रेम तो वह है कि विषय नहीं मिले फिर भी चिढ़ न मचे। यह तो जंगलीपन है। इसके बजाय तो साधु बनकर मोक्ष में चले जाने का विचार करना अच्छा। हम अपने गाँव ही अच्छे! अपने गाँव स्वतंत्र तो रह सकते हैं। ऐसा तो कहीं अच्छा लगता होगा?

अहमदाबाद के सेठों को मैंने देखा है। ऑफिस में लोग हाथ जोड़ते हैं और घर पर वह क्यू में खड़ा रहता है। इसमें तो स्वमान जैसा कुछ रहा नहीं न? इसे तो सामान्य जनता कहा जाएगा। हमें तो कुदरती रूप से क्यू मिली ही नहीं। क्या क्यू हमें शोभा देती है?! जहाँ अंदर त्रिलोक के नाथ हैं, वहाँ?

यदि कभी लगन वाला प्रेम हो तो संसार है, वर्ना फिर विषय तो संडास है। वह फिर कुदरती हाजत में गया। उसे हाजतमंद कहते हैं न? जैसे सीताजी और रामचंद्रजी विवाहित ही थे न? सीताजी को ले गए फिर भी राम का चित्त सिर्फ सीता में ही था और सीता का चित्त वहाँ सिर्फ राम में ही था। विषय तो चौदह साल तक देखा तक नहीं था, फिर भी चित्त उन्हीं में था। उसे विवाह कहते हैं। बाकी, ये तो हाजत वाले कहलाते हैं। कुदरती हाजत!

शादी की, मतलब समझना कि एक शौचालय आ गया अपने पास! यह जो शादी है, वह तो पूरा संडास है। स्त्री ने एक ही

बार परपुरुष के साथ दोष किया हो तो उसे पाँचसौ-हज़ार जन्मों तक स्त्री बनना पड़ता है। विषय में फिसले तो नर्क की वेदना भुगतनी पड़ेगी इसलिए आँखें गड़ाना ही नहीं। अन्य दोष चला सकते हैं, लेकिन यह अत्यंत दुःखदाई है। नर्क में पड़ने जैसा दुःख लगता है। अरे, इसकी बजाय नर्क में पड़ना अच्छा। अपने आप शादी सामने से आए तो उस समय शादी करना। जगत् के लोग निंद्य माने, उससे तो भयंकर दुःख पड़ते हैं वैसा होना ही नहीं चाहिए इसलिए तुरंत प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए। लेकिन यदि शक्ति हो तो संयम लो और शक्ति नहीं हो तो शादी कर लेना। शादी करने से दोष नहीं लगता। बाकी विषय जैसी मार जगत् में अन्य कोई है ही नहीं। विषय का विचार आया कि तभी से वेदना उत्पन्न हुई, जलन होती रहती है। विषय को जीत लिया मतलब सबकुछ जीत लिया।

अगर पति होगा तभी झंझट रहेगा न? लेकिन यदि ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया हो तो विषय से संबंधित झंझट ही नहीं रहेगा न! और ऐसा ज्ञान हो तो वह काम ही निकाल दे! लेकिन स्त्री को स्त्री-जाति का ज़बरदस्त अवरोध है, इसलिए श्रेणी बहुत ऊपर चढ़ती है लेकिन स्त्री-जाति है, इसलिए रुक जाती है न! स्त्री-जाति कितनी बाधक है! स्त्री-जाति को बाधकता उत्पन्न होती है, कि कब उसका लेवल खिसक जाए, वह कह नहीं सकते। जबकि पुरुष को तो खुद 'एक्ज़ेक्टनेस' में आ चुका हो तो फिर वह खिसकेगा नहीं, उसकी गारन्टी!

तुझे अच्छा रहता है न?

प्रश्नकर्ता : यों तो अच्छा है, लेकिन दादा स्त्री-प्रकृति है न! आगे नहीं बढ़ने देगी, ऐसा होता है।

दादाश्री : लेकिन वह तो यदि बहुत प्रतिक्रमण करे और स्ट्रोंग रहे तो कुछ नहीं होगा। स्ट्रोंग रहना चाहिए। एक बार

फिसलने के बाद मार खा खाकर मर जाएगी। एक ही बार फिसली तो खत्म हो गया। यानी विषय वह भोगने की चीज़ ही नहीं है, ऐसा मान ले तो चलेगा! भोगने की कई चीज़ें हैं बाहर। यह तो निरी जूठन, गंदगी सारी। आँखों को अच्छा नहीं लगता, कान को अच्छा नहीं लगता, जीभ को अच्छा नहीं लगता।

वह पढ़ती हो?

प्रश्नकर्ता : पढ़ नहीं पाती खास।

दादाश्री : उसे पढ़ने से तो पूरी प्रकृति अलग हो जाती है, वर्ना फिर शादी कर लेना अच्छा। तुझे तो चलेगा न?

प्रश्नकर्ता : प्रकृति टेन्शन वाली है न, इसलिए ज्ञान का परिणाम जैसा आना चाहिए वैसा नहीं आता।

दादाश्री : ज्ञान का परिणाम तो अगर सत्संग हो न, तभी आता है। वह तो सत्संग नहीं है, इसलिए। वह तो अपने यहाँ पर जब बन जाएगा तो सभी के साथ रहने से विचार भी नहीं आएगा, बल्कि आनंद होगा। वह मकान जब बनेगा वहाँ पर ब्रह्मचारीणियाँ रहेंगी, नहीं तो फिर शादी करवाने को कह देना।

अच्छे सत्संग में आए तो वह टेन्शन वाली प्रकृति हमेशा नहीं रहेगी, वह तो सबकुछ बदल जाएगा। वह तो कुसंग में जाए तभी बाधक रहता है सब।

उसमें भी अगर यह विषय पसंद ही नहीं हो तो छुटकारा होगा। फिर भी किसी पर दृष्टि आकृष्ट हो तो प्रतिक्रमण से खत्म हो जाएगा। लेकिन अगर अंदर से विषय पसंद हो तो शादी कर लेना अच्छा।

प्रश्नकर्ता : खुद के हित का नहीं सोचती।

दादाश्री : हित तो है ही नहीं न, भान ही नहीं है। मिठास

में जो इंसान फँस जाए, उसका तो हित का ठिकाना ही नहीं रहता न!

प्रश्नकर्ता : उस समय खुद ने जो निश्चय किया है, वह कहाँ चला जाता है?

दादाश्री : जैसा खुद हो जाए, निश्चय भी वैसा ही हो जाता है। खुद कमज़ोर हो जाए, तो हो गया अनिश्चय।

प्रश्नकर्ता : लेकिन इस तरफ का निश्चय करने में इतनी देर लगती है जबकि शादी का निश्चय तुरंत ही हो जाता है। ऐसा क्यों?

दादाश्री : नहीं, यहाँ पर देर लगती ही नहीं। यहाँ पर, वह बिना देरी वाला ही है।

प्रश्नकर्ता : यहाँ पर भी बिना देरी का ही?

दादाश्री : हाँ, जैसा वह तुरंत, वैसा ही यह भी तुरंत। यहाँ पर अगर देर लगाकर किया हो तो उसका निश्चय बदलेगा ही नहीं न! कभी भी नहीं बदलेगा, मार डाले फिर भी नहीं बदलेगा।

प्रश्नकर्ता : हम सभी को अगर ठीक से समझकर यह निश्चय स्ट्रोंग करना हो, तो समझ तो हम पूरी-पूरी लाए ही नहीं हैं न! तो फिर वह स्ट्रोंगनेस कैसे आएगी?

दादाश्री : तेरा ध्येय होगा तो सबकुछ आएगा।

प्रश्नकर्ता : यानी जिसे स्ट्रोंग करना है, उसका होगा ही?

दादाश्री : नहीं। ध्येय तय किया होगा न तो स्ट्रोंग रहेगा तो फिर हो जाएगा। यह ध्येय नहीं है, उसका ध्येय नहीं है कुछ भी।

प्रश्नकर्ता : आपने दादा एक बार कहा था कि निश्चय

मज़बूत करना हो तो निश्चय के विरुद्ध का एक भी विचार नहीं आना चाहिए।

दादाश्री : हाँ। और अगर उस ध्येय को नुकसान पहुँचने वाला कुछ भी आए तो उसे हटा देना चाहिए।

ऐसी 'समझ' कौन देगा?

इन बहन का तो निश्चय है कि 'एक ही जन्म में मोक्ष में जाना है। अब यहाँ नहीं चलेगा, इसलिए एक अवतारी ही बनना है।' तो फिर उन्हें सभी साधन मिल गए, ब्रह्मचर्य की आज्ञा भी मिल गई!

प्रश्नकर्ता : हम भी क्या एक अवतारी बनेंगे?

दादाश्री : तुझे थोड़ी देर लगेगी। अभी तो थोड़ा हमारे कहे अनुसार चलने दे। एक अवतारी तो आज्ञा में आने के बाद, इस ज्ञान में आने के बाद काम होगा। यों तो आज्ञा के बिना भी मोक्ष दो-चार जन्मों में होने वाला है, लेकिन अगर आज्ञा में आ जाए तो एक अवतारी हो जाए! इस ज्ञान में आने के बाद हमारी आज्ञा में आना पड़ेगा। अभी तक आप सभी को ब्रह्मचर्य की आज्ञा दी नहीं है न? वह हम जल्दी से देते भी नहीं हैं क्योंकि सभी को पालन करना नहीं आता, अनुकूल नहीं रहता। उसके लिए तो मन बहुत मज़बूत होना चाहिए।

आज सत्संग में जो साड़ी पहनी है, तो कितना समझदारी वाला दिख रहा है। कल शादी में जाना था तब साड़ी पहनी थी, यदि कोई देखता तो कहता कि 'ज़बरदस्त दिख रही हो।' इस तरह जिससे लोगों को आश्चर्य हो, वैसा नहीं पहनना चाहिए। सादा पहनना, उसकी कीमत है। वह तो मोही कहलाता है। जो सादा और सलीके वाला कहलाए, वैसा पहनना चाहिए। मैं भी नये कपड़े पहनता हूँ न? लेकिन वे सलीके वाले होते हैं। भड़कीले कपड़े

पहने हों तो लोग समझेंगे कि यह मूर्छित है। तुम ऐसे कपड़े पहनोगी तो लोग समझेंगे कि यह सत्संग में गई ही नहीं होगी, इसलिए सिम्पल साड़ी अच्छी। साड़ी के आधार पर देह है या देह के आधार पर साड़ी है? सिम्पल साड़ी ही प्रभावशाली होती है। लड़के भी भड़कीले कपड़े पहनते हैं न? तुम्हें मोक्ष में जाना है या ऐसे लाल-पीली साड़ियाँ पहननी हैं और फिर से संसार में रहना है? ये लाल, पीली, नीली साड़ियाँ नहीं होनी चाहिए, वे सब तो मोह वाली चीज़ें हैं। कभी न कभी तो मोह छोड़ना ही पड़ेगा न?! क्या सिर्फ साड़ी को ही छोड़ना है? कभी न कभी देह को भी छोड़ना ही पड़ेगा न?

अर्थात् इसमें सच्चा सुख है ही नहीं। यह तो सब कल्पित सुख है। विषयों में भी कल्पित सुख है और अन्य चीज़ों में भी कल्पित सुख है। सच्चा सुख आत्मा में है। सनातन सुख! वह कभी भी नहीं जाता। हमारा सुख कभी भी जाता ही नहीं है न! यदि तुम्हें ब्रह्मचर्य पालन करना हो तो इतना सावधान रहना है कि परपुरुष का विचार तक नहीं आना चाहिए और विचार आते ही धो देना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा था मिश्रचेतन से सावधान रहना।

दादाश्री : बस, इस मिश्रचेतन से जो सावधान रहा, उसका कल्याण हो गया! एक शुद्धचेतन है और एक मिश्रचेतन है। मिश्रचेतन में यदि फँस गए तो अगर आत्मा प्राप्त किया हो, फिर भी उसे भटका देगा। अतः इसमें अगर विकारी संबंध हो गए तो भटकना पड़ेगा क्योंकि हमें मोक्ष में जाना है और वह व्यक्ति अगर जानवर में जाने वाला हो तो हमें भी वहाँ खींच ले जाएगा। संबंध हुआ तो वहाँ जाना पड़ेगा। इसलिए इतना ही देखना है कि विकारी संबंध खड़ा ही नहीं हो। मन से भी बिगड़ा हुआ नहीं हो, तब वह चारित्र कहलाता है। उसके बाद ये सब तैयार हो जाएँगे। बिगड़े हुए मन होंगे तो फिर वह फ्रैक्चर हो जाएगा, वर्ना

एक-एक लड़की में कितनी शक्ति है! वह क्या कुछ ऐसी-वैसी शक्ति है? यह तो, अगर हिन्दुस्तान की बहनें हों और साथ में वीतराग का विज्ञान हो तो फिर बाकी क्या रहा?

माँ-बाप खुद की बेटी से चारित्र संबंधित बातचीत कैसे कर सकते हैं? तो वह कौन बातचीत कर सकता है? सिर्फ एक 'ज्ञानी पुरुष' ही बातचीत कर सकते हैं क्योंकि ज्ञानी किसी लिंग में नहीं होते। वे पुरुष लिंग में नहीं होते, स्त्री लिंग में नहीं होते, न ही नपुसंक लिंग में होते हैं। वे तो आउट ऑफ लिंग होते हैं। बहुत विचित्र ज़माना आया है, फिसलता काल है, लड़कियों को कोई ज्ञान है नहीं, आगे का मार्गदर्शन नहीं है। इन लड़कियों को कितनी परेशानियाँ है! इसलिए यह मार्गदर्शन दे रहा हूँ।

इसलिए यह ज्ञान निकला। मेरी बहुत समय से इच्छा थी कि ऐसा ज्ञान निकले, लेकिन उसका टाइम आना चाहिए न? यह ज्ञान इतनों को तो मिला। सभी को ज़रूरत तो है ही न! इस ज्ञान की तो सभी को ज़रूरत है!

ब्रह्मचर्य व्रत पालन करना कहीं छोटे बच्चों का खेल नहीं है! विषय का विचार ही नहीं आना चाहिए और आ जाए तो उसे तुरंत प्रतिक्रमण करके धो देना। विचार तो आएँगे ही। इस कलियुग में तो निरे ऐसे विचार आते ही हैं! लेकिन उन्हें धो देना।

प्रश्नकर्ता : विषय में हमने आनंद का आरोपण किया है, इसलिए वह आता है, लेकिन हमें ब्रह्म के आनंद की अनुभूति हो जाए तो वह आनंद ऑटोमैटिक छूट जाएगा?

दादाश्री : हाँ, क्योंकि जलेबी खाने के बाद चाय पीओगे, तो अपने आप ही न्याय हो जाएगा न! उसी प्रकार आत्मा का आनंद चखने के बाद विषय अपने आप ही फीके पड़ जाते हैं। इन लड़कियों को फीका ही पड़ गया है न! तभी तो राह पर

आ गया न! इन लड़कियों को ब्रह्म का आनंद उत्पन्न हुआ और आरोपित आनंद फ्रैक्चर हो गया! इसीलिए खुद के दोषों पर रोना आया न? और लड़कियाँ तो यहाँ आकर मुझसे कहती हैं कि 'बहुत ही शक्ति बढ़ गई, ज़बरदस्त शक्ति बढ़ गई!' खुद का सुख खुद के पास है, लोग ऐसा समझे ही नहीं हैं न? और सुख को ढूँढने बाहर जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : लेकिन सुख को किसी न किसी का आधार है ही, मन का, वचन का.....

दादाश्री : परावलंबी सुख को सुख कहेंगे ही कैसे?

प्रश्नकर्ता : सिर्फ बहनों की शिविर करवाइए।

दादाश्री : तब तो बहुत प्रभाव पड़ेगा। वे जब सच्चा ब्रह्मचर्य पालन करेंगी, तो वह लाइट अलग ही तरह की होगी। यह तो जन्म लिया और मर गए यहीं पर, जानवर की तरह, वह किस काम का? बहनों सुन रही हो न, मेरी बात कड़वी लगे फिर भी अंदर उतारना। भले ही कड़वी लगे, लेकिन अंत में मीठी निकलेगी। मीठी निकलेगी या नहीं?

प्रश्नकर्ता : निकलेगी।

दादाश्री : अभी तो कड़वी लगेगी। मैंने कहा है सिर्फ यही एक सेफ साइड है, बाकी सब फँसाव है।

कल्याण करना है या कल्याण स्वरूप बनना है?

प्रश्नकर्ता : ये दीक्षा लेने वाली जो बहने हैं, उन्हें धर्म का ऐसा कुछ रहस्य समझाइए कि जिससे उनका कल्याण हो और समाज को और लोगों को भी फायदा हो।

दादाश्री : कल्याण करने में एक ही चीज़ है कि जो खुद का कल्याण कर ले, वह बिना बोले दूसरों का कल्याण कर सकता

है! अत: करना कितना है? 'ज्ञानी पुरुष' के पास खुद का कल्याण कर लेना है। फिर खुद कल्याण स्वरूप हुआ कि बिना बोले लोगों का कल्याण हो जाएगा और जो लोग बोलते रहते हैं, उससे कुछ नहीं होता। सिर्फ भाषण करने से, बोलते रहने से कुछ नहीं होता। बोलने से तो बुद्धि इमोशनल हो जाती है। यों ही उनका चारित्र देखने से, उस मूर्ति को देखने से ही सभी भावों का शमन हो जाता है यानी कि उन्हें तो केवल खुद ही उस रूप हो जाने जैसा है। 'ज्ञानी पुरुष' के पास रहकर उस रूप होना है। ऐसी पाँच ही लड़कियाँ तैयार हो जाएँ तो कितने ही लोगों का वे कल्याण कर सकेंगी! बिल्कुल निर्मल बन जाना चाहिए और 'ज्ञानी पुरुष' के पास निर्मल हो सकते हैं और निर्मल होने वाले हैं।

मूल गुजराती शब्दों के समानार्थी शब्द

हूंफ : अवलंबन, सलामती

निर्जरा : आत्म प्रदेश में से कर्मों का अलग होना

गलन : डिस्चार्ज होना, खाली होना

पुद्‌गल : अहंकार

गलगलिया : वृत्तियों को गुदगुदी होना, मन में मीठा लगना

निकाल : निपटारा

अटकण : जो बंधनरूप हो जाए, आगे नहीं बढ़ने दे

पूरण : चार्ज होना, भरना

उणोदरी : जितनी भूख लगे उससे आधा भोजन खाना

तरंगें : शेखचिल्ली जैसी कल्पनाएँ

उपाधि : बाहर से आनेवाला दुःख

अणहक्क : बिना हक़ का, अवैध

भोगवटा : सुख या दुःख का असर

ऊपरी : बॉस, वरिष्ठ मालिक

तरछोड़ : तिरस्कार सहित दुत्कारना

राजीपा : गुरुजनों की कृपा और प्रसन्नता

चोविहार : सूर्यास्त से पहले भोजन करना

आड़ाई : अहंकार का टेढ़ापन

क्षपक : कर्मों का क्षय करनेवाला

आश्रव : कर्म में उदय की शुरूआत, उदय कर्म में तन्मयाकार होना

आयंबिल : जैनों में किया जानेवाला व्रत, जब भोजन में एक ही प्रकार का धान खाया जाता है

संपर्क सूत्र

दादा भगवान परिवार

अडालज : **त्रिमंदिर**, सीमंधर सिटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे,
पोस्ट : अडालज, जि.-गांधीनगर, गुजरात - 382421
फोन : 9328661166, 9328661177
E-mail : info@dadabhagwan.org

मुंबई : **त्रिमंदिर,** ऋषिवन, काजुपाडा, बोरिवली (E)
फोन : 9323528901

दिल्ली	: 9810098564	**बेंगलूर**	: 9590979099
कोलकता	: 9830080820	**हैदराबाद**	: 9885058771
चेन्नई	: 7200740000	**पूणे**	: 7218473468
जयपुर	: 8890357990	**जलंधर**	: 9814063043
भोपाल	: 6354602399	**चंडीगढ़**	: 9780732237
इन्दौर	: 6354602400	**कानपुर**	: 9452525981
रायपुर	: 9329644433	**सांगली**	: 9423870798
पटना	: 7352723132	**भुवनेश्वर**	: 8763073111
अमरावती	: 9422915064	**वाराणसी**	: 9795228541

U.S.A. : **DBVI Tel. :** +1 877-505-DADA (3232),
Email : info@us.dadabhagwan.org

U.K. : +44 330-111-DADA (3232)

Kenya : +254 722 722 063

UAE : +971 557316937

Dubai : +971 501364530

Australia : +61 421127947

New Zealand : +64 21 0376434

Singapore : +65 81129229

www.dadabhagwan.org

उसने जीत लिया जगत्!

अब्रह्मचर्य के विचार आएँ लेकिन अगर ब्रह्मचर्य की शक्तियाँ माँगता रहे, तो वह बहुत बड़ी बात है। ब्रह्मचर्य की शक्तियाँ माँगते रहने से किसी को दो साल में, किसी को पाँच साल में, लेकिन वैसा उदय आ जाता है। जिसने अब्रह्मचर्य जीत लिया, उसने पूरा जगत् जीत लिया। ब्रह्मचर्यवाले पर तो शासन देवी-देवता बहुत खुश रहते हैं!

-दादाश्री

Printed in India

Price ₹150